MAHN203CCT

हिंदी कथा साहित्य

एम.ए.

(द्वितीय सेमेस्टर के लिए)

पेपर-7

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© **Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad**

Course : Hindi Katha Sahitya

ISBN: 978-93-95203-87-6

First Edition: October, 2023

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	2023
Copies	:	500
Price	:	340/-
Copy Editing	:	Dr. Wajada Ishrat, MANUU, Hyderabad Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Cover Designing	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Time & Business Enterprises, Hyderabad

Hindi Katha Sahitya

For

M.A. Hindi

2nd Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

*Director:*dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिंदी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabhadeo Sharma
Former Head, Higher Education and Research Centre, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Dr. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

डॉ. एल. अनिल
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. L. Anil
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक **इकाई संख्या**

- **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा**, एसोसिएट प्रोफेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास 1, 2, 4
- **डॉ. वाजदा इशरत**, अतिथि प्राध्यापक/ असिस्टेंट प्रोफेसर(संविदा), दू. शि. नि. मानू. 3
- डॉ. **इबरार खान**, असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, मिर्ज़ा ग़ालिब कॉलेज, गया . 5
- **डॉ. सुषमा देवी**, प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी, सिकंदराबाद 6
- **डॉ. एन. लक्ष्मीप्रिया**, असिस्टेंट प्रोफेसर, महात्मा गांधी सरकारी कॉलेज, मायाबंदर (अंडमान-निकोबार) 7
- **डॉ. सुपर्णा मुखर्जी**, प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सेंट एन्स जूनियर एंड डिग्री कॉलेज फॉर गर्ल्स एंड वुमेन, मलकाजगिरी, हैदराबाद. 8
- **प्रो. गोपाल शर्मा,** पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथियोपिया(पूर्व अफ्रीका) 9, 10
- **डॉ. एस.जे. जहागीरदार**, हिंदी विभाग, अंजुमन कला,विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, विजयपुर (कर्नाटक) 11
- **डॉ. चंदन कुमारी,** संकाय सदस्य, डॉ. बीआर अंबेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, अंबेडकरनगर (मध्य प्रदेश) 12
- **डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी राजकीय मॉडल डिग्री कॉलेज, अरनियाँ, खुर्जा, बुलंदशहर (उत्तर प्रदेश) 13, 14
- **डॉ. अविनाश,** असिस्टेंट प्रोफेसर (सी), हिंदी विभाग, डॉ. बीआर अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद 15
- **डॉ. अबु होरैरा,** अतिथि प्राध्यापक, हिंदी विभाग, मानू, हैदराबाद 16

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	9
भूमिका	:	पाठ्यक्रम–समन्वयक	11

खंड इकाई /		विषय	पृष्ठ संख्या
खंड 1	:	**कथा साहित्य का विकास और 'दिव्या'**	
इकाई 1	:	हिंदी उपन्यास : उद्भव और विकास	13
इकाई 2	:	हिंदी कहानी : उद्भव और विकास	29
इकाई 3	:	दिव्या : तात्विक विवेचन	43
इकाई 4	:	यशपाल का उपन्यास 'दिव्या' : चेतना और विमर्श	54
खंड 2	:	**शेखर : एक जीवनी और मैला आँचल**	
इकाई 5	:	शेखर : एक जीवनी' : तात्विक विवेचन	66
इकाई 6	:	'शेखर - एक जीवनी' : चेतना और विमर्श	86
इकाई 7	:	'मैला आँचल' : तात्विक समीक्षा	100
इकाई 8	:	मैला आँचल' : चेतना और विमर्श	121
खंड 3	:	**चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' : एक परिचय**	
इकाई 9	:	चंद्रधर शर्मा गुलेरी : एक परिचय	134
इकाई 10	:	उसने कहा था : तात्विक विवेचन	149
इकाई 11	:	प्रेमचंद एक परिचय :	165
इकाई 12	:	ईदगाह : तात्विक विवेचन	183

खंड 4	:	**जयप्रकाश कर्दम और मेहरुन्निसा परवेज़**	
इकाई 13	:	जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय	200
इकाई 14	:	तलाश: तात्विक विवेचन	219
इकाई 15	:	मेहरुन्निसा परवेज़ : एक परिचय	235
इकाई 16	:	'पत्थर वाली गली' : तात्विक विवेचन	249
		परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना	**261**

प्रूफ रीडर:

प्रथम : डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(संविदा)
दू. शि. नि., मानू

द्वितीय : डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा),
दू. शि. नि., मानू

अंतिम : डॉ. आफताब आलम बेग, सहायक कुल सचिव, दू. शि. नि., मानू

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यत प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने का सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां है जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों

की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामले और संचारचलन भी काफी कठिन रहे हैं लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किया जा रहा है। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस विश्वविद्यालय का अंग बनने के लिए हृदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन
कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का बाकायदा प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और ट्रांसलेशन डिविजन से हुआ था और इस के बाद 2004 में बाकायदा पारंपरिक शिक्षा का आगाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए। नए स्थापित विभागों और ट्रांसलेशन डिविजन में नियुक्तियाँ हुईं। उस वक़्त के शिक्षा प्रेमियों के भरपूर सहयोग से स्व-अधिगम सामग्री को अनुवाद व लेखन के द्वारा तैयार कराया गया।

पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है किदूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से लगभग जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के मयार को बुलंद किया जाय। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवततापूर्ण करके स्व-अधिगम सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड-24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार कराया जा रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज पर आधारित कुल 15 पाठ्यक्रम चला रहा है। बहुत जल्द ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किए जाएंगे। अधिगमकर्ताओं की सरलता के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 5 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह और अमरावती) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क तैयार किया है। इन केन्द्रों के अंतर्गत एक साथ 155 अधिगम सहायक केंद्र (लर्निंग सपोर्ट सेंटर) काम कर रहे हैं। जो अधिगमकर्ताओं को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (डी. डी. ई.) ने अपनी शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसके अलावा अपने सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ ऑनलाइन तरीके से ही दे रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर अधिगमकर्ता को स्व-अधिगम सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध कराया जाएगा। इसके साथ-साथ अध्ययन व अधिगम के बीच एसएमएस (SMS) की सुविधा उपलब्ध की जा रही है। जिसके द्वारा अधिगमकर्ताओं को पाठ्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा के बारे में सूचित किया जाता है।

आशा है कि देश में शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई उर्दू आबादी को मुख्यधारा में शामिल करने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'हिंदी कथा साहित्य' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आजाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के एम.ए. (हिंदी) द्वितीय सत्र (सातवाँ प्रश्न पत्र) के दूरस्थ शिक्षा माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

हिंदी कथा साहित्य के अंतर्गत गद्य की दो विधाओं का अध्ययन किया जाता है उपन्यास और कहानी. इसके अंतर्गत छात्रों को उपन्यासों और कहानियों के संदर्भ के अनुसार जोड़कर पढ़ने का प्रयास किया जाता है. तथा कुछ प्रमुख रचनाकारों तथा रचनाओं से अवगत करने का प्रयास किया जाता है. इन पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य यह भी है कि छात्रों को सामाजिक संदर्भ के अनुसार रचनाओं का विश्लेषण करता .

यह पुस्तक पाठ्यचर्या के अनुरूप चार खंडों में विभाजित है। हर खंड में चार-चार इकाइयाँ शामिल हैं। पहले खंड में कथा साहित्य का विकास तथा दिव्या उपन्यास का तात्विक विवेचन एवं चेतना और विमर्श पर प्रकाश डाला गया है. दूसरे खंड में दो उपन्यास - शेखर : एक जीवनी तथा मैला आँचल का तात्विक विवेचन एवं चेतना और विमर्श का अध्ययन किया गया है। पुस्तक के तीसरे खंड में साहित्यकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी और प्रेमचंद के कहानियों पर केंद्रित है। चौथे खंड में दलित साहित्यकार जयप्रकाश कर्दम एवं मुस्लिम उपन्यासकार मेहरुन्निसा परवेज की कहानियों से परिचय करेंगे तथा उनकी कहानियों के तात्विक विवेचन पर प्रकाश डालेंगे।

इस पुस्तक के अध्ययन से विद्यार्थी हिंदी गद्य की विधागत विविधता, विषयगत प्रौढ़ता, भाषागत यात्रा और शैलीगत परिधि के विस्तार को आत्मसात कर सकेंगे। अध्येय पाठों का चयन इस प्रकार किया गया है कि उनके अध्ययन से छात्रों का वैयक्तिक और मानसिक विकास हो सके, उनके भीतर राष्ट्रीय चेतना और लोकतांत्रिक मूल्यों की समझ विकसित हो सके तथा हिंदी के माध्यम से सामाजिक समरसता का संस्कार निर्मित हो सके।

इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, ग्रंथों, ग्रंथकारों और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

-डॉ. आफताब आलम बेग

पाठ्यक्रम समन्वयक

हिंदी कथा साहित्य

इकाई 1 : हिंदी उपन्यास : उद्भव और विकास

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मूल पाठ : हिंदी उपन्यास : उद्भव और विकास
1.3.1 प्रारंभिक हिंदी उपन्यास
1.3.2 प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास
1.3.3 प्रेमचंदयुगीन हिंदी उपन्यास
1.3.4 प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यास
1.3.5 समकालीन हिंदी उपन्यास
1.4 पाठ सार
1.5 पाठ की उपलब्धियाँ
1.6 शब्द संपदा
1.7 परीक्षार्थ प्रश्न
1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! गद्य साहित्य के इतिहास में उपन्यास विधा का महत्वपूर्ण स्थान है। गद्य की अन्य विधाओं की तरह उपन्यास भी भारतेंदु युग की ही देन है। भारतीय नवजागरण के दौर में उपन्यास का उदय हुआ। इस विधा का फलक व्यापक होता है। इसमें अनेक कथा-सूत्र एक-दूसरे से गुंथे हुए होते हैं। इस विधा के माध्यम से साहित्यकारों ने सामाजिक एवं वैयक्तिक पहलुओं को उजागर करने का प्रयास किया है। इस इकाई में हिंदी उपन्यास के उद्भव और विकास यात्रा पर प्रकाश डाला जाएगा।

1.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- हिंदी उपन्यास के उद्भव की पृष्ठभूमि को जान सकेंगे।
- हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास साहित्य से अवगत हो सकेंगे।
- प्रेमचंदयुगीन हिंदी उपन्यास साहित्य को समझ सकेंगे।
- प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यासों के विकास क्रम को पहचान सकेंगे।
- समकालीन हिंदी उपन्यासों में निहित प्रवृत्तियों से परिचित हो सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : हिंदी उपन्यास : उद्भव और विकास

छात्रो! आधुनिक काल का आरंभ उन्नीसवीं सदी के मध्य से माना जाता है। यह वह समय था जब संपूर्ण भारत में नवजागरण की लहर दौड़ रही थी। भारत को कंपनी के शासन से मुक्त

कराने के लिए पहला स्वाधीनता संग्राम भी लड़ा गया। भारत की तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों का गहरा प्रभाव साहित्यकारों पर भी पड़ा।

भारतेंदु के आगमन से पहले तक हिंदी साहित्य के क्षेत्र में पद्य का प्रमुख स्थान था। पद्य के माध्यम से जीवन के विविध आयामों को प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। यह भी कहा जा सकता है कि काव्य अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक उदात्त है। कविता का जन्म आदर्शवादिता को लेकर हुआ था, तो उपन्यास का जन्म पूँजीवादी सभ्यता का देन है। "पूँजीवादी सभ्यता के विविध जीवन-सत्यों को कथा के माध्यम से व्यक्त करने के लिए ही इसकी उत्पत्ति हुई है। यह मात्र कहानी नहीं है। कहानी यानी कथा तो इसका माध्यम है, मूल वस्तु है वर्तमान जीवन की जटिल यथार्थवादिता। जीवन-मूल्यों का संक्रमण, समाज के नए संबंधों की निर्मिति, उसके बीच उठते हुए अनेक प्रश्नों को भौतिक या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझने की आकुलता, नवीन भौतिक सत्यों के बीच बनती हुई मानव-चरित की नई दिशाएँ, ये सारी बातें मानो उपन्यास नामक विधा के माध्यम से फूट पड़ने के लिए आकुल थीं।" (रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ.12)।

उपन्यास को आधुनिक युग का महाकाव्य कहा जाता है क्योंकि महाकाव्य में जीवन जगत की विराटता अपने समस्त वैविध्य, गहरे भाव, विशिष्ट दर्शन, मानव मूल्य आदि जिस प्रकार अंकित होते हैं उपन्यास में भी ये सब अंकित होते हैं।

हिंदी उपन्यास साहित्य के अध्ययन में प्रेमचंद को कसौटी के रूप में माना जाता है क्योंकि प्रेमचंद के आगमन से उपन्यास साहित्य का सुनिश्चित विकास हुआ। अध्ययन की सुविधा हेतु हिंदी उपन्यास के उद्भव और विकास को प्रारंभिक हिंदी उपन्यास, प्रेमचंदपूर्व, प्रेमचंदयुगीन, प्रेमचंदोत्तर और समकालीन हिंदी उपन्यास साहित्य के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

बोध प्रश्न

- उपन्यास का जन्म किसका देन है?
- उपन्यास को क्या कहा जाता है? और क्यों?

1.3.1 प्रारंभिक हिंदी उपन्यास

छात्रो! भारतेंदु युग में लेखकों एक नई विधा आवश्यकता महसूस होनी लगी। क्योंकि पद्य में पूरी बात खुलकर कहना संभव नहीं। ऐसे में भारतेंदु हरिश्चंद्र का ध्यान उपन्यास विधा की ओर गया। वे बांग्ला उपन्यासों से परिचित थे। उस समय बांग्ला उपन्यासों का हिंदी में अनुवाद हुआ और कुछ उपन्यास हिंदी में भी लिखे गए। भले ही उपन्यास लेखन की नींव भारतेंदु युग में रखी गई थी, पर प्रेमचंद युग में ही उसे व्यापकता मिली।

हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों को अध्ययन की सुविधा के लिए भारतेंदु पूर्व और भारतेंदु युगीन उपन्यासों के रूप में विभाजित किया जा सकता है।

भारतेंदु पूर्व हिंदी उपन्यास साहित्य (1801-1869)

छात्रो! ध्यान देने की बात है कि 1800 ई. में पादरी विलियम कैरे ने श्रीरामपुर में प्रेस की स्थापना की और हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में बाइबिल के अनुवाद प्रकाशित

किए। 1802 में बैताल पच्चीसी छपी। 1803 ई. में गिलक्राइस्ट का हिंदुस्तानी प्रेस भी स्थापित हो चुका था। इसी प्रेस में लल्लू लाल कृत 'प्रेमसागर' छापा था और 1805 ई. में 'माधोनल' और 'सिंहासन बत्तीसी' तथा 1809 ई. में 'राजनीति' का मुद्रण हुआ था। गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज की महत्वपूर्ण भूमिका है। फोर्ट विलियम कॉलेज से नागरी मुद्रण को बहुत प्रोत्साहन मिला। इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' (1803) छप चुकी थी। 1850 के बाद नागरी मुद्रण को प्रोत्साहन मिलने लगा। इस समय तक हिंदी पाठक वर्ग के निर्माण की प्रक्रिया प्रारंभ हो चुकी थी। 'रानी केतकी की कहानी' हिंदी की पहली मौलिक गद्य रचना है, पर उपन्यास नहीं। यह सूफी प्रेमाख्यानों की पद्धति पर रचित गद्य कथा है। यह भी ध्यान देने की बात है कि 1803 से लेकर 1869 तक हिंदी में कोई दूसरी मौलिक गद्य कथा नहीं लिखी गई थी।

1825 ई. से लेकर 1862 ई. के बीच शिक्षा संबंधी अनेक पुस्तकें हिंदी में प्रकाशित हुईं। 1854 के ऊड्स डिस्पैच के बाद शिक्षा की स्थिति में परिवर्तन आया। मिडिल और माध्यमिक स्कूलों में विषय के रूप में आधुनिक भारतीय भाषाओं की पढ़ाई नाममात्र के लिए होती थी। उर्दू की तुलना में हिंदी उपेक्षित थी। जब सरकार ने स्त्री-शिक्षा को प्रोत्साहन देने की नीति अपनाई तो 1871 ई. तक लड़कियों के लिए स्कूल खुले। इनमें पढ़ाने के लिए नए ढंग से पुस्तकें लिखी गईं। पं. गौरीदत्त रचित 'देवरानी जेठानी की कहानी' (1870) एक ऐसी ही पुस्तक थी।

बोध प्रश्न

- स्त्री-शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए लिखी गई रचना का नाम बताइए।

भारतेंदु युगीन हिंदी उपन्यास साहित्य (1870-1890)

छात्रो! हिंदी उपन्यास का और भारतीय नवजागरण का गहरा संबंध है। बंगाल और महाराष्ट्र की तुलना में हिंदी में क्षेत्र में नवजागरण की प्रक्रिया कुछ बाद में ही आरंभ हुई। इसीलिए हिंदी में उपन्यास का आरंभ भी बांग्ला और मराठी की अपेक्षा बाद में ही हुआ। लेकिन हिंदी क्षेत्र में तो राजनैतिक दृष्टि से पुनर्जागरण का आरंभ 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम से माना जाता है। पर सामाजिक क्षेत्र में इसका आरंभ 1875 में आर्य समाज की स्थापना और उसके आंदोलन के साथ हुआ।

'रानी केतकी की कहानी' 1803 में आई और उसके बाद 1870 में 'देवरानी जेठानी की कहानी' प्रकाशित हुई। इसे लंबी अंतराल को देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि हिंदी कथा-साहित्य की यात्रा क्रमिक विकास के रूप में नहीं हुई, बल्कि एक छलांग दिखाई पड़ती है। गोपाल राय का कहना है कि "देवरानी जेठानी की कहानी की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें पहली बार परंपरा से हटकर कथा कहने का प्रयास किया गया है। कथाकार ने पुराने आख्यान लेखकों की तरह किसी राजा, सेठ, सामंत या शूरवीर की कथा न कहकर साधारण मध्यवर्गीय वैश्य परिवार की देवरानी-जेठानी की कहानी कही है।" (हिंदी उपन्यास का इतिहास, पृ.24)। दोनों के शीर्षकों में 'कहानी' शब्द है, एक में रानी की कहानी है तो दूसरे में सामान्य परिवार की स्त्रियों की। 'देवरानी-जेठानी की कहानी' भले ही स्त्री शिक्षा के उद्देश्य से लिखी गई हो, लेकिन लेखक अपनी कथा की नवीनता और परंपरा के प्रति सजग थे। यह सिर्फ

स्त्री-शिक्षा की कहानी नहीं है, बल्कि यह उन्नीसवीं शताब्दी के मध्यवर्गीय बनिया समाज के जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाली रचना है और निश्चय ही यह पुनर्जागरण की चेतना से जुड़ी हुई रचना थी।

बोध प्रश्न

- 'देवरानी जेठानी की कहानी' किस चेतना से जुड़ी हुई रचना थी?

ध्यान देने की बात है कि भारतेंदु ने 'हरिश्चंद्र मैगजिन' के प्रवेशांक (अक्टूबर, 1873) में नॉवेल शब्द का उल्लेख किया था। उन्होंने 'एक कहानी कुछ आपबीती कुछ जगबीती' नाम से एक उपन्यास लिखना आरंभ किया था। इसका केवल 'प्रथम खेल' प्रकाशित हुआ था। भारतेंदु के बाद 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग राधाकृष्ण दास ने किया था। 1879 में 'हिंदी प्रदीप' में उन्होंने अपने 'रहस्य कथा' उपन्यास का प्रकाशन धारावाहिक के रूप में शुरू किया और उपन्यास लेखन की परंपरा को आगे बढ़ाया। हिंदी उपन्यास में विवाहपूर्व प्रेम का अंकन 'रहस्य कथा' से ही आरंभ होता है। 'बिहार बंधु' (सं. केशवराम भट्ट) में 'सुंदर' (लेखक अज्ञात) नाम का उपन्यास 1880 में अर्थात लगभग 'रहस्य कथा' के साथ ही धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हो रहा था। 'हिंदी उपन्यास के इतिहास' से यह पता चलता है कि तत्कालीन दरभंगा नरेश लक्ष्मीश्वर नारायण सिंह ने उपन्यास लिखने के लिए एक सौ पचास रुपए पारितोषक की घोषणा की थी। 'हिंदी प्रदीप' के 1881 के अंक में प्रकाशित कृतज्ञता ज्ञापन से यह स्पष्ट होता है कि यह पुरस्कार प्रयाग के देवकीनंदन त्रिपाठी के 'अमृत चरित्र' को मिला था। ठाकुर जगमोहन सिंह ने 1885 में 'श्यामा स्वप्न' नामक उपन्यास की रचना की। लेखक ने स्वयं इसे 'गद्य प्रधान चार खंडों में एक कल्पना' की संज्ञा दी। भारतेंदु मंडल के बाहर के लेखकों ने उपन्यास शब्द को स्वीकार नहीं किया था। किशोरीलाल गोस्वामी ने तीन मौलिक उपन्यास लिखे - 'प्रणयिनी परिणय', 'त्रिवेणी' और 'सौभाग्य श्रेणी'। प्रथम दो उनके प्रारंभिक लघु-उपन्यास हैं। 1887 में देवकीनंदन खत्री ने प्रयोग के तौर पर 'चंद्रकांता' का पहला हिस्सा लिखा था जिसकी कथा तिलिस्म और ऐयारी पर आधारित है।

बोध प्रश्न

- हिंदी में विवाहपूर्व प्रेम का अंकन किस उपन्यास से शुरू होता है?

हिंदी का पहला उपन्यास

हिंदी में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग 1875 में हुआ था। इसका प्रयोग सबसे पहले 1862 में बांग्ला के भूदेव मुखोपाध्याय ने किया था। इसे बंकिमचंद्र चटर्जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से लोकप्रिय बनाया। 'रानी केतकी की कहानी' लिखे जाने के लगभग सत्तर वर्ष के बाद दूसरी मौलिक गद्य कथा 'देवरानी जेठानी की कहानी' प्रकाशित हुई।

इसके बाद ही मौलिक गद्य कृतीयों का लेखन और प्रकाशन शुरू हुआ। 'वामा शिक्षक' (1872 - ईश्वरी प्रसाद और कल्याण राय), निस्सहाय हिंदू (1881, प्रकाशन - 1890, राधाकृष्ण दास), परीक्षा गुरु (1882 - लाला श्रीनिवास दास), 'भाग्यवती' (1877, प्रकाशन - 1887, श्रद्धाराम फिल्लौरी) आदि कुछ उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

हिंदी का पहला उपन्यास किसे माना जाए, इसके संबंध में मतभेद है। गोपाल राय 'देवरानी जेठानी की कहानी' (1870) को हिंदी का पहला उपन्यास का दर्जा देते हैं तो कुछ विद्वान 'वामा शिक्षक', 'निस्सहाय हिंदू' को मानते हैं तो कुछ 'भाग्यवती' को हिंदी का प्रथम उपन्यास मानते हैं। लेकिन रामचंद्र शुक्ल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में यह लिखा है कि "अंग्रेजी ढंग का मौलिक उपन्यास पहले पहल हिंदी में लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षा गुरु' ही निकला था।" (पृ. 310)। उल्लेखनीय है कि गोपाल राय ने 1966 में 'देवरानी जेठानी की कहानी' (1870) का संपादन-प्रकाशन करते हुए पर्याप्त ठोस तर्क देकर इसे हिंदी का पहला उपन्यास सिद्ध किया है। उनके अनुसार "विषय, शिल्प और भाषा चाहे जिस दृष्टि से देखा जाए .... 'देवरानी जेठानी की कहानी' विशिष्ट है। अतः हिंदी उपन्यास का आरंभ यदि किसी पुस्तक से माना जा सकता है तो इसी से।" (हिंदी कथा साहित्य और उनके विकास पर पाठकों की रुचि का प्रभाव, 1965, पृ. 218)। 1886 में बालकृष्ण भट्ट के 'नूतन ब्रह्मचारी' का प्रकाशन हुआ था। इसे प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास होने का श्रेय प्राप्त है तथा बालकृष्ण भट्ट को प्रथम ऐतिहासिक उपन्यासकार।

बोध प्रश्न

- 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग सबसे पहले किसने किया था?
- हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास कौन-सा है?
- हिंदी का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास ..... है।

1.3.2 प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास

छात्रो! अब तक आपने हिंदी के प्रारंभिक उपन्यास साहित्य की यात्रा की जानकारी प्राप्त कर चुके है। यह भी स्पष्ट हो ही चुका है कि भारतेंदु युग से ही उपन्यास साहित्य का प्रारंभ हुआ। यह युग एक तरह से हिंदी उपन्यास साहित्य का उद्भव काल है। इस युग के अधिकांश लेखकों पर अंग्रेजी और बांग्ला का प्रभाव था। इस युग के उपन्यासों ने मनोरंजन के साथ-साथ समाज सुधार की भावना को देखा जा सकता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी यह माना है कि उपन्यास लेखन भारतेंदु युग से ही आरंभ हो गया था। 'पूर्णप्रकाश और चंद्रप्रभा' भारतेंदु के सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास हैं। इस उपन्यास का प्रधान उद्देश्य है वृद्ध-विवाह का खंडन और स्त्री शिक्षा का समर्थन। भारतेंदु युग के बाद द्विवेदी युग में इसका उत्तरोत्तर विकास हुआ।

छात्रो! अब तक आप 1801 से लेकर 1890 तक की उपन्यास यात्रा को देख चुके हैं और समझ भी चुके हैं। अब हम थोड़ी सी चर्चा 1891 से लेकर 1900 तक की उपन्यास यात्रा की करेंगे।

कहा जाता है कि देवकीनंदन खत्री ठेकेदारी के सिलसिले में चुनार, विजयगढ़ और नौगढ़ जाते थे और वहाँ के पुराने किलों, कन्दराओं और जनता में प्रचलित किंवदंतियों को सुनकर उनके भीतर के सृजनशील कथाकार अवसर पाकर जाग उठे और 'चंद्रकांता' उपन्यास का आरंभ किया था। 1891 में इसका दूसरा भाग आया। और बाद में तीसरे और चौथे भाग भी निकले। 1894 में 'चंद्रकांता संतति' का पहला भाग प्रकाशित और इसका चौबीसवाँ तथा अंतिम भाग 1905 में हुआ। 1907 में उन्होंने 'भूतनाथ' (चंद्रकांता संतति का विस्तार) की रचना आरंभ की।

उन्होंने 'कटोरा भर खून' (1895), 'नौलखा हार' (1899), 'काजर की कोठरी' (1902) आदि अपराध प्रधान रचनाएँ लिखी। 'गुप्त गोदना' (1913) उनका अपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास है।

किशोरीला गोस्वामी का उपन्यास 'स्वर्गीय कुसुम' का रचना काल है 1889। इसका प्रथम प्रकाशन 1901 में हुआ। इसका मुख्य कथ्य देवदासी प्रथा की आलोचना और वेश्या जीवन का चित्रण। दक्षिण भारत में देवदासी प्रथा धार्मिक प्रथा के रूप में प्रचलित थी। अंधविश्वास के रूप में प्रचलित इस प्रथा के आड़ में वेश्या वृत्ति को प्रोत्साहन मिलता था। 'सवर्गीय कुसुम' वेश्या वृत्ति पर आधारित हिंदी का पहला उपन्यास है।

कुँवर हनुमंत सिंह रघुवंशी ने सर्वप्रथ 'चंद्रकला' (1893) में बाल विवाह के कुपरिणामों का चित्रण किया। 'अद्‌भुत लाश' (1896) और 'गुप्तचर' (1899) में प्रकाशित गोपालराम गहमरी के उपन्यास जासूसी उपन्यासों की श्रेणी में आते हैं। महता लज्जाराम शर्मा की उपन्यासों 'धूर्त रसिकला' (1899) और 'स्वतंत्र रमा और परतंत्र लक्ष्मी' (1899) में मनोरंजन, शिक्षा, प्रजा के सच्चे चरित्र को देखा जा सकता है। हरिऔध ने 'ठेठ हिंदी की ठाठ' (1899) में ब्राह्मण समाज की वैवाहिक प्रथाओं के दोषों का चित्रण किया है।

'अद्‌भुत प्रायश्चित' (1901, ब्रजनंदन सहाय) में शराबबंदी आंदोलन का चित्रण है। 'सौंदर्योपासक' (1911, ब्रजनंदन सहाय) में तिलक-दहेज, वृद्ध विवाह आदि का विरोध है। है। गया प्रसाद मिश्र के 'संसार की कुछ बातें' (1903), गिरिजानंदन तिवारी के 'विद्याधरी' (1904), 'सुलोचना' (1906), गोपाललाल खत्री के 'अलबेला रागिया' (1906), रामप्रसाद सतीलाल के 'किरण शशी' (1909), जयरामप्रसाद गुप्त के 'जहर का प्याला' (1909) में वेश्याओं के कुकृत्यों का चित्रण है।

विधवा विवाह का समर्थन पहली बार श्रद्धाराम फिल्लौरी ने 'भाग्यवती' (1877) में किया था, पर शिक्षा विभाग के आदेश से उस अंश को मुद्रित संस्करण (1887) से निकाल दिया गया था। उसके बाद प्रेमचंद ने उर्दू में लिखित और हिंदी में रूपांतरित 'प्रेमा' (1907) में विधवा का चित्रण और समर्थन किया। ईश्वरी प्रसाद शर्मा के उपन्यास का नाम है 'जैसी करनी वैसी भरनी' (1910)।

यथार्थ चित्रण की दृष्टि से इस काल के उपन्यासों में मन्नन द्विवेदी कृत 'रामलाल' (1914) उल्लेखनीय है। गोपाल राय इसे ग्रामीण जीवन के चित्रण की दृष्टि से प्रेमचंदपूर्व युग के उपन्यासों में अद्वितीय मानते हैं। बालकृष्ण भट्ट के उपन्यासों में अवध के गाँवों की पृष्ठभूमि को देखा जा सकता है। 'बलवंत भूमिहार' में भुवनेश्वर मिश्र ने जमींदारी जीवन का चित्र प्रस्तुत किया है।

गोपाल राय ने 'हिंदी उपन्यास का इतिहास' में यह लिखा है कि "हिंदी की पहली मौलिक उपन्यास लेखिका कोई 'साध्वी सती प्राण अबला' थीं जिन्होंने अपना वास्तविक नाम गुप्त रखकर 1890 में 'सुहासिनी' नामक उपन्यास लिखा और प्रकाशित कराया था। यदि ये 'अबला' ब्रजरत्न दास के अनुसार मल्लिका देवी (बंग महिला) ही हैं, तो उन्हीं को हिंदी की पहली मौलिक उपन्यास लेखिका भी मानना होगा।" (हिंदी उपन्यास का इतिहास, पृ. 163)। 1893 में श्रीमती हरदेवी के 'हुकूम देवी' नामक उपन्यास आया। प्रेमचंद युग के पूर्व की अन्य

महिला उपन्यासकारों में प्रियंवदा देवी (लक्ष्मी, 1908), कुंती देवी (पार्वती, 1909),यशोदा देवी (सच्चा पतिप्रेम, 1911), हेमंत कुमारी चौधरी (आदर्श माता, 1912), ब्रह्मयकुमारी भगवान देवी दूबे (सौंदर्य कुमारी, 1914) और श्रीमती कुमुदबाला देवी (सदाचारिणी, 1917) उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- वेश्या वृत्ति पर आधारित हिंदी का पहला उपन्यास ..... है।
- हिंदी साहित्य के इतिहास में पहली बार विधवा विवाह का समर्थन किसने किया?
- बाल विवाह के कुपरिणामों का चित्रण किस उपन्यास में हुआ है?
- प्रेमचंद युग के पूर्व की कुछ महिला उपन्यासकारों का नाम बताइए।

1.3.3 प्रेमचंदयुगीन हिंदी उपन्यास

अब तक आप प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यासों का अध्ययन कर चुके हैं। हिंदी साहित्य में प्रेमचंद के आगमन के साथ धीरे-धीरे राष्ट्रीय चेतना और समाज सुधार की भावना प्रबल होती गई। उपन्यास विधा का उत्तरोत्तर विकास हुआ। 1918-1936 की समय सीमा को प्रेमचंद युग माना जाता है। प्रेमचंद इस काल के ही नहीं बल्कि हिंदी उपन्यास के भी शिखर लेखक हैं। उन्होंने वस्तु, शिल्प और भाषा सभी दृष्टियों से उपन्यास विधा को शिखर पर पहुँचाया। हिंदी उपन्यास विधा को प्रौढ़ बना दिया। क्योंकि उपन्यास विधा ऐयारी-तिलिस्म, जासूसी दुनिया से मुक्त हुआ।

हिंदी में प्रेमचंद का आगमन 'सेवासदन' (1918) के साथ हुआ। उर्दू में 'बाजारे हुस्न' शीर्षक से पहले ही लिखा गया था। इसी के आधार इसे उनका पहला 'हिंदी' उपन्यास माना जाता है। इसमें वेश्या जीवन से संबद्ध समस्याओं का चित्रण है। 'प्रेमाश्रम' (1922), 'रंगभूमि' (1925) भी उर्दू में पहले लिखे गए थे। प्रेमचंद का हिंदी में मूल रूप से लिखा गया उपन्यास है 'कायाकल्प' (1926)। इसके बाद 'निर्मला' (1927), 'गबन' (1931), 'कर्मभूमि' (1932) और 'गोदान' (1936) उनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं। 'मंगलसूत्र' उनका अधूरा उपन्यास है।

ध्यान देने की बात है कि प्रेमचंद देश की पराधीनता की यथार्थ स्थिति को उपन्यासों में चित्रित करते हैं। देश की आजादी को प्रेमचंद आर्थिक शोषण और दमन से जोड़कर देखते थे। उनके उपन्यासों में स्वाधीनता संग्राम का सीधा चित्रण नहीं मिलता लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि जनता को तभी स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ा जा सकता है जब वे सामाजिक बुराइयों से दूर रहेंगे और आर्थिक रूप से भी संपन्न रहेंगे। 'प्रेमाश्रम', 'कायाकल्प', 'कर्मभूमि', 'रंगभूमि' और 'गोदान' में किसानों एवं मजदूरों के शोषण तथा सरकारी दमन नीति का अत्यंत जीवंत और मर्मस्पर्शी चित्र अंकित किया है।

प्रेमचंद्र ने 'सेवासदन' के कृष्णचंद्र तथा पद्मसिंह शर्मा, 'रंगभूमि' के ताहिर अली, निर्मला के मुंशी टोतारां और उदयभानु लाल, गबन के मुंशी दयानाथ आदि के माध्यम से मध्यवर्गीय अंतर्विरोधों को बखूबी दिखाया है। उन्होंने स्त्री समस्याओं को भी रेखांकित किया है। 'निर्मला' में उन्होंने यह दर्शाया है कि निर्धनता के करण जब लड़की का विवाह बूढ़े से किया जाता है तो उसकी जिंदगी नरक बन जाती है। 'गबन' में विधवा की असहाय स्थिति का अंकन है। 'रंगभूमि'

की इंदु के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध किया कि स्त्री चाहे संपन्न वर्ग की ही क्यों न हो दासता की जंजीरों में जकड़ना उसकी नियती है। सोफिया (रंगभूमि), जालपा (गबन), सुखदा (कर्मभूमि) और मालती (गोदान) जैसी विद्रोहिणी स्त्रियाँ भी परंपरागत आदर्शों की शिकार हो जाती हैं।

प्रेमचंद युगीन अन्य उपन्यासकारों में विश्वंभर नाथ शर्मा कौशिक (भिखारिणी), चतुरसेन शास्त्री (आत्मदाह), प्रतापनारायण श्रीवास्तव (विदा), शिवपूजन सहाय (देहाती दुनिया), बेचन शर्मा 'उग्र' (बुधुआ की बेटी), ऋषभचरण जैन (दिल्ली का व्यभिचार), जयशंकर प्रसाद (तितली), भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा), राधिकारमण प्रसाद (राम-रहीम), भगवतीप्रसाद वाजपेयी (प्रेमपथ), वृंदावन लाल वर्मा (संगम), राहुल सांकृत्यायन (शैतान की आँख), सूर्यकांत त्रिपाठी निराला (अप्सरा), जैनेंद्र (सुनीता) आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रेमचंद युग में रुक्मिणी देवी (मेम और साहब), कुंती (सुंदरी), विमला देवी चौधरानी (कामिनी), रत्ना देवी शर्मा (सुमति), शैलकुमारी देवी (उमा सुंदरी), गिरिजा देवी (कमला कुसुम), कुमारी तेजराज दीक्षित (हृदय का काँटा), उषा देवी मित्रा (वचन का मोल) आदि ने महती भूमिका निभाई।

छात्रो! ध्यान देने की बात है कि सहयोगी लेखन के रूप में लिखने की परंपरा की शुरुआत भी इसी काल में हुई। 1927 में 'त्रिमूर्ति' के नाम से 'मीठी चुटकी' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ था। इसके लेखक भगवती प्रसाद वाजपेयी, वर्मा और शंभू दयाला सक्सेना थे। दूसरी उपन्यास जैनेंद्र और ऋषभचरण जैन द्वारा संयुक्त रूप से लिखित 'तपोभूमि' है। इसका केंद्रीय विषय है प्रेम। 'ग्यारह सपनों का देश', 'एक इंच मुस्कान' और 'बारह खंभा' इसी परंपरा के उपन्यास हैं।

बोध प्रश्न

- हिंदी में प्रेमचंद का आगमन किस उपन्यास से हुआ?
- प्रेमचंद का अधूरा उपन्यास ..... है।
- प्रेमचंद युगीन उपन्यासकारों का नाम बताइए।
- प्रेमचंद युगीन महिला उपन्यासकारों का नाम बताइए।
- सहलेखन लेखन के रूप में लिखित उपन्यासों के नाम बताइए।

1.3.4 प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यास

प्रिय छात्रो! प्रेमचंद के समय जिन औपन्यासिक प्रवृत्तियों की नींव पड़ी, उनका विकास प्रेमचंद के बाद हुआ। इन प्रवृत्तियों में मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, आंचलिक आदि प्रमुख हैं। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, देवराज उल्लेखनीय हैं।

मनोवैज्ञानिक उपन्यास

जैनेंद्र ने 'सुनीता' उपन्यास के साथ हिंदी उपन्यास क्षेत्र में एक नए मोड का निर्माण किया। 1937 में 'त्यागपत्र' और 1939 में 'कल्याणी' का प्रकाशन हुआ। 'त्यागपत्र' की मृणाल परंपरागत स्त्री-संहिता का उल्लंघन करती है। "मृणाल अपने स्वभाव और संवेदना में सामान्य स्त्री से भिन्न है। यह भिन्नता ही पक्की नींव वाली व्यवस्था से उसके संघर्ष और उसकी त्रासदी का

करण बनता है।" (गोपाल राय, हिंदी उपन्यास का इतिहास, पृ.171)। रामदरश मिश्र कहते हैं कि "करुणा के लिए देह को समर्पित करते चलना, यह शायद जैनेंद्र जी के पात्रों को ही संभव हो पाता है।" (हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ.95)।

'निर्वासित' (1946, इलाचंद्र जोशी) में मध्यवर्गीय व्यक्ति की कुंठा को देखा जा सकता है। यौन कुंठा के कारण के रूप में लेखक ने प्रमुख रूप से आदर्शवादिता और भावुकता को माना है। महीप प्रेम में हारा हुआ पात्र है। वह क्रांति की योजना बनाता है। यह वस्तुतः दमित प्रेम का दूसरा रूप है। लेकिन वहाँ भी टिक नहीं पाता, गांधीवादी बन जाता है। क्रांतिकारियों के हाथ घायल हो जाता है और जेल में दम तोड़ता है। मध्यवर्गीय व्यक्ति की कुंठा के बहाने सामाजिक समस्याओं का ही चित्रण है।

हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को प्रौढ़ स्तर पर पहुँचाने के काम अज्ञेय ने किया। शेखर : एक जीवनी(दो भाग), 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी' आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं। शेखर : एक जीवनीजीवनी के रूप में लिखा गया एक उपन्यास है। मनोविज्ञान के कारण ही जीवनी-प्रधान उपन्यास सामने आए। शेखर एक सामान्य मनुष्य है। रामदरश मिश्र उसे एक ऐसा मनुष्य मानते हैं जो महान भी है और दिन भी। महान इसलिए कि उसकी जिज्ञासा में लगन और निष्ठा है तथा दीन इसलिए कि तीव्रता के करण ही वह केवल हेतुवादी रह जाता है। शेखर को अज्ञेय ने एक ऐसे व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है जो अपनी अनुभूतियों के प्रति बेहद ईमानदार है। उसके मन में जिज्ञासाएँ पैदा होती हैं। वह अपने अनुभव सी सीखता है। अज्ञेय की मान्यता है कि वेदना में एक शक्ति है जो दृष्टि देती है। दुख सबको माँजता है और सिखा देता है। शेखर के माध्यम से लेखक ने देश प्रेम, मानव-प्रेम, अस्पृश्यता, जातिभेद, शिक्षा-दीक्षा आदि अनेक प्रश्नों को उठाया है।

'नदी के द्वीप' के माध्यम से अज्ञेय ने यह निरूपित किया है कि मनुष्य नदी का वह द्वीप है नदी की धारा से घिरा हुआ होते हुए भी अपना एक स्वतंत्र अस्तित्व रखता है। 'अपने-अपने अजनबी' में उन्होंने मनोविज्ञान और अस्तित्ववाद का सुंदर समन्वय किया है।

'अजय की डायरी' (1960, देवराज) डायरी के रूप लिखा गया उपन्यास है। अजय एक मध्यवर्गीय युवक है जो नास्तिक और स्वकेंद्रित है। उसमें लेखक ने मध्यवर्गीय कायरता को दिखाया है। वह परिस्थितियों से पलायन करता है।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंदोत्तर कला के कुछ मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का नाम बताइए।

सामाजिक उपन्यास

प्रेमचंद के बाद सामाजिक जीवन को चित्रित करने वाले उपन्यासकारों की लंबी परंपरा है –

निराला का बिल्लेसुर बकरिहा' (1945) यह संस्मरणात्मक उपन्यास। प्रगतिशील साहित्य का नमूना है। बिल्लेसुर अपने जीवन के अनुभव और संघर्ष से यह सीखता है कि जाति-पाँति महज एक ढकोसला है।

यशपाल ने 'दादा कॉमरेड' (1941) में प्रमुख रूप से दो प्रश्न उठाए गए हैं - एक यह कि क्रांति समाजवाद से होगी या आतंकवाद से? और दूसरा यह कि क्या स्थापित आचरण वास्तव में मूल्यवान है इसे बदलना है? 1958 में रचित 'झूठा सच' के माध्यम से यशपाल ने देश के बटवारे के समय तथा उसके पूर्व और बाद की सांप्रदायिक विभीषिका का चित्रण किया है।

'बड़ी-बड़ी आँखें' (1955) उपन्यास में उपेन्द्रनाथ अश्क ने आधुनिक आश्रमों अथवा सर्वोदयी संस्थाओं की विसंगतियों को उजागर किया है। अमृतलाल नागर के 'बूँद और समुद्र' (1956) में व्यक्ति और समाज के संबंधों को देखा जा सकता है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जीवन की विसंगतियों को देखा सकता है। 'उसका बचपन' (1956) में प्रकाशित कृष्ण बलदेव वैद का यह उपन्यास कूटे बच्चे बीरू के मनोभावों का चित्रण है।

भगवती चरण वर्मा ने 'भूले बिसरे चित्र' (1959) में चार पीढ़ियों के माध्यम से परिवार, वर्ग और राष्ट्र की पचास वर्षों की गतिशील चेतना, उभरते मूल्य, द्वंद्व आदि को दिखाया है।

'सूरज का सातवाँ घोड़ा' (धर्मवीर भारती, 1952) में मध्यवर्गीय परिवार के टूटे हुए विशृंखलित जीवन का चित्र है। भैरव प्रसाद गुप्त ने 'गंगा मैया' (1953) में किसान परिवार का यथार्थ, जमींदार के अत्याचारों और घातक रीति-रिवाजों का चित्रण किया है और 'सती मैया का चौरा' (1959) में हिंदू-मुस्लिम की मैत्री के माध्यम से समाज में अमानवीय विसंगतियों पर से पर्दा हटाया है।

मोहन राकेश ने 'अँधेरे बंद कमरे' (1961) नई दिल्ली के अभिजात जीवन को प्रस्तुत किया है। लक्ष्मीनारायण लाल ने 1961 में प्रकाशित 'बड़ी चम्पा, छोटी चम्पा' में वेश्या जीवन की समस्या का चित्रण किया है। नरेश मेहता का 'यह पथ बंधु था' (1962) मध्यवर्गीय व्यक्ति की यातना है, उसकी मानसिक उद्वेलन है। इस उपन्यास में 'पथ' अनुभव का है, इसलिए वही 'बंधु' है। "अनुभव ही बंधु हो सकता है सुख का, दुख का।" (रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ. 161)। 'उखड़े हुए लोग' (1964, राजेंद्र यादव) के केंद्र में देशबंधु जैसे पूँजीवादी नेता है। वह बाहरी शालीनता से भीतरी कुरूपता को ढक देता है। इस यथार्थ को लेखक ने बखूबी चित्रित किया है। शानी का 'काला जल' (1965) मध्यवर्गीय मुस्लिम परिवार की समस्त विसंगतियों को उजागर करने में सफल है। उपन्यास के अनत में लेखक ने सामाजिक एवं राजनैतिक विसंगतियों की ओर संकेत किया है।

निर्मल वर्मा के 'वे दिन' (1966) की कथाभूमि चेकोस्लोवाकिया है। "यह उपन्यास द्वितीय समरोत्तर यूरोप के जीवन में उत्पन्न होने वाले अकेलेपन, निरर्थकता और विसंगति की पहचान कराता है। इसके लिए लेखक रायना जैसी पति-परित्यक्ता नारी को केंद्र में रखा है।" (रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ. 166)। गिरिराज किशोर के उपन्यास 'लोग' का शीर्षक पढ़कर यह समझना स्वाभाविक है कि यह जनसामान्य की कथा है, लेकिन 1966 में प्रकाशित इस उपन्यास के केंद्र में कुछ विशिष्ट लोग हैं जो भारतीय स्वाधीनता-प्राप्ति की संभावना के समय असुरक्षा अनुभव करते हुए अपने छूटते हुए वर्तमान और अदृश्य भविष्य के बीच लटक रहे थे।

1973 में प्रकाशित भीष्म साहनी कृत 'तमस' भारत विभाजन से संबंधित कटु यथार्थ का चित्रण है। इसमें भारत विभाजन के कारणों को दर्शाया गया है। अंग्रेजी सत्ता की षड्यंत्रकारी नीति पर से पर्दा हटाया गया है। सत्ता नहीं चाहती कि हिंदू और मुसलमान के बीच सद्भावनापूर्ण वातावरण हो। अपने स्वार्थ वृत्ति को तृप्त करने के लिए शासकों द्वारा फेंकी गई चिंगारी को राजनेता धधका रहे थे।

1970 में प्रकाशित गिरिराज आस्थाना कृत 'धूप छाहीं रंग' उपन्यास दो भागों में प्रकाशित महाकाय उपन्यास है। पहले खंड में युद्ध की विभीषिका है तथा दूसरे में शांत सुविधापूर्ण जीवन। जगदंबा प्रसाद दीक्षित का 'मुर्दाघर' (1974) बंबई हिंदी का एक उत्तम उदाहरण है। इसमें उन्होंने बंबई की झोंपड़ी में रहने वाली अनेक स्त्रियों की यातनामय कथा है। इसी प्रकार 'यह भी नहीं' (1976, महीप सिंह) बंबई के मध्यवर्गीय जीवन से संबंधित है।

राही मासूम रज़ा कृत 'कटरा बी आर्ज़ू' (1979) में आपातकाल की घटनाओं और प्रभावों का चित्रण है। विष्णु प्रभाकर ने 'कोई तो' (1980) में मध्यवर्ग की यौन नैतिकता का प्रश्न उठाया है। इनके अतिरिक्त 'धुआँ' (1976, अमृतराय), 'मृगान्तक' (गंगा प्रसाद विमल), 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' (कमलेश्वर), 'कुरु-कुरु स्वाहा' (मनोहर श्याम जोशी), 'लाल-पीली जमीन' (गोविंद मिश्र) आदि उपन्यास उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंदोत्तर कला के कुछ सामाजिक उपन्यासों का नाम बताइए।

ऐतिहासिक उपन्यास

साहित्यकार इतिहासकार की भाँति सभी चीजों को स्थूल रूप से अंकित करता, बल्कि वह ऐतिहासिक परिवेश को प्रस्तुत करता है। साथ ही कल्पना का समावेश भी करता है। वृंदावन लाल वर्मा के 'कचनार', 'विराट की पद्मिनी', 'झांसी की रानी', 'मृगनयनी' इसी श्रेणी के उपन्यास हैं। भगवती चरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' में पाप-पुण्य की परिभाषा को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर उकेरा गया है। राहुल सांकृत्यायन के ऐतिहासिक उपन्यास 'सिंह सेनापति' (1947) का कथानक बौद्ध काल का है। चतुरसेन शास्त्री के 'वैशाली की नगरवधू' (बुद्धकालीन गणतंत्र की व्यवस्था), 'वयं रक्षामः' और 'सोमनाथ' (मोहम्मद गज़नवी के आक्रमण की घटना) तीन ऐतिहासिक उपन्यास हैं। यशपाल कृत 'दिव्या' (1945) एक ऐतिहासिक कल्पना मात्र है। इस उपन्यास में उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि "मनुष्य ही श्रेष्ठ है और वह भोक्ता नहीं, कर्ता है।" हजारी प्रसाद द्विवेदी कृत 'बाणभट्ट की आत्मकथा' (1946) आत्मकथात्मक पद्धति पर लिखा गया उपन्यास है। इसके कुछ ही पत्र ऐतिहासिक हैं जैसे - बाण, हर्षवर्धन, कृष्णवर्द्धन, शीलभद्र, राज्यश्री और जयंत भट्ट। घटनाएँ काल्पनिक होती हुई भी उस युग और समाज के अनुरूप हैं। इनके अतिरिक्त 'चारुचंद्र लेख' (1963), 'पुनर्नवा' (1972) भी द्विवेदी के ऐतिहासिक उपन्यास हैं। 'मुरदों का टीला' (1948, रांगेय राघव) में मोहनजोदाडो की संस्कृति और सभ्यता को आधार बनाया गया है। 'मानस का हँस' (अमृतलाल नागर) में तुलसी के जीवन पर आधारित उपन्यास।

बोध प्रश्न

- किस उपन्यास में पाप और पुण्य को परिभाषित किया गया है?
- मोहम्मद गज़नवी के आक्रमण की घटना किस उपन्यास में देखा जा सकता है?
- रांगेय राघव के किस उपन्यास में मोहनजोदाडो की संस्कृति और सभ्यता को आधार बनाया गया है?

आंचलिक उपन्यास

आंचलिक उपन्यास में अंचल ही नायक होता है। अपने जनपद की विशेषताओं और वहाँ के जीवन से संबंधित घटनाओं को आंचलिक उपन्यासकार अपनी रचनाओं के माध्यम से उजागर करता है। रामदरश मिश्र कहते हैं कि "आंचलिक उपन्यास का एक विशिष्ट अर्थ है और वह एक प्रकार की अनिवार्यता की उपज है। आंचलिक उपन्यास तो अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है।" (हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ. 225)। नागार्जुन के उपन्यासों की कथा-भूमि मिथिला है।

रामदरश मिश्र नागार्जुन के सारे उपन्यासों को आंचलिक कहते हैं। नागार्जुन का पहला उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' (1948) है। गौरी की यातना, ग्रामीण जीवन की सामाजिक विषमता, संकीर्ण मानसिकता आदि को बखूबी दिखाया है। 'बलचनमाँ' (1952) इनका बहुचर्चित उपन्यास है। इसमें निम्नवर्गीय किसान पुत्र की यातनामय जीवनगाथा है। 'नयी पौध' (1954) में यह दिखाया गया है कि सौरठ मेले में बहुत से वर एकत्र होते हैं और लोग वहाँ जाकर अपनी लड़कियों के लिए वर खोजते हैं। पितृहीन बिसेसरी का नामा उसके लिए एक साठ साल् के बूढ़े को वर के रूप में चुनता है। लेकिन गाँव की नयी पौध के लोग इसका विरोध करते हैं। वाचस्पति नामक एक सोशलिस्ट युवक उससे विवाह कर्ता है। 'बाबा बटेसरनाथ' (1954) में एक बूढ़ा बरगद जैकिसुन से गाँव की कई पीढ़ियों की कहानी सुनाता है। 'दुखनोचन' (1957) में मध्यवर्गीय समस्याओं का चित्रण है। 'वरुण के बेटे' (1957) में मछुआरों की जीवन कथा है।

'मैला आँचल' (1954, फणीरनाथ रेणु) में व्यंग्य शैली में अंचल विशेष की कथा का सजीव चित्रण किया गया है। जनता का भय, गाँव के नेताओं के चरित्र, उनका पारस्परिक विरोध, लोगों के बदलते भाव, अवसरवादिता, मूल्य परिवर्तन, राजनैतिक मूल्यों में बिखराव, भूमिहीन संथालों का संघर्ष, अराजकता आदि अनेक घटनाओं का चित्रण है।

आंचलिक उपन्यासों की परंपरा में 'सागर, लहरें और मनुष्य' (1955, उदयशंकर भट्ट), 'कब तक पुकारूँ' (1957, रांगेय राघव), 'ब्रह्मपुत्र' (1956, देवेंद्र सत्यार्थी), 'हौलदार' (1960, शैलेश मटियानी), 'जंगल के फूल' (1960, राजेंद्र अवस्थी) आदि उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- आंचलिक उपन्यासों में नायक कौन हैं?

1.3.5 समकालीन हिंदी उपन्यास

1960 के बाद भाषा-शैली और कथ्य की दृष्टि से हिंदी उपन्यास साहित्य का विकास होने लगा। 1961 में रामदरश मिश्र का 'पानी का प्राचीर' प्रकाशित हुआ। इसमें स्वाधीनता प्राप्ति तक की कहानी है। 1968 में प्रकाशित 'आधा गाँव' (राही मासूम रज़ा) में स्वाधीनता के समय

होने वाले बटवारे और पाकिस्तान की निर्मिती के परिप्रेक्ष्य में मुसलमानों की मानसिकता का चित्रण है। रामदरश मिश्र यह कहते हैं कि यदि गंगौली गाँव को यदि भारत का प्रतीक माना जाए तो यह कहा जा सकता है कि लोग भारतीय होने के स्थान पर हिंद या मुसलमान या अन्य संप्रदाय के बनते जा रहे हैं। यह रिपोर्ताज शैली में लिखा गया उपन्यास है।

श्रीलाल शुक्ल कृत 'राग दरबारी' (1968) में यह देखा जा सकता है कि राजनीति ने भारतीय गाँव की जिंदगी को तोड़ दिया है। इसमें चित्रित दरबार वैद्य जी का है। सारी घटनाओं के केंद्र में वैद्य जी ही है। शिवप्रसाद सिंह के सामने भी यही गाँव था। 'अलग-अलग वैतरणी' का गाँव अधपका है क्योंकि उसमें जड़-चेतन, होने-न होने, विवेक-अविवेक का द्वंद्व शेष है। 'जल टूटता हुआ' (1969, रामदरश मिश्र) में स्वाधीनता प्राप्ति के बाद का गाँव है। 'पानी के प्राचीर' में स्वाधीनता पूर्व का गाँव है तो 'जल टूटता हुआ' में उसके बाद का।

बालशौरि रेड्डी कृत 'जिंदगी की राह' (1962), 'भग्न सीमाएँ' (1965), 'प्रकाश और परछाईं' (1968), 'प्रोफेसर' (1971) और 'दावानल' (1979) में दक्षिण भारत के ऐतिहासिक और समकालीन जीवन को देखा जा सकता है। उनका पहला उपन्यास 'शबरी' 1959 में प्रकाशित हुआ।

मोहन राकेश (अँधेरे बंद कमरे), मधुरेश (कस्तूरी), उषा प्रियंवदा (पचपन खंभे लाल दीवारें), चंद्रकिरण सोनरेक्सा (चंदन चाँदनी), मन्नू भण्डारी (आपका बँटी), हजारी प्रसाद द्विवेदी (अनामदास का पोथा), महरुन्निसा परवेज (अकेला पलाश), विवेकी राय (समर शेष है), मृदुला गर्ग (कठगुलाब), प्रभा खेतान (कलि-कथा वाया बाइपास), गिरिराज किशोर (पहला गिरमिटिया), कृष्णा सोबती (समय सरगम), चित्रा मुद्गल (आवाँ, पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा), भगवानदास मोरवाल (बाबल तेरा देश में), मैत्रेय पुष्पा (कही ईसुरी फाग), विद्यावती दुबे (शेफाली के फूल), अनामिका (दस द्वारे का पिंजरा), रणेन्द्र (ग्लोबल गाँव का देवता), महुआ माजी (मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ), मोहनदास नैमिशराय (मुक्ति पर्व), जगदीश चंद्र (नरक कुंड में बास), नासिरा शर्मा (ठीकरे की मंगनी), बदिउज्जमाँ (छाको की वापसी), अब्दुल बिस्मिल्लाह (मुखड़ा क्या देखें), असगर वजाहत (सात आसमान), निर्मला भुराडिया (गुलाम मंडी), नीरजा माधव (यमदीप), गीतांजली श्री (रेत समाधि) आदि उपन्यासकारों ने पर्यावरण, स्त्री, दलित, वृद्ध, अल्पसंख्यक, आदिवासी, किन्नर आदि से संबंधित पहलुओं को उपन्यास के माध्यम से उजागर किया है।

'कठगुलाब', 'अर्धनारीश्वर', 'बाबल तेरा देश में', 'कही ईसुरी फाग', 'शेफाली के फूल', 'ठीकरे की मंगनी', 'तिनका तिनके पास', 'बात एक औरत की', 'मिलजुल मन' आदि उपन्यास स्त्री विमर्श की दृष्टि से महत्वपूर्ण है तो 'समय सरगम', 'गिलीगडु' वृद्धावस्था दृष्टि से। 'नरक कुंड में बास', 'मुक्ति पर्व', 'छप्पर' आदि दलित विमर्श की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं तो 'रेत समाधि' समाज की स्त्री से उम्मदें, उसका तय रास्ते से भटकने पर उपजने वाला टकराव, पितृसत्ता, मस्कुलिनिटी, स्त्री विमर्श, राजनीति, पर्यावरण, सांप्रदायिकता, ट्रांस्जेंडर ईशूज़, ब्रेन ड्रेन, विभाजन, भारत-पाकिस्तान राजनीति आदि कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

- प्रमुख समकालीन उपन्यासकारों के नाम बताइए।

1.4 पाठ सार

छात्रो! अब तक आपने हिंदी उपन्यास के उद्भव और विकास-यात्रा का अध्ययन कर चुके हैं। इस अध्ययन के आधार यह कहा जा सकता है कि हिंदी उपन्यास साहित्य आधुनिक युग का देन है। प्रेमचंद ने हिंदी उपन्यास साहित्य को प्रौढ़ावस्था में पहुँचा दिया। शिल्प और शैली की दृष्टि से उपन्यासकार हमेशा ही नए-नए प्रयोग करते रहे हैं। और आज भी यह क्रम जारी है।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. हिंदी उपन्यास का मुख्य स्वर सामाजिक रहा है।
2. गोपाल राय ने 1870 में प्रकाशित गौरीदत्त रचित 'देवरानी जेठानी की कहानी' को हिंदी का पहला उपन्यास माना है, जबकि आचार्य रामचंद्र शुक्ल यह गौरव लाला श्रीनिवास दास के 1882 में प्रकाशित उपन्यास 'परीक्षा गुरु' को देते हैं।
3. प्रेमचंद ने सामाजिक यथार्थ को उत्कर्ष पर पहुँचाया, इसलिए हिंदी उपन्यास के इतिहास में उनका केंद्रीय स्थान है।
4. आंचलिक उपन्यासों में भारतीय गाँवों में बसे नए भारत की पहचान उभरती है।
5. हिंदी उपन्यास का विकास अनेक प्रवृत्तियों के रूप में हुआ है। जैसे - सामाजिक, अतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, आंचलिक, आस्तित्ववादी आदि।
6. उत्तर आधुनिकता के उभार के साथ हिंदी उपन्यासों में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, वृद्ध विमर्श, किन्नर विमर्श और पर्यावरण विमर्श की प्रवृत्तियाँ भी सामने आईं।

1.6 शब्द संपदा

1. अभिजात	=	कुलीन, उच्च वर्ग
2. आयाम	=	विविध पहलू
3. कसौटी	=	जाँचने-परखने का मानदंड
4. नवजागरण	=	किसी युग में विचार अथवा व्यवहार के स्तर पर होने वाली चेतना
5. नास्तिक	=	वह व्यक्ति जिसकी ईश्वर आस्था न हो
6. मनोविज्ञान	=	वह शास्त्र जिसमें मानव मन की अवस्थाओं का अध्ययन होता है
7. समन्वय	=	सम्मिलित होने की क्रिया
8. हेतुवादी	=	हर बात में तर्क करने वाला

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हिंदी उपन्यास के उद्भव की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिए।
2. हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों पर प्रकाश डालिए।
3. प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यास-यात्रा की चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास साहित्य पर प्रकाश डालिए।
2. प्रेमचंद युगीन हिंदी उपन्यास साहित्य के बारे स्पष्ट कीजिए।
3. प्रेमचंदोत्तर सामाजिक उपन्यासों की चर्चा कीजिए।
4. निम्नलिखित विषयों पर टिप्पणी लिखिए -
   (i) मनोवैज्ञानिक उपन्यास
   (ii) ऐतिहासिक उपन्यास
   (iii) आंचलिक उपन्यास
   (iv) समकालीन हिंदी उपन्यास
   (v) हिंदी के प्रथम उपन्यास

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. आधुनिक जीवन का महाकाव्य किस विधा को कहते हैं? ( )
   (अ) कहानी (आ) उपन्यास (इ) नाटक (ई) निबंध
2. 'देवरानी जेठानी की कहानी' किस चेतना से जुड़ी हुई रचना थी? ( )
   (अ) समाज सुधार (आ) स्त्री-शिक्षा (इ) पुनर्जागरण (ई) सशक्तीकरण
3. 'राम रहीम' के लेखक कौन थे? ( )
   (अ) राधिकारमण प्रसाद (आ) प्रेमचंद (इ) जैनेंद्र (ई) उग्र
4. 'सिंह सेनापति' का कथानक किस काल का है? ( )

(अ) गुप्त (आ) बौद्ध (इ) मौर्य (ई) तुगलक

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. हिंदी का पहला उपन्यास ..... है और इसके रचनाकार ..... हैं।
2. हिंदी का प्रथम मौलिक उपन्यास ..... है।
3. हिंदी साहित्य के इतिहास में पहली बार विधवा विवाह का समर्थन ..... ने किया।
4. आंचलिक उपन्यास ..... जीवन का उपन्यास है।

III. सुमेल कीजिए -

1. रेत समाधि	(अ) शिवप्रसाद सिंह
2. राग दरबारी	(आ) जगदंबा प्रसाद दीक्षित
3. अलग-अलग वैतरणी	(इ) गीतांजली श्री
4. मुर्दाघर	(ई) रणेन्द्र
5. ग्लोबल गाँव का देवता	(उ) श्रीलाल शुक्ल

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. इक्कीसवीं शती का हिंदी उपन्यास : पुष्पपाल सिंह
2. हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा : रामदरश मिश्र
3. हिंदी उपन्यास का इतिहास : गोपाल राय
4. हिंदी उपन्यास का इतिहास : मधुरेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी Estd. 1998 MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 2 : हिंदी कहानी : उद्भव और विकास

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मूल पाठ : हिंदी कहानी : उद्भव और विकास

2.3.1 प्रेमचंदपूर्व हिंदी कहानी

2.3.2 प्रेमचंद युगीन हिंदी कहानी

2.3.3 प्रेमचंदोत्तर हिंदी कहानी

2.3.4 विभिन्न कहानी आंदोलन

2.3.5 वर्तमान परिदृश्य

2.4 पाठ सार

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

2.6 शब्द संपदा

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

छात्रो! हम सब दादा-दादी, नाना-नानी आदि से कहानी सुनकर ही बड़े हुए हैं। इसमें कोई संदेह नहीं। कहानी सुनना और गढ़ना मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है। उसमें कल्पना तत्व का समावेश होता ही है। बचपन में हम सब परियों और जादूगरों की कहानियाँ सुनकर बहुत खुश होते थे। कहानी कहने का ढंग भी अलग था। एक जमाने की बात है, एक देश में एक राजा रहता था, उसके पास आसमान में उड़ने वाला सफेद घोड़ा था, आदि आदि आदि। लेकिन धीरे-धीरे समय के साथ-साथ कहानी कहने की शैली बदलने लगी। कल्पना के स्थान पर यथार्थ का समावेश होने लगा। आप इस अध्याय में हिंदी कहानी के उद्भव और विकास यात्रा का अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- प्रेमचंदपूर्व की हिंदी कहानी अर्थात प्रारंभिक हिंदी कहानी की स्थिति को समझ सकेंगे।
- प्रेमचंद युग की हिंदी कहानियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रेमचंदोत्तर युग की हिंदी कहानियों की विकास यात्रा से परिचित हो सकेंगे।
- विभिन्न कहानी आंदोलनों को जाना सकेंगे।

- हिंदी कहानी के वर्तमान परिदृश्य को समझ सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : हिंदी कहानी : उद्भव और विकास

छात्रो! हिंदी कहानी के उद्भव और विकास में प्राचीन पुराकथाओं और अनेक लोक कथाओं का योगदान उल्लेखनीय है। भारतीय समाज में कहानी का अस्तित्व काफी पुराना है। हिंदी साहित्य के इतिहास को ध्यान से देखेंगे तो हम यह पाएँगे कि आधुनिक काल में गद्य के विकास के साथ ही कहानी का विकास भी होने लगा। इस दृष्टि से भारतेंदु युग को आरंभिक बिंदु कहा जा सकता है। आइए, हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि हिंदी कहानी एक स्वतंत्र विधा के रूप में कैसे विकसित हुई।

हिंदी कहानी के उद्भव और विकास यात्रा को जानने और समझने के लिए प्रेमचंद को कसौटी के रूप में अपनाया जाता है क्योंकि प्रेमचंद की कहानियों में आधुनिक हिंदी कहानी के तमाम तत्व विद्यमान हैं। अतः इस अध्ययन को प्रेमचंदपूर्व हिंदी कहानी, प्रेमचंद युगीन हिंदी कहानी और प्रेमचंदोत्तर हिंदी कहानी के रूप में विभाजित करके हम अध्ययन करेंगे। साथ ही समकालीन परिदृश्य में विभिन्न कहानी आंदोलनों के बारे में चर्चा भी करेंगे।

2.3.1 प्रेमचंदपूर्व हिंदी कहानी

हिंदी कहानी को बीसवीं सदी का देन कहा जाता है। लेकिन उससे पहले अर्थात उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भी अनेक ऐसी रचनाएँ लिखी गईं जिनमें कहानी के तत्व मिलते हैं। लेकिन इस युग में कलात्मक कहानी का आरंभ नहीं हुआ। छात्रो! आधुनिक हिंदी खड़ीबोली गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज (1800) की भूमिका को नहीं भुलाया जा सकता है। जॉन गिल क्राइस्ट के निर्देशन में उर्दू और हिंदी गद्य पुस्तकें लिखने की व्यवस्था की गई। उससे भी पहले कुछ पुस्तकें लिखी जा चुकी थीं। इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' (1803) लिखी जा चुकी थी। इतना ही नहीं, कहानी के नाम पर कुछ प्रकाशित संग्रह अवश्य प्राप्त हुए जो इस प्रकार हैं - मुंशी नवल किशोर द्वारा संपादित 'मनोहर कहानी' (1880) में संकलित एक सौ कहानियाँ, राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद कृत 'राजा भोज का सपना' (1886) और चंडीप्रसाद सिंह कृत 'हास्य रत्न' (1886), अंबिकादत्त व्यास कृत 'कथा-कुसुम-कालिका' (1888) आदि लोक प्रचलित, शिक्षा, नीति या हास्य प्रधान कथाएँ हैं। गोपाल राय ने अपनी पुस्तक 'हिंदी कहानी का इतिहास' में इस तथ्य को उजागर किया है कि "1871 में रेवरेंड जे. न्युटन रचित लगभग 2400 शब्दों की कथा 'जमींदार का दृष्टांत' प्रकाशित हुई थी। राजेंद्र गढ़वालिया ने इसे हिंदी की प्रथम कहानी मानने की सिफारिश की है, जिसे वेदप्रकाश अमिताभ का भी समर्थन प्राप्त है।" (पृ. 41)।

कहानी के नाम पर जिन स्वप्न-कथाओं का उल्लेख किया गया है, वे वस्तुतः कथात्मक निबंध हैं। इनका आरंभ भले ही कथात्मक पद्धति में हुआ हो लेकिन आगे चलकर इनमें तत्कालीन सामाजिक विकृतीयों का वर्णन पाया जाता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र और बालकृष्ण भट्ट की स्वप्न कथाएँ कहानी और निबंध के बीच की रचनाएँ हैं। कहानियों के अभाव में पाठक लल्लू लाल के 'बैताल पच्चीसी', 'सिंहासन बत्तीसी' की

कहानियों, लोककथाओं आदि से अपनी मानसिक तुष्टि कर लेता था। इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का यह कथन उल्लेखनीय है - "अंग्रेजी की मासिक पत्रिकाओं में जैसी छोटी-छोटी आख्यायिकाएँ या कहानियाँ निकला करती हैं, वैसी कहानियों की रचना 'गल्प' के नाम से बंगभाषा में चल पड़ी थीं। ये कहानियाँ जीवन के बड़े मार्मिक और भावव्यंजक खंडचित्रों के रूप में होती थीं। द्वितीय उत्थान की सारी प्रवृत्तियों का आभास लेकर प्रकट होने वाली 'सरस्वती' पत्रिका में इस प्रकार की छोटी कहानियों के दर्शन होने लगे।" (हिंदी साहित्य का इतिहास)। इससे यह स्पष्ट होता है कि 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के पूर्व कलात्मक कहानियाँ अस्तित्व में नहीं थीं।

'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन 1900 में प्रारंभ हुआ। इसके साथ ही हिंदी कहानी का जन्म माना जाता है। वस्तुतः आरंभ में लिखी गई कहानियों पर शेक्सपियर के नाटकों, लोककथाओं, बांग्ला कहानियों, संस्कृत नाटकों आदि का प्रभाव दिखाई देता है। आरंभिक कथा लेखकों में किशोरीलाल गोस्वामी, माधवप्रसाद मिश्र, बंगमहिला, रामचंद्र शुक्ल, जयशंकर प्रसाद, वृंदावनलाल वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं। किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' (1900) सरस्वती में प्रकाशित हुई। यह कहानी शेक्सपियर के 'टेम्पेस्ट' नाटक के आधार लिखी गई थी। इसी वर्ष माधवप्रसाद मिश्र की कहानी 'मन की चंचलता' सुदर्शन में प्रकाशित हुई। माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' (1901) 'छत्तीसगढ़ मित्र' में प्रकाशित हुई। भगवानदास की कहानी 'प्लेग की चुड़ैल' (1902) सरस्वती में प्रकाशित हुई। यह वास्तविक चित्र को प्रस्तुत करने वाली कहानी थी। बाद में रामचंद्र शुक्ल की कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903) और बंगमहिला की 'दुलाईवाली' (1907), वृंदावनलाल वर्मा की 'राखीबंध भाई' (1909) प्रकाशित हुईं।

हिंदी की प्रथम कहानी के संदर्भ में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वान इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' को हिंदी की पहली कहानी माना तो कुछ लोगों ने राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद कृत 'राजा भोज का सपना' को माना। कुछ अन्य विद्वानों ने किशोरीलाल गोस्वामी की 'इंदुमती', माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी', बंगमहिला की 'दुलाईवाली' तथा रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' को हिंदी की पहली कहानी माना। वस्तुतः माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को हिंदी की पहली कहानी होने का गौरव प्राप्त है।

भाषा की दृष्टि से प्रेमचंदपूर्व हिंदी कहानियों में वैसी प्रौढ़ता नजर नहीं आती जैसी प्रेमचंद युग की कहानियों में आती है। यदि कहें कि हिंदी कहानी का वास्तविक आरंभ प्रेमचंद की कहानियों के द्वारा ही हुआ है तो गलत नहीं होगा। छात्रो! आगे हम प्रेमचंद युगीन हिंदी कहानी की जानकारी प्राप्त करेंगे।

बोध प्रश्न

- उन्नीसवीं सदी में प्रकाशित कुछ रचनाओं के नाम बताइए।
- हिंदी की पहली कहानी का नाम बताइए।

2.3.2 प्रेमचंद युगीन हिंदी कहानी

वस्तुतः 1915 से प्रेमचंद युग का आरंभ माना जाता है। प्रेमचंद ने हिंदी कहानी साहित्य को तिलिस्म और जादू की दुनिया से मुक्त किया था। उन्हें युग-निर्माता के रूप में जाना जाता है। 1904 से 1916 तक प्रेमचंद धनपत राय के नाम से उर्दू में लिखते थे। बंग-भंग के साथ भारत में राष्ट्रीय चेतना का उदय हुआ। इसके परिणाम स्वरूप स्वाधीनता की भावना प्रबल हुई। मोटे तौर पर इस युग की कहानियों को दो स्कूलों में बाँट कर देखा जाता है - प्रेमचंद स्कूल और प्रसाद स्कूल। ग्राम्य समाज, सामंती शोषण, अन्याय, सामाजिक असमानता, रूढ़िवादिता और अंधविश्वास आदि प्रेमचंद स्कूल की कहानियों की मुख्य चिंता के केंद्र में थे। गौरवशाली अतीत, द्वन्द्वात्मकता आदि प्रसाद स्कूल कहानियों में दिखाई देते हैं। प्रसाद स्कूल की कहानियों की प्रकृती जहाँ मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद है, वहीं प्रेमचंद स्कूल कहानियों की प्रकृती सामाजिक यथार्थवाद है।

बोध प्रश्न

- प्रसाद स्कूल और प्रेमचंद स्कूल की कहानियों के बीच क्या अंतर है?
- प्रेमचंद ने कहानी साहित्य को किससे मुक्त किया?

स्वतंत्रता आंदोलन में प्रेमचंद का योगदान अप्रतिम है। उनकी अधिकांश कहानियों में राजनीतिक आंदोलनों की छाया देखी जा सकती है। अस्पृश्यता का खंडन, बाल विवाह और दहेज प्रथा का विरोध, विधवा विवाह और स्त्री शिक्षा का समर्थन, शराब बंदी आदि को प्रेमचंद की कहानियों में प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। उन्हें यह पता था कि जब तक देश में व्याप्त कुरीतियों तथा विसंगतियों का निर्मूलन नहीं होगा तब तक देशवासियों को स्वाधीनता संग्राम के लिए एकत्रित करना असाध्य है। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से लोगों में चेतना जगाई। प्रेमचंद की 'सोजेवतन' में संकलित पाँच कहानियों में 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न', 'शेख मखमूर', 'यही मेरा वतन है', 'सांसारिक प्रेम और देश प्रेम' राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित कहानियाँ हैं। 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' शीर्षक कहानी के माध्यम से प्रेमचंद ने यह संदेश दिया कि "खून का वह आखिरी क़तरा जो वतन की हिफाजत में गिरे दुनिया की सबसे अनमोल चीज है।' वस्तुतः प्रेमचंद मनुष्यता को कायम करने की चेष्टा की। मधुरेश की मान्यता है कि "प्रेमचंद की शुरू की कहानियाँ चरित्र पर जोर देते हुए भी मूल रूप से घटना-बहुल कहानियाँ हैं जिनमें कभी-कभी तो एक साथ इतनी घटनाओं का ढेर लगा दिया जाता है जो आज ही नहीं, उस समय भी एक अच्छे-खासे उपन्यास के लिए भी कुछ ज्यादा ही मानी जानी चाहिए। इन कहानियों में संयोग और असाधारण रूप से सरलीकृत ढंग से हृदय परिवर्तन को लेकर भी उनका आग्रह आसानी से देखा जा सकता है।" (मधुरेश, हिंदी कहानी का विकास, पृ.23)। प्रेमचंद ने ऐसे पात्र या घटना को चुना जो हृदय परिवर्तन करके आदर्श स्थापित करने में सक्षम हो। इतना ही नहीं उन्होंने पशुबल पर आत्मबल की विजय दर्शाई है। 'मैकू' जैसी कहानियों में उन्होंने महात्मा गांधी के अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांतों को दिखाया है। बिना शोर के प्रेमचंद मूल्यों को स्थापित करते हैं।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंद की कहानियों की कुछ विशेषताएँ बताइए।

प्रेमचंद हिंदू समाज और मुस्लिम समाज को अलग-अलग नहीं मानते थे। अलगाव को दूर करके शोषण मुक्त समाज निर्मित करना उनका लक्ष्य है। रामविलास शर्मा के अनुसार प्रेमचंद जनता को मशाल दिखाने वाले साहित्यकार थे। उन्होंने कहा कि प्रेमचंद अपने समय के सामाजिक जीवन को एक नई गति और एक नई दिशा प्रदान करने वाले साहित्यकार हैं। वे न ही सामाजिक जड़ता को मानते थे और न ही अतीत की ओर लौटना चाहते थे। वे आदर्श के साथ यथार्थ की स्थितियों पर बल देने वाले साहित्यकार थे। उन्होंने पूस की रात, बड़े घर की बेटी, मंदिर और मस्जिद, पंच परमेश्वर, नरक का मार्ग, स्त्री और पुरुष, नैराश्य लीला, बाँका जमींदार, स्वर्ग की देवी, ईदगाह, कफन, नमक का दारोगा, घासवाली, पत्नी से पति, ठाकुर का कुआँ आदि अनेक कहानियों के माध्यम से पाठकों के समक्ष यथार्थ को प्रस्तुत किया। "उनकी कहानियों का रचना संसार अधिकांश रूप में छल-छद्म से मुक्त भोले, निश्चल और आस्थावान लोगों का संसार है।" (मधुरेश, हिंदी कहानी का विकास, पृ. 26)। यदि प्रेमचंद के कुछ पात्र बहक भी जाते हैं तो तुरंत ही अपनी गलती स्वीकार करके पश्चाताप करते हैं। उनकी कहानियों में राष्ट्रीय भावना, देश प्रेम, सामाजिक सोद्देश्य, सांप्रदायिक सद्भाव आदि गुणों को रेखांकित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंद का लक्ष्य क्या था?

प्रेमचंद युगीन कहानिकारों में चंद्रधर शर्मा गुलेरी, जयशंकर प्रसाद, उपेंद्रनाथ अश्क, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, वृंदावनलाल वर्मा, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, गोपालराम गहमरी, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी आदि उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक हिंदी कहानी की दृष्टि से देखा जाए तो गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' (1915) उल्लेखनीय है। इस कहानी में एक ओर यथार्थ की सघनता है तो दूसरी प्रेम तथा आदर्श। इसमें कहानीकार ने आदर्श प्रेम को दर्शाया है। कहीं भी उच्छृंखलता नहीं है। प्रेम और कर्तव्य दोनों का सम्मिश्रण देखा जा सकता है। लहनासिंह और सूबेदारनी के माध्यम से उन्होंने उदात्त प्रेम और कर्तव्य बोध को दर्शाया है। गुलेरी ने अपने जीवन काल में सिर्फ तीन ही कहानियाँ लिखी थीं- 'सुखमय जीवन', 'बुद्धू का काँटा' और 'उसने कहा था', लेकिन 'उसने कहा था' के कारण वे विख्यात हुए।

जयशंकर प्रसाद की कहानियों में वस्तु और शिल्प के स्तर पर छायावादी प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। पुरस्कार, आकाशदीप, ममता, आंधी आदि में गीति-संवेदना है तो निर्वेद, आत्मकरुणा आदि में दार्शनिक धरातल है। उनकी कहानियों में एक ओर द्वंद्व और संघर्ष को देखा जा सकता है तो दूसरी ओर राष्ट्रीय भावना और सांस्कृतिक जागरण को।

उपेंद्रनाथ अश्क ने निम्नमध्य वर्ग के जीवन को अपनी रचनाओं का विषय बनाया। चारा काटने का मशीन, पहेली, जुदाई की शाम के गीत, पिंजरा आदि इनकी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

इनकी कहानियाँ मुख्य रूप से चरित्र प्रधान और यथार्थवादी हैं। इनकी कहानियों में सामाजिक तथा वैयक्तिक जीवन की समस्याओं को देखा जा सकता है।

सुदर्शन की दृष्टि सुधारवादी है। ये भी प्रेमचंद और अश्क की तरह हिंदी और उर्दू में लिखते थे। ये आदर्शोन्मुख यथार्थवादी साहित्यकार थे। इनकी कहानियों में संन्यासी, बात अठन्नी की, अँधेरी दुनिया आदि उल्लेखनीय हैं।

चतुरसेन शास्त्री का अधिकांश लेखन ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है। अक्षत, रजकण, वीर बालक, मेघनाद, सीताराम, सिंहगढ़ विजय, वीरगाथा, लम्बग्रीव, दुखवा मैं कासों कहूं सजनी, कैदी, आदर्श बालक, सोया हुआ शहर, कहानी खत्म हो गई, धरती और आसमान आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

वृंदावनलाल वर्मा ऐतिहासिक कहानीकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनके कथा का मुख्य आधार बुन्देलखंड का मध्यकालीन इतिहास है। दबे पाँव, मेढ़क का ब्याह, अम्बपुर के अमर वीर, अँगूठी का दान, शरणागत, कलाकार का दंड, तोषी आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक का दृष्टिकोण आदर्शोन्मुख यथार्थवाद है। उनकी अधिकांश कहानियों में पारिवारिक जीवन की समस्याओं एवं उनके समाधान को देखा जा सकता है। रक्षाबंधन, कल्प मंदिर, चित्रशाला, प्रेम प्रतिज्ञा, मणि माला, कल्लोल आदि उल्लेखनीय हैं।

गोपालराम गहमरी को जासूसी लेखक के रूप में जाना जाता है। हम हवालात में, जासूस से मुलाकात, जासूस को धोखा, आँखों देखी घटना आदि कुछ प्रमुख कहानियाँ हैं। इन्होंने 'जासूस' पत्रिका का प्रकाशन भी किया लेकिन आर्थिक संकट के कारण यह बंद हो गया।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी को हिंदी साहित्य जगत में मास्टर जी के नाम से जाना जाता है। मूलतः निबंधकार के रूप में इन्होंने ख्याति अर्जित की। लेकिन कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, समालोचना, आत्मकथा आदि विधाओं में रचनाएँ की। अंजलि, झलमला, कमलावती आदि इनकी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

बोध प्रश्न

- जासूसी लेखक के रूप में कौन प्रसिद्ध हैं?
- ऐतिहासिक कहानीकार के रूप में कौन प्रसिद्ध हैं?

2.3.3 प्रेमचंदोत्तर हिंदी कहानी

1936 के बाद के युग को प्रेमचंदोत्तर युग कहा जाता है। कहानी का विकास बहुत तेजी से होने लगा। एक ओर प्रेमचंद की यथार्थवादी परंपरा का विकास हो रहा था तो दूसरी ओर प्रसाद की भाववादी मनोवैज्ञानिक परंपरा। ये कहानियाँ आगे चलकर प्रगतिवादी और मनोवैज्ञानिक कहानियों के रूप में जाने जाने लगे। इस युग में कहानी साहित्य अनेक धाराओं में विभाजित हुआ।

प्रगतिवादी कहानियाँ

इन कहानियों में यथार्थ की स्थितियों को देखा जा सकता है। इन कहानियों में विशेष रूप से समाज की विसंगतियों और विद्रूपताओं को कहानीकारों ने अपने अनुभव के आधार पर अंकित किया है। वस्तुतः 1930 के आस-पास अर्थात छायावाद बाद एक नवीन सामाजिक चेतना से युक्त साहित्य का जन्म हुआ। यही धारा 1936 में प्रगतिशील अथवा प्रगतिवाद के नाम से अभिहित होने लगा। अंग्रेजी साहित्य में इसे प्रोग्रेसिव लिटरेचर कहा जाता है। पश्चिमी देशों में इसका प्रसार 1935 के आस-पास होने लगा जब ई. एम. फार्स्टर की अध्यक्षता में पेरिस में प्रोग्रेसिव राइटर्स एसोसिएशन नामक अंतरराष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। भारत में इस संस्था का प्रवर्तन मुल्कराज आनंद सज्जाद जहीर ने किया था। 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना लखनऊ में प्रेमचंद की अध्यक्षता में हुई। तभी से प्रगतिशील साहित्य का प्रचार होने लगा। कालक्रम से यही प्रगतिवाद हो गया। यद्यपि 1936 में प्रगतिशील संघ की स्थापना हुई, लेकिन 1917 में रूस में साम्यवादी प्रशासन की स्थापना हुई। इसने देश चिंतकों, नेताओं और साहित्यकारों ओ आकर्षित किया। गणपतिचंद्र गुप्त के अनुसार "भारत में साम्यवादी दल की स्थापना सन 1918 में हो चुकी थी। सन 1924 में एस. ए. डांगे के संपादन में बंबई से साम्यवादी विचारों की पत्रिका 'सोशलिस्ट' का भी प्रकाशन होने लग गया था।" इस प्रकार भारत में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना से पहले से ही साम्यवादी विचारों के प्रचार-प्रसार को देखा जा सकता है।

1930 तक आते-आते अनेक छायावादी कवि भी इन विचारों से प्रभावित होने लगे। प्रगतिशील साहित्य की रचना और प्रचार में प्रेमचंद द्वारा संपादित 'हंस' की भूमिका निर्विवाद है। प्रगतिवादी साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं – रूढ़ि विरोध, मानवतावाद का स्वर, क्रांति का स्वर, शोषितों के प्रति सहानुभूति, पूँजीपतियों का विरोध। इस प्रगतिशील आंदोलन के कारण किसान, मजदूर और मध्यवर्ग से पढ़े-लिखे युवा साहित्यकार सामने आए। ऐसे लेखकों में नागार्जुन, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, उपेंद्रनाथ अश्क, केदारनाथ अग्रवाल, शिवमंगल सिंह सुमन, रामविलास शर्मा, रांगेय राघव, अमृतराय, भीष्म साहनी, मार्कंडेय आदि उल्लेखनीय हैं। इन लेखकों में यशपाल का स्थान प्रमुख है।

यशपाल राजनीति के क्षेत्र मार्क्सवाद के समर्थक थे तथा साहित्य के क्षेत्र में प्रगतिवाद के। वे साधारण जनता को पीड़ित और शोषित समझते थे। वे इस अन्याय से मुक्ति के उपाय के रूप में साम्यवाद की द्वंद्वात्मक भौतिकवाद को मानते थे। 1939 में उनकी कहानियों का संकलन 'पिंजरे की उड़ान' नाम से प्रकाशित हुआ। 'परलोक' शीर्षक कहानी भारतवासियों के अंधविश्वासों पर व्यंग्य करती है। 'शंबूक', 'नारद परशुराम संवाद', 'फूलो का कुर्ता', 'खच्चर और आदमी', 'उत्तराधिकारी', 'उत्तमी की माँ', 'महाराज का इलाज', 'परदा', 'काला आदमी' आदि कुछ प्रमुख कहानियाँ हैं जिनके माध्यम से उन्होंने सामाजिक कुरूपताओं को उजागर करके जनता को जागरूक करने का प्रयास किया।

बोध प्रश्न

- प्रगतिवादी कहानियों की कुछ प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।

मनोवैज्ञानिक कहानियाँ

प्रेमचंद युग के बाद कुछ साहित्यकार सामने ये जिन्होंने व्यक्ति मन को कहानी के केंद्र में रखा। इन कहानीकारों की रुचि सामाजिक समस्याओं पर न होकर व्यक्ति की मानसिक पीड़ा, उसका अंतर्द्वंद्व आदि में थी। मनुष्य की अवचेतन क्रियाओं और उसके कारण उत्पन्न मानसिक ग्रंथियों को लेकर कहानियों का सृजन किया गया। मनोवैज्ञानिक कहानियों में वातावरण का चित्रण प्रधान होता है। साथ ही स्वायत्त प्रेम, काम और कर्तव्य का संघर्ष आदि कुछ तत्वों को इन कहानियों में देख सकते हैं। मनोविश्लेषण ने एक दृष्टि के रूप में साहित्यकारों को आकर्षित किया। जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी और अज्ञेय की कहानियों को इस कोटि में रखा जा सकता है। जैनेंद्र की कहानियों में दार्शनिकता का प्रभाव भी दिखाई देता है। उनकी आरंभिक कहानियों का संग्रह है 'फाँसी'। 'पाजेब', 'एक रात', 'गदर के बाद', 'जयसंधि', 'रानी महामाया', 'नीलमदेश की राजकन्या', 'मास्टर जी' आदि उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं। अज्ञेय की कहानियों में 'गैंगरीन', 'जिजीविषा', 'चिड़ियाघर', 'पहाड़ी जीवन', 'अलिखित कहानी', 'खितीन बाबू', 'रोज' आदि अज्ञेय की प्रमुख कहानियाँ हैं। प्रेमचंद ने जैनेंद्र को भारत का गोर्की कहा था।

बोध प्रश्न

- मनोविज्ञान की कुछ प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।

2.3.4 विभिन्न कहानी आंदोलन

छात्रो! स्वतंत्रता के बाद कहानी साहित्य में अनेक बदलाव आए। हिंदी कहानी साहित्य के इतिहास में विभिन्न आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। कुछ प्रमुख हिंदी कहानी आंदोलन इस प्रकार हैं - नई कहानी आंदोलन, साठोत्तरी अथवा अ-कहानी आंदोलन और अन्य आंदोलन। आइए! इन आंदोलन के बारे में चर्चा करेंगे।

नई कहानी आंदोलन

1950 के बाद कहानियों में नई प्रवृत्तियाँ उभरने लगीं। परिणाम स्वरूप 'नई कहानी' आंदोलन का उदय हुआ। यह भारतीय जनता की आकांक्षाओं और सपनों के साथ आगे बढ़ता गया। इसने नई अभिव्यक्तियों को स्थान दिया। यदि कहें कि नई कहानी प्रेमचंद की 'पूस की रात' और 'कफन' से सूत्र ग्रहण करके आगे बढ़ी तो गलत नहीं होगा। नई कहानी में प्रतीकात्मकता और बिंबात्मकता का महत्व बढ़ने लगा। कहानीकार यथार्थ को नए ढंग से चित्रित करने लगे। यह वस्तुतः समकालीन व्यवस्था के प्रति विद्रोह है। 'नई कहानी' संज्ञा का प्रयोग दुष्यंत कुमार ने अपने लेख 'नई कहानी : परंपरा और प्रयोग' में पहली बार किया था। यह कल्पना पत्रिका में 1955 (जनवरी) में प्रकाशित हुआ था।

आजादी के साथ-साथ देश विभाजन की त्रासदी ने लोगों को झकझोर दिया। जहाँ देखें वहाँ लाशों का ढेर। भ्रष्टाचार चारों ओर पनपने लगा। नया औद्योगिक समाज पनपने लगा। उसने लोगों के सपनों को कुचल दिया। स्वार्थ सर्वोपरि हो गया। इन सब परिस्थितियों से

संवेदनशील रचनाकार आहत हुए। उन्हें यह महसूस होने लगा कि हर सिद्धांत झूठ है। कहानीकार ने इन परिस्थितियों में अनुभव को अभिव्यक्त करने लगा। यह उसकी स्वानुभूति थी। वह आपबीती को ही अभिव्यक्त करने लगा। उसका सुख-दुख कहानी का सुख-दुख बन गया। इसीलिए इस दौर की कहानी को 'नई' कहा गया है। 'जिंदगी और जोंक' (अमरकांत), 'गुलकी बन्नो' (धर्मवीर भारती), 'तीसरी कसम' (फनीश्वरनाथ रेणु), 'नन्हो' (शिवप्रसाद सिंह), 'बदबू' (शेखर जोशी), 'प्रेत-मुक्ति' (शैलेश मटियानी), 'भोलाराम का जीव' (हरिशंकर परसाई), ''मच्छलियाँ' (उषा प्रियंवदा), 'खोई हुई दिशाएँ' (कमलेश्वर), 'मेरा दुश्मन' (कृष्ण बलदेव वैद), 'चीफ की दावत' (भीष्म साहनी), 'दूध और दवा' (मार्कंडेय) आदि इस दृष्टि से प्रमुख कहानियाँ हैं। इन कहानियों को पढ़ते समय हम इन पात्रों से घुलमिल जाते हैं। साधारणीकरण हो जाता है। इस दौर में मूल्य ह्रास, पारिवारिक विघटन, संबंध विच्छेद, पीढ़ी अंतराल, शहरों की ओर पलायन, माता-पिता की नोस्टालजिया, नई पीढ़ी की संवेदनहीनता आदि इस दौर की कहानियों में विषय वस्तु के स्तर पर सामने आए। नई कहानी ने अनेक नए सवाल उठाए।

बोध प्रश्न

- नई कहानी की प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।

साठोत्तरी अथवा अ-कहानी आंदोलन

1965 में नई कहानी की महिमा मंडन के उद्देश्य से कोलकाता में एक गोष्ठी का आयोजन हुआ। इस आयोजन में नई कहानी के विरुद्ध असंतोष के स्वर उभरने लगे। कुछ ही दिन बाद आरा (बिहार) में एक कथा गोष्ठी का आयोजन हुआ। इसमें साठ के बाद उभरने वाली कथाकार पीढ़ी सम्मिलित थी। इसमें कमलेश्वर, काशीनाथ सिंह, रवींद्र कालीय, दूधनाथ सिंह, गंगाप्रसाद विमल, मधुकर सिंह आदि कहानीकारों ने हिस्सा लिया। इस गोष्ठी में साठोत्तरी दौर की कहानी को साठोत्तरी कहानी, समकालीन कहानी, आज की कहानी और अ-कहानी आदि नामों से अभिहित किया गया। गंगाप्रसाद विमल ने 'अ-कहानी' नाम प्रस्तावित किया था। इस दौर की कहानी में अनुभव की प्रामाणिकता पर बाल दिया गया। इन कहानीकारों का कहना था कि 1860 से लेकर 1960 तक लिखी गई कहानियों में अनुभव की प्रामाणिकता का अभाव है। वस्तुतः इस दौर की कहानियों में 'बोल्डनेस' बढ़ी। महानगरीय जीवन की विसंगतियों एवं विद्रूपताओं को खुलकर चित्रित किया जाने लगा। 'खुलापन' इस दौर की कहानियों की प्रमुख विशेषता है। इसकी शुरूआत 'नई कहानी' में हो चुकी थी लेकिन इस दौर की कहानियों में भारतीय समाज के मानदंड के अनुसार 'अश्लीलता' के हद में प्रवेश कर गई। ममता कालिया, राजकमल चौधरी, महेंद्र भल्ला जैसे कहानीकारों ने स्त्री-पुरुष संबंधों को नई दृष्टि से देखा और अंतरंग विषयों को भी कहानियों में स्थान दिया। 'एक पति का नोट्स' (महेंद्र भल्ला), 'ट्यूमर' (श्रीकांत वर्मा), 'रीछ' (दूधनाथ सिंह), 'मछली जाल' (राजकमल चौधरी) आदि कुछ उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इस दौर में कहानी कहने का ढंग भी बदल गया। कहानियों में प्रतीकों और बिंबों का खूब प्रयोग होने लगा। 'मैं' शैली का प्रयोग बढ़ा। कहानियों में संस्मरणात्मकता बढ़ी। कहानी अमूर्तता की ओर बढ़ने लगी। परिस्थितियाँ प्रमुख होने लगीं। इन कहानियों में घुटन, संत्रास, अकेलापन, अजनबीपन, अवसाद, भटकाव, कुंठा आदि पनपने लगे।

बोध प्रश्न

- साठोत्तरी कहानी की प्रमुख विशेषता क्या है?

अन्य आंदोलन

अन्य कहानी आंदोलनों में सचेत कहानी आंदोलन, सहज कहानी आंदोलन, समांतर कहानी आंदोलन, सक्रिय कहानी आंदोलन और जनवादी कहानी आंदोलन प्रमुख हैं।

सचेतन कहानी की शुरूआत नवंबर 1964 में प्रकाशित 'सचेतन कहानी विशेषांक' से हुई। इसका संपादन महीप सिंह ने किया था। इस आंदोलन का नेतृत्व महीप सिंह (बलॉटिंग पेपर) ने किया था। उनके अनुसार "सचेतन कहानी एक दृष्टि है। वह दृष्टि जिसमें जीवन जिया जाता है और जाना भी जाता है।" सचेतन कहानीकार मनुष्य जीवन को सर्वांगीण रूप से देखना चाहते थे। मनहर चौहान (बीस सुबहों के बाद), धर्मेंद्र गुप्त (मोड से पहले), योगेश गुप्त (एन्कलोजर) आदि इस आंदोलन से जुड़े हुए थे।

सहज कहानी आंदोलन की वकालत अमृतराय ने की थी। उन्होंने कहानी में कथा-रस को अनिवार्य बताया। यह आंदोलन व्यापक नहीं बन पाया।

इसके बाद कमलेश्वर के नेतृत्व में समांतर कहानी आंदोलन सामने आया। उन्होंने 'सारिका' पत्रिका के संपादन के दौरान इस आंदोलन को आगे बढ़ाया। इस कहानी में सामान्य जनता का पक्ष लेते हुए डॉ. विनय ने कहा कि "समांतर कहानी का नायक 'सामान्य जन' लोक जीवन में विविध स्थितियों में ग्रस्त और त्रस्त हैं।" आर्थिक रूप से वह चारों ओर से टूटा हुआ व्यक्ति है। यह आंदोलन आम आदमी को अपनी तरह से परिभाषित करता है। इस आंदोलन की चर्चित कहानियों में 'शहादतनामा' (जितेंद्र भाटिया), 'हरिजन सेवक' (मधुकर सिंह), 'अँधेरे का सैलाब' (से. रा. यात्री), 'तलाश के बाद', 'आतंक के बीज' (निरुपमा सेवती) आदि उल्लेखनीय हैं।

राकेश वत्स ने 'मंच-79' के विशेषांक में सक्रिय कहानी आंदोलन की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने लिखा कि "सक्रिय कहानी का अर्थ है आदमी की चेतनात्मक ऊर्जा और जीवंतता की कहानी। उस समझ, एहसास और बोध की कहानी जो आम आदमी की बेबसी, वैचारिक निहत्थेपन, और नपुंसकता से निजात दिलाकर पहले स्वयं अपने अंदर की कमजोरियों के खिलाफ खड़ा होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है।" इस आंदोलन में चित्रा मुद्गल, रमेश बतरा, स्वदेश दीपक आदि कहानीकारों ने अपना योगदान दिया। यह आंदोलन ही अल्पकाल में ही समाप्त हो गया क्योंकि इसमें वैचारिकता का दंभ अधिक था।

दिल्ली में 1982 में जनवादी लेखक संघ की स्थापना हुई। उसकी राष्ट्रीय अधिवेशन के साथ ही हिंदी में जनवादी लेखन तेजी से आगे बढ़ने लगा। 'कलम' (कोलकाता), 'कथन' (दिल्ली), 'उत्तरगाथा' (दिल्ली), 'उत्तरार्ध' (मथुरा) आदि पत्रिकाओं में जनवादी आंदोलन पर चर्चाएँ शुरू हुईं। यह वस्तुतः सामान्य जन के संघर्ष की पक्षधर है। इसका वैचारिक आधार मार्क्सवाद है। सर्वहारा एवं मध्यवर्ग द्वारा शोषण के विरुद्ध उठने वाली आवाज पर जनवादी कहानी का सर्वाधिक बल देती है। वस्तुतः यह संघर्ष बहुआयामी है।

बोध प्रश्न

- सचेतन कहानी आंदोलन की शुरुआत कब हुई?
- समांतर कहानी आंदोलन किसके नेतृत्व में आगे बढ़ी?
- सक्रिय कहानी आंदोलन क्यों आगे नहीं चल सका?

2.3.5 वर्तमान परिदृश्य

वर्तमान परिदृश्य में कहानी साहित्य का उत्तरोत्तर विकास हुआ। आज कहानी कहने की शैली बदल गई। उसकी वस्तु में भी बदलाव है। कभी-कभी तो ऐसा भी लगता है कि यह कहानी या डायरी, संस्मरण या रिपोर्ताज है। कहानीपन लुप्त होता जा रहा है। स्थापित रचनाकारों के अतिरिक्त अनेक नए नए कहानीकार सामने आने लगे। पंकज सुभीर, अजय नावरिया, मनीषा कुलश्रेष्ठ, अल्पना मिश्र, नीलाक्षी सिंह, चंदन पांडेय, कुमार अंबुज, संजय कुंदन, गीत चतुर्वेदी, योगेंद्र आहुजा, पंखुरी सिन्हा जैसे अनेक साहित्यकार सामने आए।

90 के दशक में आज के समय में अनेक आयाम सामने आए। आज तक जो हाशिये पर थे वे केंद्र में आ रहे हैं। सीमाएँ टूट रही हैं। अस्तित्व और अस्मिता की लड़ाई शुरू हो चुकी है। अस्तित्वमूलक विमर्श सामने आए। इन में स्त्री, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक प्रमुख हैं। आज वृद्ध, पर्यावरण, किन्नर, किसान, प्रवासी साहित्य भी सामने आ रहा है। परिणामस्वरूप अनामिका, प्रभा खेतान, सिम्मी हर्षिता, गीतांजली श्री, कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, ममता कालिया, उषा प्रियंवदा, चित्र मुद्गल, सूर्यबाला, सुधा अरोड़ा, उर्मिला शिरीष, चंद्रकांता, नमिता सिंह, अलका सरावगी, मधु कांकरिया, रजनी गुप्त, कमल कुमार, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, राजी सेठ, शरद सिंह आदि स्त्री रचनाकारों ने स्त्री संघर्ष, स्त्री अस्मिता, स्त्री मुक्ति की दृष्टि से कहानियों का सृजन किया तो ओमप्रकाश वाल्मीकि, सूराजपाल चौहान, मोहनदास नैमिशराय, रूपनारायण सोनकर, रत्न कुमार सांभरिया, दयानंद बटोही, सुशीला टाकभौरे, विपिन बिहारी, कुसुम वियोगी आदि कहानीकारों ने दलित होने की यातना और संघर्ष को अभिव्यक्त किया। वहीं हरीराम मीणा, रणेंद्र, राकेश कुमार सिंह, केदार प्रसाद मीणा, रांडायाल मुंडा, जोराम यालाम नाबाम आदि ने आदिवासियों के शोषण की गाथा को कलमबद्ध किया है।

वैसे तो हिंदी कहानी साहित्य में वृद्ध अवश्य रहते हैं, लेकिन धीरे-धीरे इनका अस्तित्व लुप्त होने लगा। इक्कीसवीं सदी में कहानीकारों ने इन वृद्धों के प्रति विशेष ध्यान दिया। 'वापसी' (उषा प्रियंवदा), 'आँखमिचौनी' (अमृतराय), 'बूढ़ा ज्वालामुखी' (गिरिराज शरण अग्रवाल), 'शटल' (नरेंद्र कोहली), बूढ़ी हड्डियाँ (शिवकुमार राजौरिया) आदि कहानियाँ वृद्धावस्था विमर्श की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

असागर वजाहत, राही मासूम रज़ा, बदिउज्जमाँ, अब्दुल बिस्मिल्लाह, मेहरुन्निसा परवेज, नासिरा शर्मा, मंजूर एहतेशाम, अनवर सुहैल आदि की कहानियाँ अल्पसंख्यक विमर्श की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- अस्मितामूलक साहित्य क्या है?

2.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप समझ ही चुके होंगे कि हिंदी कहानी साहित्य ने विकास के अनेक सोपान पार किए हैं। समय के साथ-साथ कहानी कहने की शैली में बदलाव आने लगा। वह जनता की समस्याओं से जुड़ गई। प्रेमचंद को हिंदी साहित्य में कथा सम्राट कहा जाता है क्योंकि उन्होंने ही कहानी साहित्य को तिलिस्म और जासूसी के लोक से बाहर निकाला तथा उसे वास्तविक दुनिया से जोड़ा। उनके समय से कहानी प्रौढ़ होती गई। कहानी साहित्य अनेक कहानी आंदोलनों से गुजरते हुए आज नई मंजिलें पार कर रही है। निस्संदेह कहा जा सकता है कि हिंदी कहानी साहित्य आगे भी अनेक सोपान पार करेगी।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को प्रायः हिंदी की पहली कहानी होने का गौरव प्रधान किया जाता है। परंतु डॉ. गोपाल राय ने 1871 में प्रकाशित रेवरेंड जे. न्युटन की कहानी 'जमींदार की दृष्टांत' को हिंदी की पहली कहानी सिद्ध किया है।
2. प्रेमचंदपूर्व हिंदी कहानियों में प्रौढ़ता नजर नहीं आती है।
3. प्रसाद स्कूल की कहानियों की प्रकृती जहाँ मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद है, वहीं प्रेमचंद स्कूल की कहानियों की प्रकृती सामाजिक यथार्थवाद है।
4. प्रेमचंद की कहानियों में आधुनिक हिंदी कहानी के तमाम तत्व विद्यमान हैं। उनकी अनेक कहानियों में राजनीतिक आंदोलनों की छाया भी देखी जा सकती है।
5. नई कहानी, साठोत्तरी कहानी अथवा अ-कहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समांतर कहानी, सक्रिय कहानी और जनवादी कहानी आंदोलन सामने आए।
6. 90 के दशक में अस्मितामूलक विमर्श केंद्रित कहानियों का जन्म हुआ।

2.6 शब्द संपदा

1. अस्तित्व = होने का भाव
2. आख्यायिका = कथा, कहानी
3. कल्पना = मन की वह शक्ति को जो अप्रत्यक्ष विषयों के रूप व चित्र को सामने लाती है

4. यथार्थ = जैसा होना चाहिए ठीक वैसा

5. शोषण = शारीरिक व मानसिक अत्याचार

6. सर्वहारा = समाज का वह वर्ग जो मजदूरी करके अपना पेट पालता है

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. प्रेमचंदपूर्व हिंदी कहानी की विकास यात्रा का परिचय दीजिए।
2. प्रेमचंद युगीन हिंदी कहानी साहित्य पर प्रकाश डालिए।
3. प्रेमचंदोत्तर हिंदी कहानी साहित्य का विवेचन कीजिए।
4. विभिन्न हिंदी कहानी आंदोलनों का संक्षिप्त परिचय दीजिए
5. वर्तमान कहानी साहित्य के परिदृश्य को समझाइए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. प्रारंभिक हिंदी कहानी साहित्य पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।
2. 'प्रेमचंद ने अपनी कहानियों के माध्यम से लोगों में चेतना जगाई।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3. नई कहानी आंदोलन पर टिप्पणी लिखिए।
4. अ-कहानी आंदोलन की पृष्ठभूमि को समझाइए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. हिंदी की पहली कहानी होने का गौरव किसे प्राप्त है? ( )

   (अ) राजा भोज का सपना (आ) इंदुमती (इ) प्लेग की चुड़ैल (ई) एक टोकरी भर मिट्टी

2. सचेतन कहानी आंदोलन का नेतृत्व किसने किया था? ( )

   (अ) कमलेश्वर (आ) गंगाप्रसाद विमल (इ) महीप सिंह (ई) अमृतराय

3. गोपालराम गहमरी को किस रूप में जाना जाता है? ( )

   (अ) ऐतिहासिक (आ) सामाजिक (इ) जासूसी (ई) मनोवैज्ञानिक

4. 'जिंदगी और जोंक' के रचनाकार कौन हैं? ( )

   (अ) अमरकांत (आ) कमलेश्वर (इ) प्रेमचंद (ई) भीष्म साहनी

5. प्रेमचंद ने हिंदी कहानी साहित्य को किस दुनिया से मुक्त किया है? ( )

(अ) तिलिस्म (आ) यथार्थ (इ) अंधविश्वास (ई) रूढ़िवादिता

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. वृंदावनलाल वर्मा ..... कहानीकार के रूप में प्रसिद्ध हैं।
2. ..... पत्रिका के प्रकाशन के पूर्व कलात्मक कहानियाँ अस्तित्व में नहीं थीं।
3. अ-कहानी का नाम ..... ने प्रस्तावित किया।
4. प्रसाद स्कूल की कहानियों की प्रकृती ..... है।
5. 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' के रचनाकार ..... हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. पंच परमेश्वर	(अ) विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक
2. प्लेग की चुड़ैल	(आ) चंद्रधर शर्मा गुलेरी
3. दुलाईवाली	(इ) भगवान दास
4. उसने कहा था	(ई) बंगमहिला
5. ग्यारह वर्षा का समय	(उ) प्रेमचंद
6. रक्षा बंधन	(ऊ) रामचंद्र शुक्ल

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी कहानी का विकास : मधुरेश
2. हिंदी कहानी का इतिहास (तीन भाग) : गोपाल राय
3. कहानी नई कहानी : नामवर सिंह
4. नई कहानी : संदर्भ और प्रकृती : देवीशंकर अवस्थी

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY Estd. 1998

इकाई 3: दिव्या: तात्विक विवेचन

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 मूल पाठ: दिव्या: तात्विक विवेचन

3.3.1 लेखक का संक्षिप्त परिचय

3.3.2 'दिव्या' उपन्यास का शीर्षकौचित्य

3.3.3 'दिव्या' उपन्यास की कथा वस्तु

3.3.4 'दिव्या' उपन्यास के मुख्य पात्रों का चरित्र चित्रण

3.3.5 'दिव्या' उपन्यास की समीक्षा

3.3.6 'दिव्या' उपन्यास की भाषा शैली

3.4 पाठ सार

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

3.6 शब्द संपदा

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

हिन्दी यशपाल द्वारा लिखित एक बहुत ही प्रभावशाली उपन्यास है। यह उपन्यास दादा कामरेड एवं देशद्रोही के बाद लिखा गया तीसरा उपन्यास है। इसका प्रकाशन वर्ष मई 1945 में हुआ तथा पूरा उपन्यास (13) परिच्छेदों में बाँटा गया है। इस उपन्यास में एक पीड़ित नारी की करूण कथा का वर्णन पाया जाता है। उपन्यास ने मुख्य पात्र 'दिव्या' है और इसके ही इर्दगिर्द उपन्यास का पूरा कथानक देखा जाता है। दिव्या उपन्यास कल्पना पर आधारित एक ऐतिहासिक उपन्यास है। यह उपन्यास बौद्ध कालीन कथानक के आधार पर पूरे देश और सभी सामाजिक मान्यताओं तथा उनसे पड़ने वाले प्रभावों को रेखांकित किया गया है। दिव्या उपन्यास में युग-युग की उस पीड़ित नारी की करूण कथा है। इसका सम्पूर्ण जीवन संघर्ष से भरा हुआ है। दिव्या उपन्यास में बौद्ध धर्म की वाताहत स्थिति का और उसके विरोध में पुनः उभरते वैदिक धर्म की उत्तर मौर्य कालीन संघर्षमय भारत देश का वर्णन किया गया है।

3.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- साहित्यकार यशपाल को जान सकेंगे।
- यशपाल के उपन्यास दिव्या पर चर्चा करेंगे।
- दिव्या उपन्यास के तात्विक विवेचन से परिचित होंगे।
- दिव्या उपन्यास में स्त्री चेतना के बारे में जानेंगे।

3.3 मूल पाठ: दिव्या: तात्विक विवेचन

3.3.1 लेखक का संक्षिप्त परिचय

प्रिय छात्रो! मार्क्सवादी जीवन दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। वे उच्च कोटी के विचार तथा सुलझे हुए व्यक्तित्व के साहित्यकार माने जाते हैं। यशपाल का जन्म 3 दिसंबर, 1903 को पंजाब में फिरोज़पुर छावनी में एक साधारण परिवार में हुआ था। उनकी माता श्रीमती प्रेमदेवी अनाथालय के एक स्कुल में अध्यापिका थी। उनके पिता का अपने परिवार के प्रति उतना लगाव नहीं था इसी कारण उनकी माता अपने दोनों बेटों की शिक्षा-दिक्षा के बारे में बहुत अधिक सजग रहती थी।

यशपाल का गद्य साहित्य बहुत ही विशाल माना जाता है। उपन्यास, कहानी, निबंध यात्रावृत्त संस्मरण, जीवनी आदि अनेक गद्य विधाओं में को उन्होंने समृद्ध किया है। वैसे देखा जाए तो यशपाल के लेखन की प्रमुख विधा उपन्यास है, लेकिन अपने लेखन की शुरूआत उन्होंने कहानियों से की है। यशपाल के हर लेखन में मनुष्य समुदाय के हितों की बात की गई है। उनकी रचनाओं में समाज के शोषित उत्पीड़ित तथा सामाजिक बदलाव के लिए संघर्ष करते हुए व्यक्तियों का वर्णन किया गया है। उन्होंने अपनी कृति के माध्यम से समाज में व्याप्त धार्मिक ढोंग और समाज की झूठी नैतिकताओं पर भी प्रहार किया है। यशपाल को अपनी कृतियों पर बहुत सारे पुरस्कारों से नवाज़ा गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' नामक उपन्यास पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया था। उन्होंने बहुत सारी रचनाओं का देसी-विदेसी भाषाओं में अनुवाद भी किया है। यशपाल के अबतक 16 कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इनके मुख्य कहानी संग्रह हैं - पिंजड़े की उड़ान, फूलों का कुत्ती, भस्माहत चिंगारी, धर्मयुद्ध, सच बोलने की भूल, धर्मयुद्ध, तर्क का तुफान, उत्तमी की माँ आदि।

यशपाल को सबसे ज़्यादा ख्याति उपन्यासों के क्षेत्र में मिली है। दादा कामरेड, देशद्रोही, दिव्या, पार्टी कामरेड, मनुष्य के रूप, अमिता, झुठा सच दो भाग आदि उपन्यास आपकी रचना शक्ति के प्रतीक बनकर प्रसिद्ध हो चुके हैं। इनके अनूदित उपन्यासों की संख्या भी बहुत अधिक

है, यशपाल एक निर्मीक स्पष्टवादी और राष्ट्रवादी लेखक थे। यशपाल के रचना संसार में उपन्यास, कहानी निबंध आत्मकथा, यात्रा साहित्य, नाटक एवं पत्रकारिता विषयों पर लेखन बड़ी विपूल मात्रा में किया है। उपन्यास- दादा कामरेड, देशद्रोही, दिव्या, मनुष्य के रूप, अमिता, झूठा सच, बारह घंटे, अपसरा का शाप और मेरी तेरी उसकी बात आदि तथा कुछ अनुदित उपन्यास भी है।

दिव्या यशपाल के श्रेष्ठ उपन्यासों में से एक है। इस उपन्यास में युग-युग की उस दलित पीड़ित नारी की करूण कथा को तथा अनेकानेक संघर्षों से गुज़रती हुई नारी का वर्णन किया है। यशपाल का 'दिव्या' एक काल्पनिक ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास की नायिका दिव्या अनेक प्रकार के संघर्ष से झेलती है।

बोध प्रश्न-

- यशपाल ने अपनी कृतियों के माध्यम से किस पर प्रहार किया है।

3.3.2 'दिव्या' उपन्यास का शीर्षकौचित्य

'दिव्या' महापंडित देव शर्मा की प्रपौत्री और कला की देवी मल्लिका की शिष्या है। दिव्या उपन्यास की प्रमुख पात्र है। तथा कथावस्तु का केन्द्रबिंदु भी है। इसे दिव्या के अनेक संक्षिप्त प्रसंगों का सृजन किया गया है। दिव्या उपन्यास में यशपाल ने तत्कालीन सभी वर्गों के सभी पात्रों को चित्रवत करने का प्रयास किया है। दिव्या इस उपन्यास की नायिका है। उसके चरित्र-चित्रण के माध्यम से बाह्य परिस्थितियों, घात-प्रतिघात एवं आंतरिक द्वंद को मिलाकर कथानक को उभारा गया है। दिव्या का चरित्र-चित्रण तथा उनके संवाद अनेक प्रकार के मनोदशा को प्रस्तुत करता है। इस उपन्यास में एक और मानवीय पक्ष स्पष्ट होकर दिखाई देता है। संतान के प्रति एक माता का प्रेम। अपने पूत्र को पालने के लिए उसे दास जीवन अपनाना पड़ा तथा अपने पुत्र को भूखा रखकर स्वामिपुत्र को दुध पिलाना पड़ता था।

नगरी के राजनर्तकी पद को छोड़ने के बाद दिव्या को बहुत अधिक कष्ट का सामना करना पड़ा। वह अंतद्वंद्व की स्थिति में फंस जाती है। उसके जीवन में वेदना, कष्ट, पीड़ा, दुःख दर्द सभी घर कर जाते हैं। दिव्या सभी प्रकार के कष्टों का सामना करती हुई अपना जीवन व्यत्तित करती है। एक एक संकटों का सामना दिव्या करती है, इन सब कारणों से दिव्या सहानुभूति का मुख्य पात्र बन जाती है। अतः संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि यशपाल ने 'दिव्या' यह उपन्यास का शीर्षक देकर उसके सार्थकता को सिद्ध किया है।

बोध प्रश्न

- दिव्या उपन्यास की केंद्रीय समस्या क्या है?

3.3.3 'दिव्या' उपन्यास की कथा वस्तु

दिव्या एक ऐतिहासिक उपन्यास है, इसमें बौद्धकालीन कथानक के आधार पर सभी प्रकार की सामाजिक मान्यताओं तथा उनसे पड़नेवाले प्रभावों की ओर संकेत करता है। वैसे दिव्या एक काल्पनिक उपन्यास है। यशपाल का यह उपन्यास 1945 ई॰ में प्रकाशित हुआ है। यह एक बहुत ही लोकप्रिय उपन्यास है।

'दिव्या' उपन्यास का आरंभ सागलभद्र राज्य गणपरिषद के तत्वधान में आयोजित एक कला प्रदर्शन में होता है। नगर के वयोवृद्ध महापंडित धर्मस्थ की प्रपौत्री दिव्या है। वह कला के अधिष्ठात्री राजनर्तकी देवी मल्लिका की शिष्या दिव्या है, मधुपर्व के अवसर पर शास्त्र प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है, जिसमें दास पुत्र प्रथुसेन को खंडाधिकारी घोषित किया जाता है। इसी प्रकार सागल भद्र राज्य के परम्परा के अनुसार सरस्वती पुत्री कुमारी दिव्या प्रथुसेन को पुष्प मुकुट पहनाती है। प्रथुसेन कुमारी 'दिव्या' की शिविका को कंधा लगाने आगे जाता है इसको देखकर गण के संवाहक आचार्य प्रवर्धन के पुत्र आचार्य रूद्रधीर कहते हैं कि, "दास पुत्र को अभिजात अंश के युवकों के साथ शिविका में कंधा देने का अधिकार नहीं" इस उक्ति को कहकर दास पुत्र प्रथुसेन का अपमान करता है। इस अपमान से अपमानित प्रथुसेन धर्मस्थ देवशर्मा के न्यायालय में न्याय माँगने के लिए जाता है, वहा पर उसका स्वागत दिव्या करती है। दिव्या के व्यवहार को देखकर प्रथुसेन उसकी ओर आकर्षित हो जाता है, दोनों का आकर्षण धीरे-धीरे प्रेम का रूप ले लेता है। इसके साथ-साथ आचार्य रूद्रधीर और मूर्तिकार मारिश यह दोनों भी दिव्या की ओर आकर्षित रहते है। कुछ दीन बाद प्रथुसेन युद्ध पर जाने से पहले दिव्या को विवाह का वचन देकर चला जाता है। कुछ दिनों के बाद प्रथुसेन विजयी होकर लौटने के बाद दिव्या बहुत खुश होती है, परंतु प्रथुसेन द्वारा प्रदत्त गर्म को पुरा कर चुकने के कारण वह लज्जावस उसे नहीं मिलती है। वही दूसरी तरफ गणपति मिथोद्रस की कन्या सीरो घायल प्रथुसेन की देख रेख करती है और कुछ दिन बाद वह सीरों से विवाह करने के लिए तैयार हो जाता है यह बात जब दिव्या को पता चलती है तो उसके हृदय पर बहुत ही अघात पहुँचता है और वह सब कुछ छोड़कर किसी दूसरे आश्रय की तलाश में वहां से निकल जाती है।

दिव्या का जीवन यही से बदल जाता है, यहीं से उसके सुखमय जीवन का अंत और दुखमय जीवन की शुरूवात हो जाती है। दिव्या अनेक लोगों के द्वारा खरीदी और बेची जाती है। इन सबके बाद गर्भवती दिव्या प्रसव हो जाती है, और प्रसव के बाद भूधर दिव्या को पुरोहित चक्रधर के हाथों पच्चास स्वर्ण मुद्रा में बेच देता है, यहाँ पर दिव्या को यह काम सौंपा गया कि, पहले स्वामिनी के पुत्र को भरपेट स्तन-पान कराये उसके बाद अपने पुत्र को स्तन-पान कराना। यहाँ पर पुरोहित चक्रधर के यहाँ नाटकीय यंत्रणा से निकलकर दिव्य बोद्ध के शरण में जाना

चाहती हैं, यह भी उसे शरण नहीं मिलती है अंत में दिव्या अपने पुत्र सहीत आत्महत्या के लिए यमुना नदी में कुद जाती है, उसमें दिव्या का पुत्र तो निष्प्राण हो जाता है, किन्तु वह राजनर्तकी देवी रत्नप्रभा द्वारा बचा ली जाती है। वह अपने प्रसाद में दिव्या को आश्रय देती है। वह उसका नया नाम 'अंशुमाला' रख देती है। उसके बाद से दिव्या अंशुमाला के नाम से रत्नप्रभा की नृत्य और संगीत गोष्ठियों की शोभा बढ़ाने लगती है।

दिव्या फिर से सागल पहुँचती है। सागल की राजनर्तकी मल्लिका अपनी उत्तराधिकारिणी के रूप में रत्न प्रभा से अंशुमाला को गुरू दक्षिणा के रूप में माँग लेती है। दिव्या को सगल के लोग स्वीकार नहीं करते हैं, उसका विरोध करते हैं क्योंकि उसमें वर्णाश्रम कलंकित होगा। यशपाल ने बौद्धकालीन समाज में व्याप्त वर्णाश्रम व्यवस्था, जाति आधारित ऊँच-नीच का भेदभाव और जाति वैमन्यल्य का यथार्थ चित्रण किया है। उपन्यास के आरंभ में ही इसकी ओर संकेत किया गया है। पृथुसेन दिव्या की शिबिका को कंधा नहीं दे सकता क्योंकि "दासपुत्र को अभिजात वंश के युवकों के साथ शिविका में कंधा देने का अधिकार नहीं है।" प्रतिभा होने के बावजूद वह सेना में उच्च पद इसलिए नहीं प्राप्त कर सकता क्योंकि वह दास पुत्र है। यदि यह कहा जाए कि दिव्या उपन्यास की कथा वस्तु का प्राण तत्व वर्णसंघर्ष है तो यह गलत नहीं होगा।

सगल की राजनर्तकी मल्लिका, अंशुमाला को अपनी उत्तराधिकारणी के रूप में रत्नप्रभा को माँग लेती है। यह साभी बातें जब अभिजात वर्ग को पता चलती है कि उत्तराधिकारणी के रूप में जो कन्या है वह कोई और नहीं बल्कि दिव्या है अर्थात महापंडित धर्मस्य देवशर्मा की पौत्री दिव्या है तो उसका विरोध होता है। और कहते हैं- भद्र में द्विज कन्या वैश्या के आसन पर बैठकर वर्णाश्रम को अपमाणित नहीं कर सकती। यह सुनकर दिव्या निराश हो जाती है और नगर के बाहर पांचशाला में चली जाती है। पांचशाला सभाजनों से भर हुआा था। सभी आमात्य आचार्य रूद्रधीर, बौद्ध भिक्षु प्रथुसेन और दार्शनिक मूर्तिकार मारिश तीनों दिव्या को अपनाने के लिए अपनी अपनी इच्छाएं प्रकट करते हैं। आचार्य अमात्य रूद्रधीर दिव्या को अपने प्रसाद में महादेवी का पद देना चाहते हैं। किन्तु दिव्या उनके प्रस्ताव को ठुकरा देती है और कहती है- "ज्ञानि आचार्य, कुलवधु का सम्मान, कुलमाता का आदर और कुल महादेवी का अधिकार आर्य पुरूष का प्राश्रय मात्र है। वह नारी का सम्मान नहीं, उसे भोग करने वाले पराक्रमी पुरूष का सम्मान है। - दासीहीन होकर भी आत्मनिर्भर रहेगी। सत्वहीन होकर वह जीवित नहीं रहेगी।" दूसरी तरफ प्रथुसेन दिव्या को बौद्ध संघ के शरण के लिए आमंत्रित करता है इसपर दिव्या उसे कहती है - "भिक्षु के धर्म में नारी का क्या स्थान है?" उसपर प्रथुसेन बोलता है- देवी भिक्षु का धर्म निर्वाग है। भारी प्रवृत्ति का मार्ग है। भिक्षु के धर्म में नारी त्याज्य है।"

उसी समय मूर्तिकार मारिश कहता है- "मारिश देवी को राजप्रसाद में महादेवी की आसन अर्पण नहीं कर सकता। वह देवी को निर्वाग के मिथ्या चिरन्तन सुख का आश्वासन नहीं दे सकता। वह देवी के नारित्व की कामना में अपना पुरूषत्व अर्पण करता है। यह आश्रय का आदान प्रदान चाहता है। वह नश्वर जीवन में संतोष की अनुभूति दे सकता है। संतति की परंपरा के रूप में मानव की अमरता दे सकता है"

इन सब कथनों को सुनकर दिव्या अपने दोनों बाहु प्रसार मारिश को स्वीकारती है और कहती है "आर्य आश्रय दो। अतः इस प्रकार दिव्या उपन्यास के कथानक का अंत होता है।

बोध प्रश्न-

- दिव्या उपन्यास का प्रारंभ किस पर्व से होता है?
- दिव्या उपन्यास का सृजन किस आधार पर हुआ है?

3.3.4 'दिव्या' उपन्यास के मुख्य पात्रों का चरित्र चित्रण

यशपाल द्वारा लिखित उपन्यास 'दिव्या' पात्र तथा चरित्र-चित्रण की दृष्टि से सशक्त उपन्यास है। ऐसा माना जाता है कि उपन्यास के तत्वों में चरित्र चित्रण, देशकाल, वातावरण, भाषा शैली, संवाद और उद्देश्य महत्वपूर्ण तत्व माने जाते हैं। वैसे तो किसी भी उपन्यास में कुछ मुख्य पात्र होते हैं और कुछ गौण किन्तु सभी की कुछ न कुछ भूमिका होती है। अगर दिव्या उपन्यास पर प्रकाश डाले तो इसके प्रमुख पात्र केवल तीन ही कहे जा सकते हैं- प्रथुसेन, मारिश और दिव्या, साहायक पात्रों में मल्लिका, रूद्रधीर, धर्मस्थ, गणपति मिथोदस, सीरों और छाया।

(1) दिव्या

'दिव्या' सागल नगरी के वयोवृद्ध धर्मस्थ देवशर्मा की प्रपौत्री और जनपद कल्याणी राजनर्तकी मल्लिका की शिष्या है। धर्मस्य के समृद्ध और सम्पन्न कुल में कन्या का जन्म उल्लास का क्षण होता है। उसके उज्वल भविष्य के विश्वास से उसे 'दिव्या' नाम दिया गया। दिव्या को 'सरस्वती पुत्री' की सर्वश्रेष्ठ उपाधि दी गई थी। मल्लिका उसे अपनी पुत्री के समान प्यार करती थे। दिव्या नृत्य कला में सर्वश्रेष्ठ है। 'दिव्या' उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र और नायिका है वह सदियों से हो रहे अन्याय, अबला, समाज से प्रताड़ित और दबी कुचली असंख्य नारियों का प्रतिनिधित्व करती है। वह रूप-गुण संगीत और नृत्य में काफी माहिर है। दिव्या सुख से वंचित और दुःख वेदना से ग्रसित है। वह दर-दर की ठोकरे खाती है। उसे पशु या वस्तु के जैसा दो-तीन बार किसी के हाथों बेचा जाता है। अन्त में वह आत्महत्या करने का प्रयास करती है जिसमें उसके पुत्र की मौत होती है और दिव्या किसी नारी के द्वारा बचा ली जाती है।

दिव्या का नामकरण अब 'अंशुमाला' हो जाता है इस प्रकार यह देखा जाता है कि दिव्या के चरित्र-चित्रण के माध्यम से समाज की प्रताड़ित नारियों के प्रति पाठकों के हृदय में सहानुभुति उत्पन्न करने में लेखक सफल हो गए। अतः हम देखते हैं कि नारी की दासता और पीड़ा उस युग में भी थी और आज भी है। आज भी दिव्या जैसे पात्र अपने वेदना और पीड़ा को झेल रहे हैं।

(2) प्रथुसेन

प्रथुसेन में एक दूरदर्शी पुरूष के सभी गुण दिखाई देते हैं। दिव्या जैसी सर्वगुण संपन्न अभिजात कुल की सर्वश्रेष्ठ सुंदरी उसे प्रेम करती है, तथा युद्ध में जाने से पूर्व उसे अमर करने हेतु उससे आत्म-समर्पण भी कर देती है। प्रारम्भ में उपन्यासकार प्रथुसेन को एक दूरदर्शी, गुनी, वीर-धीर और निर्भिक पात्र के रूप में चित्रित किया था। किन्तु युद्ध से लौटने के क्रमशः उसका पतन होते हुए दिखाया गया है। वह गर्भवती दिव्या के प्रति विश्वासघात करता है और सेनापति के पद को प्राप्त करने के लिए प्रथुसेन अपने कुचक्री और महत्वकांक्षी पिता की आज्ञा का पालन करता है। वह गणपति की पुत्री सीरो से विवाह कर लेता है। उपन्यास में प्रथुसेन के कारण ही दिव्या को सुख और वैभव का त्यागकर दर-दर की ठोकरे खाने पड़ती है। किन्तु बाद में स्थिति यह होती है कि रूद्रधीर के षड़यंत्र से सागल की शासन शक्ति परिवर्तित हो जाती है। तब प्रथुसेन अपने को बचाने के लिए स्थाविर चीबुक की कृपा से बुद्धरक्षित संधाराम की शरण में चला जाता है।

(3) रूद्रधीर

यशपाल ने अपने उपन्यास में रूद्रधीर को एक कुटिल धूर्त और षड़यंत्रकारी ब्राह्मण पात्र के रूप में चित्रित किया है। रूद्रधिर की अपनी एक पत्नी होते हुए भी वह दिव्या को अपनी पत्नी बनाना चाहता है। क्योंकि वह द्विज कन्या को वैश्या बनते नहीं देख सकता है। दिव्या का वास्तविक चरित्र पता होने के बावजूद उसे वैश्या या नर्तकी न बनने देते हुए उसे महादेवी के पद पर असिन करना चाहता है। रूद्रधिर को उपन्यासकार ने एक क्षमाशील पात्र के रूप में दिखाया है।

(4) महापंडित धर्मस्थ देवशर्मा

महापंडित धर्मस्थ देवशर्मा को अपनी प्रपौत्री 'दिव्या' के लिए बहुत ही स्नेह था। उसके चले जाने के बाद वह शोकवश प्राण त्याग देते हैं। वह एक न्याय प्रिय व्यक्ति थे।

(5) मारिश

चार्वक मारिश सागल के सर्वश्रेष्ठ मूर्तिकार, पुष्पकांत का पुत्र है। उपन्यास के समस्त पात्रों में केवल मारिश अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व और अस्तित्व लिए हुए है। मारिश दिव्या की कला और सौंदर्य के प्रति अत्यंत आकृष्ठ है। मारिश अपने विचारों से बिलकुल भिन्न है उसका कोई अनुयायी नहीं है, वह अपने मत का अकेला प्रचारक है। मारिश की सत्यता से लोग बहुत प्रभावित होते हैं।

'मारिश' उपन्यास का संक्षिप्त किंतु एक सशक्त पात्र है। वह समाज द्वारा तिरस्कृत होकर भी अपने विचारों के प्रति ईमानदार है। मारिश के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह बार-बार अपने प्रयत्नों में असफल होता है किन्तु इसके बावजूद भी वह हारता नहीं है।
इसके साथ-साथ साहायक स्त्री पात्रों में मल्लिका, रत्नप्रभा, छाया, सीरो आदि दिखाई देते हैं।

3.3.5 'दिव्या' उपन्यास की समीक्षा

दिव्या उपन्यास यशपाल का एक बहुत ही प्रभावशाली उपन्यास है। यह दादा कामरेड एवं देशद्रोही के बाद लिखा गया तीसरा उपन्यास है। इसका प्रकाशन 1945 ई. में हुआ सम्पूर्ण उपन्यास (13) परिच्छेदों में विभक्त किया गया है। पुरा कथानक के ये (13) परिच्छेद निम्नलिखित है-

(1) मधुपर्व
(2) धर्मस्थ का प्रसाद
(3) प्रेस्थ
(4) आचार्य प्रवर्धन
(5) आत्म समर्पण
(6) विकट वास्तव
(7) तात धर्मस्थ
(8) दारा
(9) अंशुमाला
(10) सागल
(11) प्रथुसेन और रूद्रधीर
(12) मल्लिका
(13) दिव्या

इन सभी 13 परिच्छेदों के सहारे उपन्यास के कथानक में जो उतार चढ़ाव आते हैं सभी को दिखाया गया है। उपन्यास की नायिका दिव्या जो सरस्वती पुत्री भी है उसकी शिविका में कंधा लगाने से वंचित प्रथुसेन की घटना को दिखाया गया है। कथानक के पूर्व में जो प्रश्न उपस्थित होते हैं उसका उत्तर अंतिम परिच्छेदों में उपन्यासकार देने का प्रयास करता है। इस उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार समाज की प्रताड़ित नारियों की दशा को दिखाने का प्रयास किया है।

3.3.6 'दिव्या' उपन्यास की भाषा शैली

दिव्या उपन्यास की भाषा और उपन्यासों की तुलना में कठिन जान पड़ती है। इस उपन्यास में तत्सम शब्दों की प्रचुरता पाई गई है। इसमें कहीं-कहीं तो पूर्ण वाक्य संस्कृत के प्रयोग किए गए हैं जो पाठकों को समझने में बहुत कठिन लगते हैं। भाषा की संरचना और शिल्प की दृष्टि से उपन्यास सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। उनकी भाषा शैली अपनी है, जैसा चाहे उसे मोड़ देते हैं- यशपाल के उपन्यास की भाषा चित्रात्मक शक्ति का पूर्ण परिचय देते हैं। भाषा अगर सुंदर और सरल हो तो पाठकों के लिए समझने में आसानी हो जाती है, और पाठक लेखक के विचारों तक आसानी से चले जाते हैं।

3.4 पाठ सार

यशपाल बहुमुखी प्रतिमा के धनी लेखक उपन्यासकार, कहानीकार, निबंधकार, आत्मकथाकार नाटाकार, पत्रकार है। इन्होंने गद्य की सभी विद्याओं पर अपनी लेखनी चलाई है। यशपाल की कृतियों का अनुवाद भी बहुत सी भाषाओं में हुआ है। यशपाल के सामाजिक विचार प्रगतिशिलता एवं मार्क्सवाद पर आधारित रहे हैं। दिव्या उपन्यास की सार्थकता, उद्देश्य कथानक, समीक्षा के विविध मापदंड, तात्वीक विवेचन और समिक्षा के विविध पहलूओं को समझाने का भरसक प्रयास किया गया है। यह उपन्यास एक काल्पनिक ऐतिहासिक उपन्यास है। दिव्या उपन्यास का कथानक बौद्धकाल की घटनाओं पर आधारित है। इस युग की राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियों को उपन्यासकार ने कुछ ऐसा सजीव चित्रण किया है कि सबकुछ काल्पनिक होते हुए भी यथार्थ सा प्रतित होता है। इसमें युग युग से पीड़ित नारी की करूण दशा की कथा कही गई है।

3.4 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत निम्नलिखित बिंदु पाएँ गए।

- दिव्या यशपाल के श्रेष्ठ उपन्यासों में से एक हैं।
- इस उपन्यास में युग-युग के उस दलित-पीड़ित नारी की करुण कथा है।
- दिव्या उपन्यास एक काल्पनिक ऐतिहासिक उपन्यास है।
- दिव्या का कथानक बौद्धकाल की घटनाओं पर आधारित हैं।

इस युग की राजनीतिक, सामजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थियों कुछ ऐसा सजीव चित्रण यशपाल ने किया है कि सबकुछ काल्पनिक होते हुए भी यथार्थ सा प्रतीत होता है ।

3.5 शब्द संपदा

1. ऐतिहासिक -	इतिहास में उल्लिखित, इतिहास संबंधी
2. काल्पनिक -	कल्पना से संबंधित, कल्पित, मनगढ़त
3. म्यूजियम -	संग्रहालय, अजायबघर

4. पुरातत्व - प्राचीन वस्तु
5. पृष्ठभूमि - भूमिका, प्राक्कथन
6. कठपुतली - ऐसा व्यक्ति जो दूसरे के इशारे पर नाचता हो।
7. हृदयंगम - अच्छी तरह समझा हुआ।
8. सामंतशाही - राजाशाही
9. कर्मफल - किए हुए कर्मों का फल
10. कामरेड - किसी संगठन का सदस्य, साथी, सहयोग, दोस्त
11. कसौटी - किसी वस्तु को जाँचने-परखने का मानदंड.
12. शतरंज - एक प्रसिद्ध खेल जो बत्तीस मोहरों या गोटियों से खेला जाता है।

3.6 परिक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

I. दीर्घ उत्तरी प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए ।

1. दिव्या उपन्यास का तात्विक विवेचन कीजिए।
2. दिव्या उपन्यास में सामजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक को स्पष्ट कीजिए।
3. दिव्या उपन्यास में नारी चित्रण पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

II लघु उत्तरी प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए ।

1. यशपाल की रचनाओं को बताइए ।
2. यशपाल के परिचय पर प्रकाश डालिए।
3. दिव्या उपन्यास का सन्देश बताइए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. यशपाल का जन्म कब हुआ ?

   (अ) 1903 (ब) 1920 (क) 1917 (ड) 1919

2. दिव्या उपन्यास का प्रकाशन कब हुआ ?

   (अ) 1953 (ब) 1940 (क) 1945 (ड)1960

3. यशपाल की रचना हैं

   (आ) सिंहावलोकन (ब) क्या भूलू क्या याद करू

   (क) कलम का सिपाही (ड) बसरे से दूर

I. **रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए ।**

1. यशपाल के पत्नी का नाम _____था।
2. यशपाल का जन्म _____छावणी में हुआ।
3. प्रथुसेन की शादी _____से होती है।

3.7 पठनीय पुस्तकें

1. दिव्या – यशपाल
2. यशपाल और हिंदी कथा साहित्य -सुरेशचंद्र तिवारी
3. यशपाल का उपन्यास साहित्य -डॉ .सरोज बजाज
4. यशपाल :व्यक्ति एवं कृतित्त्व, डॉ .भूलिका त्रिवेदी
5. यशपाल के उपन्यास सामाजिक कथ्य -डॉ .चमनलाल गुप्ता
6. यशपाल का कथा साहित्य -प्रकाशचंद्र मिश्र

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 4 : यशपाल का उपन्यास 'दिव्या' : चेतना और विमर्श

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूल पाठ : यशपाल का उपन्यास 'दिव्या' : चेतना और विमर्श
4.3.1 'दिव्या' : कथावस्तु
4.3.2 'दिव्या' में मार्क्सवादी परिवेश
4.3.3 'दिव्य' में प्रगतिशील चेतना
4.3.4 'दिव्या' में स्त्री विमर्श
4.4 पाठ सार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्द संपदा
4.7 परीक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य के इतिहास में यशपाल क्रांतिकारी लेखक के रूप में जाने जाते हैं। 'झूठा सच' के बाद उनके बहुचर्चित उपन्यास है 'दिव्या'। उनके साहित्य में आप मार्क्सवादी विचारों को देख सकते हैं। 'दिव्या' उपन्यास में जहाँ एक ओर प्रगतिशील चेतना को रेखांकित किया जा सकता है वहीं स्त्री विषयक दृष्टिकोण को भी रेखांकित किया जा सकता है। आइए! आगे हम इस उपन्यास का विश्लेषण विचार और विमर्श की दृष्टि से करेंगे।

4.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- यशपाल द्वारा रचित उपन्यास 'दिव्या' की कथावस्तु को समझ सकेंगे।
- 'दिव्या' में निहित मार्क्सवादी दृष्टिकोण से परिचित हो सकेंगे।
- 'दिव्या' में चित्रित प्रगतिशील चेतना से अवगत हो सकेंगे।
- 'दिव्या' में चित्रित यशपाल का स्त्रीवादी दृष्टिकोण समझ सकेंगे।
- 'दिव्या' में चित्रित स्त्री पात्रों के माध्यम से तत्कालीन स्त्रियों की दशा जान सकेंगे।

4.3 मूल पाठ : यशपाल का उपन्यास 'दिव्या' : चेतना और विमर्श

'दिव्या' यशपाल का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। इसमें उपन्यासकार ने अनेक पहलुओं को उजागर किया है। विशेष रूप से प्रगतिशील चेतना और स्त्री चिंतन। यशपाल मार्क्सवादी लेखक होने के नाते 'दिव्या' उपन्यास में भी स्वतः मार्क्सवादी दृष्टिकोण को देखा जा सकता है। उपन्यास के लिए कथावस्तु या प्लॉट महत्वपूर्ण है। यह किसी भी उपन्यास की रीढ़ की हड्डी होती है। कहने का आशय है कि उपन्यासकार अपने अनुभव के माध्यम से कथा बुनता है और

पात्रों तथा संवादों के माध्यम से उस कथा का विकास करता है। उपन्यास की वस्तु में निम्नलिखित तत्वों का समावेश होना आवश्यक है - कथा की मौलिकता, कथा में संभाव्यता और रोचकता। अपने लेखन कर्म के संबंध में स्पष्ट करते हुए यशपाल ने स्वयं कहा है कि "लिखना मैं अपना काम समझता हूँ। जैसे दूसरों के काम हैं, मेरा काम लिखना है। मैं अपना काम न करूँ, यह मुझे अस्वाभाविक और अनुचित भी जान पड़ता है। उपन्यास लिखने के लिए तो केवल 'आइडिया' आना चाहिए, पात्र मैं स्वयं गढ़ लेता हूँ।" यह कथन उनके समूचे साहित्य को समझने में सहायक सिद्ध होता है। छात्रो! आगे हम 'दिव्या' उपन्यास की कथावस्तु पर चर्चा करेंगे।

4.3.1 'दिव्या' : कथावस्तु

'दिव्या' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। तेरह अध्यायों में विभाजित इस उपन्यास का प्रकाशन 1945 में हुआ। बौद्धकालीन कथानक के आधार पर इसका सृजन हुआ है। इसमें इतिहास के साथ-साथ कल्पना का समायोजन है। भले ही इसका कथानक बौद्धकालीन है यह इतिहास नहीं, बल्कि ऐतिहासिक कल्पना है। यशपाल ने वर्तमान परिस्थितियों एवं समस्याओं को दर्शाने के लिए अतीत का सहारा लिया है। उन्होंने इसे उपन्यास न मानकर एक ऐतिहासिक कल्पना घोषित किया है। "ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र है।" (यशपाल, दिव्या, प्राक्कथन)। इस उपन्यास में यशपाल में कला को जीवन का उपकरण माना है - "कला केवल उपकरण मात्र है। कला जीवन के लिए और उसकी पूर्ति में ही है।" (दिव्या, पृ. 157)। 'दिव्या' की केंद्रीय समस्या है - सनातनता, धार्मिकता और आधुनिकता की कशमकश के बीच जीवन के सौंदर्य की खोज, नारी की मुक्ति और उसकी अर्थवत्ता की खोज।

बोध प्रश्न

- 'दिव्या' उपन्यास का सृजन किस आधार पर हुआ है?
- यशपाल ने इस उपन्यास को क्या घोषित किया?
- 'दिव्या' उपन्यास की केंद्रीय समस्या क्या है?

'दिव्या' उपन्यास का आरंभ मधुपर्व से होता है। मद्रराज्य की सागल गणपरिषद द्वारा इस पर्व का आयोजन होता है। इस आयोजन में दिव्या को सर्वश्रेष्ठ कला के प्रदर्शन पर सरस्वती पुत्री की उपाधि से सम्मानित किया जाता है। दिव्या सागल द्विजकुल की कन्या, महापंडित देवशर्मा की प्रपौत्री, राजनर्तकी मल्लिका की शिष्या है। उसी अवसर पर दासपुत्र पृथुसेन को सर्वश्रेष्ठ खड्गधारी की उपाधि से सम्मानित किया जाता है। पृथुसेन दासी पुत्र होने के कारण उसकी विजय से उच्च वर्ग के युवकों के मन में ईर्ष्या उत्पन्न होती है। आचार्य प्रवर्धन के पुत्र रुद्रधीर और मूर्तिकार मारिश दोनों दिव्या से प्रेम करते हैं। लेकिन पृथुसेन और दिव्या के बीच प्रेम भावना पैदा होती है।

बोध प्रश्न

- 'दिव्या' उपन्यास का प्रारंभ किस पर्व से होता है?

सागल पर केन्द्रस आक्रमण करता है। युद्ध में जाने से पहले पृथुसेन दिव्या से मिलकर विवाह का वचन देता है। दिव्या उस पर विश्वास करती है और अपने आपको पृथुसेन को समर्पित करती है। युद्ध में जीतकर पृथुसेन वापस लौटता है। यह समाचार सुनकर दिव्या अत्यंत

आनंदित होती है लेकिन गर्भवती होने के करण उसके स्वागत समारोह में शामिल नहीं हो पाती। घायल पृथुसेन की सेवा मिथोद्रस की कन्या सिरो करती है। पिता की आज्ञा के अनुसार पृथुसेन सिरो से विवाह करता है। यह समाचार सुनकर दिव्या दुखी हो जाती है। पृथुसेन से मिलने की कोशिश करती है लेकिन नहीं मिल पाती। गहरा आघात लगने पर वह लज्जा और ग्लानिवश सागल छोड़कर चली जाती है। यहीं से उसके जीवन की नारकीय यात्रा शुरू होती है।

बोध प्रश्न

- दिव्या सागल छोड़कर क्यों जाती है?

दिव्या एक व्यापारी पृथुल के हाथों पड़ती है। वह मात्र 20 स्वर्णमुद्रा के लिए उसे भूधर नामक व्यक्ति को बेच देता है। प्रसव के बाद उसे 50 स्वर्णमुद्रा में चक्रधर खरीद लेता है। चक्रधर की पत्नी बीमार होने के कारण वह अपने बच्चे को दूध नहीं पीला सकती। दासी दिव्या उसके बच्चे को दूध पिलाती है और अपने बच्चे को भूखे बिलखने के छोड़ देती है। यह एक माँ के हृदय को झकझोरता है। अतः वह वहाँ से भाग निकलती है और बौद्ध की शरण में जाना चाहती है। पर वहाँ उसे आश्रय नहीं मिलता।

निराश एवं हताश दिव्या पुत्र के साथ नदी में कूदकर आत्महत्या करने की कोशिश करती है। नर्तकी रत्न प्रभा उसे बचा लेती है लेकिन उसका पुत्र नहीं बच पाता। रत्न प्रभा की शरण में रहकर वह संगीत और नृत्य में शिक्षा प्राप्त करती है और अंशुमाला के रूप में सामने आती है। वह रसिक समाज के लिए मनोरंजन का साधन बन जाती है। वह अपनी कला से लोगों को आनंद प्रदान करती है, पर अपना देह बेचकर नहीं। रुद्रधीर उसे अपनाने के लिए आगे आता है, लेकिन दिव्या उसके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती। षड्यंत्र से वह पृथुसेन के हाथों से सागल राज्य छीन लेता है। विवश होकर पृथुसेन बौद्ध का शरण लेता है। इसी बीच मारिश भी दिव्या को अपनाने का प्रस्ताव रखता है, लेकिन वह स्वीकार नहीं करती। कथा यहाँ समाप्त नहीं होती।

दिव्या फिर से एक बार सागल पहुँचती है। सागल की राजनर्तकी मल्लिका अपनी उत्तराधिकारिणी के रूप में रत्न प्रभा से अंशुमाला को गुरु दक्षिणा के रूप में माँग लेती है। इस प्रकार दिव्या सागल पहुँचती है। दिव्या को वहाँ के लोग स्वीकार नहीं करते। उसका विरोध करते हैं क्योंकि उससे वर्णाश्रम कलंकित होगा। यशपाल ने बौद्धकालीन समाज में व्याप्त वर्णाश्रम व्यवस्था, जाति आधारित ऊँच-नीच का भेदभाव और जाति वैमन्यस्य का यथार्थ चित्रण किया है। आरंभ में ही इसकी ओर संकेत किया गया है। पृथुसेन दिव्या की शिविका को कंधा नहीं दे सकता क्योंकि 'दासपुत्र को अभिजात वंश के युवकों के साथ शिविका में कंधा देने का अधिकार नहीं है।" प्रतिभा होने के बावजूद वह सेना में उच्च पद इसीलिए प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि वह दास पुत्र है। इसी वर्णाश्रम व्यवस्था के कारण ही पृथुसेन और दिव्या का विवाह नहीं होता। यदि कहें कि यह वर्ग संघर्ष 'दिव्या' उपन्यास की कथावस्तु का प्राण तत्व है तो गलत नहीं होगा।

बोध प्रश्न

- राजनर्तकी मल्लिका रत्ना प्रभा से अपनी उत्तराधिकारिणी के रूप में किसे माँगती है?
- पृथुसेन दिव्या की शिविका को कंधा क्यों नहीं दे सकता?

रुद्रधीर दिव्या को कुलमाता का आदर, कुलवधू का सम्मान देना चाहता है तो पृथुसेन दिव्या को बौद्ध के शरण में आने का निमंत्रण देता है। मारिश उसे समझाता है कि वह राजप्रासाद में महादेवी का आसान अर्पण नहीं कर सकता लेकिन संतति की परंपरा के मानवता की अमरता दे सकता है। अंततः दिव्या मारिश के प्रणय निवेदन को स्वीकार करती है यह कहकर - "आर्य आश्रय दो।"

'दिव्या' उपन्यास के संबंध में रामदरश मिश्र का कथन है कि यह "इतिहास का विश्लेषण है, इसलिए ईसापूर्व दूसरी शती की कथा आज भी हमसे कहीं-न-कहीं जुड़ती हुई अनुभव होती है। सामाजिक संबंधों, परिस्थितियों, मूल्यों तथा व्यक्ति की नियति और जिजीविषा का जो स्वरूप इतिहास के इस अंचल में उभरा है वह समय की लंबी दूरियाँ पार करता हुआ हमें छू लेता है, हमारी निकट का मालूम पड़ता है। इतिहास के रूप में तात्कालिकता तो केवल उस चेतना को विश्वस्त आधार देने का काम करती है जो इतिहास के एक बिंदु से उठकर मनुष्य मात्र के मानवीय अनुभव से जुड़ जाती है।" (हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ. 204)। यशपाल का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त मूल्यह्रास एवं संबंध विच्छेद को दिखाना है तथा व्यक्ति की संघर्ष, यातना व पीड़ा के जीवंत चित्र खींचना है।

यशपाल ने यह दर्शाया है कि संस्था व्यक्ति की अपेक्षा हमेशा अधिक महत्वपूर्ण, शक्तिशाली और विश्वसनीय रही है। संस्था और व्यक्ति के बीच विरोध होने पर व्यक्ति पराजित हुआ है और संस्था विजयी रही है। पृथुसेन संस्था के करण ही दिव्या से विवाह नहीं कर पाता। उसी संस्था के कारण ही वह बौद्ध संघ की शरण में जाता है। दूसरी ओर दिव्या जीवन भर वैयक्तिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती है। संस्था से विरोध करने वाले व्यक्ति का जीवन सुरक्षित नहीं रह सकता। 'दिव्य' की कथा ईसा पूर्व दूसरी शती की कथा होते हुए भी आज भी कहीं न कहीं हमसे जुड़ती हुई प्रतीत होती है। "सामाजिक संबंधों, परिस्थितियों, मूल्यों तथा व्यक्ति की नियति और जिजीविषा का जो स्वरूप इसमें उभरा है वह समय की लंबी दूरी पार करता हुआ हमें छू लेता है, हमारी निकट पहचान करता मालूम पड़ता है। लेखक ने इस उपन्यास में व्यक्ति और समाज के ढांचे, वेश-विन्यास, कार-प्रकार का बड़ा जीवंत चित्र खींच है, किंतु उसका मूल उद्देश्य है, सामाजिक संबंधों, मूल्यों आदि विसंगतियों और व्यक्ति की यातना, संघर्ष तथा गति का जीवंत रूप प्रस्तुत करना। उपन्यास में सामंती समाज और राज्य व्यवस्था के अनेक दोषों, प्रवृत्तियों आदि का मार्मिक अंकन किया गया है, किंतु इस व्यवस्था में नारी को दिखाना जैसे उसका प्रमुख लक्ष्य है। 'दिव्या' नाम से प्रतीत होता है कि उसी के जीवन को लेकर एक व्यक्ति (नारी) की समस्या, यातना, बेबसी और प्रवृत्ति को गतिशील रूप में दिखाना लेखक का लक्ष्य रहा है।" (रामदरश मिश्र)

बोध प्रश्न

- दिव्या किसके प्रणय निवेदन को स्वीकार करती है?
- व्यक्ति की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण कौन हैं?
- दिव्या जीवन भर किसके लिए संघर्ष करती है?

4.3.2 'दिव्या' में मार्क्सवादी परिवेश

छात्रो! हिंदी साहित्य के इतिहास में यशपाल क्रांतिकारी साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं। उनके विचार प्रगतिशील हैं। उन्होंने अपने प्रखर लेखन से अनेक लोगों को चेताया। उनके संबंध में नागार्जुन का यह कथन उल्लेखनीय है - "पंडित पंत जैसे लोग जिनके अगुआ थे, यशपाल का साहित्य उन्हें फूटी आँख भी नहीं सुहाता था। पुरातनपंथी, धर्मध्वजी, रूढ़िप्रिय ब्राह्मण, खूंखार भूस्वामी, चिर शोषक मालिक-महाजन, फिरकापरस्त सांप्रदायिक, सुविधाजीवी नौकरशाह, धूर्त अवसरवादी, संशयग्रस्त बौद्धिक और इन्हीं जैसे और भी लोग थे और हैं, जिन्हें यशपाल का नाम सुनते ही छींक आती थी - आती है। शिक्षित लोगों में भी यशपाल का साहित्य सिर्फ उन्हें प्रिय रहा है, जिन्हें मार्क्स के नाम पर बुखार नहीं चढ़ता।" व्यक्ति और समाज को यशपाल मार्क्सवादी दृष्टिकोण से देखते हैं।

छात्रो! 'दिव्या' उपन्यास को यशपाल की मार्क्सवादी दृष्टिकोण के निकष पर विवेचन किया जा सकता है। सामाजिक यथार्थ के प्रति उनका गहरा लगाव था। रामदरश मिश्र की मान्यता है कि इसी लगाव और मानववादी दृष्टि तथा वर्णनात्मक शिल्प उन्हें प्रेमचंद से जोड़ता है। वे इस बात पर बल देते हैं कि उनके मन में सामाजिक विसंगति का कोई बिंदु उठता है और उसी बिंदु को दीप्त करने के लिए वे कथा गढ़ लेते हैं। निश्चय ही वह विसंगति समकालीन जीवन के आचरण से उत्पन्न होती है। 'दिव्या' उपन्यास का प्रमुख पात्र मारिश लेखक की मार्क्सवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है। उसके माध्यम से लेखक ने भौतिकवाद का प्रतिपादन किया है। वह कर्म सिद्धांत को नहीं मानता। उसकी दृष्टि में भाग्य का अर्थ है मनुष्य की विवशता। कर्मफल से आशय है कष्ट और विवशता के कारण का अज्ञान। वह मनुष्य को निरंतर प्रयत्न करते रहने पर बाल देता है। संसार की क्षणभंगुरता को अस्वीकार करता हुआ मारिश कहता है कि "मरना-जीना व्यक्ति का है। जीव और समाज की परंपरा मनुष्य की कल्पना की सीमा तक अमर है।" उसके अनुसार परिवर्तन गति और गति ही जीवन है। स्त्री जीवन की पूर्ति नहीं, बल्कि एक साधन या उपकरण मात्र है। मृत्यु शरीर धर्म है। नारी में सृष्टि की आदि शक्ति है।

यशपाल मार्क्सवादी दृष्टि को आरोपित करते हुए नजर नहीं आते। यशपाल धर्म-कर्म को नहीं मानते। वे सृष्टि के केंद्र में ईश्वर को नहीं बल्कि मानव को मानते हैं। इसीलिए वे कहते हैं कि "मनुष्य भोक्ता नहीं, कर्ता है। संपूर्ण माया मनुष्य की ही क्रीड़ा है। मनुष्य से बड़ा है - केवल उसका अपना विश्वास और स्वयं उसका ही रचा हुआ विधान। अपने विश्वास और विधान के सम्मुख ही मनुष्य विवशता अनुभव करता है और स्वयं ही वह उसे बदल भी देता है। इसी सत्य को अपने चित्रमय अतीत की भूमि पर कल्पना में देखने का पर्यटन 'दिव्या' है।" व्यक्ति और समाज के निरीक्षण, विश्लेषण और चित्रण में यशपाल ने मार्क्सवादी दृष्टि से काम लिया है। यशपाल अंत में दिव्या को भोग के लिए रुद्रधीर के साथ या मोक्ष के लिए पृथुसेन के साथ नहीं जोड़ते बल्कि उसे चार्वाकवादी मारीक्ष के साथ जोड़ते हैं जो संसार के सुख-दुख का अनुभव

करता है। वह संसार के धूल-धूसरित मार्ग का पथिक है। वह नारीत्व की कामना में अपना पुरुषार्थ अर्पित करता है।

बोध प्रश्न

- मारिश परिवर्तन को क्या मानते हैं?
- समाज और व्यक्ति के निरीक्षण और यशपाल किस दृष्टि को अपनाते हैं?

4.3.3 'दिव्य' में प्रगतिशील चेतना

यशपाल ने 'दिव्या' उपन्यास में यह दर्शाया है कि पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था में स्त्री हर तरह से शोषित होती है। वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित सामंती समाज में स्त्री को सम्मान और सुरक्षा का आश्वासन देना कठिन है। इतना ही नहीं बौद्ध धर्म भी स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को शंका की दृष्टि से देखता है। स्त्री की स्वाधीनता बाधित है। यशपाल ने उस विडंबना की ओर संकेत किया है और पाठक समाज को चेताने का प्रयास। उन्होंने समाज के विषमतापूर्ण व्यवस्था का विरोध किया और मानवता का बीज बोया। वे बार-बार इस बात पर बाल देते हैं कि "मनुष्य केवल परिस्थितियों को सुलझाता ही नहीं, वह परिस्थितियों का निर्माण भी करता है। यह प्रकृती और भौतिक परिस्थितियों में परिवर्तन करता है, सामाजिक परिस्थितियों का वह स्रष्टा है।" यशपाल मनुष्य और मानवता के पक्षधर हैं। इसीलिए दिव्या के माध्यम से उन्होंने मारिश सैनिकों को यह कहकर चेताया कि "अपने लिए लड़ो, तुम पशु नहीं हो, मनुष्य हो। अपना अधिकार पाने के लिए लड़ो।" वह मारिश सैनिकों को अपने अधिकार और कर्तव्य याद दिलाती है।

'दिव्या' उपन्यास में दास प्रथा का चित्रण भी है। दास की स्थिति अत्यंत दयनीय होती है। मालिक जो कुछ भी कहे उसे प्रतिवाद किए बिना आचरण करना पड़ता है। उसके साथ पशु से भी बदतर व्यवहार किया जाता है। दास-दासियों का क्रय-विक्रय लेख के साक्ष्य द्वारा होता है। दिव्या को यह नहीं पता था कि "मद्र की सीमा के परे दासत्व और उत्पीड़न का पाश उसकी प्रतीक्षा कर रहा है।" वह मौन रहकर अपनी अनुमति से ही उस पाश में बँधी जा रही थी। प्रतूल के कारण दिव्या दासी दारा बनती है। "दास-दासियों के रूप में मनुष्यों का व्यवसाय करते रहने के कारण प्रतूल अनेक श्रेणी के मनुष्यों के शरीरों और स्वभावों की सूक्ष्मताओं से उसी प्रकार परिचित था जैसे कुम्हार अनेक स्थानों की मिट्टी, उससे बने पात्रों की उपयोगिता और मूल्यों से अवगत रहता है।" वह प्रतूल के यहाँ से भूधर और फिर पुरोहित चक्रधर की दासी बनती है। मालिक के पुत्र को स्तनपान करवाकर स्वयं अपने को दूध के लिए बिलखते हुए छोड़ना उसे असह्य लगता है। यशपाल एक मातृ हृदय का मार्मिक चित्रण करते हैं जो अपनी संतान के लिए तड़प उठता है। यशपाल ऐसी दास प्रथा की भर्त्सना करते हैं और कहते हैं कि मनुष्य परिस्थितियों के आगे विवश हो जाता है। दासी दारा को याद आता है कि मथुरापुरी के पथों पर पर भिक्षाटन करते समय भिक्षु नित्य दुखियों को शरण का निमंत्रण देते - "दुख से पीड़ित मनुष्यो, तथागत की शरण में आओ। धर्म की शरण में आओ।" लेकिन दारा को वहाँ भी आश्रय प्राप्त नहीं होता। यशपाल पाठकों को चेताते हैं कि यह धर्म-कर्म कुछ भी नहीं है। मनुष्य का विश्वास ही सब कुछ है।

बोध प्रश्न

- दिव्या मारिश सैनिकों से क्या कहती है?
- तत्कालीन समाज में कौन सी प्रथा प्रचलित थी?

4.3.4 'दिव्या' में स्त्री विमर्श

यशपाल की स्त्री-दृष्टि को उनके विचारों के माध्यम से समझा जा सकता है। वे विवाह संस्था के विरोधी प्रतीत होते हैं क्योंकि वे विवाह को स्त्री अस्मिता और स्वतंत्रता का हनन करने वाला घातक मानते हैं। वे स्त्री को वह अधिकार दिलाना चाहते थे जिससे वह मनचाहा पुरुष का वरण कर सकती है। 'दिव्या' उपन्यास की नायिका दिव्या का संघर्ष अपनी मानवीय अस्मिता की तलाश है। इस पुरुषप्रधान समाज में स्त्री कहीं भी सुरक्षित नहीं है। यशपाल ने दिव्या के माध्यम से इस सामाजिक विडंबना को उजागर किया है- "भय किससे नहीं है? कठोर धीर रुद्रधीर, कोमल पृथुसेन, अभद्र मारिश और माताल वृक्, नारी के लिए सब समान हैं। जो भोग्या बनाने के लिए उत्पन्न हुई, उसके लिए अन्यत्र शरण कहाँ? उसे सब भोगेंगे ही। भी किससे नहीं। क्या तात से नहीं? महापितृव्य से भय नहीं? वे मुझे आर्य रुद्रधीर को देना चाहते थे। मैंने स्वेच्छा से पृथुसेन को आत्मसमर्पण किया। उसका फल यह - अविवाहित मातृत्व है।"

दिव्या को यह समझने में देर नहीं लगी कि मातृत्व मानवीय गरिमा नहीं है बल्कि स्त्री को परतंत्र और पालतू बनाने का एक अनुष्ठान है। संतान को यदि पिता का नाम प्राप्त होता है तो वह वैध, नहीं तो अवैध और तिरस्कृत। यदि शाकुल पृथुसेन का पुत्र होता तो उसे सभी अधिकार प्राप्त होते, लेकिन दिव्या के पुत्र होने के कारण वह सब अधिकारों से वंचित था। "वह जैसे पात्र से छलक गई जल की बूँद की भाँति है, जो केवल सूख कर समाप्त हो जाने के लिए ही है।"

बोध प्रश्न

- शाकुल अपने अधिकारों से क्यों वंचित होता है?

पृथुसेन वीर और पराक्रमी है। ऐसे वीर से प्रेम करने के बावजूद दिव्या उससे विवाह नहीं कर पाती क्योंकि दिव्या ब्राह्मण परिवार की बेटी है पृथुसेन दासपुत्र। ऐसा विवाह वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुरूप मान्य नहीं। प्रेम में धोखा खाकर दिव्या गर्भवती बनती है और घर छोड़ने में मजबूर होती है। कुलीन परिवार में जन्मी दिव्या अपने और अपने पुत्र की रक्षा के लिए दासी दारा बनाने के लिए विवश होती है। फिर वह वेश्या अंशुमाला बनती है। वस्तुतः ये दोनों ही भूमिकाएँ परस्पर विरोधी भूमिकाएँ हैं। इन दोनों ही भूमिकाओं में उसने एक ही सत्य का साक्षात्कार करती है - "स्त्री जीवन की पूर्ति नहीं, पूर्ति का एक उपकरण और साधन मात्र है।" स्त्री का कोई कुल-गोत्र नहीं होता। यह सब तो उसे भोगने वाले पुरुष पर आधारित है। यशपाल ने यह प्रश्न उठाया है कि स्त्री स्वतंत्रता और आत्म-निर्णय का अधिकार आखिर कैसे प्राप्त कर सकती है? दिव्या के माध्यम से उन्होंने इस बात को रेखांकित किया है कि "कुलवधू का सम्मान, कुलमाता का आदर और कुलमहादेवी का अधिकार आर्य पुरुष का प्रश्रय मात्र है। वह नारी का सम्मान नहीं, उसे भोग करने वाले पराक्रमी पुरुष का सम्मान है। आर्य, अपने स्वत्व का त्याग करके ही नारी वह सम्मान प्राप्त कर सकती है।"

बोध प्रश्न

- दिव्या घर छोड़ने पर मजबूर क्यों होती?
- परस्पर विरोधी भूमिकाओं में दिव्या क्या महसूस करती हैं?

गर्भवती दिव्या जब घर छोड़कर जाती हैं तो वह एक व्यापारी के हाथों बिक जाती है। पुरोहित चक्रधर उसे 50 स्वर्ण मुद्राओं में उस व्यापारी से खरीद लेता है। पुरोहित के घर दासी के रूप में दिव्या के मातृत्व का शोषण होता है। पुरोहित चक्रधर गरीब होने के बावजूद निरीह दिव्या के मातृत्व का शोषण करता है। मातृत्व एवं वात्सल्य भावना स्त्री की मूल प्रवृत्ति है। यह दिव्या के शाकुल के प्रति ममत्व से प्रकट होता है। हिंदी उपन्यास साहित्य में दासी के रूप में स्त्री के मातृत्व के शोषण का अनूठा उदाहरण कहा जा सकता है। अपने पुत्र और उसके मातृत्व की रक्षा हेतु वह बौद्ध विहार में शरण लेना चाहती है। वह आशा करती है कि बौद्ध विहारों की जनतांत्रिक व्यवस्था स्त्री को मनुष्य होने के नाते उसके नागरिक अधिकारों रक्षा करेगी, वहाँ भी पुरुषवादी अहं का विस्तार पाकर स्तब्ध हो जाती है। जब दासी दारा अलियास दिव्या शरण प्राप्त करने की आशा करती है तो स्थविर कहता है - "देवी, धर्म के नियमानुसार स्त्री के अभिभावक की अनुमति के बिना संघ स्त्री को शरण नहीं दे सकता।" वेश्या को संघ में स्थान मिल सकता है क्योंकि वह स्वतंत्र स्त्री है। यह समाज स्त्री को दो वर्गों में बाँटकर देखता है - सामाजिक (पारिवारिक) और स्वतंत्र (वेश्या)। पारिवारिक स्त्री को पिता, पति, पुत्र और स्वामी से अनुमति लेना पड़ता है क्योंकि वह उनके नियंत्रण में रहती है।

निराशा और हताशा में भी दिव्या की आस्था भंग नहीं होती - "प्रयत्न और चेष्टा जीवन का स्वभाव और गुण है। जीवन में एक समय प्रयत्न की असफलता मनुष्य का संपूर्ण जीवन नहीं है।" यशपाल के स्त्री पात्र हताशा और निराशा की स्थिति में भी डटकर मुकाबला करते हैं।

केंद्रीय पात्र दिव्या के माध्यम से यशपाल ने स्त्री की अनेक समस्याओं का चित्रण किया है। छात्रो! आप इस उपन्यास में स्त्री के स्वप्न, सामाजिक स्वतंत्रता की भावना, देह से मुक्ति की कामना, आर्थिक आत्मनिर्भरता की इच्छा, धार्मिक स्वतंत्रता, स्त्री आकांक्षा, शोषण, आक्रोश आदि का चित्रण किया है। इस उपन्यास में आप दास प्रथा, वर्णाश्रम व्यवस्था, बौद्ध धर्म की मान्यताएँ, सामंती शासन, राजधर्म आदि का चित्रण देख सकते हैं। यशपाल की ये सारी चिंताएँ समाज व्यवस्था की केंद्रीयता से जुड़ी हुई हैं। 'दिव्या' उपन्यास के संबंध में श्रीलाल शुक्ल की मान्यता है कि यशपाल ने इस उपन्यास की संरचना में मुख्य रूप से चार आधार स्तंभों की अवधारणा की है - "नारी पराधीनता, राजतंत्र, गणराज्य (जिसमें सामंतवाद के प्रभुत्व और उसकी ह्रासशीलता की भूमिका है) और वर्णाश्रम धर्म तथा बौद्ध संगठनों के पारस्परिक द्वंद्व और विभिन्न धार्मिक वादों के संघर्ष।" (कुछ साहित्य चर्चा भी, पृ. 12)

दिव्या न ही पृथुसेन की पत्नी बन पाती है और न ही स्वतंत्र स्त्री। वह न वेश्या बन पाती है और न ही सागल की राजनर्तकी। उसे पृथुसेन के साथ-साथ परिवार के सदस्य, बौद्ध संघ और सागल के नागरिक भी ठुकराते हैं। उसे इस सत्य का आभास हो जाता है कि "नारी सबके लिए

समान है। जो भोग्या बनने के लिए उत्पन्न हुई है, उसके लिए अन्यत्र शरण कहाँ? उसे सब भोगेंगे ही।" सदियों से स्त्री पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था में शोषण का शिकार होती आ रही है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि सदियों से समाज में स्त्री को भोग्या के रूप में देखा जाता है। उसे मनुष्य के रूप में देखना तो दूर उसे अपनी इच्छाओं को अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता तक नहीं दी जाती। यशपाल ने स्त्री की इस स्थिति को बखूबी उकेरा है और इसके विपक्ष में विमर्श रचने का प्रयास किया है।

यशपाल की दिव्या प्रताड़ित है, प्रवंचित है, परिस्थितियों से संघर्ष भी करती है। लेकिन उसका व्यक्तित्व समझौतावादी और विवश नारी का है। वह विद्रोही नहीं है। उसके मन में अनेक प्रश्न उठते हैं लेकिन समाधान नहीं मिलता। वह सोचने लगती है कि उसका क्या दोष है? क्या स्त्री अपनी इच्छा से गर्भ धरण नहीं कर सकती? पृथुसेन के प्रति उसका प्रेम और समर्पण क्या पाप है? उसका दोष बस इतना था कि उसने समाज की अनुमति के बिना ऐसा किया था। कुलनारी के लिए तो स्वतंत्रता है ही नहीं। इस दृष्टि से तो वेश्या स्वतंत्र है। वह अपनी इच्छा से कुछ भी कर सकती है।

यशपाल ने सिरो को एक बेबाक स्त्री के रूप में दर्शाया है। वह उग्र स्वभाव वाली स्त्री है। सबसे अधिक पाने की इच्छा उसके अंदर उमड़ती रहती है। वह हमेशा कुछ और पाने के लिए अधीर रहती है। परिणाम स्वरूप वह मर्यादा भूलकर स्वेच्छाचारिणी बन जाती है। उच्छृंखलता बढ़ने लगी। जब पृथुसेन उसे रोकने का प्रयत्न करता है तो वह कह उठती है - "मैं तुम्हारी क्रीत दासी नहीं हूँ। तुम मेरे आश्रित हो, मैं तुम्हारी आश्रिता नहीं हूँ। केवल तुम्हारी अंग-सेवा के लिए दासी नहीं हूँ। ... मेरे लिए भी संसार में केवल तुम ही एक पुरुष नहीं हो। तुम जैसे अनेक और तुम से श्रेष्ठ अनेक। .... मैं तुम्हारे वंश रथ की धुरी खींचने के लिए बछड़े उत्पन्न करने वाली गाय नहीं हूँ।"

यशपाल ने दिव्या के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि "नारी न तो त्याज्य है और न ही भोग्या। वह विषम परिस्थितियों में भी सृष्टि का धर्म निभाती हुई पूर्ण होती है, और ऐसी ही नारी पुरुष को भी पूर्ण करती है। यही वजह है उलटते-पुलटते कालचक्र की गति में दासी दारा और नर्तकी अंशुमाला का रूपांतरण एक नए परिवेश और नई व्यवस्था में कन्या 'दिव्या' के रूप में हो जाता है, क्योंकि नारी की सार्थकता और विमुक्ति, कुल धर्म और पाप-पुण्य में नहीं, बल्कि सामाजिक सहकर्म है।"

बोध प्रश्न

- दिव्या का दोष क्या था?
- सिरो कैसी स्त्री है?

4.4 पाठ सार

'दिव्या' में इतिहास के एक विशिष्ट काल खंड का पुनः सृजन हुआ है। स्वयं लेखक ने यह घोषित किया कि यह उपन्यास इतिहास नहीं, ऐतिहासिक कल्पना मात्र है। उन्होंने अतीत के माध्यम से वर्तमान विसंगतियों और समस्याओं का चित्रण किया है। इसमें प्रमुख रूप से

प्रगतिशील मार्क्सवादी चेतना और स्त्री विमर्श को देखा जा सकता है। स्त्री स्वतंत्रता पर यशपाल ने प्रमुख रूप से बल दिया। इसमें उन्होंने स्त्री मुक्ति की बात की तो वहीं दूसरी ओर समाज में व्याप्त दास प्रथा, सामंती प्रवृत्ति, वर्णाश्रम व्यवस्था आदि को दर्शाया है।

यशपाल ने यह दर्शाया है कि स्त्री समाज में स्वतंत्र रूप से जीवन यापन नहीं कर सकती। उसे हर स्तर पर यातना सहना पड़ता है। वह चाहकर भी न ही प्रेम की अभिव्यक्ति कर सकती है और न ही अपने प्रेमी से विवाह। उसका जीवन उसके हाथों में नहीं होता। यशपाल इसी पर प्रश्न चिह्न लगाते हैं। वह देह से मुक्ति की बात करते हैं। मारिश के माध्यम से उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि अनेक विरोधी तत्वों का समुच्चय है जीवन। प्रकृती और समाज में स्त्री-पुरुष दोनों एक-दूसरे पर आश्रित हैं। नारीत्व की कामना में वह अपना पुरुषत्व अर्पण कर सकता है। आश्रय प्रदान करना चाहता है। नश्वर जीवन में संतोष की अनुभूति देना चाहता है। संतति की परंपरा के रूप में मानव को अमरता देना चाहता है।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'दिव्या' उपन्यास इतिहास और कल्पना का समन्वय है।
2. जीवन के सौंदर्य और अर्थवत्ता की खोज 'दिव्या' उपन्यास की केंद्रीय समस्या है।
3. 'दिव्या' में बौद्धकालीन समाज में व्याप्त वर्णाश्रम व्यवस्था पर चोट की गई है।
4. 'दिव्या' में तत्कालीन समाज में व्याप्त दासी प्रथा पर प्रहार किया गया है।
5. 'दिव्या' उपन्यास के पात्र मारिश के माध्यम से यशपाल ने प्रगतिशील भावनाओं को उजागर किया है।
6. 'दिव्या' उपन्यास में यशपाल ने स्त्री स्वतंत्रता और आत्म-निर्णय के अधिकार का प्रश्न उठाया है।
7. 'दिव्या' स्त्री के स्वत्व और स्त्रीत्व के सम्मान की संघर्ष गाथा है।

4.6 शब्द संपदा

1. अधिकार = हक
2. अभिजात = उच्च वर्ग
3. अस्मिता = अपने होने का भाव
4. आकांक्षा = इच्छा
5. आक्रोश = क्रोध युक्त उत्तेजना
6. आत्म-निर्णय = स्वयं के द्वारा लिया गया निर्णय
7. क्रीत दासी = गुलाम, खरीदा हुआ दासी

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'दिव्या' उपन्यास में चित्रित स्त्री विमर्श का विवेचन कीजिए।
2. 'दिव्या' में चित्रित यशपाल के मार्क्सवादी दृष्टिकोण पर प्रकाश डालिए।
3. 'दिव्या' में मुखरित प्रगतिशील चेतना को स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'दिव्या' उपन्यास की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।
2. बौद्धकालीन समाज में व्याप्त वर्णाश्रम व्यवस्था पर टिप्पणी लिखिए।
3. यशपाल 'दिव्या' उपन्यास को ऐतिहासिक कल्पना मात्र क्यों कहा है?
4. बौद्धकालीन समाज में व्याप्त दास प्रथा पर प्रकाश डालिए।
5. 'दिव्या' में चित्रित स्त्री पात्रों के माध्यम से उस समय के समाज में स्त्री की दशा पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. दिव्या का व्यक्तित्व कैसा है? ( )
   (अ) विद्रोही (आ) समझौतावादी (इ) बेबाक (ई) कुटिल
2. दिव्या अंत में किसके प्रणय को स्वीकार करती है? ( )
   (अ) पृथुसेन (आ) रुद्रधीर (इ) चक्रधर (ई) मारिश
3. 'दिव्या' को बौद्ध के अशरण में आने का निमंत्रण कौन देता है? ( )
   (अ) रुद्धधीर (आ) पृथुसेन (इ) मारिश (ई) प्रतूल
4. मल्लिका रत्न प्रभा से किसे गुरु दक्षिणा के रूप में माँगती है? ( )
   (अ) सिरो (आ) अंशुमाला (इ) नित्य कुमारी (ई) तारा
5. 'दिव्या' की केंद्रीय समस्या किसकी मुक्ति है? ( )
   (अ) दास (आ) स्त्री (इ) सैनिक (ई) सामंत

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. 'दिव्या' उपन्यास की कथावस्तु का प्राण तत्व ..... है।
2. धर्म के नियमानुसार स्त्री के ..... की अनुमति के बिना संघ स्त्री को शरण नहीं मिल सकता।
3. मारिश संसार की ..... को अस्वीकार करता है।

4. प्रतूल के कारण दिव्या ..... बनती है।

III. सुमेल कीजिए -

1. पृथुसेन	(अ) दासी
2. दिव्या	(आ) राजनर्तकी
3. दारा	(इ) दास पुत्र
4. मल्लिका	(ई) स्वेच्छाचारिणी
5. सिरो	(उ) द्विजकन्या

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. दिव्या : यशपाल
2. हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा : रामदरश मिश्र
3. हिंदी उपन्यास का इतिहास : गोपाल राय
4. भारतीय लेखक - यशपाल विशेषांक 2004 : सं. भीमसेन त्यागी

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 5 : शेखर : एक जीवनी : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : शेखर : एक जीवनी : तात्विक विवेचन
5.3.1 अज्ञेय का व्यक्तित्व और कृतीत्व
5.3.2 शेखर : एक जीवनी की संक्षिप्त कथा
5.3.3 शेखर : एक जीवनी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण
5.3.4 शेखर : एक जीवनी के संवाद
5.3.5 शेखर : एक जीवनी का देशकाल और वातावरण
5.3.6 शेखर : एक जीवनी की भाषा-शैली
5.3.7 शेखर : एक जीवनी का उद्देश्य और जीवन दर्शन
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियाँ
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

मनुष्य का जीवन एक तरफ विभिन्न तरह की सुख-सुविधाओं से परिपूर्ण है तो दूसरी तरफ जीवन के कष्ट उसे उलझाए रहते हैं। जीवन के उतार चढ़ाव का सामना करते हुए इंसान आगे बढ़ता है। इस आगे बढ़ने की प्रक्रिया में वह कभी खुश होता है और कभी दुखी होता है। उसका 'चेतन मन' कुछ कहता और 'अवचेतन मन' कुछ और कहता है। वह जीवन के उलझनों से लड़ता रहता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन के उलझन इंसान को बहुत कुछ सिखा देते हैं। रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में जीवन के इन उलझनों को दिखाया है। शेखर : एक जीवनी भी जीवन के उलझनों को हमारे सामने लाने वाली रचना है।

5.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- 'अज्ञेय' के व्यक्तित्व और कृतीत्व से परिचित हो सकेंगे।
- शेखर : एक जीवनीकी कथावस्तु से अवगत हो सकेंगे।
- शेखर : एक जीवनीके प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को जान सकेंगे।
- शेखर : एक जीवनीके संवाद गठन को समझ सकेंगे।
- शेखर : एक जीवनीके देशकाल और वातावरण से परिचित हो सकेंगे।
- शेखर : एक जीवनीकी भाषा-शैली की विशेषताओं को समझ सकेंगे।

- शेखर : एक जीवनीके उद्देश्य और जीवन दर्शन से परिचित हो सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : शेखर : एक जीवनी : तात्विक विवेचन

5.3.1 'अज्ञेय' का व्यक्तित्व और कृतीत्व

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जन्म 7 मार्च, 1911 ई. को हुआ था। इनका बचपन लखनऊ, कश्मीर, बिहार और मद्रास (अब चेन्नई) में बीता था। इन्होंने शिक्षा लाहौर और मद्रास में प्राप्त की थी। पढ़ाई के दौरान क्रांतिकारी आंदोलन से जुड़े, फरार हुए और 1930 में पकड़े गए। चार वर्ष जेल में रहे और दो वर्ष नजरबंद रहे। कुछ वर्ष ऑल इंडिया रेडियो में काम किया। 1943-1946 तक सेना में रहे। इसके बाद जोधपुर विश्वविद्यालय में भारतीय साहित्य विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष हुए। इनका उपनाम 'अज्ञेय' है। इस विषय में विजयमोहन सिंह लिखते हैं 'जेल में बंदी अज्ञेय की अनेक कहानियाँ जैनेन्द्र ने ही उन्हें छद्म नाम 'अज्ञेय' देकर प्रकाशित कराई थीं। सच्चिदानन्द वात्स्यायन का 'अज्ञेय' उपनाम जैनेन्द्र का ही दिया हुआ था।'

हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यास भले ही पहले से लिखे जाते रहे हों लेकिन उन्हें प्रौढ़ रूप देने का काम अज्ञेय ने ही किया। अज्ञेय आधुनिकता के पक्षधर दिखते हैं। कविता के क्षेत्र में 'प्रयोगवाद' आंदोलन के प्रवर्तक 'अज्ञेय' ही रहे हैं। इन्होंने 'तारसप्तक' निकालकर कई कवियों को सामने लाने का महत्वपूर्ण काम किया था। वे एक कवि, कथाकार, आलोचक आदि के रूप में हमारे सामने आते हैं। 4 अप्रैल, 1987 को उनका देहांत हुआ।

बोध प्रश्न

- सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन का उपनाम 'अज्ञेय' कैसे पड़ा?

उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं -

(क) काव्य संग्रह- भग्नदूत (1933), चिंता (1942), इत्यलम (1946), हरी घास पर क्षण भर (1949), बावरा अहेरी (1954), इन्द्र धनुष रौंदे हुए ये (1957), अरी ओ करुणा 'प्रभामय' (1959), आँगन के पार द्वार (1961) आदि।

(ख) कहानी संग्रह- विपथगा (1937), परंपरा (1944), कोठरी की बात (1945), शरणार्थी (1948), जयदोल (1951) आदि।

(ग) उपन्यास- शेखर : एक जीवनी भाग -1 (1941), शेखर : एक जीवनी भाग-2 (1944), नदी के द्वीप (1952), अपने-अपने अजनबी (1961)।

(घ) आलोचना- त्रिशंकु (1945), आत्मनेपद (1960), आधुनिक हिंदी साहित्य (1976)

(च) यात्रा साहित्य- अरे यायावर रहेगा याद (1953), एक बूँद सहसा उछली (1960)

(ङ) नाटक- उत्तर प्रियदर्शी

(छ) अनुवाद- शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के उपन्यास 'श्रीकांत' का अंग्रेजी में अनुवाद। जैनेन्द्र कुमार के उपन्यास 'त्यागपत्र' का 1946 में अंग्रेजी अनुवाद। 1970 में 'अज्ञेय' की सागर मुद्रा में 'दैलोस एक एक नाव' के अंतर्गत सोलह ग्रीक कविताओं का सुंदर काव्यमय अनुवाद किया।

(ज) संपादन- 'प्रतीक' एवं 'दिनमान' पत्रिकाओं का सम्पादन कार्य किया। इसके साथ-साथ तारसप्तक, नेहरू अभिनंदन ग्रंथ, नए एकांकी, हिंदी की प्रतिनिधि कहानियाँ, तीसरा सप्तक, और रूपांबरा

बोध प्रश्न

- अज्ञेय के किन्हीं तीन काव्य संग्रहों के नाम बताइए।

उनकी रचनाओं में मनोविज्ञान को साफतौर पर देखा जा सकता है। लेकिन यह भी सच है की वे केवल सिद्धांत ही नहीं हैं बल्कि जीवनानुभव भी हैं। 'अज्ञेय' जी ने अपने जीवन के अनुभवों को बिना किसी लाग -लपेट के पूरी सच्चाई के साथ प्रस्तुत किया है। रामदरश मिश्र जी ने सत्य ही लिखा है 'अज्ञेय ने मनोविज्ञान के सिद्धांतों को सिद्धांत बनाकर प्रस्तुत नहीं किया है, उनका आलोक लिया है और उस आलोक में जीवन जीते हुए मनुष्य की अनुभूतियों, बोधों, मनःस्थितियों, चेतन-अवचेतन-स्थित सत्यों और उनके द्वंद्वों तथा उनसे परिचालित प्रभावित होते हुए आचारों-विचारों को ही गहराई और सूक्ष्मता से विवृत किया है।'

इसमें कोई संदेह नहीं है कि वे प्रयोगवादी थे और अपनी रचनाओं में नवीन-नवीन प्रयोग भी करते थे। सुनील कुमार जी लिखते हैं 'उन्होंने न केवल टेकनिक के क्षेत्र में क्रांति की, बल्कि विषय -वस्तु के क्षेत्र में भी। नए प्रकार की अनुभूतियों को नए ढांचे में अभिव्यक्त करना उनकी सामान्य विशेषता है। नई अनुभूति-सामर्थ्य से ओतप्रोत उनकी रचनाओं ने हिंदी जगत को खूब प्रभावित किया। अज्ञेय मुख्यतः अंतर्मुखी कलाकार हैं। उनके जीवन का उनके साहित्य से विशेष संबंध है।'

5.3.2 शेखर : एक जीवनी की संक्षिप्त कथा

असल में 'शेखर: एक जीवनी' को तीन भागों में लिखे जाने की योजना थी लेकिन इसके दो भाग ही प्रकाशित हुए। तीसरा भाग कभी भी प्रकाशित नहीं हो सका। यहाँ यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि 'अज्ञेय' जी ने स्वयं कहा है कि इसका प्रत्येक भाग अपने आप में एक परिपूर्ण उपन्यास है। वे लिखते हैं 'शेखर एक जीवनी तीन भागों में विभक्त है। तीनों भाग एक ही कथा सूत्र से गूँथे होकर भी अलग-अलग भी प्रायः सम्पूर्ण हैं। कहा जा सकता है कि जीवनी वास्तव में तीन स्वतंत्र उपन्यासों का अनुक्रम है।' अज्ञेय जी ने पाठकों को ध्यान में रखते हुए भी अपनी बात कही है। वे लिखते हैं 'जो एक भाग पढ़ने के बाद दूसरा पढ़ना नहीं चाहेंगे, उनको यह सोचने की आवश्यकता नहीं कि उन्होंने अधूरी कहानी पर वक़्त बर्बाद किया, वे एक को ही पूरा उपन्यास मान सकते हैं और उसी पर अपनी राय भी कायम कर सकते हैं, मैं पक्षपात की शिकायत नहीं करूंगा।'

शेखर: एक जीवनी भाग -1 का प्रकाशन 1941 ई. में और शेखर: एक जीवनी भाग-2 का प्रकाशन 1944 ई. में हुआ था। तीसरा भाग अप्रकाशित ही रहा। यह उपन्यास किस तरह से

लिखा गया है इसके विषय में अज्ञेय जी ने उपन्यास की भूमिका में चर्चा की है। एक आधी रात को पुलिस आती है और इन्हें बंदी बनाकर लेकर चली जाती है। पुलिस अधिकारियों से बातचीत, थोड़ी मारपीट आदि के बाद इन्हें लगने लगा की अब मेरा जीवन जेल की कोठरी में ही बीतने वाला है। इन्हें लगने लगा कि अब फांसी होगी। दिमाग में उथल-पुथल चलने लगी। फिर तीन दिन तक ये खूब सोए। फिर लगभग एक महीने तक कुछ नहीं हुआ। बाद में इन्हें जब लाहौर किले से अमृतसर जेल लाया गया तो इन्हें लेखन सामग्री मिली। वे लिखते हैं 'लेखन सामग्री पाकर चार-पाँच दिन में उस रात में समझे हुए जीवन के अर्थ और उसकी तर्क संगति को लिख डाला। पेंसिल से लिखे हुए वे तीन-एक सौ पन्ने 'शेखर एक जीवनी' की नींव हैं।'

बोध प्रश्न

- लेखन सामग्री पाने के बाद अज्ञेय ने क्या किया?

शेखर : एक जीवनीके पहले भाग में शेखर अपने बाल जीवन की छोटी से छोटी घटना को भी याद करता है, उसकी छानबीन करता है। वह सामान्य बालकों की अपेक्षा कुछ अलग जान पड़ता है। वह सूक्ष्मता से वस्तुओं के प्रारम्भिक रूप को जानना चाहता है। वह जिस अवस्था में है उस अवस्था से हटकर भी कुछ ऐसी बातों को जानने की इच्छा रखता है जो उसे नहीं जाननी चाहिए।

शेखर विद्रोही स्वभाव का है ही इसलिए उस पर मारपीट डांट फटकार का कोई असर नहीं पड़ता। इसके साथ उसे प्यार और सहानुभूति से वश में किया जा सकता है। वह एक असामान्य सा बालक है। शेखर का अधिकांश समय लखनऊ और कश्मीर में व्यतिति हुआ। बाद में नौकरी के सिलसिले में उसके पिता का स्थानांतरण मद्रास (अब चेन्नई) हो गया। इसलिए इस उपन्यास में दक्षिण भारत के भी कई संस्मरण आए हैं। शेखर के जीवन पर मद्रासी बलिका 'शारदा' का बहुत ही प्रभाव पड़ा था। शेखर शारदा के संपर्क में आने के बाद ही स्त्री-पुरुष के बीच के स्वाभाविक आकर्षण का अनुभव करता है। लेकिन परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बदलीं कि शारदा शेखर से अचानक दूर हो गई। बाद में जब वह शारदा से मिला तो शारदा का प्रेम तो वैसा ही था लेकिन शारदा पर उसके माता-पिता का बंधन अधिक हो गया था। दक्षिण भारत में धोखा और प्रेम दोनों उसे मिले साथ ही वहाँ छुआछूत भी उसे दिखा। इसलिए उसने अछूत (दलित) बालकों के लिए रात्रि विद्यालय की भी स्थापना की। वह एक अछूत स्त्री की बहुत ही बुरे समय में सहायता भी करता है।

बोध प्रश्न

- दक्षिण भारत जाने पर इनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा?

शेखर : एक जीवनीके दूसरे भाग में युवक शेखर के कॉलेज के जीवन, शशि से उसके संबंध, जेल के जीवन की बातें हैं। वह अपने जेल के जीवन में दो कैदियों से बहुत प्रभावित होता है एक थे बाबा मदन सिंह और दूसरा एक मुसलमान किशोर था। जेल में ही उसे पत्र के जरिए सूचना मिलती है कि शशि का विवाह उसकी मर्जी के खिलाफ अन्यत्र हो रहा है। जेल से निकलने के बाद शेखर और शशि बराबर मिलते रहते हैं। अंत में एक दिन शशि का पति शशि को घर से बाहर निकाल देता है।

फिर शशि और शेखर एक साथ रहने लगते हैं। शशि के बार-बार कहने पर वह लेखन कार्य करता है लेकिन कोई प्रकाशक नहीं मिलता। आर्थिक चिंताओं से दूर होने के लिए शेखर क्रांतिकारियों के संपर्क में आता है। शेखर के प्रति असीम प्रेम लिए हुए और विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए शशि एक दिन यह संसार छोड़कर चली जाती है। शेखर अब अकेला ही रह जाता है। यहीं इस उपन्यास का दूसरा भाग समाप्त हो जाता है। तीसरा भाग कभी नहीं आया। इन दोनों खंडों में फ्रायड के सिद्धांतों को भी दिखाया गया है। विजय मोहन सिंह लिखते हैं 'प्रेम तथा शारीरिक संबंधों के विश्लेषण में अज्ञेय ने प्रायः फ्रायडियन पद्धति अपनाई है या उसका सहारा लिया है।' हमें यह स्वीकार करने में संकोच नहीं होना चाहिए कि 'शेखर: एक जीवनी' मूल रूप से युवा वर्ग को संबोधित उपन्यास है। इससे युवा वर्ग ही अधिक जुड़ा और प्रभावित भी हुआ।

5.3.3 शेखर : एक जीवनी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

शेखर : एक जीवनी में मुख्य रूप से जो पात्र आते हैं वे हैं-शेखर के पिता जो आवेश में आततायी थे और आवेश समाप्त होने पर सखा। शेखर की माँ जो आवेश की कमी के कारण निर्दय थीं, जब वे कुछ नहीं कहती थीं तब शेखर को लगता था कि जो कुछ वे कहने वाली हैं उसे अभी धीमी आंच पर पकाया जा रहा है। शेखर के भाई, ये अपने समर्पणवादी व्यक्तित्व के कारण शेखर से असंपृक्त थे। बहन सरस्वती, ये शेखर को विश्वास और स्नेह दे सकी साथ ही शेखर का आदर और विश्वास प्राप्त कर सकी। मौसेरी बहन शशि जो शेखर के लिए स्नेह और करुणा की सजीव प्रतिमा थी। बाबा मदन सिंह आदि।

शेखर एक जीवनी में अत्यंत प्रमुख पात्र (नायक-नायिका) दो ही दिखते हैं- 'शेखर' और 'शशि'। कुछ अन्य पात्र भी हैं। कई गौण पात्र भी इस उपन्यास में दिखते हैं। गोपालराय लिखते हैं 'शेखर एक जीवनी में गौण पात्रों की संख्या 85 के लगभग है और अज्ञेय ने इन्हें स्पष्ट आकार, व्यक्तित्व और पहचान दी है।' यहाँ हम 'शेखर' और 'शशि' के अलावा 'बाबा मदन सिंह' के विषय में चर्चा करेंगे। शेखर के चरित्र को किस तरह गढ़ा गया है। उसके विषय में अज्ञेय लिखते हैं 'शिशु मानस के चित्रण की सच्चाई के लिए मैंने 'शेखर' के आरंभ के खंडों में घटना स्थल अपने ही जीवन से चुने हैं, फिर क्रमशः बढ़ते हुए शेखर का जीवन और अनुभूति-क्षेत्र मेरे जीवन और अनुभूति-क्षेत्र से अलग चला गया है, यहाँ तक कि मैंने स्वयं अनुभव किया है कि मैं एक स्वतंत्र व्यक्ति की प्रगति का दर्शक और इतिहासकार हूँ, उसके जीवन पर मेरा किसी तरह का भी वश नहीं रहा है।

बोध प्रश्न

- गोपाल राय ने शेखर : एक जीवनी के गौण पात्रों के विषय में क्या टिप्पणी की है?

(क) शेखर की चारित्रिक विशेषताएँ

(1) विद्रोही, अहंवादी स्वभाव : शेखर एक विद्रोही स्वभाव का पात्र है। वह रोमांटिक विद्रोही नहीं अपितु निहिलिस्ट विद्रोही है। बच्चन सिंह लिखते हैं 'शेखर विद्रोह करता है-माँ के विरुद्ध, पिता के विरुद्ध, शिक्षा के विरुद्ध, माँ बाप द्वारा निर्णीत विवाह के विरुद्ध, हर चीज़

के विरुद्ध।' असल में शेखर का प्रबल अहं ही उसके परिवार, समाज, शासन आदि के प्रति विद्रोह का मुख्य कारण है। शेखर के अंदर का अहं इन पंक्तियों में देखा जा सकता है- 'मुझे मूर्ति उतनी नहीं चाहिए। मुझे मूर्ति पूजक चाहिए।... मुझे वह चाहिए जो मेरी ओर दिखे।' नन्ददुलारे वाजपेयी का यह कथन द्रष्टव्य है 'जीवनी की मूलभू प्रेरणा क्रांतिकारी या विद्रोहात्मक है। क्रांति और विद्रोह किसके प्रति? जीवनी में क्रांति और विद्रोह स्वयं अपना लक्ष्य है।'

(2) वेदनामय जीवन : यह सत्य है कि कोई भी व्यक्ति हो वह कितना भी कठोर हो, उसके अंदर कहीं न कहीं एक प्रेम का सोता तो होता ही है। व्यक्ति विद्रोह तो करता है लेकिन वह विद्रोह कितना सफल या असफल होता है और उसके बाद असफल होने पर उसकी वेदना का भी अनुभव किया जाना चाहिए। रामदरश मिश्र लिखते हैं 'सच पूछिए तो इतना, विद्रोही, अहंकारी दीखनेवाला शेखर वेदनामय है। वह हर संघर्ष के बाद वेदना ही पाता है और इसी वेदना से उसे जीवन दृष्टि मिलती है। वह वेदना उसे माँजती है, उसकी संवेदनाओं को समृद्ध करती है और जीवन के प्रति सत्यान्वेषी दृष्टि देती है।' उसके हृदय की कोमलता का पाता हमें उस समय भी चलता है जब सत्य हरिश्चंद्र नाटक देखते हुए वह रोने लगता है। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि 'दुख सबको माँजता है।' अज्ञेय जी ने इस उपन्यास की भूमिका में लिखा है 'वेदना में एक शक्ति है, जो दृष्टि देती है। जो यातना में है, वह दृष्टा हो सकता है।'

(3) ईश्वरीय सत्ता के प्रति सशंकित या नास्तिक : शेखर ईश्वरीय सत्ता के प्रति शंका प्रकट करता है, या कहें कि वह नास्तिक है। वह बचपन से ही इस सत्ता के प्रति सशंकित है। वह उस सत्ता के अस्तित्व को बार-बार देखना चाहता है लेकिन वह अनुभव करता है कि संसार के सारे कार्य तो ईश्वर के बिना ही चल रहे हैं। यह ईश्वरीय शक्ति जिसका अस्तित्व ही नहीं है हम उसके नाम पर फालतू में ही आतंकित हुए रहते हैं। वह अपनी बातचीत में सीधे ईश्वर के संबंध में प्रश्न करता है। उसे ऐसा लगता है की हर जगह ईश्वर का भय दिखाया जाता है। वह ईश्वर को ही समझ लेना चाहता है।

(4) सत्यान्वेषी और सीखने की प्रवृत्ति : शेखर के अंदर सीखने की प्रबल प्रवृत्ति है। वह अपने अनुभव से सीखता है। बाबा मदन सिंह से सीखता है। वह रामजी और मोहसिन जैसे अपराधियों से भी सीखने का प्रयास करता है और कभी-कभी उनके अंदर के प्रकाश को देखकर अपने आप को छोटा समझता है। वह अपनी स्वानुभूतियों और जिज्ञासाओं के प्रति पूर्णतः ईमानदार है। एक औरत के माँ बनने को समझना चाहता है। उसे सटीक जवाब नहीं मिलता। वह चिड़ियों के बच्चों की उत्पत्ति को जानना चाहता है उसे जो जवाब मिलता है उससे वह संतुष्ट नहीं हो पात। अंततः बात ईश्वर पर आकर रुक जाती है। 'फिर वही दीवार- ज्ञान के पथ में सबसे बड़ा विघ्न ईश्वर!'

(5) **ईमानदार और प्रबुद्ध व्यक्ति :** शेखर एक ईमानदार व्यक्ति है अपनी अनुभूतियों और जिज्ञासाओं के प्रति बेहद ईमानदार। वह ईमानदार और प्रबुद्ध है। इसलिए वह सब कुछ देखना समझना चाहता है। उसका समाधान पाना चाहता है। शेखर के विषय में अज्ञेय लिखते है 'शेखर कोई बड़ा आदमी नहीं है, वह अच्छा भी आदमी नहीं है। लेकिन मानवता के संचित अनुभव के प्रकाश में ईमानदारी से अपने को पहचानने की कोशिश कर रहा है। वह अच्छा संगी नहीं भी हो सकता है, लेकिन उसके अंत तक उसके साथ चलकर आपके उसके प्रति भाव कठोर नहीं होंगे, ऐसा मुझे विश्वास है। और, कौन जाने, आज के युग में जब हम, आप सभी संश्लिष्ट चरित्र हैं, तब आप कि आपके भीतर भी कहीं पर एक शेखर है, जो बड़ा नहीं, अच्छा भी नहीं, लेकिन जागरूक और स्वतंत्र और ईमानदार है, घोर ईमानदार!'

(6) **क्रांतिकारी स्वभाव :** शेखर क्रांतिकारी स्वभाव का है। वह क्रांतिकारियों से मिलता है। उनकी गतिविधियों में शामिल होता है। क्रांति करने के लिए विद्रोह करना पड़ता है। रामदरश मिश्र लिखते हैं 'सभी संस्थाओं के प्रति, समस्त रीतियों के प्रति, जीवन -मात्र के प्रति विद्रोह क्रांतिकारी की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। विद्रोह के पश्चात? कुछ नहीं क्योंकि निर्माण भी विद्रोह ही है, विद्रोह में ही निर्माण है। इसलिए शेखर के विद्रोही व्यक्तित्व के प्रति लेखक को इतनी निष्ठा है। प्रकृती की अपूर्णता के विरुद्ध संघर्ष तथा समाज के बंधनों के विरुद्ध संघर्ष-शेखर की क्रांतिकारी जीवन की यही धारा है।' शेखर और उसके संघर्ष के संबंध में विजय मोहन सिंह जी के इस कथन से यहाँ उपर्युक्त बातों की पुष्टि हो जाती है। विजय मोहन सिंह लिखते हैं 'शेखर उन तमाम तत्वों के प्रति विद्रोह करता है जो उसके बाहर है: माता की आज्ञा के प्रति, शिक्षा के नियमों के प्रति, जीवन की सामान्य शर्तों के प्रति, सामाजिक विधि-विधानों के प्रति किन्तु उसका यह विद्रोह एक क्रुद्ध फूत्कार बनकर रह जाता है। वह एक निष्फल (फ्रूटलेस) संघर्ष बनकर रह जाता है। कम से कम शेखर: एक जीवनी के भाग दो तक की कथा यहीं तक पहुँचती है और घोषित भाग तीन कभी लिखा नहीं गया।'

बोध प्रश्न

- शेखर का स्वभाव कैसा है?

(ख) शशि की चारित्रिक विशेषताएँ

(1) **शेखर के लिए प्रेम :** शेखर और शशि की भेंट बचपन में हुई थी। शशि शेखर की मौसेरी बहन है। शशि और शेखर की पहली मुलाकात तब हुई जब शेखर 4 साल का था और शशि 3 साल से कुछ अधिक। दोबारा मुलाकात लगभग 10 साल बाद हुई। उस वक़्त शेखर शारदा के प्रेम में था और शशि को 'बहन जी' कहता था। शशि अपनी माँ से कहती है कि शेखर उसे बहिन जी कहकर नहीं बुलाया करे। शशि की माँ आकर कहती हैं 'शेखर, शशि कहती है तुम उसे बहिन जी मत कहा करो, वह तुमसे छोटी है।' जब परीक्षा समाप्त हो गई और शेखर को लौटना पड़ा तो उसने विदा मांगी जैसे ही उसने शशि के लिए बहिन जी कहा

- तभी शशि वहाँ से चली गई।' सत्यतः शशि के मन में शेखर के लिए प्रेम की भावना का उद्भव हो रहा था। इसलिए वह बहिन जी कहलाना पसंद नहीं करती।

(2) **सेवाभाव व सहिष्णुता :** शशि में सेवाभाव और सहिष्णुता की प्रबल भावना है। वह अपनी माँ की सेवा करती है। शेखर की भी सेवा करती है। वह स्वयं बहुत कष्ट सहती है। यहाँ तक कि वह स्वयं भी बीमार हो जाती है। वह तीन दिन से लगातार अपनी बेसुध माँ की सेवा करती रहती है। जब शेखर उसके घर पहुंचता है तो भोजन की व्यवस्था में जुट जाती है। दुर्गाशंकर मिश्र लिखते हैं 'लेखक ने उसकी उपमा एक ऐसे मानवयंत्र से दी है, जो कि दूसरों को चलाने के लिए स्वयं चलता है।'

(3) **शेखर की प्रेरणादात्री, विश्ववासिनी, प्रेमिका :** शेखर के जीवन में 'शारदा', 'शांति', 'शशि' आती हैं। लेकिन शेखर के जीवन में सबसे अधिक स्थाई प्रभाव 'शशि' का ही पड़ता है। वह शेखर की पढ़ाई को लेकर चिंतित रहती है। वह चाहती है कि शेखर की पढ़ाई जारी रहे। जब शेखर पढ़ाई के प्रति दूरी बनाता है तो वह कहती है 'आप आगे पढ़ेंगे नहीं।' जब शशि के पिता का देहांत हो जाता है। शशि की माँ और शशि पर दुखों का पहाड़ टूटता है तो उस दुख की घड़ी में शेखर उसके घर पहुंचता है। शेखर पढ़ाई के प्रति अनिच्छा ज़ाहिर करता है। तब शशि समझाती है 'आप हमारे दुख में आकर मिल गए, हमें उसमें सांत्वना भी मिली, पर आपका कर्तव्य क्या वहीं तक था? दुख सब जगह है। आप उसे एक ही जगह समझकर उसकी छाया में रहना चाहते हैं, और आपका जो काम है उसमें अनिच्छा दिखा रहे हैं। आप कॉलेज जाइए।' जब शेखर को झूठे आरोप लगाकर जेल में डाल दिया गया तब शशि उससे मिलने जाती है। वह शेखर पर पूरा विश्वास रखती है और शेखर उस पर पूरा विश्वास रखता है। जब शेखर उसे बताता है कि वह निर्दोष तो वह इस बात को पूरी तरह स्वीकार कर लेती है। वह शेखर की सच्ची प्रेमिका है। वह शेखर को प्रेरित करने के साथ उसे समझाती है और अपने (शशि) लिए लिखने के लिए कहती है। 'क्या उद्देश्य के लिए कुछ क्लेश भोगने में तृप्ति नहीं मिलती? मैं समझती हूँ कि बहुत बड़ी तृप्ति है।' और यह भी कहती है 'मेरे लिए लिख सकते हो?... मैंने पूछा है, मेरे लिए लिख सकते हो।'

(4) **कर्तव्यनिष्ठ, विचारवान, पारिवारिक ज़िम्मेदारी का निर्वहन करने वाली :** वह अपनी माँ की सेवा करती है। घर की ज़िम्मेदारी संभालती है। माँ के लिए इच्छा नहीं होने पर भी विवाह के लिए तैयार हो जाती है। वह समाज में अपनी माँ का सिर झुकाना नहीं चाहती। वह एक बार समाज की चिंता छोड़ भी सकती है लेकिन माँ? वह शेखर को लिखे पत्र में कहती है 'मैं जानती हूँ, मेरी सम्पूर्ण अनिच्छा है।... माँ - माँ तो सनातन है, सदा माँ है, उसके प्रति भी तो मेरा कर्तव्य है। ... माँ विधवा है, फिर उनके अपने संस्कार हैं। मेरी अस्वीकृती समाज के सम्मुख उनकी क्या अवस्था करेगी, यह तो अभी नहीं कह सकती, पर स्वयं अपने ही सामने उन्हें तोड़ देगी।' जब वह शेखर से बड़ी ही गम्भीरतापूर्वक बात करती है तो लगता है वह बड़ी ही समझदार और विचारवान महिला है। 'तो तुम साहित्यकार बनोगे? अच्छा... । .... और तुम्हारा लिखना एक उद्देश्य के लिए होगा-विनाश के लिए और पुनर्निर्माण के लिए। ... लेकिन शेखर, ऐसा लिखा हुआ सब अच्छा नहीं होता, सब साहित्य

नहीं होता। वहाँ साहित्य का मोह करोगे कि उद्देश्य का?' सत्यतः उसकी बात बड़ी ही गंभीर और तार्किक है।

(5) पति द्वारा छोड़ दी जाने वाली (पति परित्यक्ता) : वह अपने पति द्वारा घर से निकाल दी जाती है। उसकी सास उसे कुलटा इत्यादि कहती है। पति उसे पीठ पर मारता है। वह सामने मारने के लिए कहती है। उसका पति उसके पेट पर मार देता है। उसे घर से निकाल देता है। कारण था कि शेखर की तबीयत खराब होने पर वह उसके साथ ही उसकी सेवा करते हुए रात भर रुक गई थी। उसे शेखर सहारा देता है। वह शेखर के घर के अंदर नहीं जाती बाहर से ही कहती है 'उन्होंने मुझे घर से निकाल दिया है। .... शेखर मैं पति द्वारा परित्यक्ता हूँ, कलंकिनी हूँ मुझे कहीं स्थान नहीं है। मुझे भीतर मत बुलाओ।'

(6) क्रांतिकारी गतिविधियों में शामिल : वह शेखर के साथ क्रांतिकारी गतिविधियों में शामिल होती है। वह पढ़ी-लिखी है। उसने समाजशास्त्र की पढ़ाई बीच में छोड़ दी थी उसे फिर से प्रारंभ करती है। वह क्रांतिकारी दल के पर्चे, पमफलेट तैयार करती है। मुद्रण के काम में सहयोग भी देने लगती है। वह एक-दो बार छिपकर पर्चों का वितरण भी कर आई लेकिन बाद में साथियों को लगा कि खुल कर काम किया जाना चाहिए। 'ऐसे लुका-छिपी के काम दूसरे भी कर सकते हैं, अतः शशि जहां तक हो सके प्रकाशीय ही काम करे, और इसके लिए विद्यार्थियों और विद्यार्थिनियों की सभाओं में जावे....।'

(ग) बाबा मदन सिंह : ये इस उपन्यास के बड़े ही शक्तिशाली चरित्र हैं। ये जीवनानुभव से काफी कुछ सीखते हैं। उनका ज्ञान बहुत ही भास्वर है। शेखर भले ही उनके पैर नहीं छूता लेकिन उनसे सीखना चाहता है। वह उनसे अनेक प्रश्नों का समाधान चाहता है। मदन सिंह ने शेखर को समझाया कि अपने खुद के अनुभव से सीखना दूसरों के अनुभव से सीखने से कहीं अधिक लाभप्रद है। 'पीड़ा तपस्या है, किन्तु असली तपस्या तो जिज्ञासा है-क्योंकि वह सबसे बड़ी पीड़ा है।' बाबा मदन सिंह ने शेखर से कहा- 'देखिए, मैं आपसे कह चुका कि मैं पढ़-लिखा आदमी नहीं हूँ। मेरी बात में कुछ सार होगा तो इसीलिए की मैंने जो पढ़कर नहीं जाना, उसे सहकर जानने की कोशिश की हैं।... एक सूत्र यह भी है कि हर एक को अपना रास्ता खुद बनाना चाहिए। यह सूत्र तो आपके शास्त्र में भी होगा?'

बोध प्रश्न

- बाबा मदन सिंह के विषय में लिखिए।

5.3.4 शेखर : एक जीवनी के संवाद

संवाद का नाटकों के क्षेत्र में बहुत महत्व है। फिल्मों के संवाद तो लोगों की ज़बान पर चढ़ जाते हैं। जहां तक उपन्यासों की बात है, इनमें संवादों का अपना विशिष्ट महत्व है। संवाद या कथोपकथन द्वारा उपन्यासों के कथानक का विकास किया जाता है। संवादों के जरिए पात्रों का चरित्र-चित्रण भी हो जाता है। कथोपकथन (संवाद) द्वारा उपन्यासकार के उद्देश्यों की पूर्ति भी हो जाती है। संवादों के जरिए वातावरण की सृष्टि भी होती है। यह उपन्यास प्रयोगवादी कवि अज्ञेय द्वारा लिखित है। इसलिए इसमें संवादों की नवीन प्रणाली का भी उपयोग हुआ है। तो आइए हम इस उपन्यास के संवादों की कुछ विशेषताओं को जान लेते हैं।

(1) संक्षिप्त संवाद : इस उपन्यास में संक्षिप्त रूप से संवादों का प्रयोग हुआ है। संक्षिप्त संवादों से ऊब नहीं होती, अस्वाभाविकता का भाव भी मन में नहीं आता। एक उदाहरण देखें-

'शेखर ने सरस्वती से पूछा, 'मरते कैसे हैं?

'मर जाते हैं, और क्या?'

'मरकर क्या होता है?'

'पागल। जान नहीं रहती, चल-फिर, बोल नहीं सकते, तब ले जाकर जला देते हैं।

'डूबने से ऐसे ही मर जाते हैं?'

'हाँ?

'क्यों मरते हैं?'

'साँस बंद हो जाती है, तब जान निकल जाती है।'

(2) स्वाभाविकता एवं मनोवैज्ञानिकता : यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में स्वाभाविकता और मनोवैज्ञानिकता का गुण दीख पड़ता है। इस उपन्यास में पात्रों के हृदय में निहित भावनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं। शेखर ने पुकारकर कहा, 'क्या हुआ, आप स्वस्थ तो हैं?' फिर पास जाकर दुबारा पूछा 'क्या बात है, मिस मणिका?' मणिका ने कहा 'शेखर, ओह!' मैथ्यूज लाया था? अपने पी क्यों - शेखर कुछ सोच नहीं सका की क्या कहे! 'पी! मैंने पी!' मणिका हंसी! 'मेरी हंसी बेहूदा है न! मैं जानती हूँ। I am feeling stupid! Stupid (मैं होश में नहीं हूँ) कुछ रुककर, 'वह किताब उठा देना तो, नीली जिल्दवाली-और लैम्प इधर खींच देना।'

(3) नाटकीयता और मार्मिकता : इस उपन्यास के संवादों से ही इस उपन्यास की नाटकीयता और मार्मिकता का पता चल जाता है। उदाहरण देखें - 'शेखर का हृदय सुख से भरा आ रहा था, और उसके साथ ही साथ उसमें एक साहस का भी उदय हो रहा था। लेकिन उसका दिल धड़कन के मारे फट जाएगा....उसने एकाएक कह ही तो दिया- 'शारदा, तुम मुझे प्यार करती हो?'

शारदा ने उत्तर नहीं दिया।

'बताओ, शारदा प्यार करती हो।'

शारदा ने हड़बड़ाकर उठते हुए कहा, मैं घर जाती हूँ -अब बड़ी देर हो गई। माँ नाराज होगी। फिर कभी बाहर भी नहीं निकल सकूँगी। इतनी देर।'

(4) घटना की प्रधानता और उपयुक्त वातावरण : इस उपन्यास में घटना की प्रधानता और उपयुक्त वातावरण वाले संवाद हैं। '.... पपी ने पूछा, 'कौन सबसे ज्यादा उपराम लगी तुम्हें?'

'अरे भाई, नाम मुझे याद नहीं रहते, मैं तो उनकी अलग-अलग सेट की बू से उन्हें पहचानता हूँ !

शेखर थोड़ा सा मुस्कराया। उसका परिष्कार इतना हो गया था कि इस ढंग की बातचीत में रस ले सके, यद्यपि स्वयं कह नहीं सकता था। बोला, मैं तो अभी इतना पारखी हुआ नहीं।'

(5) पात्रों की मनःस्थिति के अनुकूल : इस उपन्यास के संवाद पात्रों की मनःस्थिति के अनुकूल हैं। पात्रों के बीच होने वाली बातचीत से पात्रों की मनःस्थिति का अंदाजा लगाया जा सकता है। उदाहरण देखें – 'आ गई बस -अब वहाँ लौटना नहीं होगा-नहीं मुझे मत छुओ, मैं अभी चली जाऊँगी-'

'अयँ, क्या कहती हो शशि।'

'उन्होंने मुझे घर से निकाल दिया है।'

'क्या- क्यों?' एकाएक स्तब्ध होकर, 'भीतर आओ, शशि, बैठकर बात कहो।'

(6) संवादों के बीच संबद्धता : इस उपन्यास के संवादों के बीच संबद्धता अर्थात आपसी जुड़ाव भी है। ये उपन्यास और पात्रों से सीधे तौर पर संबद्ध हैं।

'एक दिन शेखर के सिरहाने बैठे हुए सरस्वती ने कहा, 'आज मेरा सर बहुत दुख रहा है।'

शेखर बोला, 'अब तुम बीमार पड़ोगी।'

नहीं, अभी नहीं। पहले तुम अच्छे हो जाओ, फिर मैं बीमार पड़ भी गई तो कोई बात नहीं।'

'मैं अच्छा नहीं होता' जाने क्या सोचकर शेखर ने कहा। शायद सहानुभूति पाने के लिए। 'मैं तो अब मर जाऊंगा।'

'धत पागल ! ऐसी बात नहीं कहा करते।'

(7) व्यंग्यात्मकता : किसी रचना में व्यंग्य का प्रयोग उस रचना में एक चुटीलापन लाता है। इस उपन्यास के व्यंग्य में नवीनता और मौलिकता तो है ही- 'सुधारक, तुम्हारा ध्यान समाज की तरफ कम और भोजन की तरफ ज्यादा होता जा रहा है- तय कर लो पहले सुधारक हो कि रसोइया।'

'क्यों? और सब कुछ की तरह हमारा पाक शास्त्र भी सुधार माँगता है-वह भी तो शास्त्र है।'

(8) नूतन संवाद प्रणालियों का प्रयोग : अज्ञेय के उपन्यासों में संवाद की नवीन प्रणालियों का प्रयोग खूब हुआ है। डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र लिखते हैं 'अज्ञेय के उपन्यासों में परंपरागत संवाद प्रणालियों के साथ-साथ कुछ नूतन संवाद प्रणालियों का प्रयोग भी हुआ है; जैसे- (क) अंतर्विवाद(इंटीरियर मोनोलॉग), (ख) सांतराय संवाद (इंटेरमिटेंट डायलॉग), (ग) लिखित संवाद (रिटन डायलॉग), (घ) स्मृत संवाद (रेकलेक्टेड डायलॉग), (ङ) एक पक्षीय संवाद (वन साइडेड डायलॉग) और (च) माध्यमिक संवाद तथा इनमें से अंतर्विवाद (इंटीरियर मोनोलॉग) को तो मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में विशेष महत्व प्रदान किया जाता है।' इनके उदाहरण भी इस उपन्यास में मिल जाते हैं।

बोध प्रश्न

- शेखर : एक जीवनीउपन्यास में नूतन संवाद प्रणालियों के नाम लिखिए।

5.3.5 शेखर : एक जीवनी का देशकाल और वातावरण

किसी भी रचना में देशकाल देखने का मुख्य कारण यह होता है कि क्या वह रचना देश और समाज की तत्कालीन समस्याओं, विशेषताओं को अंकित करती है कि नहीं? रचना से तत्कालीन समाज क विषय में कुछ जानकारी और प्रामाणिकता के साथ जानकारी मिलती है कि

नहीं? जहां तक शेखर : एक जीवनी का सवाल है तो यह रचना तत्कालीन देश की सामाजिक राजनीतिक आदि परिस्थितियों का चित्रण करती है। डॉ. ब्रजभूषण सिंह लिखते हैं 'अस्पष्ट संकेतों के आधार पर शेखर की जीवनी में वर्णित समयावधि सन 1910 से 1933 के बीच की मानी जा सकती है।' उन्होंने कुछ उदाहरण दिए हैं जिन्हें हम बिन्दुवार समझने की कोशिश करेंगे-

(1) बाल्यकाल की स्मृति के रूप में महायुद्ध का वर्णान हुआ है। यहाँ महायुद्ध से तात्पर्य विश्वयुद्ध से है जो 1914 में हुआ था।

(2) पंजाब में दंगा- फसाद और गोलीकांड का संकेत किया गया है। यह संकेत जलियांवाला बाग हत्या कांड के लिए है। यह हत्या कांड 1919 में हुआ था।

(3) प्रथम असहयोग आंदोलन की स्मृतियाँ भी मिलती हैं। यह असहयोग आंदोलन गांधी जी के नेतृत्व में 1921 में हुआ था।

(4) लाहौर में काँग्रेस के अधिवेशन में शेखर को स्वयंसेवक के रूप में भाग लेते हुए दिखाया गया है। लाहौर में काँग्रेस का अधिवेशन 1930 में हुआ था।

(5) जेल में शेखर का मोहसिन से परिचय और मोहसिन का बिस्मिल के शेर को गुनगुनाना भी एक महत्वपूर्ण घटना है। बिस्मिल को दिसम्बर 1927 में फांसी हुई थी और उन्होंने ये ग़ज़ल जेल में ही लिखी थी।

(6) जेल में बाबा मदन सिंह द्वारा चटगाँव कांड की सूचना देना। चटगाँव शस्त्रागार कांड अप्रैल 1930 में हुआ था।

(7) असहयोग आंदोलन की तात्कालिक लहर का उत्कर्ष होना और क्रांतिकारियों का उसमें सहयोग देना और अपना प्रभाव बढ़ाना। यह बात 1930-1931 के आंदोलन का संकेत देती है।

इसके अलावा कई ऐसी बातें हैं जो तत्कालीन स्थितियों पर प्रकाश डालती हैं जैसे-

(8) शेखर तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था का तिरस्कार करता है इससे तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था की नीरसता का ज्ञान होता है।

(9) मद्रास (अब चेन्नई) में जाति-पाँति छुआछूत के भेदभाव के करण हॉस्टल को छोड़ देना। अछूतों के लिए पाठशाला चलाना। ये ऐसी बातें हैं जिससे उस समय की छुआछूत आदि का पता चलता है।

(10) शेखर को वैश्या समाज की आर्थिक दुरवस्था की अनुभूति होना। वैश्याओं की समस्या तब भी थी और आज भी है। बस रूप बदल गया है।

(11) एक विधवा की लड़की शशि का अनिच्छित विवाह। विश्व के लिए समाज की बाध्यता, अनमेल विवाह, नारी की विषम सामाजिक स्थिति, पुरुषों के अत्याचार, नर-नारी अधिकारों की समस्या आदि। ये समस्याएँ उस समय तो थीं ही आज भी किसी न किसी रूप में हमारे सामने आती हैं। विश्वम्भर मानव जी का यह कथन उचित जान पड़ता है 'शेखर व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से देश की ओर बढा है और अपने चिंतन में तो वह इन सबसे बढ़कर देश कालातीत हो गया है।'

बोध प्रश्न

- शेखर : एक जीवनीके देशकाल पर अपने विचार संक्षेप में बताइए।

यदि हम शेखर एक जीवनी के वातावरण की बात करें तो इसे मुख्यतः दो बिंदुओं में समझना होगा- (1) सामाजिक वातावरण (2) प्राकृतीक वातावरण।

सामाजिक वातावरण- शेखर एक जीवनी की कथा भारत के विभिन्न प्रदेशों और नगरों से संबंधित है। शेखर का संबंध इन शहरों से रहा है- लाहौर, लखनऊ, श्रीनगर, सारनाथ, पटना, मद्रास, मालाबार, महबलीपुर, त्रावणकोर, और दिल्ली। इन स्थानों का सामाजिक वातावरण इस रचना में दिखता है जैसे- 'मालाबार बहुत सुंदर प्रदेश है, लेकिन शेखर वहाँ सौन्दर्य देखने नहीं गया था। कॉलेज में मालाबार में छुआछूत संबंधी जो कहानियाँ-उसके लिए वे बातें इतनी असंभव थीं वह उन्हें कहानियों से अधिक कुछ नहीं समझ पाता था।... वहाँ के अछूत-पंचम-किसी कुलीन ब्राह्मण के पास एक दायरे के भीतर नहीं आ सकते।-कुछ गज दूर रहना होता है; ब्राह्मणों के लिए अलग सड़कें हैं जिन पर पंचम नहीं चल सकते।'

इसी तरह से इस उपन्यास में भवन, स्कूल, कॉलेज, हॉस्टल, जेल, अजायबघर, एवं वेश्यालय आदि का चित्रण भी है। उदाहरण देखें- 'जब लॉरी जेल की ड्योढ़ी में जाकर खड़ी हुई उतरते हुए शेखर ने देखा कि उसके आगे और पीछे लोहे का बड़ा फाटक है और एक हाथ में पड़ी हुई हथकड़ी के दूसरे छोर पर सिपाही, तब एकाएक उसे स्वाधीनता का अर्थ समझ में आ गया।' शेखर : एक जीवनीमें मध्यवर्गीय समाज का भी चित्रण हुआ है। स्वतंत्रता पूर्व मध्यवर्गीय समाज की रूढ़िवादिता, जाति-पाँति, धर्म, अंधविश्वास, वैमनस्य, विषमता, क्रांतिकारी आंदोलन, पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण, स्वार्थपरता, राष्ट्रीय चेतना और धार्मिक चेतना का अंकन हुआ है।

प्राकृतीक वातावरण-इस उपन्यास में विभिन्न प्रकार से प्राकृतीक चित्रण हुआ है। इसके साथ उसकी उपयोगिता भी देखी जा सकती है। यहाँ पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृती चित्रण दिखता है। गोमती के तट का चित्रण देखें- 'शेखर अकेला धीरे-धीरे टहल रहा है, पेड़ों की ओर देखता हुआ। कुछ पेड़ों पर पीली सी आकाश बेल की जाल के जाल, ढेर के ढेर पड़े हुए हैं, उन्हीं को देखता हुआ, और यह सोचता हुआ कि इन्हीं को क्यों यह अधिकार प्राप्त हुआ है कि इनकी उत्पत्ति भूमि से न हो, उनके पैर भूमि पर न टिकें।'

इसी तरह से एक उदाहरण और देखें- 'बजरा जेहलम की नहर में से होकर अब मानस बल झील में प्रवेश कर रहा है। जेहलम का गण्डाल पानी पार किया जा चुका है, चिनार वृक्षों की घनी छाया भी बहुत दूर रह गई है।'

5.3.6 शेखर : एक जीवनी की भाषा-शैली

डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र ने इनकी भाषा में कई महत्वपूर्ण बिंदुओं को देखा है यथा- काव्यात्मकता, विवेचनात्मकता, प्रौढ़ता और समर्थता, जटिलता और संकेतात्मकता, सारगर्भित और उक्तिपूर्णता, अलंकारिकता, शब्द भंडार और वाक्य विन्यास, वाक्य योजना, विषयानुरूप भाषा आदि। इनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है-

काव्यात्मकता- अज्ञेय जी स्वयं एक समर्थ कवि थे इसलिए उनकी काव्यात्मकता उपन्यासों में भी दिखती है। उनकी कविताओं के साथ-साथ उनके उपन्यासों में भी प्रणय के चित्र मिलते हैं। इस उपन्यास में अज्ञेय की काव्यमयी भाषा देखिए – 'दिन सुंदर थे और बबूल के फूलों की गंध को उड़ाते हुए समीर में एक स्निग्धता आ गई थी जिसमें और अनेक प्रकार का सौरभ अंगड़ाइयाँ लेता....'

विवेचनात्मकता- शेखर एक जीवनी के पात्र और स्वयं शेखर दार्शनिकता को धारण किए रहते हैं। जब ये जीवन के तथ्यों आदि का विवेचन करते हैं तो भाषा में विवेचनात्मकता आ जाती है। शेखर प्राचीन शिक्षा पर कहता है- 'शिक्षा देना संसार अपना सबसे बड़ा कर्तव्य समझता है, किन्तु शिक्षा अपने मन की, शिष्य के मन की नहीं।'

प्रौढ़ता और समर्थता- इस उपन्यास के पात्रों के आचरण, चिंतन मनोभाव अथवा आस-पास की परिस्थितियों का वर्णन करते समय प्रौढ़ एवं समर्थ भाषा का इस्तेमाल हुआ है। उदाहरण द्रष्टव्य है 'प्रायः लोग संतान पर माँ के प्रभाव की बात कहा करते हैं। बहुतों का विश्वास है कि सभी असाधारण व्यक्तियों पर उनकी माँ का प्रभाव, पुत्रियों पर पिता के प्रभाव की तरह नकारात्मक होता है।'

जटिलता और संकेतात्मकता- इस उपन्यास में कहीं कहीं जटिलता के दर्शन तो होते हैं साथ ही सांकेतिकता के भी दर्शन हो जाते हैं। इससे भाषा अवश्य ही दुरूह हो गई है। यथा- 'व्यक्ति जीवन की कितनी बड़ी गांठ है संस्कार और शिक्षा।'

सारगर्भित और उक्तिपूर्णता- इस उपन्यास में जीवन की गहन गुत्थियों को सुलझाने के क्रम में ऐसी भाषा और शब्दों का प्रयोग हुआ है कि हम आश्चर्यचकित रह जाते हैं। उदाहरण द्रष्टव्य है- 'दुख संसर्गजन्य है वह उदात्त और शोधक भी है। दुख का संसर्ग परवर्ती को भी शुद्ध और उदात्त बनाता है।' इसी तरह से जीवन के विषय में कहा गया है 'जीवन वैचित्र्य का दूसरा नाम है। जिनके जीवन एकरूपता के बोझ से कुचले जाकर नष्ट हो गए हैं, उनके जीवन में इतनी घटनाएँ हुई होंगी कि एक सुंदर उपन्यास बन सके।' इसी तरह से दासता के विषय में बताया गया है 'दासता क्या है? अप्रिय तथ्य का ज्ञान नहीं, असत्य का ज्ञान भी नहीं, दासता है सत्य या असत्य की जिज्ञासा को शांत करने में असमर्थ होना, वह बंधन, वह मनाही जिसके कारण हमारा ज्ञान मांगने का अधिकार छिन जाता है।'

अलंकारिकता- इस उपन्यास में कई तरह के अलंकारों का प्रयोग करते हुए कथा का सृजन हुआ है। यहाँ मुख्यतः अनुप्रास, यमक, मानवीकरण, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारों का प्रयोग किया गया है। उदाहरण देखिए- 'चाँद एक कन्या है, और यह पृथ्वी का काला सौन्दर्य उसका आवरण।'

शब्द-भंडार और वाक्य विन्यास- अज्ञेय जी ने अपने इस उपन्यास में हिंदी के शब्दों को तो लाया ही है इसके साथ-साथ संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू व अन्य प्रादेशिक भाषाओं के शब्दों को भी बिना किसी हिचक के प्रयोग किया है। संस्कृत के शब्दों में एतादृश्यत्व, विद्रोहेच्छा, मनस्तत्वविद, अनभ्यस्त, नीरवता, सजगता, कैवल्य, अशांतचित्तता आदि हैं जिनका प्रयोग इस उपन्यास में

हुआ है। अंग्रेजी शब्दों में vision, personal destiny, will to revolution, haterd, subjectivity, ispiration आदि हैं। इसी तरह से उर्दू में प्रयुक्त होने वाले शब्द यथा- दस्तावेज़, तेज़, मियाँ, ग़ुलाम आदि हैं।

वाक्य योजना-इस उपन्यास की वाक्य योजना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। भावनाओं का निर्वाह करने के लिए कई जगह केवल शब्द एवं संकेतों से पूर्ण वाक्यों का इस्तेमाल किया गया है। यथा- दोपहर, साँझ, रात और सब असत मिथ्या भ्रांति, बड़ी दूर की मरीचिका....।

विषयानुरूप भाषा-शेखर:एक जीवनी में दर्शन, मनोविश्लेषण, राजनीति, समाज व्यवस्था, एवं प्रणय प्रसंग, आदि विषयों के हिसाब से भाषा का प्रयोग है। प्रणय के दृश्य की भाषा देखें- 'क्षण भर शेखर कुछ नहीं समझता, फिर एक बाढ़ उसके भीतर उमड़ आती है। और वह उन उठे हुए अर्ध मुकुलित ओठों की ओर झुकता है।'

अज्ञेय की भाषा के विषय में रामदरश मिश्र लिखते हैं 'अज्ञेय भाषा की शक्ति को दुहना जानते हैं, वे दुहते मात्र नहीं हैं, नव-शक्ति सर्जन भी करते हैं। अतः इनके गद्य में भाषा की बारीक-बारीक, नूतन छवियाँ उभरती हैं और उन नूतन छवियों का उपयोग वे बारीक-बारीक उलझी-उलझी मनः स्थिति और सौंदर्य बोध को चित्रित करने में करते हैं। शेखर: एक जीवनी में बिंबों की छवि दर्शनीय है। साथ ही साथ छोटी-छोटी घटनाएँ इन मनः स्थितियों और बोधों को सिद्धांत के स्तर से उबारकर जीवित रूप देती चलती हैं।'

इसी तरह से इस उपन्यास में प्रयुक्त शैलियों की बात करें तो यह जीवनी शैली का उपन्यास है। इसमें विभिन्न शैलियों का प्रयोग है। पत्र शैली, पूर्व दीप्ति शैली (फ्लैशबैक शैली) आदि। इन्द्रनाथ मदान लिखते हैं 'इसमें अन्य शिल्प रूपों का प्रयोग भी उपलब्ध है, जैसे डायरी शैली, पत्र शैली, स्वप्न शैली, स्मरण शैली आदि। इनका उद्देश्य आत्म-विश्लेषण और पर विश्लेषण है। इस उपन्यास में इतिहास शैली के प्रयोग को भी आँका गया है।' इस उपन्यास में कई शैलियाँ प्रयोग में लाई गईं हैं। डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र ने शेखर : एक जीवनी में कुल 12 शैलियाँ मुख्य रूप से स्वीकार की हैं यथा- जीवनी शैली, पूर्वदीप्ति शैली (फ्लैशबैक शैली) व प्रत्यावलोकन या प्रत्यग्दर्शन या स्मृत्यावलोकन तथा चेतना प्रवाह पद्धति, वर्णनात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, तर्क वितर्कमयी या विवेचनात्मक शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, चित्रात्मक एवं नाटकीय शैली, पत्रात्मक शैली, अंतर्विवाद या आत्म संलाप शैली, सांकेतिक शैली, प्रतीकात्मक शैली और उद्धरण शैली आदि।

उपर्युक्त 12 शैलियों में से कुछ प्रमुख शैलियों के विषय में हम यहाँ चर्चा करेंगे-

जीवनी शैली- इस उपन्यास के नाम से ही पता चलता है कि इस उपन्यास की रचना जीवनी शैली में हुई है। यहाँ उसका रूप भी दिखता है। उदाहरण देखिए- 'जब वह जागा, तब घोर अंधकार था। रात आधी जा चुकी थी, और ग्वालमंडी के चौक पर भी सन्नाटा हो रहा था। शेखर का शरीर दिसम्बर के जाड़े से ठिठुर गया था।'

पूर्वदीप्ति शैली (फ्लैशबैक शैली) वा प्रत्यावलोकन या प्रत्यग्दर्शन या स्मृत्यावलोकन तथा चेतना प्रवाह पद्धति-इस उपन्यास में शेखर अपने जीवन के अंतिम क्षणों में अपने जीवन की पूर्वर्ती

घटनाओं को याद करता है। वह उन घटनाओं में शामिल चरित्रों को याद करता है जो किसी न किसी रूप में उससे सम्बद्ध थे। वह पहले की घटनाओं को याद करते हुए कहता है 'फाँसी ! .... जिस जीवन को उत्पन्न करने में हमारे संसार की सारी शक्तियां, हमारे विकास, हमारे विज्ञान हमारी सभ्यता द्वारा निर्मित सारी क्षमताएँ या औज़ार असमर्थ हैं, उसी जीवन को छीन लेने में, उसी का विनाश करने में ऐसी भोली हृदयहीनता -फाँसी ! .....'

मनोविश्लेषणात्मक शैली-इस उपन्यास की आलोचना करने वाले अधिकांश आलोचकों ने इस उपन्यास को मनोवैज्ञानिक उपन्यास ही माना है। इसकी घटनाएँ पात्रों का चित्रण ये सिद्ध करते हैं कि यह मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इस उपन्यास में मनोविश्लेषणात्मक पद्धति की सहायता से पात्रों की तीव्र अंतर्द्वंद्वता, उत्सुकता को बढ़ाने वाले भाव विकास एवं मानसिक उथल-पुथल आदि का चित्रण हुआ है। यहाँ पात्रों के अचेतन मन की दमित इच्छाओं के अध्ययन में मनोविश्लेषक उपन्यासकारों की स्वप्न विश्लेषण पद्धति का भी सहारा लिया गया है। आंतरिक संघर्ष का यह दृश्य द्रष्टव्य है –'क्या शशि ठीक कहती है? अगर शशि उसे नीचे घसीटती है, तो और क्या है जो उसे उठाएगा, उसे रसातल ही जाने से बचा लेगा।'

बोध प्रश्न

- 'शेखर: एक जीवनी में फ्लैशबैक शैली का प्रयोग हुआ है' स्पष्ट कीजिए।

पत्रात्मक शैली- उपन्यासों में एक पात्र दूसरे पात्र से पत्र के माध्यम से बातचीत करता है। यही पत्रात्मक शैली है। उपन्यासकार इस शैली की सहायता से कथा को आगे भी बढ़ाता है। इस उपन्यास में भी ऐसा हुआ है। शशि के सामने एक तरफ उसकी माँ की इच्छा है दूसरे तरफ अपना प्यार शेखर। इस पत्र में उसकी बेबसी साफ तौर पर देखी जा सकती है 'मैं जानती हूँ , मेरी सम्पूर्ण अनिक्षा है। पर क्या मुझे अनिक्षा का, अनिक्षा के बाद अस्वीकृती का अधिकार है।...पर माँ- माँ तो सनातन है, सदा माँ है उसके प्रति भी तो मेरा कर्तव्य है।'

अंतर्विवाद या आत्मसंलाप शैली-यह शैली ऐसी होती है कि पात्र खुद से ही बात करता है। आंतरिक संघर्ष में व्यक्ति अपने आप से बात करते हुए किसी निर्णय पर पहुंचना चाहता है। वह इस बातचीत में किसी को शामिल नहीं करना चाहता। इसी को सरल भाषा में मन ही मन में बात कर लेना कहते हैं। इस तरह के उदाहरण भी इस उपन्यास में हैं- 'नियुक्ति अफसर.... अनुशासन के नाम पर सब चिढ़ गए थे-हिंसा है। यदि यह हिंसा है, तो कर्तव्य की -जीवन की ही भित्ति हिंसा पर कायम है।'

5.3.7 शेखर : एक जीवनी का उद्देश्य और जीवन दर्शन

अज्ञेय लिखते हैं 'यद्यपि शेखर का जीवन दर्शन सामान्यतया उसके लेखक का भी जीवन दर्शन है, तथापि उसमें जहां-तहाँ शेखर जिन rationalisations या fallacies की शरण लेता है, वे शेखर की ही हैं, उसके लेखक की नहीं।' शेखर : एक जीवनीमें 'दुखवाद' और 'नियतिवाद' के दर्शन होते हैं। इन्द्रनाथ मदान लिखते हैं 'जहां तक शेखर के चिंतन का सवाल है, पहली बात जो बार-बार उभरती है वह दुखवाद की है। उसकी दूसरी मान्यता नियतिवाद है।'

बोध प्रश्न

- शेखर : एक जीवनीके मूल दर्शन के विषय में इंद्रनाथ मदान क्या विचार रखते हैं ?

सही तरह से देखा जाए तो शेखर : एक जीवनी का उद्देश्य 'एक व्यक्ति के जीवन की विविध परिस्थितियों में उसके अंतरलोकों का विश्लेषण एवं समाज में उसकी स्वतंत्ररूपेण स्थापना ही है। सामाजिक धरातल के विभिन्न पक्षों पर व्यक्ति शेखर के मन का प्रक्षेपण ही इस उपन्यास में अज्ञेय ने किया है।' शेखर के जरिए अज्ञेय समाज में व्याप्त बहुत सारी अच्छाइयों और बुराइयों से पर्दा उठाते हैं। शेखर के विषय में बात करते समय वह जिस समाज में रहता है उसका भी चित्रण हुआ है। तत्कालीन देश की राजनीतिक परिस्थितियों का भी चित्रण है। शेखर विद्रोह द्वारा अपनी बात को सही सिद्ध करना चाहता है। वह संघर्ष भी खूब करता है। इन सबके माध्यम से लेखक एक व्यक्ति के जीवन का चित्रण करता है। यही उसका मूल उद्देश्य है। प्रेम संबंधी चित्रण करते समय फ्रायड की प्रेम संबंधी मान्यता का प्रभाव साफ तौर पर देखा जा सकता है।

शेखर के जीवन को उसके आसपास की परिस्थितियाँ गढ़ती हैं उसे प्रभावित करती हैं। उसे गढ़ने वाली प्रवृत्ति घृणा या हीन भावना नहीं बल्कि प्रेम का अभाव है। उसे प्रेम और सहानुभूति की चाहत है। शेखर : एक जीवनी में मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति, अछूतों की समस्या, ईश्वरीय सत्ता का नकार इत्यादि दिखते हैं। इस उपन्यास में शेखर – शारदा के माध्यम से प्रेम के रहस्य और आकर्षण को तो जान लेता है लेकिन वह प्रेम के यथार्थ को नहीं जान पाता।

इस उपन्यास के दूसरे भाग में शेखर प्रेम एवं नारी संबंधी दो विचारधाराओं से टकराता है, उसे दोनों ही आघात पहुँचाती हैं। शेखर: एक जीवनी के जीवन दर्शन के संबंध में डॉ. दुर्गा शंकर मिश्र का कथन द्रष्टव्य है 'शेखर : एक जीवनी में एक प्रकार के रोमांटिक जीवन दर्शन का ही निर्माण किया है और शेखर की प्रेम धारणा को पीड़ा, यातना, दुख एवं मृत्यु आदि असंख्य रोमांटिक बिंबों से पूर्ण कर देने की ओर ध्यान दिया है। इसीलिए हमें शेखर : एक जीवनी में रोमांटिक पीड़ावाद के ही दर्शन होते हैं और प्रेमी शेखर मूलतः निराश, पीड़ित एवं कुंठित ही जान पड़ता है। शेखर की आत्म पीड़ा के विभिन्न पहलुओं का भी चित्रण करने की ओर लेखक का ध्यान गया है और एक ओर तो शेखर रोमांसवाद से मुक्त होना चाहता है तथा दूसरी ओर न केवल उसी से पूरे प्राणपण से चिपका भी रहना चाहता है अपितु यह भी सोचता है कि इसे निकाल फेंकना आत्मा को निकाल फेंकना है।' शेखर नास्तिक प्रवृत्ति है इसीलिए सारी बुराई की जड़ ईश्वर को मानता है। वह बाल्यकाल से ही इस तरह से सोचता है।

5.4 पाठ सार

इस प्रकार हम देखते हैं कि यह उपन्यास शेखर के जीवन की खोज है। उसके साथ-साथ उसके जीवन में शामिल होने वाले लोगों की बात भी हो गई है। यह उपन्यास प्रयोगवादी पद्धति पर लिखा गया है। मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास में उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक के दर्शन होते हैं। इसके साथ-साथ वहाँ की सामाजिक परिस्थितियों का भी ज्ञान होता है। देश की राजनीतिक स्थिति आंदोलन इत्यादि भी इस उपन्यास में आए हैं। साथ ही

क्रांतिकारी गतिविधियों की भी चर्चा है। एक लड़के के प्रति लड़की और लड़की के प्रति लड़के का आकर्षण भी दिखता है।

इस उपन्यास की एक बड़ी समस्या यह है कि इसमें घटनाएँ और कार्य इस तरह से दिखाए गए हैं जो कि आज भी थोड़े बहुत ही स्वीकार किए जाते हैं। जैसे शशि का शेखर के साथ बिना विवाह किए रहना। उसे आज हम 'लिव इन रिलेशनशिप' कह सकते हैं। न्यायालय ने भले ही इसे मान्यता दे दी हो लेकिन समाज आज भी इस तरह के रिश्तों को स्वीकार नहीं करता। 1944 में क्या स्थिति रही होगी? यहाँ बच्चन सिंह का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण जान पड़ता है। 'शेखर : एक जीवनी ऐसी विदेशी कलम है जो देश में बेमौसम लगाई गई है।' कहने का तात्पर्य है कि यह उपन्यास अत्यंत प्रगतिशील है लेकिन तत्कालीन समाज उतना प्रगतिशील नहीं हो पाया था। भाषा और शैली के साथ संवाद भी यथोचित हैं।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. अज्ञेय एक समर्थ कवि के साथ एक समर्थ उपन्यासकार भी हैं। उनका कवि रूप उनके उपन्यासों में भी दिखता है।
2. शेखर : एक जीवनीएक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। मुख्यतः फ्लैश बैक शैली में लिखा गया है। इसकी कथा भारत के कई शहरों यथा-लखनऊ, लाहौर, पटना, मद्रास आदि में घटती है।
3. शेखर : एक जीवनीके पात्र बड़े ही शसक्त हैं। इसके प्रमुख पात्रों में शेखर की माँ, शेखर के पिता, शशि की माँ विद्यावती, शेखर, शशि, शरद, बाबा मदन सिंह इत्यादि हैं। इस उपन्यास में गौण पात्रों की संख्या लगभग 85 है।
4. इस उपन्यास के संवाद कथा को आगे बढ़ाने और पात्रों की मनःस्थिति को अभिव्यक्त करने में सक्षम हैं। इस उपन्यास में तत्कालीन हिंदुस्तान की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक इत्यादि परिस्थितियों का अंकन हुआ है।
5. इस उपन्यास का मूल उद्देश्य जीवन की पहचान कराना, दुखवादी और नियतिवादी दर्शन की प्रधानता है।
6. इसकी भाषा पात्रों और परिवेश के अनुकूल है।

5.6 शब्द संपदा

1. एतादृश्यत्व = कुछ आभासी वस्तुएं जैसे- भूत-प्रेत, आत्मा, प्रकाश, आकाश,
   मन, सुख, दुख
2. कैवल्य = शुद्धता, निर्लिप्तता, एकता, मुक्ति
3. चेतन मन और अवचेतन मन = इंसानी मन के मूल रूप से दो प्रकार होते हैं। 'चेतन मन' और 'अवचेतन मन'। चेतन मन इंसानी मन का बाहरी ढांचा है और अवचेतन मन अंदरूनी ढांचा है। चेतन मन हमारी चेतना के समय (जब हम होश में रहते हैं) काम करता है।

इसे मस्तिष्क के द्वारा परिस्थितियों के अनुसार नियंत्रित किया जा सकता है। अवचेतन मन में वे बातें या इच्छाएँ होती हैं जिन्हें हम किसी कारण वश पूरा नहीं कर पाते। वे इच्छाएँ ख्वाब (स्वप्न) के रूप में दिखाई पड़ती हैं।

4. उलझन = आंधी, तूफान, परेशानी, कष्ट, दुख
5. दस्तावेज़ = प्रलेख, डॉक्यूमेंट
6. निहिलिस्ट तुर्गनेव = निहिलिस्ट या शून्यवाद एक दर्शन है। जिसके सूत्रधार थे। यह दर्शन उन तमाम दार्शनिकों के लिए एक चुनौती है जो जीवन की सार्थकता से जुड़ा कोई दर्शन प्रस्तुत करते हैं।
7. पंचम, अछूत = वर्तमान में इनके दलित शब्द का प्रयोग किया जाता है।
8. सखा ऐसा = ऐसा व्यक्ति जो साथ-साथ रहे, साथी, संगी, दोस्त मित्र, दोस्त जिसके साथ दोस्ती बहुत गहरी हो। गुप्त बातें भी जिससे चर्चा की जाती हों, अत्यधिक विश्वसनीय मित्र या दोस्त।

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ)दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. शशि की चारित्रिक विशेषताओं का निरूपण कीजिए।
2. शेखर की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. शेखर : एक जीवनी के संवाद गठन पर अपने विचार लिखिए।

खंड (ब)

(आ)लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. शेखर : एक जीवनी की भाषा पर अपने विचार लिखिए।
2. 'शेखर एक जीवनी' के निर्माण की घटना को अपने शब्दों में लिखिए।
3. शेखर : एक जीवनी की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए –

1. शेखर : एक जीवनी कितने भागों में प्रकाशित है? ( )

(क) 2 (ख) 1 (ग) 4 (घ) 3

2. शेखर : एक जीवनी में गौण पात्रों की संख्या लगभग कितनी है? ( )

(क) 84 (ख) 85 (ग) 9 (घ) 12

3. 'त्रिशंकु' किसकी रचना है? ( )

(क) अब्दुल बिस्मिल्लाह (ख) रामविलास शर्मा

(ग) जय प्रकाश कर्दम (घ) सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. शेखर : एक जीवनी वास्तव में ..... अनुक्रम है।
2. 'अज्ञेय' .....के प्रवर्तक हैं।
3. डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र ने शेखर : एक जीवनी में कुल .....शैलियाँ मुख्य रूप से स्वीकार की हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. शशि	(अ) बाबा मदन सिंह
2. जैनेन्द्र का दिया हुआ नाम	(आ(07 मार्च 1911
3. शेखर : एक जीवनी के एक पात्र	(इ) अज्ञेय
4. अज्ञेय जन्म दिवस	(ई) शेखर की मौसेरी बहन

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. अज्ञेय का उपन्यास साहित्य : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र
2. अज्ञेय संचयिता : नन्दकिशोर आचार्य
3. आधुनिकता और हिंदी उपन्यास : इंद्रनाथ मदान
4. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास : बच्चन सिंह
5. बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य : विजयमोहन सिंह
6. शेखर : एक जीवनी (भाग 1, 2) : अज्ञेय
7. शेखर : एक जीवनी का महत्व : परमानन्द श्रीवास्तव
8. हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा : रामदरश मिश्र

इकाई 6 : 'शेखर - एक जीवनी' : चेतना और विमर्श

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मूल पाठ : 'शेखर - एक जीवनी' : चेतना और विमर्श
6.3.1 अज्ञेय का परिचय
6.3.2 'शेखर - एक जीवनी' : कथानक
6.3.3 चेतना एवं विमर्श के स्तर पर 'शेखर - एक जीवनी'
6.4 पाठ सार
6.5 पाठ की उपलब्धियाँ
6.6 शब्द संपदा
6.7 परीक्षार्थ प्रश्न
6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! कालजयी जीवनीपरक उपन्यास 'शेखर- एक जीवनी' के रचनाकार हैं सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'। अज्ञेय हिंदी साहित्य के क्रांतिकारी साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं। हिंदी में व्यक्तिवादी साहित्यिक गरिमा को स्थापित करने में अज्ञेय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रस्तुत इकाई में उपन्यास के कथ्य और शिल्प का चेतना के स्तर पर विवेचित किया जाएगा। चेतना वह अनुभूति है, जो मानव मस्तिष्क के आवेगों से उत्पन्न होती है। हिंदी साहित्य के सामाजिक यथार्थ से भरपूर उपन्यास लेखन के दौर में अज्ञेय ने मनोविश्लेषणपरक उपन्यास लिखते हुए विषय को सर्वथा नएपन के साथ प्रस्तुत किया है। अपनी विश्लेषणात्मक दृष्टि का सुंदर परिचय उन्होंने इस उपन्यास में दिया है। लेखक ने पूर्वदीप्ति शैली के माध्यम से चरित्र प्रधान उपन्यास को व्यक्तिवादी धरातल पर प्रस्तुत किया है। उन्होंने उपन्यास में सर्वत्र शेखर पात्र को संघर्षशील दिखाया है। इस उपन्यास में कई अलग-अलग घटनाएँ घटती हुई दिखाई देती हैं, किंतु शेखर अपनी स्थिरता के साथ जीवन पथ पर बढ़ने वाला पात्र सिद्ध हुआ है। लेखक की विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति को विस्तारपूर्वक इस इकाई में देखा जा सकता है।

6.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के माध्यम से आप -

1. साहित्यकार अज्ञेय के क्रांतिकारी व्यक्तित्व को जान सकेंगे।
2. व्यक्तिवादी एवं मनोविश्लेषणवादी उपन्यास विधा से अवगत हो सकेंगे।
3. अज्ञेय के मनोवैज्ञानिक उपन्यास 'शेखर-एक जीवनी' का चेतनापरक विवेचन कर सकेंगे।
4. 'शेखर- एक जीवनी' उपन्यास की मूल चेतना को समझ सकेंगे।

5. विमर्श की दृष्टि से इस उपन्यास का आकलन कर सकेंगे।

6.3 मूल पाठ : 'शेखर - एक जीवनी' : चेतना और विमर्श

अज्ञेय अपने युगीन वातावरण के प्रति अतिरिक्त सजग रचनाकार के रूप में जाने जाते हैं। उनकी दृष्टि का नयापन उनकी रचनाओं की चेतनता को विमर्श के विविध आयाम प्रदान करता है। छायावादी विचारधारा के शीर्ष पर पहुँच कर जहाँ हिंदी साहित्य आत्ममोह में आबद्ध था, ऐसी स्थिति में अज्ञेय हिंदी साहित्य में तार सप्तकों की शृंखला लेकर नए साहित्यिक प्रयोग कर रहे थे। छायावादी 'मैं' की सीमारेखा से बाहर निकल कर अज्ञेय व्यक्तित्व स्वतंत्रता की विचारधारा का प्रवाह कर रहे थे। पाश्चात्य साहित्य परंपरा के अनुकरण पर हिंदी में छायावाद काव्य के क्षेत्र में यह दृढ़ता के साथ स्थापित हो चुका था, ऐसी स्थितियों में अज्ञेय आत्मचेतना तथा आधुनिकताबोध के साथ पाठकों के लिए नए वस्तु शिल्प गढ़ रहे थे। अज्ञेय अपनी रचनाओं के माध्यम पाठकों की चेतना को झंकृत कर रहे थे। मनुष्य अपनी चेतना की प्रेरणा से ही सब कार्य करते हैं। एक कार्य भौतिक स्तर पर तो दूसरा बौद्धिक स्तर पर किया जाता है। अज्ञेय ने बौद्धिक स्तर की चेतना को ही अपनी नई प्रयोग दृष्टि के माध्यम से जगाने की कोशिश की।

हिंदी उपन्यास जगत में प्रेमचंद के बाद छोटे कथानक को आधार बनाकर रचनाएँ होने लगी थी। अज्ञेय ने इस उपन्यास को अपनी काल्पनिकता के सुन्दर समायोजन के साथ प्रस्तुत किया है। अज्ञेय के चरित्र विशेष वर्ग से जुड़े हुए हैं। अज्ञेय की अपनी स्वयं की रुचि व्यक्ति चरित्रों की सर्जना करने की रही है। शेखर का विद्रोह अज्ञेय का बौद्धिक विद्रोह माना जा सकता है। शेखर के व्यक्तित्व को पूर्णता उनके अगले उपन्यास 'नदी के द्वीप' में देखा जा सकता है। शेखर का संघर्ष अज्ञेय के तद्युगीन परिवेश का प्रस्तुतीकरण है। अज्ञेय ने परंपरागत लेखन शैली से विलग होकर जब अपनी रचनाओं की सर्जना की, तो समीक्षकों को उनकी रचनाओं में अनेक आयाम विचार-विमर्श के लिए मिल गए। हिंदी साहित्य में तारसप्तकों की परंपरा को शुरू करने वाले अज्ञेय नए-नए साहित्यिक प्रयोग के अंतर्गत कई रचनाओं की सर्जना की। उनके द्वारा मानव मन के खोह में उतरकर लेखक व्यक्ति और समाज के अन्तर्सम्बन्धों की सम्यक व्याख्या की गयी है। विद्रोही स्वभाव वाले शेखर को बचपन से ही लेखक ने सचेत बताया है। वह घर में पालन होने वाले सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करते हुए स्वतंत्र जीवन जीने का स्वप्न देखते हुए उन सपनों को पूरा करने में सतत निमग्न रहने लगे। बंधन व्यक्तित्व को कुंठित करता है और शेखर को कुंठाग्रस्त बनाना अज्ञेय को किसी भी हाल में मंजूर न था। लेखक ने शेखर को काम भाव तथा अहं भावना से ग्रस्त दिखाया है। शेखर अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का निर्माण अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति के साथ करना चाहते हैं। जेल में फांसी की सजा होने पर मृत्यु से पूर्व शेखर अतीत के मधुरतम क्षणों को पुनः जी लेना चाहता है। चेतनशील शेखर के व्यक्तित्व परिमार्जन में लेखक ने कोई कमी नहीं रखी है। यह उपन्यास मनुष्य की संरचना के सम्यक विवेचन का प्रतीक है, जो व्यक्तित्व के विनिर्माण की प्रतीति को समझने के लिए अत्यंत अपरिहार्य है। शेखर की जिज्ञासा यदि आरम्भ से ही सही ढंग से शांत की जाती, तो किंचित उसका व्यक्तित्व खुलकर विकसित होता।

बोध प्रश्न

- पाश्चात्य रोमांटिसिज्म साहित्य परंपरा के अनुकरण पर हिंदी में किस परंपरा का आरम्भ हुआ?
- हिंदी साहित्य अपने किस दौर में आत्ममोह में निमग्न था?

6.3.1 अज्ञेय का परिचय

हिंदी साहित्य के क्रांतिकारी साहित्यकार अज्ञेय का जन्म 7 मार्च सन् 1911 में उत्तर प्रदेश के 'कसया' नामक स्थान में हुआ था। अज्ञेय दो बहनों तथा आठ भाइयों के बीच तीसरे क्रम में थे। अज्ञेय का जन्म 7 मार्च सन् 1911 ई. को कसया (कुशीनगर) के पुरातात्विक विभाग के एक शिविर में हुआ था। अज्ञेय के पिता पंडित हीरानंद शास्त्री तथा माता वयन्ती देवी थी। अज्ञेय के पिताजी भारत सरकार के पुरातात्विक विभाग में कार्यरत थे। अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय था। उन्होंने आरंभिक शिक्षा घर में प्राप्त करने के बाद विद्यालयी शिक्षा लाहौर में प्राप्त की। अंग्रेजी, फारसी, बंगला तथा तमिल आदि भाषाओं को उन्होंने स्वाध्याय से सीखा। उन्होंने पंजाब से सन् 1925 में मैट्रिक तथा मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज से सन् 1927 में इंटरमीडिएट तथा 1929 में लाहौर के फॉरमन कॉलेज से बी.एस. सी. की शिक्षा पूरी की। एम.ए. अंग्रेजी विषय से प्रथम वर्ष पूरा करने के बाद द्वितीय वर्ष में क्रान्तिकारी संगठन से जुड़ गए। चूंकि अज्ञेय के पिता का स्थानांतरण होता रहता था, इसलिए कश्मीर, नालंदा, पटना, लखनऊ आदि अलग-अलग स्थानों का अनुभव अज्ञेय को सहज ही होता रहा। वन, पहाड़, समुद्र तट, बीहड़, गाँव, शहर, देश तथा विदेश आदि का भ्रमण करते हुए विविध कलाओं को सीखते रहते थे, जिससे उनकी रुचि का निरंतर विस्तार होता रहता था। अज्ञेय अधिकांश समय अपने पिताजी के साथ खुदाई आदि स्थानों पर जाया करते थे। अज्ञेय में देशभक्ति की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। देश की आज़ादी की लड़ाई को देखकर अज्ञेय का मन इतना अधिक उद्वेलित हुआ कि वे क्रांतिकारी समूह से जुड़ कर आज़ादी के राह पर बढ़ गए।

हिंदी साहित्य में प्रयोगवाद का आरम्भ तारसप्तकों के प्रकाशन से आरम्भ होता है। 1943 में पहले तारसप्तक का प्रकाशन अज्ञेय द्वारा किया गया। 1951 में दूसरे और 1959 में तीसरे तारसप्तकों का प्रकाशन हिंदी साहित्य के नए राहों के अन्वेषी रचनाकारों को लेकर अज्ञेय ने किया। पहले तार सप्तक में अज्ञेय, भारतभूषण अग्रवाल, मुक्तिबोध, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, नेमिचंद्र जैन, रामविलास शर्मा आदि सात कवि हैं। दूसरे सप्तक में भवानीप्रसाद मिश्र, शकुन्त माथुर, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, शमशेर बहादुर सिंह, हरिनारायण व्यास, धर्मवीर भारती आदि ने कई नए साहित्यिक प्रयोग किए। तीसरे तारसप्तक के प्रमुख कवियों में प्रयागनारायण त्रिपाठी, कीर्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुंवर नारायण, विजयदेव नारायण साही, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना प्रभृति थे। चौथे तारसप्तक के कवि अवधेश कुमार, राजकुमार कुम्भज, स्वदेश भारती, सुमन राजे, नन्द किशोर आचार्य, श्रीराम शर्मा, राजेन्द्र किशोर आदि ने अपनी रचनाओं में प्रयोगशीलता का क्रम बनाये रखा। नकेनवादी कवियों को भी प्रयोगवादी कवि माना जाता है, जिसमें नलिनविलोचन शर्मा, केसरी कुमार और नरेश कवि आदि हैं। अज्ञेय ने अपनी प्रयोगशीलता की इसी छबि को शेखर : एक

जीवनीमें प्रस्तुत किया है। मात्र एक रात में देखे गए स्वप्न के आधार पर शेखर के शिशु रूप से लेकर मृत्यु पर्यंत तक की घटना को चित्रित करने की कोशिश की है।

'शेखर : एक जीवनी' को अज्ञेय के विद्रोही व्यक्तित्व के आत्मकथ्य का प्रतीक माना जाता है। इसके अतिरिक्त अज्ञेय की 'नदी के द्वीप' तथा 'अपने-अपने अजनबी' उपन्यास भी उल्लेखनीय हैं। उनके काव्य संग्रहों में 'भग्नदूत', 'बावरा अहेरी', 'हरी घास पर क्षण भर', 'इत्यलम', 'भग्नदूत', 'आँगन के पार-द्वार' आदि तथा कहानियों में 'विपथगा', 'परंपरा', 'कोठारी की बात', 'शरणार्थी', 'जयदोल' आदि उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। उनके यात्रा साहित्य में 'एक बूँद सहसा उछली', 'अरे यायावर रहेगा याद' महत्वपूर्ण हैं। हिंदी साहित्य का यह यात्री 4 अप्रैल 1987 में दूसरे लोक की ओर प्रयाण कर गया।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय का जन्म किस वर्ष हुआ?
- अज्ञेय की किस कृती को उनके विद्रोही व्यक्तित्व का प्रतीक माना जाता है?

6.3.2 'शेखर-एक जीवनी' : कथानक

शेखर : एक जीवनीउपन्यास में अज्ञेय ने अपने जीवन की कथा को पूर्वदीप्ति शैली में प्रस्तुत की है। इस उपन्यास की सर्जना दो भागों में की गयी है। पहला भाग 'उत्थान' सन् 1941 में तथा दूसरा भाग 'उत्कर्ष' सन् 1944 में प्रकाशित हुआ। 'उत्थान' को चार खण्डों में विभाजित किया गया है, यथा - 'उषा और ईश्वर', 'बीज और अंकुर', 'प्रकृती और पुरुष' तथा 'पुरुष और परिस्थिति' आदि। 'उत्कर्ष' को 'पुरुष और परिस्थिति', 'बंधन और जिज्ञासा', 'शशि और शेखर' तथा 'धागे, रस्सियाँ, गुंझर' आदि में विभाजित किया गया है। उपन्यास के आरंभ में लेखक की दृष्टि जिज्ञासा से शुरू होती है, किन्तु अंत शेखर के मानसिक द्वंद्व के रूप में होता है। ईश्वर के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न खड़ा करने वाले शेखर को ईश्वर में घोर अनास्था है। यह एक जीवनीप्रधान मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इस उपन्यास को ईश्वर के अस्तित्व के प्रति प्रश्न-दृष्टि और अंत को द्वंद्वात्मक परिणति दी गयी है। उपन्यास में ईश्वरीय अनास्था के प्रति लेखक ने स्पष्ट अभिव्यक्ति करते हुए हमेशा ईश्वर के अस्तित्व पर ही सवाल उठाते हुए विविध घटनाओं का उल्लेख किया है। माँ के प्रति शेखर की घृणा भावना का उल्लेख पाठकों के मस्तिष्क को विश्लेषण करने के लिए प्रेरित करता है। सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी साहित्यकार हैं। ये एक प्रयोगशील कवि, ललित निबंधकार, संपादक तथा कुशल अध्यापक के रूप में जाने जाते हैं। अज्ञेय का मनोवैज्ञानिक उपन्यास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। 'शेखर: एक जीवनी' उपन्यास को लेखक ने आत्मकथात्मक रूप में लिखा है। उपन्यास का केन्द्रीय पात्र शेखर विद्रोही एवं उन्मुक्त स्वभाव का व्यक्तित्व है। सामाजिक नियमों के बंधनों से उसे अत्यंत घृणा है। वह हर संभव कोशिश करता है ताकि वह स्वच्छंद जीवन जिये। वह अपनी बड़ी बहन सरस्वती को अपने जीवन में गुरु के स्थान पर रखता है। शेखर के व्यक्तित्व से उसकी सहपाठिनी शारदा अत्यधिक प्रभावित होती है। शारदा एक मद्रासी चंचल स्वभाव की लड़की है, जिसे शेखर भी पसंद करता है। शेखर शारदा को ही नहीं बल्कि अपनी मौसेरी बहन शशि की ओर भी आकर्षित होता है। शशि एक जीवट तथा सशक्त लड़की के रूप में चित्रित हुई है, जो संघर्षों के

समक्ष डटकर खड़ी रहती है। शेखर की माँ मणिका तथा शांति का उसके जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह एक व्यक्ति का उपन्यास है, जो उसके परिवेश, युग तथा समाज को भी प्रस्तुत करता है। शेखर भरे - पूरे परिवार में भी स्वयं को अकेला अनुभूत करता है । उपन्यास में व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में किन-किन का योगदान होता है, यह सब विस्तारपूर्वक बताया गया है। शेखर के संघर्ष में उस काल के नवयुवकों का संघर्ष और विचारधारा को देखा जा सकता है। शेखर अपनी चेतना में एक ऐसा व्यक्तित्व है, जो व्यक्तित्व स्वातंत्र्य की खोज में आजीवन निमग्न रहता है। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने व्यक्तित्व सर्जना को नई नैतिकता एवं जीवन दृष्टि के साथ प्रस्तुत किया है। यह मानव व्यक्तित्व संरचना का दस्तावेज है। यह शेखर के आतंरिक जीवन की प्रस्तुति है। इस उपन्यास में शेखर के बालपन, किशोर अवस्था तथा युवावस्था आदि का चित्रण किया गया है। एक व्यक्ति के व्यक्तित्व की आधारशिला बालपन तथा किशोरावस्था में निर्मित होती है। शेखर समाज के बंधन से मुक्त होकर विद्यार्थी जीवन में कुमार से समलिंगी आकर्षण का भी अनुभव करता है। उसका व्यक्तित्व काम-भाव से परिचालित है। उसका अहम् भाव मात्र काम भाव से संचालित रहता है। वह अपने जीवन में जिसे चाहता है, उससे दूर होना उसकी मानसिक विकलता को बढ़ाने वाला प्रतीत होता है। उपन्यास की कथावस्तु में शेखर एक देशभक्त तथा क्रान्तिकारी व्यक्तित्व से युक्त है। शेखर के व्यक्तित्व पर स्त्रियों का अत्यधिक प्रभाव है। शेखर के व्यक्तित्व पर सबसे अधिक प्रभाव शशि का पड़ता है। उसके जीवन में अन्य स्त्री पात्रों का आना-जाना रहता है किन्तु शशि के सहनशील व्यक्तित्व की छाया उस पर अधिक पड़ती है। वह सदैव मनःसंघर्ष से इसलिए जूझता रहता है क्योंकि उसकी जिज्ञासा का शमन स्वस्थ ढंग से नहीं किया जाता है। वह अपनी जिज्ञासा का समाधान चाहता है तथा वह प्रेम का आकांक्षी है। इस उपन्यास में अत्यधिक घटनाओं के बाद भी शेखर का व्यक्तित्व स्थिर रहता है। यह उपन्यास पाश्चात्य विद्वानों फ्रायड, युंग तथा एडलर के कामवादी, अहंवादी तथा आत्मकेंद्रीयता से आवेष्टित है। इस उपन्यास में स्मृतियों का ताना-बाना बुना गया है। शेखर पात्र को अपने क्रान्तिकारी लेखन के कारण तात्कालिक सरकार के द्वारा फांसी की सजा दिए जाने पर वह अतीत की घटनाओं में डूबा रहता है।

बोध प्रश्न

- 'शेखर-एक जीवनी' उपन्यास के प्रथम भाग का नाम लेखक ने क्या रखा है?
- 'शेखर-एक जीवनी' के द्वितीय भाग का शीर्षक बताइए।

अपने समय की राजनीतिक गतिविधियों से अज्ञेय अत्यधिक प्रभावित थे। उपन्यास में मृत्यु, अहिंसा, स्वतंत्रता, प्रेम आदि पर आद्यंत विश्लेषण किया गया है। इस उपन्यास में मन के भावों का गहन चिंतन किया गया है। शेखर अनीश्वरवाद का समर्थन नहीं करता है, बल्कि उसकी जिज्ञासा ईश्वर के प्रति उसे विद्रोही बना देती है। शेखर का मानसिक द्वंद्व उसे कई क्षेत्रों में नए प्रयोग की ओर उन्मुख करता है। वह समाज के अछूत तथा स्त्रियों के साथ होने वाले भेदभाव को दूर करने का प्रयत्न करता है। उसकी जिज्ञासा जन्म और मृत्यु के सन्दर्भ में सदैव बनी रहती है। वह व्यक्तिवादी दृष्टि को महत्वपूर्ण मानता है। वह व्यक्तिवादी तथा क्षणवादी होता है। वह व्यक्ति के सत्य को ही अंतिम मानता है। वह शशि के प्रति अपने आकर्षण को

छिपाता नहीं है। वह समाज की दृष्टि में हर गलत बात को सहज स्वीकार नहीं करता है। वह जहाँ अन्याय देखता है, उसे स्वीकार नहीं करता है। उसकी विद्रोही वृत्ति उसे राष्ट्रभाषा में लेखन की ओर उन्मुख करती है।

शेखर अपने पिता के कहने पर भी अंग्रेजी में लेखन नहीं करता है। शेखर फांसी की सजा को मानव सभ्यता के लिए अभिशाप मानते हुए भी स्वयं फांसी की सजा पाकर मौत से डरने का विचार नहीं करता, बल्कि इसके औचित्य पर प्रश्न चिह्न खड़े करता है। अज्ञेय शेखर जैसे व्यक्तित्व को इसलिए गढ़ता है कि ताकि समाज में कुंठित व्यक्तित्व के स्थान पर स्वतंत्र व्यक्तित्व का निर्माण हो सके। वह समाज के सड़े-गले सोच को हटाकर स्वस्थ समाज और देश की कल्पना करता है। अज्ञेय अपने विचारों को शेखर के माध्यम से व्यक्त करते हैं। शेखर एक संवेदनशील, देशभक्त तथा राष्ट्रीय विचारधारा का पोषक पात्र है।

अज्ञेय की लेखन शैली में बिंब और प्रतीक का भरपूर प्रयोग किया गया है। अज्ञेय की काव्यात्मक भाषा उपन्यास में देखी जा सकती है। लेखक की यही प्रतीकात्मक भाषा-शैली पाठकों को मनन करने के लिए प्रेरित करती हैं। इस उपन्यास के बाद हिंदी में मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों की बाढ़ सी आ गयी। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक संरचना में व्यापक बदलाव हुए। मानव सभ्यता विचारों के स्तर पर अत्यंत खोखला बनने लगा था। जन समाज का विश्वास सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक व्यवस्था से उठने लगा था। ऐसे समय में कार्ल मार्क्स, सार्त्र, यास्पर, युंग, स्पेंसर, बेन्थम, देकार्त आदि मानववाद की पुनर्प्रतिष्ठा करने में संलग्न थे। इन विद्वानों ने मृत्यु, अहम्, काम तथा भय आदि को मानवीय चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया।

विश्वयुद्ध के बाद की अनास्था के स्थान पर मानव जीवन के अंतर्मन में अस्तित्ववाद को स्थापित करते हुए जीवन के प्रति आशा का संचार करने में इन विद्वानों का बहुत बड़ा योगदान था। शेखर पात्र में लेखक ने उक्त विषयों का बड़ी सावधानीपूर्वक आरोपण किया है। मृत्यु, भय, अहम् तथा काम आदि भाव मानव के जीवन में आनंद की स्थापना के लिए आवश्यक तत्व हैं।

'शेखर: एक जीवनी' के साथ ही प्रेमचंद के बाद हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में नवयुग का आरम्भ हो जाता है। मानव संबंधों का समय- समय पर नए कोणों से विश्लेषण करने में यह अत्यंत सफल कृती के रूप में सामने आती है।

बोध प्रश्न

- शेखर कैसे समाज की कल्पना को साकार करना चाहता है?
- मानव के जीवन में आनंद की स्थापना के लिए आवश्यक तत्व बताइए।

6.3.3 चेतना एवं विमर्श के स्तर पर शेखर : एक जीवनी

'शेखर: एक जीवनी' उपन्यास में अज्ञेय भूमिका में कहते हैं - 'शेखर में मेरापन कुछ अधिक है। शेखर निःसंदेह एक व्यक्ति का अभिन्नतम निजी दस्तावेज है यद्यपि वह साथ ही उस व्यक्ति के युगसंघर्ष का प्रतिबिम्ब भी है।' शेखर के व्यक्तित्व को अज्ञेय खुले दिल-दिमाग से गढ़ते हैं। शेखर का मन शारदा के झिड़कने के बाद टूट जाता है। जिसके बाद शेखर की अंतरंगता शशि से होती है। शेखर शशि की प्रेरणा से ही लिखना शुरू करता है। उसकी रचना 'हमारा समाज'

साठ रुपये में खरीद लिया जाता है। उसका लिखा हुआ कोई नहीं प्रकाशित करता है, ऐसे में क्रांतिकारी लेख लिखने पर प्रकाशित करने का वचन विद्याभूषण देते हैं। भारतीय स्वतंत्रता के पहले विश्व भर में आर्थिक, सामाजिक संरचना में व्यापक परिवर्तन हुए। दो विश्वयुद्धों ने समस्त मानवता को हिला कर रख दिया था। ऐसे में मानवता को त्राण देने के लिए मार्क्सवादी तथा अस्तित्ववादी विचारधारा का पर्याप्त प्रचार-प्रसार साहित्य के द्वारा हो रहा था। जीवन के प्रति विश्वास बनाये रखने की महती जिम्मेदारी साहित्य चेत्ताओं ने आरम्भ किए। विश्वयुद्धों की भयावह स्थितियों ने मानव समाज को नए सिरे से सोचने के लिए विवश किया। ऐसे में नास्तिकवाद, अस्तित्ववाद जैसे विचार मानव समाज को सचेत कर रहे थे। मानवता का विवेचन नए-नए राहों से हो रहा था। नीत्से के अतिमानव की पारिकल्पना में ईश्वर के अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगने लगे। इस उपन्यास में अज्ञेय ने भी ईश्वर के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगाए हैं। स्वतंत्रता से पहले लिखे गये 'शेखर: एक जीवनी' मनोवैज्ञानिक उपन्यास में तद्युगीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि विचारधाराओं की नव्यतम व्याख्या की गयी है। शेखर व्यक्तित्व के विकास में शिक्षा को बाधक मानता है। उपन्यास के तीन पात्र बाबा, मोहसिन तथा रामजी जेल में भी अत्यंत गतिशील हैं। शेखर के जीवन में सामाजिकता की भावना का विकास जेल से छूटने के बाद होता है। जेल की यातनाएँ शेखर को अधिक सचेत करती है। शेखर के व्यक्तित्व को भय से भयभीत होने के स्थान पर भय को निर्मूल करते हुए अज्ञेय ने गढ़ा है। अज्ञेय भय की संरचना पर कुठाराघात करते हैं। शेखर अंधविश्वासों को तोड़ने में ही मानव समाज का हित समझता है। भय पर आधारित समाज में व्यक्तित्व का सम्यक विकास असंभव है। जीवन को खुलकर जीने में ही जीवन का सार मानने वाले अज्ञेय ने इस उपन्यास की सर्जना की है।

शेखर शिक्षा की उस व्यवस्था का विरोध करता है, जिसके अंतर्गत व्यक्ति को किसी साँचे में ढाला जाता है। अज्ञेय का विरोध मानवता के विकास में बाधक प्रत्येक व्यवस्था से है। आश्रम व्यवस्था, परिवार, रिश्ते, शैक्षणिक तथा धार्मिक व्यवस्था को अज्ञेय मानव के व्यक्तित्व विकास के लिए व्यर्थ मानते थे। अज्ञेय की विचारधारा पर टैगोर तथा गांधी जी की राष्ट्रवादी विचारधारा के मध्य का प्रभाव लक्षित है। टैगोर के विचार उन्हें मनुष्यता के विकास की आखिरी कड़ी तक पहुंचाते हैं, जबकि गांधी जी के स्वदेशी आंदोलन को वे अपने जीवन में उतारते हैं। भाषा के सन्दर्भ में गांधी जी अंग्रेजी भाषा को पूर्णतः नहीं अस्वीकारते हैं, जबकि शेखर अंग्रेजी को आरम्भ से ही नकारता है। पूरे उपन्यास में उसके स्वातंत्र्य की खोज चलती रहती है।

इस उपन्यास के माध्यम से अज्ञेय लौकिक से पारलौकिक सोच के स्तर पर 'ओशो' तथा 'लाऊ सू' जैसे महान दार्शनिकों के समान प्रतीत होते हैं। लेखक जब अपने समय की राजनीति, धर्म तथा समाज का विवेचन करते हैं तो स्वयं को प्रकृती के अत्यंत निकट पाते हैं। वे अपनी रचनाओं में स्त्री को स्त्री तथा पुरुष को पुरुष की दृष्टि से देखने के लिए कहते हैं। शेखर की सोच में बहन, भाई, बाप तथा माँ आदि के रिश्ते उसके व्यक्तित्व विकास का अवरोधक प्रतीत होता है। यही कारण है कि वह अपनी बड़ी बहन से प्रेम करता है। वह मात्र प्रेम सत्य को स्वीकारता है। अज्ञेय रिश्तों के दरारों से निकाल कर मात्र प्रेम को पाना चाहते हैं। काम पर अज्ञेय

वात्स्यायन तथा फ्रायड जैसे विचारकों की भाँति सोचते हैं। यही कारण है कि अज्ञेय को कई बार आलोचनाओं का शिकार होना पड़ा। अज्ञेय के इस उपन्यास में शेखर के स्वभाव का मूल अंश अहम्, काम तथा भय से मिश्रित विद्रोही भाव है। हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास लिखने वाले बच्चन सिंह कहते हैं - 'विद्रोह उसकी अस्मिता का कवच है। वह विद्रोह करता है- सामाजिक प्रणालियों के विरुद्ध, विवाह के विरुद्ध, प्रेम के विरुद्ध, माँ-बाप के विरुद्ध, हर चीज़ के विरुद्ध।'

शेखर का प्रेम मन तक ही सीमित है, उसका आकर्षण सरस्वती, शारदा से होते हुए शशि पर केंद्रित हो जाता है । वह प्रेम तो कई स्त्रियों से करता है , लेकिन भोगने का स्वभाव उसका बिलकुल भी नहीं है । 'शेखर : एक जीवनी' के प्रथम भाग में पाश्चात्य प्रेम तथा द्वितीय भाग में मध्ययुगीन प्रेम की झलक मिलती है, जहाँ समर्पण, विश्वास, आस्था तथा निष्ठा के साथ वे शशि के साथ प्रेम में निमग्न है। शेखर का प्रेम, प्रेम कम अपनी आत्म यंत्रणा से मुक्ति का मार्ग प्रतीत होता है।

अज्ञेय का विवेचन नारी को सभ्यता का केंद्र मानने के लिए तैयार नहीं है। वे इस उपन्यास में स्त्री को मात्र स्त्री के रूप में स्वीकारने की पैरवी करते हैं। शेखर की आत्मयंत्रणा, शेखर की न होकर अज्ञेय की प्रतीत होती है, जिसे संभवतः इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। अज्ञेय के लिए प्रेम ही मनुष्य को मनुष्य बनाती है।

हिंदी साहित्य में ईश्वर की सत्ता के विरुद्ध विद्रोह का स्वर फूंकने वाले अज्ञेय पहले रचनाकार हैं, जिसे पाश्चात्य विद्वान् नीत्से का प्रभाव माना जाता है। 'शेखर: एक जीवनी' में अज्ञेय ने लिखा है - 'मैं ईश्वर को नहीं मानता, मैं प्रार्थना भी नहीं मानता। भवानी झूठी हैं। ईश्वर नहीं है।' नीत्से भी ईश्वर के अस्तित्व को पूर्णतः अस्वीकार नहीं करते हैं।

अज्ञेय ने तद्युगीन फासिस्ट शक्तियों के विरोध का स्वर शेखर के माध्यम से किया है। वे स्वयं अपने जीवन में ऐसी विचारधारा के विरुद्ध सदैव सन्नद्ध रहें। अज्ञेय कांग्रेस से जुड़कर अपने यथार्थ जीवन में जेल जाते हैं, वहीं शेखर भी जेल जाता है। अज्ञेय संस्कृति के नाम पर परम्पराओं को ढोने को भेड़चाल कहते हैं। इस उपन्यास में अज्ञेय की विचारधारा विविध विषयों के सम्बन्ध में यत्र-तत्र अभिव्यक्त हुई है। उदाहरण के लिए उपन्यास के कुछ वाक्य द्रष्टव्य है -

'आज की शिक्षा व्यक्ति के स्वतन्त्र विकास के पैरों की बेड़ी है।', 'भेड़ों की तरह झुण्ड बाँध कर रहेंगे तो भेड़ चाल चलनी पड़ेगी। भेड़चाल का सभ्य नाम संस्कृति है।'

बोध प्रश्न

- शेखर व्यक्तित्व के विकास में किसे अवरोध मानता है?
- अज्ञेय भेड़चाल किसे मानते हैं?

उपन्यास का नायक शेखर जेल के जीवन को जी लेने के बाद किंचित नैतिक पथ का अनुगामी बन जाता है। अज्ञेय अंतर्विरोधों का समुच्चय अपने उपन्यास में प्रस्तुत करते हैं। जेल में बाबा, मोहसिन और रामजी नामक पात्र से शेखर अत्यधिक प्रभावित होता है। जेल की काल कोठरी भी इन पात्रों की गतियों को रोकने में असमर्थ है। ये पात्र जेल की यातनाएँ सहकर भी

जीवंत रहते हैं। शेखर का व्यक्तित्व उसका कामभाव गढ़ता है। समाज में रहकर विविध भय से मानव को सुरक्षा का भाव अनुभूत होता है, इसलिए समाज के अस्तित्व का मूल कारक भय को ही लेखक ने बताया है। शेखर ने हर तरह के भय का विरोध किया है। अज्ञेय भय पर आधारित समाज के निर्माण को असंगत मानते हैं। यही कारण है कि भयानकता के सृजन के स्थान पर स्वतंत्रता के साथ समाज के सृजन को वे अधिक उचित मानते है। शेखर का विद्रोह अलौकिक सत्ता, कालातीत जीवन मूल्यों के रूढ़िवादी स्वरूप से है, जैसे - शेखर मृत्यु भय से स्वयं को मुक्त करने का प्रयत्न करता है। उपन्यास का यह अंश उल्लेखनीय है - 'मृत्यु के प्रति उपेक्षा और निर्भयता का भाव क्रांतिकारियों की विशेषता है। शेखर कहता है मुझे तो फाँसी की कल्पना सदा मुक्त करती है ....एक सम्मोहक निमंत्रण जो कि प्रतिहिंसा के प्रति मंत्र को भी कवितामय बना देता है।'

लेखक का विरोध शेखर के विरोध के रूप में प्रत्येक स्तर पर प्रकट होता है। शेखर का आधुनिक शिक्षण संस्थानों द्वारा किसी विशेष सांचे में ढालने की प्रवृत्ति का विरोध करना भी यही सिद्ध करता है। इस उपन्यास में एक स्थान पर अज्ञेय के इन वाक्यों से लेखक का विरोध भाव प्रकट होता है -'विज्ञान यह भी तो कहता है कि जीवन एक ही बार मिलता है और मानव जीवन का कोई भी अंश नित्य नहीं है, मृत्यु में उसका अवसान हो जाता है, कुछ भी नहीं रहता, तो पुनर्जन्म पा सके....और शक्ति? शक्ति भी नष्ट हो जाती है? नहीं शक्ति नष्ट नहीं होती, केवल रूप बदलती है। पर शक्ति तो इम्पर्सनल होती है, और शक्ति अन्य पदार्थ नहीं है।' अज्ञेय के विरोध का स्वर मात्र मानव के स्वतंत्र अस्तित्व के लिए सभी स्तरों पर रहा है। अज्ञेय समाज व्यवस्था की उन सभी संरचनाओं का विरोध करते हैं, जिनसे व्यक्तित्व कुंठित होता है।

'शेखर: एक जीवनी' के रचनाकार अज्ञेय की वैचारिकता इस उपन्यास में बड़ी सूक्ष्मता के साथ व्यक्त हुई है। अज्ञेय राष्ट्र का मूलाधार भी अहम् में मानते हैं। अज्ञेय ठाकुर रवींद्रनाथ तथा महात्मा गांधी के राष्ट्रवादी भावनाओं से प्रभावित थे। यही कारण है कि अज्ञेय की विचारधारा मानवता के विचारों के संवर्द्धन के लिए अंतिम स्तर तक पहुँच जाता है। अज्ञेय का शेखर अंग्रेजी भाषा को स्वदेशी भावना के राह का रोड़ा मानता है। उपन्यास में शेखर स्वदेशी आन्दोलन के सनक में उतर कर 'उसने विदेशी कपड़े उतारकर रख दिए, जो दो-चार मोटे देशी कपड़े उसके पास थे वही पहनने लगा। बाहर घूमने - मिलने जाना छोड़ दिया, क्योंकि इतने देशी कपड़े उसके पास नहीं थे कि वह बाहर जा सके।'

अज्ञेय अपने जीवन में सदैव साम्यवादी एवं क्रांति पथ के अनुगामी रहें, अतः शेखर जब जेल में बंद होता है तो वह कैदी से कहता है - 'अभिमान से भी बड़ा एक दर्द होता है, लेकिन दर्द से बड़ा एक विश्वास होता है।'

अज्ञेय की ऐसी विचारधारा पर सामी विचारधारा की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। सामी विचारधारा में दर्द सहना और विश्वास कायम रखने को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। शेखर अपने भय, काम और अहम् के आधार पर समाज तथा सामाजिक संस्थाओं का बहिष्कार करते हुए अपने स्वातंत्र्य शोध में निमग्न रहता है। शेखर : एक जीवनीकी पठनीयता पात्र के मानसिक क्लेश और व्यवहार को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। यह उपन्यास

व्यक्ति के अहंकार को चित्रित करता है। पूरे उपन्यास में शेखर की व्यथा, उसका स्वयं को छला जाना अनुभूत करना, अपने माता-पिता से सदैव कड़वी बातें सुनना, यहाँ तक कि शशि के पति से अपमानित होने के बाद भी वह जीवन सौंदर्य को टैगोर की कविताओं में, नीत्शे के दर्शन में, नदियों, पहाड़ों, वृक्षों की हरियाली में खोजते हुए चित्रित करना अज्ञेय की लेखन कला है। वह अपने इष्ट सत्य की खोज में सतत तत्पर है। अज्ञेय का अस्तित्ववाद आदि से अंत तक भटकता हुआ दिखाया गया है।

बोध प्रश्न

- शेखर नैतिक पथ का अनुगामी किस घटना के बाद बनता है?
- सामी विचारधारा का क्या अर्थ है?
- अज्ञेय का अस्तित्ववाद आदि से अंत तक किस प्रकार का है?

अज्ञेय ने जिस परिवेश में इस उपन्यास की रचना की, वह भारतीय परिवेश का आन्दोलन युग था। शेखर का यह वाक्य अज्ञेय की सामाजिक सापेक्षता को बड़ी सरलतापूर्वक प्रकट करता है - 'युवा होना कोई छूट नहीं है और यह शेखर तब से जानता है, जब वह युवा नहीं हुआ था।'

शेखर को उपन्यास में कहीं भी उसे आत्मदया अथवा सहानुभूति की अपेक्षा करते हुए नहीं दिखाया गया है। अज्ञेय की यह कृती विद्रोह का जीवंत उदाहरण प्रतीत होता है, जो अपने अतीत, प्रतिशोध, संघर्ष तथा स्वतंत्रता का आख्यान सिद्ध होता है। शेखर अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के अनुसार एक विशेष जीवन जी सकता था, किन्तु वह अनोखे व्यक्तित्व को ओढ़े रहा - 'बी.ए. के बाद शेखर ने एम.ए. नहीं किया, इसलिए वह उसके साथ कैसे होता जो एम.ए. के बाद होता है। बड़े राजनीतिक बदलाव हुए समाज में, लेकिन उसने खुद को खबरों से दूर रखा। घुस गया अजायबघरों में और देखता रहा जंग लगी हुई तलवारें, पुस्तकालयों से वह वैसे ही गुजर गया, जैसे वेश्यालयों से - एकदम बेदाग़। उसने कुछ भी जानना नहीं चाहा। उसने नहीं किया मतदान .....'

अज्ञेय ने शेखर के ऐसे व्यक्तित्व को चित्रित करके शेखर के औदात्य को गढ़ा है। जहाँ साहित्य की उच्च वैचारिकता भी देश और समाज की दिशा निर्धारित कर पाने में स्वयं को विवश पाती है। वहाँ शेखर अपने अनोखे साहित्यिक मूल्यों के साथ साहित्य सर्जना में निमग्न होता है। शेखर को लेखन के लिए जो चाहिए, उसे उपन्यास के इस अंश में देखा जा सकता है। 'दिल्ली में बस समुद्र नहीं है, बाकि वह सब कुछ है जो शेखर को चाहिए - अकेलापन, आर्द्रता, गिरगिट।' शेखर जब 'देवदास' पढ़ता है तो देवदास पात्र में उसे कहीं भी दोष नहीं दिखाई देता है। वह जब गोष्ठियों में औसत लोगों के बीच बैठता है तो वह मूर्खों को नासमझ, सनकियों को उन्मादी, अकवियों को प्रयत्नशील, भ्रष्टों को निर्णायक कहता है। वह गोष्ठियों को सफेदपोशों का गिरोह मानता था। शेखर औसत के लिए असंभव का वरण करता है। चूंकि साहित्य मूल्यों का वाहक होता है। अज्ञेय अपने जीवन में साहित्यिक मूल्यों को गढ़ने और लिखने में सदैव सक्रिय रहे हैं।

अज्ञेय ने अपने जीवन के अनुभव को इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है। शेखर को फांसी जैसी व्यवस्था से क्रूरता का भाव अनुभूत होता है, इसमें लेखक के अदम्य विचारों की गहराई का अनुभव होता है। लेखक ने एक रात में देखे स्वप्न के आधार पर शेखर के जीवन के शिशु से लेकर मृत्यु तक की जीवन यात्रा का प्रभावी चित्रण किया है। अज्ञेय व्यक्ति चरित्र के अन्यतम लेखक हैं। शेखर की विविधमुखी जिज्ञासा उसके विद्रोह की जननी है। इस उपन्यास में व्यक्ति की समस्त निर्मिती को रोचक आधार पर प्रस्तुत किया गया है। शेखर के संघर्ष में स्वतंत्रता पूर्व का देश - काल उभर कर सामने आया है। अज्ञेय ने अपने वैयक्तिक जीवन की खोज को शेखर : एक जीवनीमें प्रस्तुत किया है। शेखर कोई बड़ा आदमी नहीं है, वह अच्छा भी आदमी नहीं है, लेकिन वह मानवता के संचित अनुभव के प्रकाश में ईमानदारी से अपने को पहचानने की कोशिश कर रहा है, वह अच्छा संगी नहीं भी हो सकता है, लेकिन उसके अंत तक उसके साथ चलकर आपके उसके प्रति भाव कठोर नहीं होंगे, ऐसा मुझे विश्वास है। और कौन जाने, आज के युग में जब हम, आप सभी संश्लिष्ट चरित्र हैं, तब आप पाएँ कि आपके भीतर भी कहीं एक शेखर है, जो बड़ा नहीं, अच्छा भी नहीं, लेकिन जागरूक और स्वतंत्र और ईमानदार है, घोर ईमानदार।'

बोध प्रश्न

- शेखर साहित्यिक गोष्ठियों को क्या मानता था?
- शेखर ने किन मूल्यों को आजीवन गढ़ा?
- एक रात में देखे स्वप्न को अज्ञेय ने किस रचना में प्रस्तुत किया है?

6.4 पाठ सार

शेखर : एक जीवनीउपन्यास एक मनोविश्लेषणवादी रचना है। यह एक विद्रोही व्यक्ति की कथा है, जो अपने व्यक्तित्व की खोज में सतत निमग्न रहता है। शेखर के पिता में अधिकार भाव अधिक था तथा माता-पिता की आपसी लड़ाई-झगड़े से वह सदैव अन्यमनस्क बना रहता था। शेखर मात्र पंद्रह वर्ष की अवस्था में मद्रास में पढ़ने के लिए चला जाता है। शेखर की विद्रोही प्रवृत्ति को उसके माता-पिता का व्यवहार अधिक दृढ़ कर देती है। मद्रास में कुमार से मित्रता के बाद शेखर का कुमार के प्रति आकर्षण शेखर के पिता को स्वीकार नहीं था। इसके बाद शारदा के प्रति प्रेम भाव को जब शेखर प्रकट करते हुए उसका हाथ पकड़ लेता है, तो शारदा उसकी भावना का तिरस्कार करते हुए उससे दूर हो जाती है। इसके बाद उपन्यास के दूसरे भाग में शेखर स्नातक की पढ़ाई के लिए लाहौर जाता है। वहाँ अपनी मौसी विद्यावती की पुत्री शशि के आकर्षण में शेखर उसके निकट पहुँचता है। लाहौर में अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध विज्ञान के बजाय कला में दाखिला लेता है। यहाँ वह बी.ए. में अपने अनुभवों को लिपिबद्ध करता है, इस पर भी पिता द्वारा उपेक्षित किया जाता है। लाहौर कांग्रेस अधिवेशन में कांग्रेस का कार्यकर्ता बनता है, जहां सी.आई.डी से विवाद के बाद उसे जेल की सजा हो जाती है। शशि शेखर से मिलने जेल में जाती है। जब शशि का विवाह रामेश्वर से होता है तो यह शेखर को अन्दर से तोड़ देता है। शशि का शेखर के प्रति लगाव इसलिए बढ़ता जाता है क्योंकि उसके विचार एक-दूसरे से अत्यधिक मिलते हैं। जब जेल से छूटने के बाद शेखर शशि से उसके ससुराल

मिलने जाता है, तो यह बात उसके पति को इतनी नागवार लगती है कि वह शशि के पेट पर जोर से प्रहार कर देता है। शेखर जब वहाँ से अपमानित होकर ग्वालमंडी में किराए का घर लेकर रहने लगता है, वहाँ शशि एक बार जब मिलने जाती है तो दुर्योगवश मूसलाधार वर्षा होने पर शशि को रात्रि को शेखर के कमरे पर रुकना पड़ता है। इस एक घटना से रामेश्वर उसका त्याग कर देता है। वह असहाय होकर शेखर के साथ उसके किराए के मकान में रहते हुए उसे हमेशा लेखन के लिए प्रेरित करने लगती है। विद्याभूषण के सुझाव पर क्रांतिकारी लेखन में वह रत हो जाता है। अंततः अंग्रेजों के कोप से बचने के लिए दिल्ली में आकर शशि के साथ रहने लगता है, जहाँ शशि की अपने पति के द्वारा पेट पर मारे गए चोट के कारण लम्बी बीमारी के बाद मृत्यु हो जाती है। मरने से पहले शशि शेखर को बराबर लिखते रहने के लिए एक पत्र लिखती है। प्रेम के ऐसे रूप को चित्रित करके अज्ञेय आलोचकों के केंद्र में आ गये थे।

इस प्रकार यह उपन्यास अज्ञेय के यथार्थ मनोविश्लेषण को प्रस्तुत करती है। इच्छाओं को दबाने से व्यक्ति का व्यक्तित्व दब जाता है, जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के लिए अत्यंत घातक सिद्ध होती है।

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

प्रस्तुत इकाई को पढने के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. शेखर : एक जीवनीमनोविश्लेषणवादी चेतना से प्रेरित उपन्यास है।
2. यह उपन्यास व्यक्ति की विद्रोह-वृत्ति का मूल व्यक्तित्व की खोज की बेचैनी में निहित मानता है।
3. इस उपन्यास में दमित इच्छाओं के मनुष्य के व्यक्तित्व और सामाजिक संबंधों पर पड़ने वाले प्रभाव का अंकन महत्वपूर्ण बन पड़ा है।
4. इस उपन्यास में भारत के स्वतंत्रता संग्राम के समानांतर विकसित व्यक्तिवादी और राष्ट्रवादी विमर्श पर्याप्त मुखर है।

6.6 शब्द संपदा

1. अवरोध = बाधक
2. आबद्ध = दृढ़ बंधन
3. उत्कर्ष = उन्नति
4. उद्वेलित = विचलित
5. उन्मादी = पागलपन
6. घातक = प्रहार करने वाला
7. नागवार = जो अच्छा न लगे
8. पुरातात्विक = प्राचीन अवशेषों के अध्येता
9. पूर्वदीप्ति = बीती बातों या घटनाओं का स्मरण
10. सापेक्षित = परावलंबित
11. सामी = बहुदेववादी

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय का साहित्यिक परिचय दीजिए।
2. 'शेखर: एक जीवनी' उपन्यास को चेतना के स्तर पर विवेचित कीजिए।
3. अज्ञेय ने मानव व्यक्तित्व के विकास के लिए कैसी परिस्थितियों को आवश्यक माना है? चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. शेखर के विद्रोह भाव को चित्रित कीजिए।
2. अज्ञेय के 'शेखर: एक जीवनी' उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
3. विवेचित उपन्यास की विशेषताएं बताइए।
4. शेखर : एक जीवनीकी कथावस्तु बताइए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मृत्यु के प्रति उपेक्षा और निर्भयता किसकी विशेषता है? ( )

   (अ) दार्शनिक (आ) क्रांतिकारी (इ) संत (ई) साहित्यकार

2. शेखर अंग्रेजी भाषा को किसकी राह का रोढ़ा मान्यता है? ( )

   (अ) स्त्री शिक्षा (आ) तकनीकी विकास (इ) स्वदेशी भावना (ई) सत्यागृह

3. दर्द सहने और विश्वास कायम रखने का संबंध किस विचारधारा से है? ( )

   (अ) वैदिक (आ) सामी (इ) पौराणिक (ई) ग्रीक

4. शेखर के जीवन में इनमें से कौन सा स्त्री पात्र नहीं है? ( )

   (अ) शारदा (आ) शशि (इ) कुमार

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. शेखर की बड़ी बहन का नाम .....है।
2. शशि के पति का नाम .....है।
3. शशि शेखर की ..... बहन के रूप में चित्रित है।

III. सुमेल कीजिए -

1. इत्यलम	(अ) कहानी संग्रह

2. परंपरा (आ) उपन्यास कृती

3. एक बूँद सहसा उछली (इ) काव्यसंग्रह

4. 'नदी के द्वीप' (ई) यात्रा साहित्य

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. शेखर - एक जीवनी : अज्ञेय
2. शेखर - एक जीवनी का महत्व : परमानंद श्रीवास्तव
3. प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ : रामविलास शर्मा
4. आत्मनेपद : अज्ञेय
5. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी

इकाई 7 : 'मैला आँचल' : तात्विक समीक्षा

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 मूल पाठ : 'मैला आँचल' : तात्विक समीक्षा

7.3.1 फणीश्वरनाथ रेणु का संक्षिप्त परिचय

7.3.2 आंचलिकता या अंचल शब्द की परिभाषा

7.3.3 अंचल विशेष की कहानी कहता उपन्यास : 'मैला आँचल'

7.3.4 अंचल का भौगोलिक परिवेश

7.3.5 'मैला आँचल' की तात्विक समीक्षा

7.4 पाठ का सार

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

7.6 शब्द संपदा

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! फणीश्वरनाथ रेणु कृत 'मैला आँचल' का प्रकाशन 1954 में हुआ था। यह एक ऐसा उपन्यास है जिसमें ग्रामीण परिवेश, ग्रामीण अंचल से संबंधित समस्त विशेषताओं को एक नई शैली में ग्रामीण गंध के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह इकाई इस उपन्यास की तात्विक समीक्षा पर केंद्रित है।

7.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'मैला आँचल' के नामकरण की सार्थकता को समझ सकेंगे।
- 'मैला आँचल' उपन्यास की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- आंचलिक उपन्यास परंपरा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- 'मैला आँचल' उपन्यास का तात्विक विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'मैला आँचल' की भाषिक विशेषता से परिचित हो सकेंगे।
- 'मैला आँचल' में चित्रित देशकाल-वातावरण के बारे में जान सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : 'मैला आंचल' : तात्विक समीक्षा

7.3.2 आंचलिकता या अंचल शब्द की परिभाषा

छात्रो! जिस प्रकार से आप शहरीकरण, बाजारीकरण, औद्योगीकरण, पूँजीवादी विकास आदि शब्दों को सुनते आ रहे हैं, उसी प्रकार आंचलिकता भी आधुनिक समय की देन है। आंचलिकता ऐसे जनपद क्षेत्र से संबंध रखता है जिसका परिवेश अत्यंत पिछडा हुआ है। अंचल से ही आंचलिकता या आंचलिक शब्द बने हैं। वैसे देखा जाय तो अंचल शब्द मूलत: संस्कृत भाषा का शब्द है। इसका कोशगत अर्थ है वस्त्र, प्रांत या भाग आदि। कोशगत अर्थ की दृष्टि से यदि इस शब्द की व्याख्या करें तो हमें यह अर्थ मिलता है- किसी भी देश का एक ऐसा सीमा प्रांत, तट या किनारा, छोर या कोना। अर्थात अंचल एक ऐसा शब्द है जो किसी स्थान विशेष या भौगोलिक सीमाओं से घिरे विशेष जनपद या क्षेत्र हो सकता है। अंचल या आंचलिकता शब्द की परिभाषा विद्वानों ने इस प्रकार दिया है-

परिभाषाएँ :

जैनेंद्र कुमार : आचलिक प्रवृत्ति वह दृष्टि है, जिसके केंद्र में अमुक पात्र या चरित्र उतना विशिष्ट नहीं जितना वह स्वयं भू भाग या अंचल है।"

डॉ. आदर्श सक्सेना : अँचलों की अपनी एक विशिष्ट सृष्टि होती है, जिसमें भूतप्रेत होते हैं, ईर्ष्या, प्रतिहिंसा होती है, अन्याय, पाप होता है, कसक होती है, पीड़ा होती है, परंतु कहीं पर मीठापन अवश्य छिपा होता है।

डॉ. ओमानंद सारस्वत : आंचलिकता एक प्रकार की अंतर्मुखता है जहाँ व्यापक यथार्थ को छोड़कर मर्यादित यथार्थ को महत्व दिया जाता है जिससे व्यापक यथार्थ व्यंजित होता है।"

डॉ. विश्वंभर उपाध्याय : किसी विशेष जनपद अंचल (क्षेत्र) के जन-जीवन का समग्र चित्र प्रस्तुत करने वाली औपन्यासिक कृती आंचलिक उपन्यास है।

डॉ. सुवास कुमार : "आंचलिकता रचना का स्थापत्य होती है, न कि विशेषता। इसी स्थापत्य के कारण आंचलिक उपन्यास को गैर आंचलिक उपन्यासों से अलगाया जा सकता है। आंचलिक उपन्यास के केंद्र में संपूर्ण अंचल का जीवन होता है। आंचलिक उपन्यास में व्यक्ति का वही महत्व अंकित होता है जो महत्व उसका समाज में वास्तविक तौर पर है। आंचलिक उपन्यास में जीवन संपूर्ण अंचल के साथ गतिशील होता है।"

7.3.3 अंचल विशेष की कहानी कहता उपन्यास : 'मैला आँचल'

सामान्यत: अंचल शब्द से तात्पर्य होता है किसी बड़े क्षेत्र का वह हिस्सा जो अपनी पृथक विशेषताएँ रखता हो; जनपद या प्रांत जिसकी अपनी एक विशेष भौगोलिक स्थिति, संस्कृति, लोकजीवन, भाषा एवं समस्याएँ होती हैं। अपनी तमाम विशिष्टताओं से उस अंचल विशेष की जीवंतता नजर आए, वही उसे दूसरे अंचलों से अलग पहचान करता है। किसी अंचल विशेष का गुण धर्म ही आंचलिकता कहलाता है। अंग्रेजी में इसके लिए रीजन (Region) शब्द का प्रयोग होता है। अंचल विशेष पर आधारित रचनाएँ मुख्यत: किसी अंचल की विशेषताएँ, वहाँ के

रीतिरिवाज, रहन-सहन, वेष-भूषा, खान-पान, प्रेम-ईर्ष्या-घृणा, क्रोध आदि का जीवंत चित्र प्रस्तुत करता है जो यथार्थ से परिपूर्ण होता है। अंग्रेजी साहित्य में टामस हार्डी, आर्नाल्ड बैनेट और विलियम फॉकनर आंचलिक उपन्यासकार के रूप में प्रख्यात हुए हैं। जे.ए कुडन के अनुसार 'एक आंचलिक लेखक एक विशेष क्षेत्र पर अधिक ध्यान केंद्रित करता है और इस क्षेत्र और वहाँ के निवासियों को अपनी कथा का आधार बनाता है। डॉ. धीरेंद्र वर्मा ने हिंदी साहित्य कोश में आंचलिकता के संदर्भ में इस प्रकार लिखा है- 'लेखक द्वारा अपनी रचना में आंचलिकता की सिद्धि के लिए स्थानीय दृश्यों, प्रकृती, जलवायु, त्यौहार, लोकगीत, बातचीत का विशिष्ट ढंग, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, भाषा के उच्चारण की विकृतीयाँ, लोगों की स्वभावगत व व्यवहारगत विशेषताएँ, उनका अपना रोमांस, नैतिक मान्यताओं आदि का समावेश बड़ी सतर्कता और सावधानी से किया जाता है।'

इस इकाई में आप रेणु का 'मैला आँचल' उपन्यास पढ़ रहे हैं, जिसमें रेणु ने बिहार के पूर्णिया जिले में स्थित मेरीगंज नामक एक अंचल विशेष को उसकी समस्त विद्रूपताएँ, लोक जीवन की समस्याएँ, जड़ता आदि को पूरे यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है। यह ध्यातव्य है कि रेणु ने स्वयं अपने इस उपन्यास को 'आंचलिक उपन्यास' कहा है। इस उपन्यास के प्रथम संस्करण में स्वयं लेखक ने लिखा है- 'यह है मैला आंचल एक आंचलिक उपन्यास'। उन्होंने स्वयं उपन्यास की आंचलिकता की अनेक परतों को खोला है। यह उपन्यास आधारित है बिहार के पुर्णिया जिले के एक जनपद अंचल विशेष मेरीगंज। स्वयं लेखक ने पुर्णिया को उपन्यास का कथानक कहा है अर्थात, अंचल विशेष ही इस उपन्यास की कथा का आधार है न कि कोई निश्चित चरित्र या घटना। इस उपन्यास में पुर्णिया पूर्ण जीवंत व्यक्तित्व के साथ हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। इस गाँव का परिचय कराते हुए रेणु लिखते हैं कि - 'मेरीगंज एक बड़ा गाँव है बारहो बरन के लोग रहते हैं। गाँव के पूरब में एक धारा है जिसे कमला नदी कहते हैं। बरसात में कमला भर जाती है, बाकी मौसम में बड़े-बड़े गड्ढों में पानी जमा रहता है। मछलियों और कमल के फूलों से भरे हुए गड्ढे।'

मेरीगंज गाँव तो बड़ा है, लेकिन सामंती व्यवस्था से जकड़ी हुई है। गाँव में गरीबी और अंधविश्वास का तांडव है। देखा जाय तो मेरीगंज भी अन्य गांवों के जैसा ही एक सामान्य गाँव है, लेकिन मैला आंचल में रेणु ने पुर्णिया की बोली, रीति-रिवाज, लोक-संस्कृति, मिथक आदि का प्रयोग करते हुए उस गाँव को विशिष्ट बना देते हैं। मेरीगंज जिला पूर्णिया का पूर्वी अंचल है, जहाँ मलेरिया, कालाजार, जैसे रोग अक्सर फैलते हैं और रोग मर जाते हैं। इसमें रेणु ने किसी निश्चित व्यक्ति को केंद्रित नहीं की है, बल्कि संपूर्ण गाँव की विद्रूपताओं को चित्रित करना उनका मूल उद्देश्य रहा है।

आंचलिक उपन्यासों में कोई व्यक्ति नायक नहीं होता है, बल्कि पूरा अंचल ही नायक की भूमिका अदा करता है। मैला आँचल में भी मेरीगंज अपनी विशेषताओं के साथ कथानायक बनता है। आंचलिक उपन्यास न तो घटना-प्रधान उपन्यासों की तरह कुछ खास पात्रों के जीवन से संबद्ध घटनाओं और समस्याओं को लेकर चलता है और न ही मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की तरह कुछ गिने-चुने पात्रों के मन का विश्लेषण करता है, बल्कि वह नदी की धारा के समान नयी-

नई भूमियों को पार करते हुए गतिशील रूप में आगे बढ़ता है। अंचल की विद्रूपताओं के चित्रण करने हेतु लेखक कभी मोटी रेखाएँ तो कभी पतली या फिर केवल बिंदु से काम चलाता है।

वास्तव में मेरीगंज संपूर्ण देश के राजनीतिक वातावरण का नमूना प्रस्तुत करता है। जमींदारी प्रथा समाप्त होने की स्थिति में होने पर भी जमींदारों द्वारा अपनी शक्ति के दुरुपयोग समाप्त नहीं हुआ था। जाति के आधार पर लोग टोलियों में बंटे हुए थे। इस उपन्यास में रेणु का प्रगतिशील चिंतन तथा सामान्य वर्ग के प्रति सहानुभूति दोनों ही स्पष्टत: दिखाई देता है। वे सामंतवादी विचारधारा के समर्थक नहीं थे, तथा पूंजीवाद की विकृतीयों का यथार्थ चित्रण करते थे, जिससे पाठक के मन में घर कर जाते थे।

बोध प्रश्न

- अंचल से आप क्या समझते हैं?
- मैला आँचल किस प्रकार का उपन्यास है?
- मैला आँचल को किस उपन्यास की कोटि में रखा जाता है?

7.3.4 अंचल का भौगोलिक परिवेश

पुर्णिया बिहार का एक जिला है। इसकी सीमा एक ओर नेपाल तो दूसरी ओर (पहले पाकिस्तान, अब बांग्ला देश) पश्चिम बंगाल से लगती है। इसकी भौगोलिक विशेषता को स्पष्ट करते हुए स्वयं लेखक ने इसकी भूमिका में बताया है कि पुर्णिया की सीमा रेखा संथाल परगना के आदिवासी क्षेत्र व मिथिला के क्षेत्र से भी मिली हुई है। इसी पुर्णिया जिले में स्थित एक अंचल विशेष मेरीगंज इस उपन्यास का केंद्र है जिसे 'पिछडे गाँव के प्रतीक' रूप में प्रस्तुत किया है। इस गाँव का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है - "इसमें फूल भी है शूल भी, धूल भी है, गुलाल भी, कीचड़ भी है चंदन भी, सुंदरता भी है कुरूपता भी, मैं किसी से दामन बचाकर नहीं निकल पाया।" आगे कहते हैं - मेरीगंज! रौहतट स्टेशन से सात कोस पूरब, बूढ़ी काशी के किनारे-किनारे बहुत दूर तक ताड़ और खजूर के पेड़ों से भरा हुआ जंगल तड़बन्ना के बाद ही एक बड़ा मैदान है जो नेपाल की तराई से शुरु होकर गंगाजी के किनारे खत्म हुआ है। लाखों एकड़ जमीन। बंध्या धरती का विशाल अंचल। इसमें दूब भी नहीं पनपती है।" अर्थात एक ऐसा सूखा गाँव जहाँ दूब भी पैदा नहीं होता। एकदम पिछड़ा हुआ गाँव जो पुर्णिया का पूर्वी अंचल है। मलेरिया, कालाजार जैसे रोगों से अक्सर यहां के लोग ग्रसित होते हैं, और कई तो मर भी जाते हैं। ऐसे एक अंचल प्रेदेश की कथा है-मैला आंचल।

इस उपन्यास के प्रकाशन से ही हिंदी साहित्य में आंचलिक उपन्यास की धारा प्रवाहित हुई थी, ऐसा कहना गलत नहीं होगा। इस उपन्यास के प्रकाशन से पूर्व भी अंचल विशेष पर आधारित उपन्यास लिखे गए हैं, लेकिन आंचलिक उपन्यास प्रारंभ करने का श्रेय 'मैला आँचल' को ही जाता है, रेणु को इसके प्रवर्तक माना जाता है।

7.3.5 मैला आँचल की तात्विक समीक्षा

कथानक : मैला आँचल उपन्यास का प्रकाशन सन 1954 में हुआ था। इसका कथानक मुख्यत: आंचलिक विशेष पर आधारित है। जैसा कि आप जानते ही हैं कि बिहार के पुर्णिया जिले के

मेरीगंज नामक अंचल या जनपद इस उपन्यास का केंद्र है। इसी अंचल विशेष के इर्द-गिर्द उपन्यास की कहानी घूमती रहती है। रेणु ने मैला आँचल की कथा को दो खंडों में करीब ढाई सौ पृष्ठों की पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया है। 1946 से 1948 के बीच के संक्रमण काल तथा करीब 200 वर्षों की गुलामी के बाद भारतीय नेताओं के हाथों भारत की सत्ता को सौंपने का कालखंड है। ग्रामवासिनी भारत मां उपन्यास का मूल प्रेरणास्रोत है जिसे उपन्यास का एक पात्र डॉ. प्रशांत कुमार के माध्यम से समझा जा सकता है - भारतमाता ग्रामवासिनी !/ खेतों में फैला है श्यामल/ धूल भरा मैला-सा आंचल!

कथा का प्रारंभ मेरीगंज के हर तरह के दूषित वातावरण से होता है। यहाँ बारह वर्ण के लोग रहते हैं और सभी अलग-अलग टोलियों में रहते हैं। जैसे कि कायस्थ, राजपूत, ब्राह्मण, यादव, एवं संथाली जो प्राय: बाहर से आकर बसे हुए थे। कायस्थ तथा राजपूतों की संख्या अधिक थी तथा वे शक्ति संपन्न भी थे। ब्राह्मण तीसरी शक्ति के रूप में थे और कायस्थ एवं राजपूतों के मध्य संतुलन रखने का काम करते थे। यादव भी शक्तिसंपन्न थे। चूंकि संथाली बाहर से आकर बसे हुए थे, इसीलिए उनके साथ दूसरे प्रकार का व्यवहार किया जाता था। इतना ही नहीं, यहाँ प्रत्येक जाति के बीच लडाई झगडे होते ही रहते थे। स्वार्थ की पूर्ति एवं अहं की टकराहट राजनीति की विशेषता थी। धर्म के नाम पर सामाजिक कुरीतियों का बोलबाला था। गाँव के मठ का महंत सेवादास थे और मठ की कोठारिन लक्ष्मी उसकी दासी थी तथा उन दोनों के बीच अवैध संबंध था। इतना ही नहीं मठ के पीठाधीश बनने की भी होड़ लगी हुई थी। मठ के अंदर भी ईर्ष्या भाव घर कर गया था। गाँव की चारों ओर गंदगी फैली हुई है, जिसके कारण कालाजार, मलेरिया जैसी बीमारियाँ सहज थी और उससे मरने वालों की संख्या भी अधिक थी। डॉ. प्रशांत भी किसी से कम नहीं थे, उनका भी कमली नामक युवती के साथ यौन संबंध के चलते वह गर्भवती हो जाती है, डॉ. प्रशांत को जेल जाना पड़ता है और कमली के पिता विश्वनाथ प्रसाद पागल की स्थिति में पहुंच जाता है। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने सन 1942 से 1950 तक के भारत की स्थिति और उसमें आ रहे नवीन परिवर्तन की कथा का चित्रण किया है। कथा एवं पात्र दोनों की भरमार के कारण कथानक कम रोचक और बिखरी पडी लगती है। मैला आँचल नाम से ही व्यंजित होता है कि रेणु का उद्देश्य उपन्यास में मटमैले और दागदार जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करना है, जिसमें उन्हें सफलता भी मिली है। केवल प्रेम कहानियों का चित्रण और उन्हें सफल होते दिखाना कथा का लक्ष्य नहीं बल्कि गाँव में हो रहे बदलाव एवं परिवर्तन का यथार्थ अंकन करना कथा का उद्देश्य है और उसमें रेणु को सफलता भी मिली है। गाँव में हो रहे तमाम सामाजिक आंदोलन और राजनैतिक आंदोलनों का चित्रण है, लेकिन उनके सफल होने का कोई उल्लेख नहीं है, तात्पर्य यह कि लेखक ने गाँव में हो रहे समग्र चित्रों को यथारूप दिखाने का प्रयास किया है। पहले प्रशांत और कमला के बीच यौन संबंध होता है, इससे समाज में हो रहे बदलाव आधुनिक विचारधारा और विदेशी सभ्यता का प्रभाव परिलक्षित होता है। मठों के भीतर की कथा भी गाँव की सामाजिक व धार्मिक विसंगतियों को

स्पष्ट करता है। जीवन के इसी मैले कुचैले तथा दाग से भरे पक्ष को उभारना व उन विसंगतियों की ओर बस हमारा ध्यान आकर्षित करना ही इस उपन्यास की कथा को सफल बनाता है।

बोध प्रश्न

- भारतमाता ग्रामवासिनी किसके लिए कहा गया है?
- कितनी जातियाँ मेरीगंज में बसी हुई हैं?
- गाँव के बाहर जंगलों में कौन बसे हुए हैं?

पात्र एवं चरित्र चित्रण

उपन्यास की कथावस्तु का विकास उसमें समाहित पात्र या चरित्रों के माध्यम से होता है। पात्र या चरित्र उपन्यास की कथा को जीवंत तथा रोचक बनाते हैं। अक्सर कथावस्तु को गतिशील बनाने में दो प्रकार के पात्रों का संयोजन किया जाता है जिनमें मुख्य पात्र जैसे नायक, नायिका या खलनायक या खलनायिका आदि आते हैं। इनके अतिरिक्त ऐसे कुछ गौण पात्र होते हैं जिनसे कथा को गति मिलती है। कथा को आगे बढाने में ऐसे गौण या सहायक पात्र साथ देते हैं। कुल मिलाकर किसी भी कथा को सफल बनाने में मुख्य पात्र और गौण पात्र दोनों को अपना भरपूर योगदान देता होता है तभी कथा रोचक और प्रभावी बन पड़ता है। मैला आँचल में स्वयं मेरीगंज एक प्रमुख पात्र है क्योंकि उसीकी विशेषता या उसीकी विद्रूपताओं को दिखाना इस उपन्यास का मूल उद्देश्य है। किंतु गाँव अर्थात उसमें रहने वाले तमाम प्रकार के लोग जिनसे गाँव को एक रूप मिलता है, ऐसे पात्रों का सृजन आवश्यक है। इसीलिए गाँव की विशेषता या विद्रूपता को देखाने हेतु इसमें लेखक ने लगभग सभी प्रकार के पात्रों को समाहित किया है, जिससे अक्सर पात्रों की भरमार लगता है, लेकिन पात्रों के बिना अंचल विशेष या विद्रूपता को दिखा पाना असंभव है। प्रस्तुत उपन्यास में पात्रों को जीवंत दिखाना उपन्यासकार का लक्ष्य रहा है।

मैला आँचल गाँव जनपद या अंचल विशेष पर आधारित उपन्यास है। इसमें पात्रों की भरमार होने पर भी नायक नायिका मुख्य पात्र या गौण पात्र आदि का विभाजन मुश्किल है क्योंकि इसका प्रत्येक पात्र महत्व रखता है और जहाँ उसकी जरूरत है, वहाँ वह पात्र उपस्थित हो जाता है और वस्तु स्थिति को दर्शा देता है। रेणु ने कथावस्तु के अनुसार चरित्रों का सृजन कर उनकी प्रकृती, आकार, विचार, चिंतन, मनोबल, मन की दशा, सोच, अनुभव से कथा में प्राण भरता है। प्रस्तुत उपन्यास का हर पात्र बिना कोई बनावट के काल्पनिक न होकर सजीव लगता है। रेणु ने मनोविज्ञान के आधार पर पात्रों का सृजन किया है। जैसा कि आप जानते ही हैं कि इस उपन्यास में पात्रों की भरमार है, उनमें से कुछ प्रमुख पात्रों का विवरण आपके अध्ययन एवं जानकारी के लिए प्रस्तुत है।

डॉ. प्रशांत :

मैला आँचल नायक या नायिका प्रधान उपन्यास न होकर अंचल विशेष पर आधारित उपन्यास है। लेकिन फिर भी इसमें कुछ ऐसे पात्र हैं जिनके बारे में जानना जरूरी है, ऐसे पात्रों में डॉ. प्रशांत का नाम पहले ले सकते हैं। मेरीगंज के ग्रामीण वातावरण में शोधकार्य हेतु आता है। कमला नामक स्त्री के साथ प्रेम-प्रसंग में लीन हो जाता है। उसके माता-पिता आदि

की कोई जानकारी नहीं मिलती। वह अपनी जाति डॉक्टर बताता है। लोग उसकी मातृभाषा के बारे में पूछे तो वह अपने आप को हिंदुस्तानी कहता है। "वह अपनी जाति के बारे में खुद नहीं जानता। यदि उसे अपनी जाति का पता होता तो शायद उसे बताने में झिझक नहीं होती। तब शायद जाति-पाति के भेद-भाव पर से उसका भी पूर्ण विश्वास नहीं हटता। तब शायद ब्राह्मण कहने में वह गर्व अनुभव करता।' बचपन से वह अपने जीवन संबंधी अनेक प्रकार की कहानियों को सुनता रहा है। घर की नौकरानी, माली, हलवाई सभी उसके बारे में कुछ न कुछ कहानी कहते। उसकी तरफ उंगली दिखाकर लोग बात करते- 'देखते हो जी? उसे उपाध्याय जी ने काशी नदी में पाया था। बंगालिन डाक्टरनी ने पाल-पोसकर बड़ा किया है। ऐसा भी कहा जाता है कि उसकी माँ ने एक मिट्टी की हांडी में उसे डालकर बाढ़ से उमड़ती काशी मैया की गोद में सौंप दिया था। नेपाल सरकार द्वारा निष्कासित नेपाल के प्रसिद्ध उपाध्याय परिवार ने सहरसा अंचल में आदर्श आश्रम की स्थापना की थी। एक दिन उपाध्यायजी ने बाढ़ पीडितों की हाँडी देखी-नई हाँडी। उनकी स्त्री को कौतूहल हुआ, जरा देखो न, उस हाँडी में क्या है? नाव झाडी के पास पहुँची, पानी के हिलोर से हाँडी हिली और उससे एक साँप गरदन निकालकर फों-फों करने लगा। साँप धीरे-धीरे पानी में उतर गया और हाँडी से नवजात शिशु के रोने की आवाज आई मानो माँ ने थपकी देना बंद कर दिया।....बस यही उसके जन्म की कथा है, जिसे हर आदमी अपने-अपने ढंग से सुनाता है। पढ़ाई करते हुए उसने अपने पिता के रूप में अनिलकुमार बैनर्जी का फर्जी नाम लिखता आया है जबकि जाति के कालम में ब्राह्मण भरता आ रहा है। उसके बारे में लेखक लिखते हैं- 'प्रशांतकुमार, पिता का नाम अनिलकुमार बनर्जी, हिंदू ब्राह्मण। सब झूठ। बेचारा डॉ. अनिलकुमार बनर्जी नेपाल की तराई के किसी गाँव में अपने परिवार के साथ सुख की नींद सो रह होगा। प्रशांतकुमार नामक उसका कोई पुत्र हिंदू विश्वविद्यालय में नाम लिखा रहा है, ऐसा सपना भी नहीं देख सकता। लेकिन प्रशांत अपने तथाकथित पिता डॉ. अनिलकुमार को जानता है। मैट्रिक परीक्षा के लिए फार्म भरने के दिन डॉ. अनिल उसके पिता के रिक्तकोष्ठ में आकर बैठ गए थे।" दरअसल, जिस बंगालिन युवती ने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया, उसके पति का नाम अनिलकुमार था, उसने अपनी पत्नी को छोड़कर एक नेपालिन से शादी कर ली। उपाध्यायजी के आश्रम में वह परित्यक्ता रहने लगी थी। उसी ने डॉ. प्रशांत का पालन-पोषण किया था। माँ की इच्छानुसार उसने डॉक्टर की पढ़ाई की थी, लेकिन वह डॉक्टर बनने से पहले ही काशी की यात्रा करते हुए काशी की किसी गली में वह हमेशा के लिए खो गई थी।

डॉ. प्रशांत को विदेश जाने की कोई इच्छा नहीं थी। उसी के आग्रह से पूर्णिया के मेरीगंज नामक गाँव में खुले मलेरिया और काला आजार सेंटरों की देखरेख हेतु उसे नियुक्त किया गया था। मेरीगंज आकर एक ओर वहाँ के आबाल-वृद्ध-नर-नारियों के इलाज में लगा रहता, तो दूसरी ओर अपने शोध-कार्य में निमग्न रहता। इन्सान को स्वस्थ और सुंदर बनाना चाहता था। वर्ग जाति आदि पर उसे विश्वास नहीं थ। संथाल लोगों को डाक्टर जो परामर्श देता वह उसके प्रगतिशील विचारधारा का परिचायक है। वह कहता है- "तुम लोग ही जमीन के असल मालिक हो। कानून है, जिसने तीन साल तक जमीन को जोता बोया है, जमीन उसी की होगी।" यहाँ तक कि उसे कम्युनिस्ट मानकर गिरफ्तार भी किया जाता है।

उसे कमला से प्रेम होता है। कमला एक हिस्टीरिक मरीज होती है। उसके इलाज के संदर्भ में दोनों के बीच संपर्क बढ़ता है। प्रथम भेंट में ही वह कमला का मन अपनी मीठी बातों से मोह लेता है- 'हां उसकी मीठी बातों का उद्देश्य कमला की ओर आकर्षण भाव न होकर उसे इंजेक्शन या दवा के लिए प्रस्तुत करना है। लेकिन कमला उसकी मुस्कुराहट से परेशान है। धीरे-धीरे दोनों के मन में प्रेम की भावना जगने लगती है। इससे पहले कभी उसके मन में इस प्रकार की भावना जागृत नहीं हुई थी। उसे यह दुनिया ही खूबसूरत लगने लगती है। उसी समय उसे कम्युनिस्ट कहकर गिरफ्तार कर लिया जाता है। तभी इस बात का खुलासा होता है कि कमला गर्भवती है। तहसीलदार को लगता है कि वह उससे शादी नहीं करेगा। लेकिन डॉ. प्रशांत का चरित्र एक आदर्श चरित्र है। जेल से आने के बाद वह सीधा तहसीलदार के पास आकर कमला का हाथ मांगता है। उससे विवाह कर उसी गाँव में रहने की बात करता है।

कमला :

कमला मैला आँचल उपन्यास के नारी पात्रों में मुख्य भूमिका अदा करती है। वह मेरीगंज के सबसे अमीर तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद की एकमात्र संतान है। संपत्ति होने पर भी किसी न किसी कारण के चलते उसका विवाह नहीं हो पाता है। बार-बार विवाह के प्रयत्न में हारकर वह हिस्टीरिया की मरीज बन जाती है। उपचार के सिलसिले में वह डॉकटर प्रशांत के संपर्क में आती है। दोनों के बीच प्रेम होता है, और प्रेमिका से डॉक्टर की पत्नी बन जाती है।

उसका इलाज करने के लिए कमला के बारे में डॉ प्रशांत कमला से संबंधित सारी बातों का पता लगा लेता है। उसे पता चलता है कि- "तीन जगह बात चली, मगर- पहली जगह से तो पान देने की बात भी पक्की हो गई थी। ठीक पान-तिलक के दिन लड़के की माँ मर गई। दूसरी जगह बातचीत ठीक हुई तो उनके घर में आग लग गई। तीसरे लड़के को मैया हो गयी, इंतकाल हो गया। अब कोई लड़का वाला तैयार नहीं होता है। हजार, दो हजार, पांच हजार रुपया भी कबूलते हैं मगर.....आखिर में एक पछबरिया कैथ को घरजमैया रखने के लिए लाये, बस उसी दिन से कमली को मिरगी आने लगी। लोग तो कहते हैं कि कमला मैया (नदी का नाम) है, कमला का नाम इसी से मनौती मांगने पर हुआ था। नहीं चाहती हैं कि कमला की सादी हो। कमला मैया भी कुमारी ही थी न।"

जब डॉक्टर प्रशांत को उसकी केस-हिस्टरी का पता चलता है, तब उसकी इलाज के लिए तैयार हो जाता है। उससे मीठी बातें करता है। इंजेक्शन या दवाई देने के लिए। लेकिन कमला उसे अपना दिल दे बैठती है। उसे ऐसा लगता है कि डॉक्टर प्रशांत उसे पसंद करता है। उसके उद्गारों से यह बात स्पष्ट होता है- "डॉक्टर की मुस्कराहट बड़ी जानलेवा है, जब आवेगा तो मुस्कराते हुए आवेगा। डर लगता है? हाँ हाँ डर लगता है तो तुमको क्या? तुमको तो मजा मिलता है ना मुस्कराए जाइये! गले में आला लटकाए फिरते हैं बाबू साहेब। छाती और पीठ के लगाकर लोगों के दिल की बीमारी का पता लगाता है। झूठ। इतने दिन हो गये, मेरे दिल की बात, मेरी बीमारी के कहाँ जान सके।"

धीरे-धीरे डॉक्टर प्रशांत भी उससे प्यार करने लगता है। दोनों के बीच की करीबी बढ़ती है। प्रणय इतना गहरा हो जाता है कि दोनों में यौन संबंध भी होने लगता है। इसी बीच डॉक्टर

प्रशांत गिरफ्तार होता है और कमला गर्भवती हो जाती है। भले परिवार के सभी उसे कोसे, लेकिन कमला को डॉक्टर प्रशांत पर पूरा विश्वास था कि वह जरूर आएगा और उसका हाथ थामेगा। उसका विश्वास सच साबित होता है और जेल से रिहा होकर डॉकटर प्रशांत उससे विवाह कर लेता है। कुलमिलाकर, कमला धनाढ्य पिता की बेटी होकर भी कई यातनाओं को झेलते हुए अंत में सफल जीवन की अधिकारिणी बनती है।

कालीचरण :

प्रस्तुत उपन्यास का सर्वाधिक क्रियाशील, निष्ठावान पात्र यदि कोई है तो वह है- कालीचरण। अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने वाला यह पात्र है। वह एक ऐसा कसरती नवयुवक है, जिसके शरीर में अपार बल है जिसके चलते गाँव में उसकी धाक है। गुअर टोली के नवयुवक उसके अंध भक्त हैं और उसके लिए खून-पसीना बहाने के लिए सदा तत्पर रहते हैं। वह समाजवादी पार्टी से संबंध रखता है। पार्टी के कार्यों के लिए सदा तत्पर रहता है। इस पार्टी में आने से पहले वह कांग्रेस पार्टी के लिए काम करता है, लेकिन बाद में जब वह समाजवादी पार्टी में आ जाता है तब से पूरी निष्ठा से पार्टी के लिए काम करता है। गाँव के नवयुवकों से समझदारी से व प्रेम से काम लेना वह जानता है। सभी जाति-धर्म को वह मर्यादा की दृष्टि से देखता था। उसका मानना था कि दो ही जाति है- एक गरीब और दूसरी से अमीर। वह सचमुच एक नेक इन्सान है। वह अनपढ़ होने पर भी गजब की भाषण शक्ति उसके अंदर विद्यमान थी। लोग उसके भाषण को मंत्रमुग्ध होकर सुनते थे।

बालदेव :

एक सामान्य वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले बालदेव मैला आँचल उपन्यास का एक प्रमुख पात्र है। बालदेव के माध्यम से रेणु ने उन सामान्य कार्यकर्ताओं का जीवन-चित्र प्रस्तुत किया है जिन्होंने बहुत छोटे घराने में जन्म लेकर भी कांग्रेस के आंदोलनों में निष्काम रूप से सहयोग देते हैं। वे ऐसे सामान्य लोग हैं जिन्हें कभी मंत्री पद तक हासिल नहीं हुआ। बचपन में ही उसे माँ बाप के प्यार से वंचित होना पड़ता है। वह अपने बाल्यकाल की वेदना को याद करते हुए सिहर उठता है- "आज माँ की याद आती है। गाँव के लोग बालदेव को टुरवा (अनाथ) कहते थे। सुनकर माँ बहुत गुस्सा होती थी। बाप के मरने से कोई टुरवा नहीं होता। बाप मरे तो कुमर, माँ मरे तो सूअर। मेरा बालदेव तो कुमार है, मेरा बालदेव टूअर नहीं।" जब माँ का भी साया उठ गया, तब वह अजोधी भगत की भैंस चराता था। कुलमिलाकर उसका बाल्यकाल अभावों में बीतता है। रामकिशन बाबू और उनकी पत्नी मायेजी के सान्निध्य में आकर वह कांग्रेस पार्टी का सदस्य बनता है और कई बार जेल का वास भी करता है। उसके चरित्र में देश-सेवा की भावना कूट-कूटकर भरी हुई है। वह यादव टोली में रहता है। लेकिन इस टोली के लोग उसे स्वयं देशद्रोही का नाम देकर गिरफ्तार करवाते हैं। लेकिन बाद में उन्हें उसकी नीयत का पता चलता है। फिर यादव टोली वाले उससे माफी मांग लेते हैं। सरकारी दफ्तरों में सरकारी अफसरों के मध्य उसकी अच्छी पहचान एवं पकड़ होती है। विनम्रता और अहिंसा का वह पुजारी था। गाँव के हर कार्यक्रम में बढ़-चढ़कर भाग लेता है। नारियों के प्रति सम्मान की भावना रखता है। कांग्रेस पार्टी के सदस्य बनने के बाद मायेजी के रूप में वह अपनी माँ को देखता है। सिर्फ उसे

लछमी से प्यार हो जाता है। लछमी महंत की दासी होती है। लेकिन वह किसी भी तरह मठ की चार दीवारी से बाहर निकलना चाहती है। बालदेव उसे अपनी स्त्री बनाता है। बीच में लछमी के प्रति उसके मन में संदेह की भावना भी उत्पन्न होती है। वह उसे समझाते हुए कहता है- "रोओ मत। लेकिन तुमको अब खुद समझना चाहिए कि तुमको अब खुद समझदार होना चाहिए कि तुम अब मठ की कोठारिन नहीं, मेरी इसतिरी हो। लोग क्या कहेंगे।" और वे लछमी को क्षमा कर देते हैं।

बावनदास :

बावनदास राजनीति से संबंध रखने वाला एक ऐसा चरित्र है, जिससे उपन्यास को गति मिलती है। भले ही पूरे उपन्यास में उसका योगदान न हो, लेकिन जहाँ जहाँ उसका उल्लेख हुआ है, वहाँ उसने अपनी भूमिका बखूबी से निभायी है। बावनदास को लेखक गांधी के रूप में चित्रित करते हैं। उसकी रूपाकृती का लेखक इस प्रकार वर्णन करते हैं- "पूर्व जन्म का फल अथवा सिरजनहार की मर्जी। प्रकृती की भूल अथवा थायराएड, थायमस और प्युटिटिरी ग्लैंड्स के हेर-फेर। डेढ हाथ की ऊँचाई, सांवला रंग, मोटे होंठ, अचरज में डाल देने वाली दाढी और चौंका देने वाली मोटी भोंडी आवाज। ऊंचाई के हिसाब से आवाज दस गुना भारी। अजीब चाल मानो लुढ़क रहा हो। अज्ञात कुलशील। जन्मजात साधु। जिस ओर होकर निकलता लोगों की निगाहें बरबस अटक जाती। फिर ताज्जुब की हँसी-मुस्कराहट, पीछे-पीछे बच्चों का हुजूम, तमाशा, कुत्ते भूँकते, इन्सान हँसते।"

बावनदास पहले कांग्रेस पार्टी की सभाओं में खंजडी बजाते हुए भजन गाया करता है - "एक राम नाम धन साँचा जग में कछु न बाँचा हो।' कुछ लोग तो उसे भगवान मानते हैं। उसके अंदर देशभक्ति की भावना कूट-कूटकर भरी हुई है। उसकी कर्तव्यनिष्ठता के कारण देश के चोटी के नेताओं से भी उसका व्यक्तिगत परिचय होता है। लेखक ने लिखा है- 'बावन को गांधीजी जानते हैं, नेहरू जानते हैं और राजेंद्र बाबू भी पहचानते हैं। प्रांत भर के लीडर और राजनीतिक कार्यकर्ता जानते हैं।" कैंप जेल में बावनदास और चुन्नी गुंसाईं ने पच्चीस दिन का अनशन करके अंग्रेज सरकार की नाक में दम कर दिया था- रुदरफोर्ड और आर्चर ने इन दोनों को देखने माँगा था। गांधीजी की कठोर परीक्षा में, सत्य की सत्याग्रह की परीक्षा में, खरे उतरने वाले दो कुरूप और भद्दे इंसान। वह इसलिए भी गांधीजी लगता है क्योंकि गांधी जी की तरह वह गलतियां करता है लेकिन तुरंत उनका प्रायश्चित भी कर लेता है। एक बार वह मुठिया में वसूल हुए चावलों को बेचकर उनमें से दो आने की जलेबियां खा लेता है, लेकिन शीघ्र ही उसकी आत्मा उसे धिक्कारने लगती है। एक दूसरे अवसर पर उसने पर्दे की आड़ से विचित्रावस्था में सोई हुई तारावती की ओर मंत्रमुग्ध जैसी दशा में देखने का पाप करता है। उस समय वह अपने आप को संभालने का प्रयास कर हार जाता है। "पलंग पर अलसाई सोई जवान औरत! बिखरे घुंघुराले बाल, छाती पर से सरकी हुई साडी, खद्दर की खुली अँगिया। बावन के पैर थरथराते हैं । वह आगे बढ़ना चाहता है। ...वह जानवर है। वह इस औरत के कपडे को फाड़कर चित्थी-चित्थी कर देना चाहता है। वह अपने तेज नाखूनों से उसके देह को चीर-फाड़ डालगा।" किंतु अगले ही पल

उसके विचार पलट जाते हैं क्योंकि उसे लगता है मानो गांधी बाबा उसे देख रहे हैं। इसके बाद वह सात दिवस तक व्रत रखकर आत्मशुद्धि इंद्रियशुद्धि और प्रयश्चित भी करता है।

गांधीजी का एक ऐसा परम भक्त कि उसे गांधीजी के सिवा सारी दुनिया संदेहास्पद लगता है। जब गांधीजी की मृत्यु हो जाती है, तब बावनदास एकर्दम सूखकर काँटा हो जाता है। और अंत में गांधी का नाम लेकर ही वह मर भी जाता है।

तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद :

तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद कायस्थ टोली के एक धनवान व्यक्ति है। दाव-पेंच में वह माहिर था, इसीलिए राजनीति की खेल में वे अव्वल थे। अपनी महत्ता को बढाने के लिए राजपूतों और यादवों को परस्पर भिडाने का भी प्रयास करते रहते हैं। यादवों को क्षत्रिय मानने का प्रश्न उठा तो उसका समर्थन करते हुए वे उनको विश्वास दिलाते हैं कि वे इस मामले की पूरी पैरवी करेंगे। तीन पुश्तों से उनके परिवार में तहसीलदारी चली आ रही है और वे एक हजार बीघे जमीन के एक बड़े काश्तकार हैं। उनकी पुश्तैनी प्रतिद्वंद्विता ठाकुर रामकिरपाल से चल ही रही थी जो राजपूत टोली के मुखिया थे। गाँव में सिर्फ तहसीलदार साहब चाय पीते हैं, बढ़िया चाय की पत्ती का व्यवहार करते हैं। डॉक्टर प्रशांत भी चाय पीने इनके घर आता है। वह एक ऐसा इन्सान है जो दुगुनी दाम में चीजों को बेचता है। गाँव में बडी-से-बड़ी और छोटी से छोटी सारा काम तहसीलदार की देखरेख में होती है। वह कानूनी मामलों में बहुत माहिर होता है। "तहसीलदार साहब कानूनी आदमी है। कागज पर आपके हाथ का 'क' भी लिखा रहे तो उससे वह सारी दस्तावेज ऐसी बना दें कि पटना का इस्पाट (हैंडराइटिंग एक्सपर्ट) भी नहीं पहचान पाए कि असली है या नकली।" वे पढ़े-लिखे व्यक्ति हैं, लेकिन फिर भी उन्हें भूत-प्रेत और मंत्र-तंत्रों पर पूरा विश्वास था। अपनी बेटी कमला को मिरगी का दौरा पड़ता है तो वे कुछ इसी प्रकार के इलाज का प्रयास करते हैं। डॉ. प्रशांत को जेल हो जाती है और पता चलता है कि अपनी बेटी कमला गर्भवती है तो, गाँव में नाक कटने के डर से वे गर्भपात की दवाई भी लाकर देते हैं, लेकिन कमला उसे नहीं पीती। अपने गम को भुलाने के लिए शराब भी पीने लगते हैं और बड़ा उत्पात मचाते हैं। लेकिन जब डॉ प्रशांत रिहाई के बाद कमला का हाथ मांगते हैं तो फिर उनके गुण में बहुत परिवर्तन हो जाता है। कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि विश्वनाथप्रसाद अपने गाँव के सबसे अधिक चलते-फिरते व्यक्ति हैं। कानूनी मामलों में माहिर, बहुत ही अमीर घराना एवं जाली दस्तावेज बनाने में माहिर होने के कारण गाँव वालों को उनका लोहा मानना पड़ता है। लेकिन अंत में गांधीजी के हृदय परिवर्तन के सिद्धांत के अनुयायी बनकर गाँव वालों से नीलामी एवं जब्ती में ली हुई जमीन को वापस कर देते हैं।

महंत सेवादास :

धर्म तथा मठों के नाम पर ऊधम मचाने वाले कहानी को गति देने वाले दो ऐसे पात्र हैं जिन्हें महंत रामदास और महंत सेवादास के नाम से जाना जाता है। लछमी नामक स्त्री के साथ उनका अवैध संबंध होता है, जिससे कथा को गति मिलती है। नाटकीय शैली में लेखक ने उनका चित्रण किया है।

महंत साहेब सदा ब्रह्मवेला में उठते हैं हो रामदास! आसन त्यागी जी। लछमी को जगाओ ! सतगुरु हो! ये कभी जो बिना जगाए जागें। रामदास! हो जी रामदास!"

रात बहुत बाकी है तो क्या हुआ? एक दिन जरा सवेरे ही सही। सोओ मत! धनी में लकड़ी डाल दो! कोठारिन को जगा दो।.....सतगुरु साहब ने सपना दिया है।

महंत सेवादास महंत होकर भी लछमी को रखैल बनाकर रखता है। पहले तो लोग उस पर विश्वास एवं मर्यादा का भाव रखते हैं, लेकिन जब वह दासी को ले आता है, तब से ही लोगों की आस्था धीरे-धीरे कम होने लगती है। यादव टोली के किसनू महंत सेवादास के लिए कहता है- "अंधा महंत अपने पापों का प्राच्छित कर रहा है। बाबाजी होकर जो रखेलिन रखता है वह बाबा जी नहीं, ऊपर बाबा जी, भीतर दगाबाजी। क्य अकहते हो, रखेलिन नहीं दासिन है। किसी और को सिखाना । पांच बरस तक मठ में नौकरी किया है, हमसे बढ़कर और कौन जानेगा मठ की बात? और कोई देखे या न देखे, ऊपर परमेसर तो है।" महंत जब लछमी दासिन को मठ पर लाया था तब वह एकर्दम अबोध थी, एकर्दम नादान एक ही कपडा पहनती थी। कहां वह बच्ची और पचास बरस का वह बूढा गिद्ध।'

वह अंधा हो जाता है, मुँह में दांत नहीं रहते, लेकिन उनकी लछमी के साथ विलास की भूख शांत नहीं होती। जब तक लछमी अबोध किशोरी थी और महंत सेवादास अधेड़ व्यक्ति थे, तब तक उनकी कामतृप्ति की विवशता सहन करती आयी है, किंतु अंतत: अब तो उसको उनसे घृणा हो जाती है। रेणु ने इस पात्र के माध्यम से मठ-मंदिरों में चलने वाले व्यभिचार का पर्दाफाश किया है।

महंत रामदास :

महंत बनने योग्य नहीं है महंत रामदास, सर्वथा अयोग्य, व्यभिचारी, दुर्गुणों से युक्त, लेकिन उसको महंती भाग्य से मिल जाती है, अन्यथा वह एक अनपढ़ व्यक्ति है। अपने बाल्यकाल के विषय में सोचत हुआ कहता है- "यदि खंजडी नहीं जानते तो आज तक बेलाही के जमींदार के भैंस की पूंछ हाथ से नहीं छूटती। महंत साहब उसकी खंजडी सुनकर मोहित हो गए और वह रात को ही महंत साहब के साथ भागकर मेरीगंज मठ पर आ गया। पंद्रह साल पहले की बात । पंद्रह साल बाद रामदास का भाग फिरा है। जै हो सतगुरु साहेब की।"

सेवादास की मृत्यु के बाद उसके एक मात्र चेला होने के कारण उसे महंतजी अधिकार मिलता है। महंत बनने की उसके मन में प्रबल इच्छा थी। लेकिन उसे महंती का दर्ज आसानी से नहीं मिल पाती है। जब वह महंत बन जाता है तो अपने गुरु का ही अनुकरण करता है- "महंत रामदास भी छिंकने, खांसने और जमाही लेने के समय महंत सेवादास जी की तरह चुटकी बजाते हैं, सतगुरु हो, सतगुरु हो कहते हैं और आंखें स्वयं ही बंद हो जाती हैं।

लछमी के प्रति उनके मन में कामाग्नि बढ़ती रहती है। लछमी का किसी पुरुष से मिलना उन्हें खलती थी। उन्हें कालीचरण पर बड़ा संदेह था। किसी भी तरह लछमी मठ को छोड़कर अलग रहने लगती है। महंत रामदास चिलम, गांजा के शिकार होकर दिनभर उसी में उलझा रहता है। जीतेजी नरक यातना भोगता है।

लछमी :

स्त्री पात्रों में लछमी एक महत्वपूर्ण पात्र है। उसका उपन्यास में जितनी अधिक घटनाओं एवं पात्रों के साथ संबंध है उतना किसी अन्य नारी पात्र का नहीं है। परिस्थितिवश उसे दासी बनकर रहना पड़ता है। वह एक अनाथ बालिका थी। बचपन में ही उसकी मां चल बसी। अब महंत सेवादास के सिवा उसका दूजा आसरा नहीं था। किशोरावस्था में ही उसे नर-पशु सेवादास की काम-तृष्णा का शिकार होना पड़ता है। जब वह डॉ प्रशांत को देखती है तो उसके प्रति आकर्षित होती है। बालदेव की सरलता के कारण उसके प्रति आकृष्ट होती है। जब महंत रामदास उसके साथ जबर्दस्ती करने की चेष्टा करता है तो वह उसे समझाती है कि वह उसकी गुरुभाई है, लेकिन जब रामदास नहीं मानता है तब वह उस पर प्रहार भी करती है। लछमी के चरित्र में क्षमाशीलता का गुण भी विद्यमान है। वह चतुर भी है और कुशलता से बात करने वाली है। सामने वाले को अपनी बातों से विविश करने की क्षमता रखती है। धीरे-धीरे बालदेव के प्रति उसके मन में आकर्षण भाव आसक्ति में परिणत हो जाता है। बालदेव भी उसे पसंद करता है। बीच में कई घटनाएँ घटित होती हैं जिसे समझने के लिए मैला आंचल पूरे उपन्यास को पढ़ना पढ़ेगा। साधुओं के गुण उसके स्वभाव में विद्यमान है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि लछमी एक ऐसा चरित्र है जिसे हालात से विवश होकर महंतों के बीच शिकार बनकर रहना पड़ता है, लेकिन वह छुटकारे की हमेशा कामना एवं प्रयत्न करती रहती थी। स्वतंत्रता के जुनून में उसकी भारत माता का रूप धारण कर सवारी निकालना उसके चरित्र के निर्मल पक्ष को दर्शाता है।

छात्रो! पात्रों व चरित्र चित्रण के अंतर्गत आपने कुछ ही महत्वपूर्ण पात्रों का विश्लेषण पढ़ पाए हैं। पहले ही यह बता दिया गया है कि यह अंचल विशेष पर आधारित उपन्यास होने के कारण अंचल से संबंधित सभी प्रकार के चित्रण हेतु लेखक को अनेकानेक पात्रों का सृजन करना पड़ा है। उन सभी पात्रों का विश्लेषण यहां संभव नहीं है, उपन्यास के पठन से आप उपन्यास की कथा पात्र तथा अन्य विवरणों से पूर्णत: रूबरू हो सकते हैं।

बोध प्रश्न

- प्रशांत क्या काम करता है?
- कौन गांधी जी के परम भक्त थे?
- दो महंतों के नाम बताइए।

देशकाल-वातावरण :

प्रिय छात्रो! अब तक के अध्ययन से आप इस बात को स्पष्टत: समझ गये होंगे कि मैला आँचल मेरीगंज नामक एक निहायत पिछडी हुई गाँव जनपद या अंचल विशेष की विशेषताओं को दर्शाने वाला उपन्यास है। अत: इसका कथानक पूर्णत: पूर्णिया के मेरीगंज के इर्द-गिर्द ही घूमता है। गाँव के चित्रण को दर्शाने का रेणु ने पूरा प्रयास किया है। इधर-उधर बिखरी गंदगी, दुर्गंध भरे नाले, गाय-भैंस आदि सभी का चित्रण इसमें सम्मिलित है। विशेषत: रेणु ने गाँव में हो रहे बदलाव या परिवर्तन को दिखाने का प्रयास किया है। 1942 से 1950 के बीच गाँव में जो

परिवर्तन हो रहे थे, उसे इस उपन्यास में चित्रित किया गया है । एक ओर पहले से ही अंचल विशेष में विद्यमान सांस्कृतिक मान्यताएँ एवं रूढ़िगत परंपराएँ, दूसरी ओर आने वाले परिवर्तन तथा इन दोनों के बीच का द्वंद्व, इसमें चित्रित है। उत्सव, मेले, त्यौहारों के चित्रण से रेणु ने गाँव में व्याप्त लोकसंस्कृति का चित्रण किया है। लोक संस्कृति तथा लोक गीत को इस उपन्यास में स्थान प्राप्त है। एक आंचलिक उपन्यासकार का यह उद्देश्य होता है कि अंचल विशेष से संबंधित तमाम भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण को प्रस्तुत करें। रेणु को इसमें काफी सफलता भी मिली है।

रेणु ने मेरीगंज के भौगोलिक परिवेश को प्रारंभ में ही इस तरह चित्रित किया है- "बूढ़ी कोशी के किनारे-किनारे बहुत दूर तक ताड़ और खजूर के पेड़ों से भरा हुआ जंगल है।.....ताड़बन्ना के बाद ही एक बड़ा मैदान है, जो नेपाल की तराई से शुरु होकर गंगाजीक किनारे खत्म हुआ है, लाखों एकड़ जमीन! वंध्या धरती का विशाल अंचल! इसमें दूब भी नहीं पनपती है । बीच-बीच में बालचूर और कहीं कहीं बेर की झाडियाँ। कोस भर मैदान के बाद, पूरब की ओर काला जंगल दिखाई पड़ता है, वही है मेरीगंज कोठी।" पूरब में बहने वाली कमला नदी का भी लेखक ने वर्णन किया ह।

आधुनिक कालखंड पर आधारित इस उपन्यास में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के अंतिम काल का चित्रण किया गया है। इसमें आजादी पाने की आतुरता दिखाई पड़ता है। गांधीजी के नेतृत्व में 1942 में हुए देशव्यापी आंदोलन का उल्लेख इसमें हुआ है। साथ ही इसके कई पात्र गांधीजी के चरित्र से प्रभावित दिखाई पड़ते हैं। यहाँ जातीयता बड़ी मात्रा में है। कायस्थ, राजपूत और यादव अक्सर एक दूसरे को नीचा दिखाने पर तुले रहते हैं। पूर्णिया का यह अंचल मलेरिया और कालाआजार जैसी जानलेवा बीमारियों से भी ग्रसित है। केवल रोग ही नहीं बल्कि अंधविश्वास भी इन लोगों के मन में घर कर गया है। यहाँ तक कि विश्वनाथप्रसाद जैसे पढ़े-लिखे लोग भी अंधविश्वास के शिकार होते हैं। गाँव में जब अस्पताल खुलता है, तब उसका भयंकर विरोध करना और डॉ प्रशांत को अपना काम करने न देना, अंधविश्वास का चरम माना जा सकता है। अंग्रेजी दवाइयों को लेकर अफवायें फैलायी जाती हैं। पूंजीवाद गाँव को खोखला बना रहा है। कुछ ही लोग अमीर हैं, बाकी तो सब गरीब ही गरीब। कर्ज ले लेकर जीवन बिताने वाले। इसका चित्रण लेखक इन शब्दों में करते हैं- "यहाँ सात माह के बच्चे बथुएँ के साग पर पलते हैं। यहाँ देह को तेल लगाना विलासिता है। यहाँ का गरीब और भी गरीब हो रहा है और अमीरों का अन्याय बढ़ता जा रहा है। लोगों के चेहरे पर मुस्कराहट नहीं है। उनके दिल में आशा और विश्वास का नामोनिशान तक नहीं है।"

समाज और राजनीतिक विद्रूपताओं के बीच धार्मिक दृष्टि से भी यह अंचल भ्रष्ट हुआ है। एक तो महंत की पावन गद्दी के लिए झगडे होते हैं। मठों में दासी रखा जाता है और यौन चेष्टाएँ प्रबल होते हैं। किसी आदमी का किसी औरत से चक्कर चलना यहाँ मामूली बात है। नोखे की स्त्री रामलगनसिंह के बेटे से फंसी हुई है। बालदेव कोठरिन लछमी की ओर आकर्षित है। हरगौरीसिंह अपनी मौसेरी बहन में फंसा हुआ है। उचितदास की बेटी कोयरी टोले के सखन महतों से फंसी है। कालीचरन ने चरखा स्कूल की मास्टरनी को अपने घर में रखा है। डॉक्टर प्रशांत कमला के

प्रेम जाल में फंसे हैं। महंत दासियाँ रखते हैं, उनसे मनमानी करवाते हैं, गांजा चिलम पीते हैं। अनैतिक वातावरण का यहाँ तांडव है।

समाज और संस्कृति के चित्रण के अंतर्गत रेणु ने यहां के रीतिरिवाज, त्यौहार, आदि की विशेषताओं का चित्रण किया है। होली, सतुआनी, सिखा आदि पर्व यहाँ मनाये जाते हैं। संक्रांति के दिन सतुआनी पर्व होता है और इस दिन सत्तू खाने का रिवाज है।

डाइन, जिन आदि से संबंधित अनेक प्रसंग इसमें चित्रित हैं। किसी समस्या के निवारण के लिए लोग कालीमद्दीपूर घाट पर चेथरिया पीर में चीथडा लटका देते हैं। इस चेथरिया पीर पर उनकी नितांत श्रद्धा है । इतना ही नहीं लोकगीत तथा परिकथाएँ भी इस गाँव में रंग भरते हैं। झांझा करताल, मृदंग आदि वाद्यों का प्रयोग लोकजीवन की प्रस्तुति में प्रयुक्त हुआ है।

मेरीगंज के निकट जंगल में संथाल जाति के लोग बसे हुए हैं। इनके अपने रीति-रिवाज हैं। छोटी जाति के लोगों द्वारा बडी जाति के लोगों को परनामपाती किया जाना, धैलासुपारी की सजा जैसी छोटी-छोटी बातों को भी लेखक ने इसमें समाहित किया है।

प्रकृती चित्रण में कमला नदी, नदी में खिलने वाले फूल, आमलतास, शिरीष, पलास, गुलमोहर का इसमें वर्णन है। नदी के पासवाली हरिभरी खेती, धान की फसलें आदि का भी चित्रण है। फूलों के साथ फलों के पेड़ों का भी चित्रण है। माघ की ठंडी हवा का वर्णन इस प्रकार लेखक ने किया है- "सुईं की तरह गड़ने वाली, माघ के भोर की ठंडी हवा का कोई देह पर असर नहीं होता। ओस और पाले से तो देह शून्य हो जाता है। जब हाथ से अपनी नक भी नहीं छुईं जाती है, तब घूर में फिर से सूखे पुआल डाल कर नई आग पैदा की जाती है।" उपन्यास के घटनाक्रम में माघ, फागुन, वैशाख, शरद, हेमंत आदि सभी ऋतुओं का विशेष चित्रण मिलता है। कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि इस उपन्यास में एक अंचल विशेष को प्रस्तुत करने के लिए सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, प्रकृती आदि सभी अवयवों को उचित घटनाक्रम तथा कथा विकास के लिए आवश्यक रूप में चित्रित किया गया है। इसीलिए इस उपन्यास को भारी सफलता मिली है।

संवाद या कथोपकथन :

इस उपन्यास में लेखक ने पात्रों के अनुकूल तथा चरित्र को उभारने के अनुकूल संवाद का सृजन किया है। जो बड़े ही सरस और प्रभावोत्पादक हैं। लंबे-लंबे संवाद ही नहीं बल्कि छोटे-से छोटे वाक्य से भी पात्रों में कथा में रेणु प्राण भर दिया है। जैसे कि महंत के कारनामों के संदर्भ में- "ऊपर से बाबाजी भीतर से दगाबाजी" से ही महंत के चरित्र का पर्दाफाश कर देते हैं। कुछ अन्य उदाहरण देखिए- "डाक्टर साहिब! क्या है जरा चलिए! मेरी बहन को कै हो रही है। पेट भी, चलता है! जी।.....डाक्टर साहिब यह जो जकसैन दे रहे हो उसका कितना होगा!

छोटे जकसैन का फीस तो दो रुपया है, इतने बड़े जकसैन का तो जरूर पचास रुपया होगा।

क्यों पचास रुपेया, डाक्टर मुस्कराता है।

तो रहने दीजिए! कोई दवा ही दे दीजिए!

मैला आंचल की कथावस्तु, पात्र, देशकाल वातावरण, परिवेश, संस्कृति घटनायें आदि में जितनी विविधता एवं रोचकता छिपी हुई है, उसी प्रकार संवाद भी पात्रों में प्राण फूंकने में सफल सिद्ध हुए हैं। संवादों में पात्रों के मनोभावों को अत्यंत मार्मिक ढंग एवं शैली में रेणु ने प्रस्तुत किया है। इन संवादों में छोटे वाक्य, बड़े संवाद, एकालाप आदि सभी शामिल हैं। तो चलिए, मैला आंचल से संवाद के कुछ नमूने प्रस्तुत है। अंग्रेजी के बढ़ते प्रभाव को दिखाने के लिए उन्होंने संवादों में अंगेजी शब्दों का हिंदी बोलीकरण कर प्रस्तुत किया है।

"हुजूर हमारा लड़का अभी रहता तो हुजूर से अभी अंग्रेजी में बतिया लेता।

रमैन जैसी एक किताब है, लाल मोटी....उसी में देखकर वह आपसे अंग्रेजी में बतिया लेता। खेलावनसिंह यादव कहते हैं।

अच्छा? आपका लड़का अंग्रेजी में ही बोल लेता है।"

हाँ, डागडरबाबू से बराबर अंग्रेजी में ही बोल लेता है।

मोकदमा कार राय भी पढ लेता है। बालदेव जी कहते हैं।

एड किलास में पढता है।" कालीचरन कहते हैं।

****

बिछावन पर लेटकर डाक्टर सोचत है- कोमल गीतों की पंक्तियाँ! अपभ्रंश शब्द भी कितने मधुर लगते हैं! ...पिया भुलै डुमरी के फूल रे पियवा भैले।....

चांद बयरि भेल बादल, मछली बयरि महाजाल, तिरिया बयरि दुहु लोचन हिरदए के भेद बताए।"

बंदे महातरम! बंदे महातरम!

तुमि जा ओ! आमार जन्ये भेबो ना। आई दयाखो, भगवान आमार काछे निजेई ऐसे गेछेन। आभारानी की आंखें आनंद से चमक उठी थीं।

डॉक्टर और मरीज के बीच का वार्तालाप

क्या नाम

सनिच्चर मेहतो

कितने दिनों से खांसी होती है? कोई दवा खाते थे या नहीं? ....क्या थूक से खून आता है? कब से? ....कभी-कभी

हूँ !

एक साफ डिब्बा में रात भर का खून जमा कर के ले आना।.... इधर आओ....

जोत से सांस लो...एक-दो-तीन बोलो ....जोर से। ठीक है।

एक बुढिया और डाक्टर के बीच का संवाद

मौसी!

कौन?

मैं हूँ। डाक्टर। गनेश कहाँ है?

डागडरबाबू, आप! आइए बैठिए। गनेश सो रहा है।...मैं तो अकचका गई, किसने मौसी कहकर पुकारा! बूढ़ी की आंखे छलछला आती हैं। मौसी, सुना है तुम खास किस्म का हलवा बनाती हो?

मौसी हँस पड़ती है, अरे, दुर! किसने कहा तुमसे? पागली कमली ने कहा होगा जरूर।...कमली कैसी है अब? इधर तो बहुत दिन से आई ही नहीं है। पहले तो रोज आती थी।

भाषा शैली :

प्रिय छात्रो! मैला आंचल अंचल विशेष, देहाती या गाँव के परिवेश पर आधारित उपन्यास है। अत: ग्रामीण परिवेश तथा अंचल की विशेषता को दिखाने तथा पाठक के मन में स्थान प्राप्त करने के लिए लेखक के पास एक अस्त्र होता है, वह है भाषा-शैली। वही साहित्यिक रचना सफल हो पाती है जिसमें पाठक के मन में दस्तक देकर वहाँ विराजमान होने की क्षमता होती है। मैला आंचल इसी प्रकार का एक उपन्यास है जिसमें एक सामान्य व्यक्ति की सोच को भी अभिव्यक्त किया गया है। भाषा एवं शैली की दृष्टि से यह उपन्यास एकर्दम लाजवाब उपन्यास है। इसमें उन तमाम भाषिक अवयवों का लेखक ने प्रयोग एवं प्रयुक्त किया है जिससे पात्र की ही नहीं बल्कि अंचल की विशेषता भी पूर्णता के साथ झलक उठे। पात्रानुकूल भाषा प्रयोग, गाँव में अंग्रेजी के प्रति मोह, गुस्सा, प्यार दोस्ती, शोषण, सामाजिक स्तर तथा स्तर भेद आदि सभी को आप इस उपन्यास में देख सकते हैं। भाषा प्रयोग अंचल विशेष को दर्शाने में सक्षम हुआ है। कुछ ऐसे शब्द आपकी जानकारी के लिए प्रस्तुत है।

शब्दों का ध्वन्यात्मक परिवर्तन :

मूर्ख-मूरख, ज्ञानी-ग्यानी, अनशन-अनसन, उपवास-उपास, जोश-जोस, अक्षर-अच्छर, विद्यमान-विदमान, आश्रम-आसरम, वियोग-बियोग, जेल-जेहल, हुक्म-हुकुम, गिरफ्तार-गिरफ्फ, जुल्म-जुलुम आदि। इसी प्रकार से अंग्रेजी शब्दों का भी ध्वन्यात्मक परिवर्तन इसमें देखने को मिलता है जो पात्रानुकूल एवं सहज है। जैसे कि- पार्टी-पाटी, आलरैट-ओल्रैट, भाटा कंपनी-बाटा कंपनी, मिनिस्टर-मेनिस्टर, कलेक्टर-कलकटर, डाक्टर-डागडर, स्टेशन-टीशन, होम्योपैथी-होमोपोथी आदि। इस प्रकार पात्र बोलते तो हिंदी है, लेकिन अंग्रेजी शैली में बोलते हैं। इसी क्रम में पत्थर-पत्थल, छिमा, जिन्दाबाध,इस्कुलिया आदि शब्दों के प्रयोग से आंचलिकता मुखर हो उठती है। उनकी भाषा में चित्रों को साकार ही नहीं बल्कि सशब्द चित्रित करने की क्षमता विद्यमान थी।

इसमें उन्होंने नाटकीयता एवं किस्सागोई शैली का प्रयोग किया है। लोकगीत, लोकशैली के साथ लोकसंगीत का प्रयोग इसकी विशेषता में चार चांद लगाता है। मिथिला अंचल में प्रयुक्त होने वाले शब्द, मुहावरे, लोकोक्ति आदि के प्रयोग ने इसे और भी विशेष बना दिया है। लोकगीत लोकशैली के कुछ उदाहरण प्रस्तुत है-

जागहु सतगुरु साहेब
डि-डिमिक-डिमक, डिम-डिमक-डिमक
भोर भयो अब भरम भयानक भानु देखकर
भागाजी

रामदास खंजडी बजाता है, महंत और लछमी उसे कंठ देते हैं। इस प्रकार संगीतमय प्रयोग इसमें काफी है। प्रत्येक टोली की विशेषता को भाषा के माध्यम से चित्रित किया गया है। यहाँ तक कि संथालियों की भाषा भी प्रयुक्त है - डा डिग्गा, डा डिग्गा सर ता-धिन ता।

धर्म के नाम पर मठों में जो अत्याचार होता है, उसका एक शब्द चित्र प्रस्तुत है-
महंत रामदास जी धीरे से उठते हैं। दबे पांव लछमी की कोठरी के पास जाते हैं। किवाडी खुली है? नहीं, बंद है। महंत साहब बाहर से भी किवाड़ छटकनी खोलना जानते हैं। पतली सी लकड़ी फंसाकर खोलते हैं। लछमी सोई हुई है। उसके कपड़े अस्त-व्यस्त है। बाल बिखरे हुए हैं।
रामदास?
रामदास! हाथ छोड़ो। बैठो आखिर तुम चित्त को नहीं संभाल सके।
माया ने तुम्हें भी अंधा बना दिया।
माया से कोई परे नहीं।...
तुम नरक की ओर पैर बढ़ रहे हो। अब भी चेतो।
अब चेतने से फायदा नहीं। मुझे सरग नहीं चाहिए....इस नरक में पहली बार नहीं आया हूँ।

रेणु ने प्रतीकात्मक भाषा का भी काफी प्रयोग किया है। कहीं-कहीं उनकी भाषा में प्रतीक और अप्रस्तुत इस प्रकार मिलते हैं जिसमें गद्य-पद्य का संयोग मिलता है।
उदाहरण :
प्रतीकात्मक भाषा : डॉ. प्रशांत के इस वाक्य को देखिए- "मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। आँसू से भीगी हुई धरती पर प्यार के पौधे लहलहाएँगे।"
बिंब प्रयोग: "गणेश की नानी बुढापे में भी जिसकी सुंदरता नष्ट नहीं हुई, जिसके चेहरे की झुर्रियों ने एक नई खूबसूरती ला दी है। सिर के सफेद बालों के घुँघराले लट। होठों की लाली ज्यों की त्यों है।"

कुल मिलाकर रेणु ने मैला आंचल में भाषा शिल्प में सृजनात्मकता का परिचय दिया है।
उद्देश्य : मैला आंचल उपन्यास का उद्देश्य गाँव में बसी भारतमाता का एक अंचल विशेष के प्रति दुनिया के लोगों का ध्यान आकर्षित करना है। भारत माता का यह मैला आंचल है, इसलिए इसमें राष्ट्रीय भावना भी प्रबल रूप से प्रकाशित है। इन पंक्तियों में रेणु का संदेश या उद्देश्य स्पष्तः अभिव्यक्त हुआ है- "मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। आँसू से भीगी हुई धरती पर प्यार के पौधे लहलहायेंगे। मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारतमाता के मैले आँचल तले! कम से कम एक ही गाँव के कुछ प्राणियों के मुरझाए ओठों पर मुस्कुराहट लौटा सकूँ, उनके हृदय में आशा और विश्वास को प्रतिष्ठित कर सकूँ।" अंचल जीवन की विशेषताओं को समग्रता में दिखाना भी लेखक का उद्देश्य रहा है। आजादी के संदर्भ में देश भर में चल रहे संघर्षों में मेरीगंज की भूमिका को दर्ज करना, अंचल में व्याप्त सामाजिक राजनीतिक, धार्मिक विद्रूपताओं का खुलासा करना, जाति के नाम पर हो रहे अत्याचार एवं दुराचारों का बखान करना, गाँव में आधुनिकता के नाम पर हो रहे बदलाव, बढ़ते यौन संबध, अंग्रेजी भाषा के प्रति बढ़ता मोह, आदि सभी को उजागर करना इस उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य रहा है।

7.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! अब तक के अध्ययन से आप समझ गए होंगे कि रेणु ने 'मैला आँचल' के माध्यम से हिंदी उपन्यास परंपरा को लोक जीवन तथा लोक परंपरा से जोड़ा है और लोक से

जुड़े शब्दों व भाषिक परंपरा को समृद्ध किया है। विचार एवं शिल्प की दृष्टि से यह उपन्यास एक विशिष्ट उपन्यास है। मैला आँचल के बाद स्वयं रेणु भी उसी प्रकार का एक दूसरा उपन्यास नहीं लिख पाए। कहने का तात्पर्य यह है कि मैला आँचल अपने-आप में एक ऐसा आंचलिक उपन्यास है, जिसका अनुकरण नहीं हो सकता। भले ही आंचलिक परंपरा में कई रचनाएँ आती हों। पिछडे हुए अंचल विशेष के माध्यम से दुनिया भर के लोगों का रेणु ने इस ओर ध्यानाकर्षित किया। सबसे बड़ी बात यह है कि उपन्यास के आरंभ में स्वयं रेणु ने ही कहा है कि यह मैला आँचल एक आंचलिक उपन्यास है।

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. फनीश्वरनाथ रेणु का उपन्यास 'मैला आँचल' हिंदी साहित्य में आंचलिकता के कारण विशेष रूप से समादृत है।
2. इस उपन्यास में लेखक ने अपने कथानचल के चहरे हो उसकी सुंदरता और कुरूपता दोनों को उभारते हुए अंकित किया है।
3. यह उपन्यास अपनी कथा-भूमि के भौगोलिक और प्राकृतीक परिवेश के साथ-साथ सामाजिक और राजनैतिक परिवेश का भी बहुआयामी चित्रण करता है।
4. इस उपन्यास में अंचल कथा और प्रेम कथा इस तरह आपस में गुंथी हुई है कि वे एक-दूसरा का अनिवार्य अंग प्रतीत होती है।
5. 'मैला आँचल' यों तो बिहार के एक पिछड़े अंचल पर केंद्रित है, लेकिन उसके माध्यम से स्वतंत्रता आंदोलन, युगीन भारतीय आंचलिक जीवन साकार हो उठाया है।

7.6 शब्द संपदा

1. आत्म-समर्पण = स्वयं को अर्पित करना
2. उपेक्षित = जिसकी उपेक्षा की जाय
3. कनुमुनाती = किसी की आहट पाकर कुछ हिलना-डलना, कराहना
4. धनाढ्य = धनवान
5. मिरगी = बीमारी जिससे दिमाग में असामान्य तरंगें पैदा होती हैं
6. मुठिया = एक एक मुट्ठी के रूप में
7. हिस्टीरिया = एक प्रकार की बीमारी है

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मैला आँचल में प्रमुख नारी पात्रों पर चर्चा कीजिए
2. भाषा-शिल्प की दृष्टि से मैला आंचल की प्रमुख विशेषताएँ रेखांकित कीजिए।
3. मैला आँचल की भाषा की सृजनात्मकता पर प्रकाश डालिए।
4. मैला आँचल की शिल्पगत विशेषताएँ बताइए।
5. मैला आँचल की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. डॉ प्रशांत कौन है? उसका पालन पोषण कहाँ और कैसे होता है?
2. डॉ प्रशांत के बचपन से संबंधित कहानियों को बताइए।
3. कमला क्यों बीमार पड़ती है?
4. बावनदास के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
5. मठों के नाम पर क्या चल रहा था?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'मैला आँचल' में लछमी कौन हैं? ( )

   अ) अनाथ आ) दासी इ) दोनों

2. 'मैला आँचल' में कालीचरण कौन हैं? ( )

   अ) नेक दिलवाला आ) कठोर दिलवाला इ) कोई नहीं

3. 'मैला आँचल' में पूर्णिया क्या है? ( )

   अ) नेपाल का गाँव आ) राजस्थान का गाँव इ) कोई नहीं

4. 'मैला आँचल' में विश्वनाथ प्रसाद कौन है? ( )

   अ) तहसीलदार आ) दुकानदार इ) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. मेरीगंज के बाहर के जंगल में ..... लोग बसे हुए हैं।
2. गाँव के पूरब में .....नदी बहती है।
3. होली, सतुआनी, सिखा आदि .....के नाम हैं।
4. डॉ प्रशांत का विवाह .....से होता है।
5. मैला आँचल में .....का आँचल मैला है।

III. सुमेल कीजिए -

1. बावनदास	(अ) विश्वनाथप्रसाद
2. बालदेव	(आ) अनिलकुमार
3. कालीचरण	(इ) राजनीति
4. कमला	(ई) सामान्यवर्ग का प्रतिनिधित्व
5. प्रशांत	(उ) क्रियाशील

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. मैला आंचल : फणीश्वरनाथ रेणु
2. हिंदी साहित्य - बीसवीं शताब्दी : आचार्य नंददुलारे वाजपेयी
3. हिंदी के आंचलिक उपन्यास : रामदरश मिश्र
4. आंचलिकता से आधुनिकता बोध : भगवती प्रसाद शुक्ल
5. हिंदी के आंचलिक उपन्यास : विद्याधर द्विवेदी

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 8 : मैला आँचल : चेतना और विमर्श

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ : मैला आँचल : चेतना और विमर्श
8.3.1 मैला आँचल : चेतना के स्तर पर
8.3.2 मैला आँचल : विमर्श के स्तर पर
8.4 पाठ सार
8.5 पाठ की उपलब्धियाँ
8.6 कठिन शब्द
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

रेणु की आंचलिक औपन्यासिक कला को उनकी युगीन पृष्ठभूमि में ही भलीभाँति समझा जा सकता है। 'मैला आँचल' उनके द्वारा लिखित महत्वपूर्ण आंचलिक उपन्यास है। इस इकाई में आप चेतना एवं विमर्श की दृष्टि से इस उपन्यास का अध्ययन करेंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'मैला आँचल' उपन्यास में व्याप्त चेतना की जानकारी विस्तार से प्राप्त कर सकेंगे।
- 'मैला आँचल' उपन्यास में चर्चित विमर्शों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : मैला आँचल : चेतना और विमर्श

8.3.1 मैला आँचल : चेतना के स्तर पर

फणीश्वरनाथ रेणु के साहित्य में चेतना के विभिन्न आयामों को देखा जा सकता है। सर्वेश्वर के अनुसार, रेणु "यदि एक ओर समर्पित तो दूसरी ओर विद्रोही। वे संकल्प सिद्ध व्यक्ति थे, जो तय करते उसे कर गुजरते। साहित्य, जीवन एवं समाज की अनेक रूढ़ियों को उन्होंने तोड़ा था, बिना रूढ़ि भंजक का मुखौटा लगाए हुए। वे साहित्यकार की निजी जिंदगी और व्यापक जीवन को जोड़ने वाले सेतु थे। साधारण मजदूर, किसान, रिक्शेवालों, कहार, धोबियों से रस लेकर बतियाते हुए देखने वाला यह यकीन नहीं कर सकता था कि यही आदमी अभी-अभी कॉफी हाउस में संभ्रात बुद्धिजीवियों के बीच एक लेखक की हैसियत से बोल रहा था।" रेणु का मानना यहाँ रहा कि समाज से अलग रचना और रचनाकार का कोई अस्तित्व नहीं है। वे रचनाकार से आशा करते रहें कि सामाजिक परिवर्तन में अपनी-अपनी भूमिका निश्चित करें। उन्होंने पाठक को अपनी रचनाओं के माध्यम से चेताया। 'मैला आँचल' में आंचलिकता के उन्होंने समाज में व्याप्त तमाम विसंगतियों का परदाफाश किया है। अध्ययन की दृष्टि से चेतना को

विभिन्न आयामों में बाँटा जा रहा है। आगे हम 'मैला आँचल' में का अध्ययन इन्हीं आयामों पर करेंगे।

सामाजिक चेतना

'मैला आँचल' में पूर्णिया जिले के मेरीगंज, उसकी मैली जिंदगी, पिछड़ेपन और बदलते मूल्यों की छटपटाहट का सजीव चित्रण रेणु ने किया है। पूर्णिया बिहार राज्य का एक जिला है। इसके एक ओर नेपाल, दूसरी ओर पाकिस्तान और तीसरी ओर पश्चिम बंगाल है। मेरीगंज जो रौतहट स्टेशन से सात कोस पूर्व दिशा में है इसका पुराना नाम था नवाबी ताड़बन्ना। बहुत साल पहले अंग्रेज मि. डब्लू. जी. आर्टिन ने यहाँ पर कोठी, सड़क और पोस्ट ऑफिस आदि बनवाकर अपनी नव विवाहिता पत्नी मेरी के नाम पर इसका नामकरण किया था। तब से इसका नाम मेरीगंज हो गया। आंचलिक उपन्यास होने के कारण से 'मैला आँचल' में वर्णित समस्याएँ विपुल हैं। रेणु के अनुसार, "मेरीगंज गाँव में मुश्किल से दस घर पढ़े-लिखे हैं अर्थात दस्तखत करने वाले। नए पढ़ने वालों की संख्या पंद्रह है मुश्किल से।" अशिक्षा के कारण धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वासों का पर्याप्त अंकन प्रस्तुत उपन्यास में देखने को मिलता है। जोतखी जी की मान्यता है कि डॉक्टर देह में सुई लगाकर शरीर को कमजोर बनाता है, कुएं में दवा डालकर हैजा आदि रोग फैलाया जाता है। इसी प्रकार स्त्रियाँ भले ही मर जाएँगी लेकिन डॉक्टर को अपना शरीर, पेट दिखाना खराब मानती है।

'मैला आँचल' में मुख्य रूप से ग्राम्य समाज का यथार्थ अंकन अत्यंत आत्मीयता के साथ किया गया है। इस गाँव में मठाधीश, राजनीतिज्ञ, जमींदार और कृषक हैं। इसी कारण से यहाँ जातिगत, वर्णगत विविधता के मुखर रूप को भी देखा जा सकता है। भारतीय समाज में जाति प्रथा का जो विष युगों से फैला हुआ है उसने सामाजिक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त कर दिया है। 'मैला आँचल' के मेरीगंज का वर्णन करते हुए रेणु ने लिखा है कि, "गाँव विभिन्न जातियों में बँटा हुआ है। सभी जाति वाले दूसरी जाति वालों से घृणा करते हैं। डॉ. प्रशांत को भी नाम बताने के बाद जाति बताने को विवश किया जाता है। जाति बहुत बड़ी चीज है।"

'मैला आँचल' में यह भी दर्शाया है कि मेरीगंज की स्त्रियों की दशा शोचनीय है। "इस समाज में नारी चमड़े का पोर्टफोलियो बैग है जब चाहा खोला, बंद किया।" परंतु रेणु ने अपने नारी पात्रों को अपने अधिकारों के लिए सचेत होकर संघर्ष करते हुए भी दिखाया है। लक्ष्मी ऐसी ही एक पात्र है भले ही वह दासी की हैसियत से मठ में रहती है लेकिन वह अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति सजग है। स्त्री और पुरुष दोनों समाज के दो महत्वपूर्ण अंग हैं। ग्रामीण जीवन हो या शहरी जीवन, स्त्री पुरुष के बीच का आकर्षण स्वाभाविक प्रक्रिया है। पढ़ा-लिखा आदमी अपनी कामुक भावनाओं को नियंत्रित रूप में व्यक्त करता है जबकि अशिक्षित व्यक्ति महंत रामदास की तरह लार टपकाता हुआ अबोध बालिका को भी अपनी हवस का शिकार बना सकता है। रेणु ने 'मैला आँचल' उपन्यास में इस बात को स्पष्ट किया है कि "सेक्स के स्तर पर हर आदमी बराबर होता है।" यह भी सामाजिक जीवन का अंग है। जीवन की उसी आदिम भूख का रेणु ने खुलकर वर्णन किया है। डॉ. प्रशांत कहता है, "एक स्वस्थ आदमी को यदि शारीरिक भूख न लगे तो निश्चय ही वह बीमार है या एबनॉरमल - यही मानना चाहिए। यहाँ

इस बात को ध्यान में रखना है कि स्त्री पुरुष का अनैतिक संबंध किसी भी समाज के लिए घातक है। रेणु ने अनैतिक संबंधों की चर्चा तो की है लेकिन उसे स्वीकार नहीं किया है।

बोध प्रश्न

- 'मैला आँचल' में मनुष्य की किस आदिम भूख का वर्णन मिलता है?

राजनीतिक चेतना

रेणु हिंदी के उन साहित्यकारों में से एक है जिनको केवल साहित्यकार कहना गलत ही होगा। रेणु केवल एक कलाकार नहीं थे बल्कि एक जीवन दर्शन, विचारधारा, एक परम्परा थे। जब हम रेणु की रचनाओं में राजनीतिक चेतना की बात करते हैं है तब हमें यह ध्यान में रखना होगा कि रेणु ने राजनीति के बारे में भी बातें यूँ ही हवा में नहीं की। उन्हें राजनीति का न केवल ज्ञान था बल्कि उन्होंने राजनीतिक आंदोलनों में बढ़ चढ़कर हिस्सा भी लिया था। रेणु के सक्रिय राजनीतिक जीवन का प्रारंभ 1939 के आस-पास बनारस से ही प्रारंभ हुआ था। वे किसी विशेष दल से तो संबद्ध नहीं थे, लेकिन अनेक सभाओं और समितियों से वे जुड़े रहें। 1941 के गांधी जी के सत्याग्रह आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेकर गिरफ्तार भी हुए। आचार्य नरेंद्रदेव, राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायण जैसे समाजवादी चिंतकों के संपर्क में आने से वे समाजवादी विचारधारा की ओर भी प्रवृत्त हुए। उन्होंने छद्म नामों से लिखना भी शुरू किया। यह उनकी राजनीतिक सक्रियता का ही परिणाम है कि उन्होंने देश के तत्कालीन राजनीतिक-सामाजिक परिवर्तनों का अपने साहित्य में यथार्थ चित्रण किया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब उन्होंने देखा कि तस्कर, चोर, महाजन, पूँजीपति, दलाल आदि सब रातों-रात कांग्रेसी बनकर देश के भाग्यविधाता बन बैठे हैं तब उनका राजनीति से मोहभंग भी हुआ। उन्होंने इस मोहभंग को अपनी रचनाओं का विषय बना। 'मैला आँचल' राजनीतिक चेतना से परिपूर्ण उनकी कालजयी उपन्यास है। मुख्यतः 'मैला आँचल' कांग्रेसी आंदोलन पर रचित उपन्यास है जिसमें सन् 1942-48 की राजनीति का जीवंत चित्र देखने को मिलता है। विशेषता यह है कि कांग्रेसी आंदोलन को संपूर्ण देश के माध्यम से इस प्रकार दिखाया गया है कि वह एक सामाजिक यथार्थ की सी तीव्रता लिए हुए लगता है। जनसेवक बालदेव और कट्टर गांधी भक्त बावन दास के माध्यम से लेखक ने अनेक राजनीतिक परिदृश्यों को सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। राजनीतिक मतवादों और वर्गगत संघर्ष के प्रस्तुतीकरण में उपन्यासकार ने बड़े भारी आत्मसंयम से काम लिया है। उन्होंने किसी भी विचारधारा को या अपनी किसी विचार को उपन्यास में हावी नहीं होने दिया है। यह रेणु की राजनीतिक चित्रण करने की अपनी अलग विशेषता है। 'मैला आँचल' में स्थान-स्थान पर राजनीतिक चेतना से संबंधित विभिन्न दृश्यों को देखा जा सकता है -

"तभी कमल ने रेडियो पर महात्मा गांधी की हत्या का समाचार सुनकर सबको बताया। गांधी जी की हत्या के समाचार से बहुत से लोग बेहोश हो जाते हैं और बहुत से खिन्न हुए। बावनदास मेरीगंज जाते हैं। बालदेव उन से रामकृष्ण आश्रम का समाचार पूछते हैं तो वे सभी जातियों के आपस में लड़ने और आश्रम के अधिकारियों के पतित होने की बात कहते हैं।"

एक और दृश्य देखिए - "बावनदास मन में कुछ निश्चय करके कलीमुद्दीनपुर की ओर जा रहे हैं। यह पाकिस्तानी सीमा का अंतिम भारतीय गाँव हैं। यहाँ से पाकिस्तान को कपड़ा, चीनी और सिमेन्ट की तस्करी होती है। करहा के दुलारचंद्र कासरा की पचास गरियाँ तस्करी का माल लेकर आती हैं। सप्लाई इन्स्पेक्टर, थाने का दारोगा और नाके का सूबेदार मिलकर माल पार कराते हैं। बावनदास गाड़ियाँ आगे नहीं बढ़ने देता। वह गांधी जी के श्राद्ध के पवित्र दिन यह देशद्रोह नहीं होने देगा। कासरा के संकेत पर गाड़ियाँ बावनदास के शरीर को कुचलती हुई आगे बढ़ जाती हैं। बावनदास की कुचली हुई लाश पाकिस्तान की सीमा में फेंक दी जाती है और उनकी झोली पेड़ पर लटका दी जाती है।"

"विश्वनाथ प्रसाद मेरीगंज के एक धनी जमींदार बन जाते हैं। वे ट्रैक्टर खरीद लेते हैं और गांधी जी का स्मारक बनाने के लिए गाँववालों से धन एकत्र करते हैं। अन्न के अभाव से सताये हुए ग्रामवासी चंदा न देकर पूछते हैं कि गांधी जी का श्राद्ध तो हो गया अब चंदा का क्या होगा?"

राजनैतिक गंदगी ने किस प्रकार से शस्य श्यामला भारत की धरती का शोषण किया है? किस प्रकार से इस शोषण के कारण से गाँव के गाँव उजड़ गए इन सबका चित्रण 'मैला आँचल' में लेखक ने दर्शाया है। रेणु फिर भी आशावादी साहित्यकार थे तभी तो, अपनी सहपाठिन ममता की प्रेरणा पाकर और कमला तथा उसके पुत्र के आकर्षण की शक्ति पाकर डॉ. प्रशांत अपनी खोज में जुटने का संकल्प करता हुआ कहता है - "ममता मैं फिर काम शुरू करूँगा, यहीं इस गाँव में। मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ, मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारत माता के मैले आँचल के तले।"

बोध प्रश्न

- रेणु जी किन राजनैतिक विभूतियों से प्रभावित थे?
- कट्टर गांधी भक्त के रूप में किस पात्र का वर्णन किया गए है?
- डॉ. प्रशांत क्या संकल्प लेते हैं?

धार्मिक चेतना

गाँव में स्थित मठ। एक ओर यहाँ साहेब की पूजा, भक्ति-भाव, निर्गुणवाणी, बीजक पाठ और भंडारा-आयोजन जैसे धार्मिक कार्यकलाप होते रहते हैं। किंतु यह सब केवल दिखावा है। वास्तव में अंधे महंत, उनका शिष्य और उत्तराधिकारी रामदास, नागा बाबा, लरसिंघ और लक्ष्मी तक विषय-भोग में व्यस्त रहते हैं। गांजे की चिलम हर समय सुलगती है और भोगविलास की पराकाष्ठा रामपियरिया के आगमन पर हो जाती है। गाँव में भी धार्मिक स्थिति का अंकन पर्याप्त रूप से दृष्टिगोचर होता है। ज्योतिषी की भविष्यवाणियाँ, भंडारे में जाति-पांति का प्रश्न और गनेसी की माई को चुड़ैल मानने जैसे अंधविश्वास आदि इसी के परिचायक हैं। साथ ही साथ श्राद्ध भोज, ब्राह्मण को दक्षिणा देकर हुक्का पानी खुलवाना, ब्रह्मभोज आदि के विविध उल्लेख ग्राम के तत्कालीन धार्मिक वातावरण को प्रकट करते हैं।

बोध प्रश्न

- 'मैला आँचल' में किन धार्मिक अंधविश्वासों का चित्रण है?

आर्थिक चेतना

'मैला आँचल' उपन्यास में आर्थिक चेतना को विशेष स्थान मिला है। आर्थिक दृष्टि से गाँव में जात दो ही हैं, एक गरीब और दूसरी अमीर। जमीन के मालिकों ने धरती पर इनका (जन-साधरण का) किसी भी किस्म का हक नहीं जमने दिया है। जिस जमीन पर उनके झोंपड़े हैं, वह भी उनकी नहीं। इसी से कुछ गिने चुने को छोड़कर सारे गाँव में निर्धनता का राज्य है। कपड़ा हो या धान सभी का अभाव है। इसी से कपड़ा, तेल, चीनी आदि सभी के लिए गाँव में इतना हाहाकार मचता है की बालदेव तक घबरा जाता है। पुरुष तो क्या बालिका, युवतियाँ और बुढ़ियाँ तक कमर में एक कपड़ा लपेटकर काम चलाती हैं। कालीचरन जैसे समाजवादी अवश्य 'जो जोते सो काटे' जैसे नारे लगते है परंतु संथाल विद्रोह पर वे भी जमींदारों का साथ देते हैं। डॉ. प्रशांत एक मानसिक सहानुभूति और काव्यात्मक भावुकता तक सीमित रह जाता है। उसकी आँखें इन्सान के उन टिकोलों पर लड़ती हैं जिन्हें आमों की गुठलियों, सूखे गूदे की रोटी पर जिंदा रहना है। डॉक्टर यहाँ की गरीबी और बेबसी को देखकर आश्चर्यचकित होता है। ओढ़ने को वस्त्र नहीं; सोने को चटाई नहीं, पुआल नहीं। देह में कड़वा तेल लगाना भी भोगविलास में नगण्य है। बेजमीन आदमी नहीं, वह तो जानवर है। गरीबी और जहालत इस रोग के दो कीटाणु हैं। ऐसे सच्चे यथार्थपरक चित्र न जाने कितनी संख्या में उपन्यास में स्थान-स्थान पर भरे पड़े हैं जो इसके आँचल के मैलेपन को स्पष्ट कर देते हैं और पाठक रोकर कर रह जाता है।

बोध प्रश्न

- 'जो जोते सो काटे' - का नारा कौन लगाता है?
- प्रशांत की निगाह में मलेरिया रोग के दो किटाणु कौन से हैं?

सांस्कृतिक चेतना

'मैला आँचल' में उपन्यासकार ने अंचल विशेष के देशकाल का विविध साधनों से विस्तृत, सूक्ष्म और प्रभावशाली चित्रण किया है। यह चित्रण यथार्थ तो है ही, रोचक, उत्सुकतावर्द्धक और संतुलित भी है। जिस समाज, जाति के पास सांस्कृतिक चेतना नहीं रहती वह मृतप्राय होती है। 'रेणु' को इस बात का ज्ञान था तभी तो 'मैला आँचल' उपन्यास के सांस्कृतिक वातावरण में रहन-सहन, वेशभूषा, लोक-साहित्य, गीत, नृत्य, उत्सव आदि का विस्तृत वर्णन न केवल देखने को मिला है बल्कि ग्रामीणों के द्वारा अपनी बोलीबानी को हरसंभव सुरक्षा प्रदान करते हुए भी दिखाया गया है। मिथिला क्षेत्र की लोक संस्कृति में होली के समय जोगिया व भउजिया गान बहु प्रचलित है। इन लोकगीतों व अन्य लोक परंपराओं का चित्रण उपन्यास में अनेक स्थलों पर हुआ है। गाड़ीवान भउजिया गाते चलते हैं- 'चढ़ली जवानी मोश संग कड़के से/ कब होइहैं गवना हमार रे भउजिया'!

गाँव में 'जाट-जटिन' का खेल भी कहा जाता है। वर्षा के भी अनेक गीत मेरीगंज में प्रचलित हैं और रेणु ने साल भर का कोई ऐसा विशिष्ट अवसर नहीं छोड़ा है, जिसका लोकगीतों से रंगा चित्रण उन्होंने 'मैला आँचल' में न किया हो। केवल पारंपरिक त्योहार या लोकगीत ही नहीं, राजनीतिक या सामाजिक घटनाओं के सांस्कृतिक रूपों को भी उन्होंने अनोखे रूप से चित्रित किया है। भगत सिंह ने असेंबली में बम फेंका और मिथिला अंचल का गाँव झूम उठा -

'बम फोड़ दिया फटाक से मस्ताना भगत सिंह।' भगत सिंह पर तो स्वाधीनता दिवस पर नाटक भी तैयार किया जाता है लेकिन सूरज के बाद हिंदू-मुस्लिम दंगे शुरू हो जाते हैं और बालदेव को 15-20 बरस पुराना स्वतंत्रता संग्राम का इस अंचल में प्रचलित सांप्रदायिक सद्भाव का गीत याद आता है-

'अरे चमके मंदिरवा में चांद
मस्जिदवा में बंसी बजे
मिली रहू हिंदू-मुसलमान
मान-अपमान तजो'।

और जवाहरलाल नेहरू का वर्णन -

'भारत का डंका लंका में
बजवाया वीर जमाहिर ने'।

'रेणु' के मिथिला अंचल की लोक संस्कृति के इस संवेदनशील चित्रण के कारण ही नेमिचंद्र जैन ने कहा, 'भारतीय देहात के मर्म का इतना सरस और भावप्रवण प्रस्तुतीकरण हिंदी में संभवतः पहले कभी नहीं हुआ था।'

बोध प्रश्न

- होली के समय मिथिला क्षेत्र में कौन से गान बहुप्रचलित हैं?
- 'मैला आँचल' के बारे में नेमिचंद्र जैन ने क्या कहा है?

8.3.2 मैला आँचल : विमर्श के स्तर पर

स्त्री विमर्श

'मैला आँचल' में स्त्री जीवन के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। रेणु स्त्री जीवन की समस्याओं को लेकर हमेशा ही सचेत रहे हैं। 'मैला आँचल' के नारी पात्रों में विशेष रूप से मठ की कोठारिन दासी लछमी और तहसीलदार की पुत्री कमला अधिक उल्लेखनीय हैं। लछमी के माता-पिता का देहांत उसके बचपन में ही हो जाता है सेवादास उसको मठ की दासी बनाने के साथ-साथ उसके कुकर्म करता है। लछमी सयानी होने पर इस पाप-कर्म का प्रतिरोध करती है। महंत सेवादास की मृत्यु के बाद अनेक झमेलों को पार करते हुए बालदेव का संरक्षण प्राप्त करती है। दूसरी नारी पात्र कमला भी हतभागिनी किशोरी है क्योंकि जहाँ भी उसके विवाह की बात चलाई जाती है, वर पक्ष में कुछ ऐसा हो जाता है कि उसकी सगाई ही टूट जाती है। अंत में लोग उसको मनहूस ही मानने लगते है। इस अपमान का असर उसके स्वास्थ्य पर भी पड़ता है और उसको मिर्गी के दौरे पड़ने लगते हैं। डॉ. प्रशांत के संपर्क में आने से उसके जीवन में नवीन परिवर्तन आता है। यह परिवर्तन उसे कुआँरी माँ भी बनाता है लेकिन अंत में प्रशांत उसके साथ विवाह कर लेते हैं जिस कारण उसका जीवन सुखमय बनता है। 'मैला आँचल' में फुलिया, रमपियरिया आदि स्त्री पात्र भी हैं। जो निम्न श्रेणी की है जिनको पग-पग पर यौन शोषण का सामना करना पड़ता है। पर यहाँ 'रेणु' ने दलित 'महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक और यौन मामलों में अधिक स्वतंत्र है। फुलिया अपना सहवास संबंध सहदेव मिसिर, खलासी जी या पैटसन के साथ रखती है, बिना किसी कुंठा या अपराध-बोध के। नए महंत की दासी बनने के

लिए रामपियरिया पंचायत को अंगूठा दिखाती है। वहीं जमींदार की बेटी बिना ब्याही गर्भधारण करने के कारण से गाँव भर में बदनाम हो जाती है। डॉ. रेणु शाह के अनुसार, '1955 से लेकर 1975 तक यानी 20 वर्षों के बीच में भारत में जो नारी चेतना विकसित हुई उसका जो सुपरिणाम सामने आया है उसे रेणु ने निर्ममतापूर्वक आंका है। इनके उपन्यासों में नारी चेतना के विकास का वास्तविक इतिहास उभरकर सामने आया है'।

बोध प्रश्न

- लोग कमला को मनहूस क्यों मानने लगते हैं?
- लछमी सयानी होने पर क्या करती है?
- डॉ. रेणु शाह ने 'मैला आँचल' की नारी चेतना के बारे में क्या कहा है?

आदिवासी विमर्श

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तरोत्तर आधुनिकता की बढ़ती चकाचौंध ने हमारी लोक संवेदनाओं को कुंठित कर दिया है। इसी कारण से आदिवासी समाज भी प्रकृती की गोद में छुप गए। विडंबना यह रही कि स्वतंत्रता के बाद भी किसी न किसी बहाने आदिवासियों की भूमि को हथियाने का प्रयास सरकारों ने भी किया साथ ही जमींदारों और पूँजीपतियों ने भी। 'रेणु' ने 'मैला आँचल' उपन्यास में आदिवासियों के जीवन के विभिन्न रूपों को दर्शाया है। 'मैला आँचल' आदिवासी जीवन का जीता जागता दस्तावेज है। 'रेणु' ने 'मैला आँचल' उपन्यास के द्वारा सबसे पहले संथालों को हिन्दी साहित्य के साथ जोड़ा। 'रेणु' जी ने इस उपन्यास के माध्यम से दर्शाया है कि हमारे देश में आदिवासी को बाहर का आदमी समझा जाता है। लोग उन्हें हे दृष्टि से देखते हैं। उन्हें समाज से परे कर देते हैं। गाँव के लोग उनकी जमीन पर कब्जा कर लेते हैं। गनेरी चिल्लाता है, 'चलो,चलो, मारो। .... साला संथाल! बाहरी आदमी.... जान जाए तो जाए। तहसीलदार विश्वनाथ की ही जमीन पर धावा किया है.... चलो रे'। बात सिर्फ इतनी सी नहीं है समस्या इनकी भाषा, आर्थिक पिछड़ेपन, स्वास्थ्य आदि को लेकर भी है। जिस प्रकार से भी हो इन्हें रोका जा सकता है , रोका जाता रहा है। डॉ. प्रशांत ममता को लिखता है, 'तुम जो भाषा बोलती हो उसे ये समझ नहीं सकते। तुम इनकी भाषा नहीं समझ सकती। तुम जो कहती हो ये नहीं कहा सकते। तुम जो पहनती हो, ये पहन नहीं सकते। तुम जैसे सोती, बैठती हो, हँसती हो, बोलती हो ये कुछ भी नहीं कर सकते। फिर तुम इन्हें आदमी कैसे कह सकती हो। यहाँ इंसान हैं कहाँ? अभी पहली काम है जानवर को इंसान बनाना। उसने भयातुर इंसानों की आँखों को देखा है, बीमार और निराश लोगों की भाषा को समझने की कोशिश की है। रोगियों को देखकर उठते समय, छीके पर टंगी हुई खाली मिट्टी की हांडियों से उसका सिर टकराया, सात महीने के बच्चे को बथुआ और पाट के साग पर पलते देखा है'। यह कैसी आज़ादी जिसमें समाज के एक वर्ग को इंसान ही न समझा गया। उपन्यास लेखक ने बिना किसी नाटकीयता के गैर आदिवासियों की आदिवासियों के प्रति अमानवीय क्रूरता का वर्णन इस प्रकार से किया है, 'एक दम 'फिरी' आजादी, जो जी आवे करो! बूढ़ी, जवान, बच्ची जो मिले। आजादी है। पाट का खेत है। कोई प्रवाह नहीं। .... फाँसी हो या कालापानी, छोड़ो मत'। सब तरफ से मातम फैला हुआ है। संथालिनें भी दर्द से छटपटाती हैं। चिल्लाती हैं। इतना कुछ इसी कारण से हो पाता है क्योंकि

पुलिस, नेता आदि सब भ्रष्टाचार में लिप्त हैं। किसी भी प्रकार से इन धरती पुत्र संथालों के जमीन को हड़प लेना इनका लक्ष्य है। पर ये भी कष्ट सहते-सहते मजबूत हो गए हैं। प्रशांत उन संथाली युवतियों से प्रभावित होता है जिन्होंने चीते को मार डाला था और घावों पर तेज दवा लगने से जो हँसती रही थी।

आधुनिकता के इस युग में आदिम निवासियों को भी उनका अधिकार मिले यही 'रेणु' के 'मैला आँचल' में वर्णित आदिवासी विमर्श का मूल स्वर रहा।

बोध प्रश्न

- 'मैला आँचल' में किस आदिवासी समुदाय के संघर्ष का चित्रण मिलता है?

पर्यावरण विमर्श

आंचलिक उपन्यास में मुख्य उद्देश्य आँचल या उसकी चेतना को उजागर करना रहता है। आंचलिक उपन्यासों में भले ही अनेक पात्र होते हैं परंतु अंचल ही इसमें मुख्य नायक होता है साथ ही जैसे-जैसे कथा आगे बढ़ती है की समस्याएं सम्पूर्ण देश और फिर विश्व की समस्या बन जाती है। मलेरिया, काला आजार आदि भले ही 'मेरीगंज' की समस्या थी लेकिन ध्यान में रखना होगा कि ये सम्पूर्ण भारत की भी समस्या थी। पर्यावरण विमर्श को लेकर अब बहुत बातें हो रही है 'मैला आँचल' में 'रेणु' जी ने बहुत समय पहले अंचल विशेष के देशकाल का विविध साधनों से विस्तृत, सूक्ष्म और प्रभावशाली चित्रण किया है। ग्राम्य जीवन का इतना विशद वर्णन हिन्दी में प्रेमचंद के पश्चात रेणु ही कर सके हैं और यह उनकी सबसे बड़ी विशेषता रही है।

बोध प्रश्न

- पर्यावरण की दृष्टि से 'मैला आँचल' में किन रोगों का उल्लेख मिलता है?

8.4 पाठ सार

रेणु का मानना रहा कि समाज से अलग रचना और रचनाकार का कोई अलग अस्तित्व नहीं है। वे रचनाकार से आशा करते रहें कि वे सामाजिक परिवर्तन में अपनी भूमिका निश्चित करें। रेणु की सभी रचनाओं में चेतना के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। 'मैला आँचल' भी ऐसा ही एक उपन्यास है जिसमें आंचलिकता के बहाने चित्रित चेतना के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। 'मैला आँचल' में पूर्णिया जिले के मेरीगंज, उसकी मैली जिंदगी, पिछड़ेपन और बदलते मूल्यों की छटपटाहट का सजीव चित्रण रेणु ने किया है। पूर्णिया बिहार राज्य का एक जिला है। इसके एक ओर नेपाल, दूसरी ओर पाकिस्तान और तीसरी ओर पश्चिम बंगाल है। मेरीगंज जो रौतहट स्टेशन से सात कोस पूर्व दिशा में है इसका पुराना नाम था "नवाबी ताड़बला"। बहुत साल पहले अंग्रेज मि. डब्लू. जी. आर्टिन ने यहाँ पर कोठी, सड़क और पोस्ट ऑफिस आदि बनवाकर अपनी नव विवाहिता पत्नी "मेरी" के नाम पर इसका नामकरण किया। तब से इसका नाम मेरीगंज हो गया। आंचलिक उपन्यास होने के कारण से 'मैला आँचल' में वर्णित समस्याएं विपुल है। रेणु के अनुसार, "मेरीगंज गाँव में मुश्किल से दस घर पढ़े-लिखे है अर्थात दस्तखत करने वाले। नए पढ़ने वालों की संख्या पंद्रह है मुश्किल से"। अशिक्षा के कारण

धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वासों का पर्याप्त अंकन प्रस्तुत उपन्यास में देखने को मिलता है। यह 'मैला आँचल' उपन्यास में व्याप्त सामाजिक चेतना को दर्शाता है।

रेणु हिंदी के उन साहित्यकारों में से एक है जिनको केवल साहित्यकार कहना गलत ही होगा। रेणु केवल एक कलाकार नहीं थे बल्कि एक जीवन दर्शन, विचारधारा, एक परम्परा थे। जब हम रेणु की रचनाओं में राजनीतिक चेतना की बात करते है तब हमें यह ध्यान में रखना होगा कि रेणु ने राजनीति के बारे में भी बातें यूँ ही हवा में नहीं की। उन्हें राजनीति का न केवल ग था बल्कि उन्होंने राजनीतिक आंदोलनों में बढ़ चढ़कर हिस्सा भी लिया था। रेणु के सक्रिय राजनीतिक जीवन का प्रारंभ 1939 के आस-पास बनारस से ही प्रारंभ हुआ था। वे किसी विशेष दल से तो सम्बद्ध नहीं थे लेकिन अनेक सभाओं समितियों से वे जुड़े रहें। 1941 के गांधी जी के सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया और वे गिरफ्तार भी हुए। 'मैला आँचल' में स्थान-स्थान पर राजनीतिक चेतना से संबंधित विभिन्न दृश्यों को देखा जा सकता है। राजनैतिक गंदगी ने किस प्रकार से शस्य श्यामला भारत की धरती का शोषण किया है? किस प्रकार से इस शोषण के कारण से गाँव के गाँव उजड़ गए इन सबका चित्रण 'मैला आँचल' में लेखक ने दर्शाया है। रेणु फिर भी आशावादी साहित्यकार थे तभी तो, अपनी सहपाठिन ममता की प्रेरणा पाकर और कमला तथा उसके पुत्र के आकर्षण की शक्ति पाकर डॉ. प्रशांत अपनी खोज में जुटने का संकल्प करता हुआ कहता है - "ममता मैं फिर काम शुरू करूँगा, यहीं इस गाँव में। मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ, मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारत माता के मैले आँचल के तले"। प्रस्तुत उपन्यास में धार्मिक स्थिति का सर्वाधिक दिग्दर्शन करता है। गाँव में स्थित मठ। एक और यहाँ साहेब की पूजा, भक्ति-भाव, निर्गुणवाणी, बीजक पाठ और भंडारा-आयोजन जैसे धार्मिक कार्यकलाप होते रहते हैं। किन्तु यह सब केवल दिखावा है। वास्तव में अन्धे महन्त, उनका शिष्य और उत्तराधिकारी रामदास, नागा बाबा, लरसिंघ और लक्ष्मी तक विषय-भोग में व्यस्त रहते हैं। गांजे की चिलम हर समय सुलगती है और भोगविलास की पराकाष्ठा रामपियरिया के आगमन पर हो जाती है। गाँव में भी धार्मिक स्थिति का अंकन पर्याप्त रूप से दृष्टिगोचर होता है। 'मैला आँचल' उपन्यास में आर्थिक चेतना को विशेष स्थान मिला है। आर्थिक दृष्टि से गाँव में जात दो ही हैं, एक गरीब और दूसरी अमीर। जमीन के मालिकों ने धरती पर इनका (जन-साधरण का) किसी भी किस्म का हक नहीं जमने दिया है। जिस जमीन पर उनके झोंपड़े हैं, वह भी उनकी नहीं।'मैला आँचल' उपन्यास में आर्थिक चेतना को विशेष स्थान मिला है। आर्थिक दृष्टि से गाँव में जात दो ही हैं, एक गरीब और दूसरी अमीर। जमीन के मालिकों ने धरती पर इनका (जन-साधरण का) किसी भी किस्म का हक नहीं जमने दिया है। जिस जमीन पर उनके झोंपड़े हैं, वह भी उनकी नहीं। सच्चे यथार्थपरक चित्र न जाने कितनी संख्या में उपन्यास में स्थान-स्थान पर भरे पड़े हैं जो इसके आँचल के मैलेपन को स्पष्ट कर देते हैं और पाठक रोकर कर रह जाता है। 'मैला आँचल' में उपन्यासकार ने अंचल विशेष के देशकाल का विविध साधनों से विस्तृत, सूक्ष्म और प्रभावशाली चित्रण किया है। यह चित्रण यथार्थ तो है ही रोचक, उत्सुकतावर्द्धक और संतुलित भी है। जिस समाज, जाति के पास सांस्कृतिक चेतना नहीं रहती

वह मृतप्राय होती है। 'रेणु' को इस बात का ज्ञान था तभी तो 'मैला आँचल' उपन्यास के सांस्कृतिक वातावरण में रहन-सहन, वेशभूषा, लोक-साहित्य, गीत, नृत्य, उत्सव आदि का विस्तृत वर्णन न केवल देखने को मिला है बल्कि ग्रामीणों के द्वारा अपनी बोलीबानी को हरसंभव सुरक्षा प्रदान करते हुए भी दिखाया गया है।

गाँव में 'जाट-जटिन' का खेल भी कहा जाता है। वर्षा के भी अनेक गीत मेरीगंज में प्रचलित है और 'रेणु' ने साल भर का कोई ऐसा विशिष्ट अवसर नहीं छोड़ा है, जिसका लोकगीतों से रंगा चित्रण उन्होंने 'मैला आँचल' में न किया हो। केवल पारंपरिक त्योहार या लोकगीत ही नहीं, राजनीतिक या सामाजिक घटनाओं के सांस्कृतिक रूपों को भी उन्होने अनोखे रूप से चित्रित किया है।'रेणु' के मिथिला अंचल की लोक संस्कृति के इस संवेदनशील चित्रण के कारण ही नेमिचन्द्र जैन ने कहा, 'भारतीय देहात के मर्म का इतना सरस और भावप्रवण प्रस्तुतिकरण हिंदी में संभवतः पहले कभी नहीं हुआ था'।

हिंदी में 'विमर्श' शब्द का प्रयोग अंग्रेजी के 'DISCOURSE' शब्द के लिए किया जाता है। अपने इस बात को समझ कि 'मैला आँचल' विभिन्न प्रकार के विमर्शों का दस्तावेज है और इसी दस्तावेज के पन्नों को पलटते हुए आपने पढ़ा कि 'मैला आँचल' में स्त्री जीवन के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। 'रेणु' स्त्री जीवन की समस्याओं को लेकर हमेशा ही सचेत रहे हैं। 'मैला आँचल' के नारी पात्रों में विशेष रूप से मठ की कोठारिन दासी लछमी और तहसीलदार की पुत्री कमला अधिक उल्लेखनीय है। लछमी के माता-पिता का देहांत उसके बचपन में ही हो जाता है सेवादास उसको मठ की दासी बनाने के साथ-साथ उसके कुकर्म करता है। लछमी सयानी होने पर इस पाप-कर्म का प्रतिरोध करती है। महंत सेवादास की मृत्यु के बाद अनेक झमेलों को पार करते हुए बालदेव का संरक्षण प्राप्त करती है। दूसरी नारी पात्र कमला भी हतभागिनी किशोरी है क्योंकि जहाँ भी उसके विवाह की बात चलाई जाती है, वर पक्ष में कुछ ऐसा हो जाता है कि उसकी सगाई ही टूट जाती है। अंत में लोग उसको मनहूस ही मानने लगते है। इस अपमान का असर उसके स्वास्थ्य पर भी पड़ता है और उसको मिर्गी के दौरे पड़ने लगते हैं। डॉ. प्रशांत के संपर्क में आने से उसके जीवन में नवीन परिवर्तन आता है। यह परिवर्तन उसे कुआँरी माँ भी बनाता है लेकिन अंत में प्रशांत उसके साथ विवाह कर लेते हैं जिस कारण उसका जीवन सुखमय बनता है। 'मैला आँचल' में फुलिया, रमपियरिया आदि स्त्री पात्र भी हैं। जो निम्न श्रेणी की है जिनको पग-पग पर यौन शोषण का सामना करना पड़ता है। पर यहाँ 'रेणु' ने दलित 'महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक और यौन मामलों में अधिक स्वतंत्र है। डॉ. रेणु शाह के अनुसार, '1955 से लेकर 1975 तक यानी 20 वर्षों के बीच में भारत में जो नारी चेतना विकसित हुई उसका जो सुपरिणाम सामने आया है उसे रेणु ने निर्ममतापूर्वक आंका है। इनके उपन्यासों में नारी चेतना के विकास का वास्तविक इतिहास उभरकर सामने आया है'। - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तरोत्तर आधुनिकता की बढ़ती चकाचौंध ने हमारी लोक संवेदनाओं को कुंठित कर दिया है। इसी कारण से आदिवासी समाज भी प्रकृती की गोद में छुप गए। विडंबना यह रही कि स्वतंत्रता के बाद भी किसी न किसी बहाने आदिवासियों की भूमि को हथियाने का

प्रयास सरकारों ने भी किया साथ ही जमींदारों और पूँजीपतियों ने भी। 'रेणु' ने 'मैला आँचल' उपन्यास में आदिवासियों के जीवन के विभिन्न रूपों को दर्शाया है। 'मैला आँचल' आदिवासी जीवन का जीता जागता दस्तावेज है। 'रेणु' ने 'मैला आँचल' उपन्यास के द्वारा सबसे पहले संथालों को हिन्दी साहित्य के साथ जोड़ा। 'रेणु' जी ने इस उपन्यास के माध्यम से दर्शाया है कि हमारे देश में आदिवासी को बाहर का आदमी समझा जाता है। लोग उन्हें हे दृष्टि से देखते हैं। उन्हें समाज से परे कर देते हैं। गाँव के लोग उनकी जमीन पर कब्जा कर लेते हैं। यह कैसी आज़ादी जिसमें समाज के एक वर्ग को इंसान ही न समझा गया। उपन्यास लेखक ने बिना किसी नाटकीयता के गैर आदिवासियों की आदिवासियों के प्रति अमानवीय क्रूरता का वर्णन इस प्रकार से किया है। आधुनिकता के इस युग में आदिम निवासियों को भी उनका अधिकार मिले यही 'रेणु' के 'मैला आँचल' में वर्णित आदिवासी विमर्श का मूल स्वर रहा। आंचलिक उपन्यास में मुख्य उद्देश्य आँचल या उसकी चेतना को उजागर करना रहता है। आंचलिक उपन्यासों में भले ही अनेक पात्र होते हैं परंतु अंचल ही इसमें मुख्य नायक होता है साथ ही जैसे-जैसे कथा आगे बढ़ती है की समस्याएं सम्पूर्ण देश और फिर विश्व की समस्या बन जाती है। मलेरिया, काला आजार आदि भले ही 'मेरीगंज' की समस्या थी लेकिन ध्यान में रखना होगा कि ये सम्पूर्ण भारत की भी समस्या थी। पर्यावरण विमर्श को लेकर अब बहुत बातें हो रही है 'मैला आँचल' में 'रेणु' जी ने बहुत समय पहले अंचल विशेष के देशकाल का विविध साधनों से विस्तृत, सूक्ष्म और प्रभावशाली चित्रण किया है। ग्राम्य जीवन का इतना विशद वर्णन हिन्दी में प्रेमचंद के पश्चात रेणु ही कर सके हैं और यह उनकी सबसे बड़ी विशेषता रही है।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद अब आप -

1. 'मैला आँचल' में आंचलिकता के विविध आयामों को उभारने के माध्यम से फनीश्वरनाथ रेणु ने स्वातंत्र्यपूर्व भारतीय चेतना के विविध आयामों को उद्घाटित किया है।
2. 'मैला आँचल' की आंचलिक चेतना में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक चेतना अपने सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों के साथ शामिल हैं।
3. 'मैला आँचल' के प्रकाशन के समय हिंदी आलोचना में 'विमर्श' का चलन नहीं था। लेकिन इसे कई प्रकार के विमर्शों का पुरखा उपन्यास माना जा सकता है।
4. 'मैला आँचल' में विशेष रूप से स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श और पर्यावरण विमर्श की मुखर उपस्थिति फनीश्वरनाथ रेणु को एक क्रांतद्रष्टा आंचलिक उपन्यासकार के साथ-साथ विमर्शकार भी सिद्ध करती है।

8.6 शब्द संपदा

1. अंचल = क्षेत्र विशेष
2. भयातुर = डरा हुआ
3. भावप्रवण = भावना से परिपूर्ण
4. वैविध्यपूर्ण = विविधता से परिपूर्ण

5. सहपाठिन = साथ में पढ़ने वाली
6. सुपरिणाम = अच्छा परिणाम

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित सामाजिक चेतना पर प्रकाश डालिए।
2. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित राजनैतिक चेतना पर प्रकाश डालिए।
3. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित स्त्री विमर्श पर प्रकाश डालिए।
4. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित पर्यावरण विमर्श पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित धार्मिक चेतना पर प्रकाश डालिए।
2. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित आर्थिक चेतना पर प्रकाश डालिए।
3. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित सांस्कृतिक चेतना पर प्रकाश डालिए।
4. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित आदिवासी विमर्श पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'मैला आँचल' में किस जनजाति के संघर्ष का चित्रण है? ( )
   (अ) संथाल (आ) चेंचु (इ) बोड़ो (ई) खासी
2. 'मैला आँचल' में चुड़ैल होने का आरोप किसकी माँ पर लगाया जाता है? ( )
   (अ) गनेसी (आ) कमली (इ) लछमी (ई) फुलिया
3. 'मैला आँचल' उपन्यास में किस गाँव का वर्णन है? ( )
   (अ) जौनपुर (आ) बदलापूर (इ) मेरीगंज (ई) इनमें से कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'मैला आँचल' में ..... विद्रोह को दिखाया गया है।
2. मेरीगंज का पुराना नाम ..... था।
3. बावनदास की कुचली हुई लाश को ..... की सीमा पर फेंक दिया जाता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. लछमी	(अ) डॉ. प्रशांत
2. कमला	(आ) सहपाठीन
3. ममता	(इ) महंत रामदास
4. मठ	(ई) बालदेव

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. मैला आँचल : फनीश्वनाथ रेणु
2. फनीश्वरनाथ रेणु एवं उनका उपन्यास ‘मैला आँचल’ (आलोचना एवं व्याख्या) : अमित कुमार सिंह और अमिताभ शाक्य

इकाई 9 : चंद्रधर शर्मा गुलेरी : एक परिचय

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 मूल पाठ : चंद्रधर शर्मा गुलेरी : एक परिचय

9.3.1 जीवन और साहित्यिक परिचय

9.3.2 कहानीकार गुलेरी

9.3.3 निबंधकार गुलेरी

9.3.4 कवि और पत्र लेखक गुलेरी

9.3.5 शैलीकार गुलेरी

9.4 पाठ सार

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

9.6 शब्द संपदा

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अंतर्गत आप हिंदी के एक ऐसे साहित्यकार का परिचय प्राप्त करेंगे जिसने कहानीकार के रूप में केवल तीन कहानियाँ लिखकर ऐसी ख्याति प्राप्त की जैसी दूसरों ने तीन सौ कहानियाँ लिखकर की। कहानी और उपन्यास का उस समय उदय हो रहा था। नए सिरे से इनका विकास पश्चिमी संस्कृति के साथ हमारे संपर्क के कारण हो रहा था। गुलेरी जी ने मौलिक ढंग से इन सभी बातों पर विचार तो किया ही, अपने विचारों को व्यावहारिक रूप देने के लिए वे स्वयं भी कहानी-लेखन के क्षेत्र में उतरे। हिंदी कहानी के इतिहास में पंडित चंद्रधर शर्मा गुलेरी का नाम उनकी कहानी 'उसने कहा था' की वजह से अमर है। इस एक कहानी का तात्विक विश्लेषण तो आप दूसरी इकाई में देखेंगे, यहाँ इस विद्वान के जीवन, व्यक्तित्व और साहित्यिक कृतीत्व को देख लें। आप भी उनका एक व्यक्ति चित्र बना लें जिससे आपको अध्ययन में आसानी रहे। इसका भी ध्यान रहें कि गुलेरी जी ने अपने पूरे साहित्यिक जीवन में केवल एक कहानी ही नहीं लिखी थी। वे अपने समय के महारथी थे। दर्शन शास्त्र ज्ञाता, ज्योतिषविद, बहुभाषाविद, निबंधकार, कवि, कला समीक्षक, आलोचक, संस्मरण

लेखक, पत्रकार, अध्यापक के साथ अद्वितीय हिंदी प्रेमी गुलेरी जी ने अपने अल्प जीवन काल में बहुत कुछ किया। अब गुलेरी जी का संपूर्ण तो नहीं, अधिकांश कृतीत्व हमारे सामने है और हम यह जान सकते हैं कि जो लेखक एक कहानी के बल पर सौ से अधिक वर्षों से हिंदी पाठकों के दिल पर राज करता रहा है, वह कितना सामर्थ्यवान और विद्वान था। इस इकाई में लेखक के संपूर्ण व्यक्तित्व का परिचय आपको प्राप्त होगा।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के पाठ से आप हिंदी कथा साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर पंडित चंद्रधर शर्मा गुलेरी का परिचय प्राप्त करेंगे। आप -

- गुलेरी जी के व्यक्तिगत और साहित्यिक जीवन से परिचित हो सकेंगे।
- गुलेरी जी की रचना यात्रा के विविध पड़ावों से अवगत हो सकेंगे।
- गुलेरी जी के सर्जनात्मक लेखन की विविधता की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- उनके कथा लेखन के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान और महत्व को समझ सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : चंद्रधर शर्मा गुलेरी : एक परिचय

9.3.1 जीवन और साहित्यिक परिचय

पंडित चंद्रधर शर्मा गुलेरी का जन्म 7 जुलाई, 1883 को पुरानी बस्ती जयपुर में हुआ। उनके पिता महाराजा राम सिंह के राजपंडित शिवराम शर्मा हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा नामक स्थान के पास के एक गाँव 'गुलेर' के रहने वाले थे। इसलिए उनके नाम के साथ उनके गाँव का नाम 'गुलेरी' जुड़ा। इनकी जन्म कुंडली में कर्क राशि का स्वामी चंद्र था इसलिए इनके ज्योतिषी पिता ने इनका नाम चंद्रधर रख दिया। पूर्ण नाम हुआ - चंद्रधर शर्मा गुलेरी। घर में उन्हें संस्कृत, वेद, पुराण, पूजा पाठ, पंडिताई और धार्मिक कर्मकांड का वातावरण मिला। बाहर उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा भी प्राप्त की। कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम.ए. और प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. करने के बाद चाहते हुए भी वे आगे की पढ़ाई जारी न रख पाए। उनके स्वाध्याय और लेखन का क्रम अबाध रूप से चलता रहा। बीस वर्ष की उम्र के पहले ही उन्हें जयपुर की वेधशाला के जीर्णोद्धार तथा उससे संबंधित शोधकार्य के लिए गठित मंडल में चुन लिया गया था और कैप्टन गैरेट के साथ मिलकर उन्होंने 'द जयपुर ओब्ज़रवेटरी एंड इट्स बिल्डर्स' नामक अंग्रेजी ग्रंथ की रचना की।

पारिवारिक परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए और गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए अपने जीवन में आपने प्रचुर मात्रा में अध्ययन और लेखन किया। तमाम दबावों और बंधनों के बावजूद अपनी प्रबल इच्छा शक्ति के बल पर आपने स्वतंत्र मन से लेखन किया। संयुक्त परिवार के मुखिया के रूप में आपने किसी की शिक्षा, किसी की नौकरी, किसी का स्वास्थ्य सब का ख्याल

रखा। खुद अजमेर में रहते थे, परिवार जयपुर में रहता था और मूल स्थान गुलेर में भी उनके चचेरे भाई थे। आर्थिक स्थिति भी कोई सुविधाजनक न थी। इन सारी असुविधाओं को परे रखते हुए लगभग 18-19 वर्ष तक वे लगातार लेखन करते रहे। इससे स्पष्ट होता है कि उनके व्यक्तित्व में कुछ ऐसी विशेषताएँ और क्षमताएँ थीं, जिनके कारण वे अपनी परिस्थितियों पर काबू पाते हुए मौलिक ढंग से लिखते चले गए।

गुलेरी जी ने 1904 से 1922 तक अनेक महत्वपूर्ण संस्थाओं में अध्यापन कार्य किया। पंडित मदन मोहन मालवीय के आग्रह पर 11 जनवरी, 1922 को काशी हिंदू विश्वविद्यालय के प्राच्य विभाग के प्राचार्य बने। इस पद को संभालने से पहले गुलेरी जी ने 1904 से 1922 तक अजमेर के मेयो कॉलेज में अध्यापन किया और छात्रावास भी संभाला। दो-दो पदों पर काम करते हुए बचे हुए समय में आपने अनेक ग्रंथों का गंभीर अध्ययन किया। अनेक प्रसिद्ध पत्रिकाओं के लिए लेख, कहानियाँ लिखीं। पुरातत्व संबंधी खोजों पर मार्मिक टिप्पणियाँ लिखीं। 'समालोचक' और 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का संपादन किया। 'देवी प्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला' और 'सूर्यकुमारी पुस्तकमाला' के अंतर्गत कुछ पुस्तकें संपादित कीं।

संस्कृत, पाली, अपभ्रंश, ब्रज, अवधी, मराठी, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी, बांगला के साथ अंग्रेजी, लैटिन तथा फ्रेंच आदि भाषाओं में भी आप पारंगत थे। संस्कृत के तो महापंडित थे ही। प्राचीन इतिहास और पुरातत्व आपका प्रिय विषय था। यही नहीं आपकी भाषा विज्ञान में भी गहरी रुचि थी। भाषा पर व्याकरण के प्रभाव और प्रयोग के संबंध में गुलेरी जी ने कठोर अनुशासन के बजाय लचीली भाषा रखने का रास्ता अपनी पुस्तक 'पुरानी हिंदी' के द्वारा सुझाया। डॉ. नगेंद्र ने उनकी कहानियों पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि उन्होंने अपने प्रकांड पांडित्य के बावजूद प्राणवत्ता को बचाए रखा। जैनेंद्र कुमार के शब्दों में पांडित्य और सृजन का एक साथ प्रकट होना एक असाधारण घटना ही है। गुलेरी जी ने मात्र आलोचना ही नहीं की, अच्छे साहित्य के मानदंड भी निश्चित किए। उन्होंने इतना ही नहीं कहा कि अमुक लेखन गलत है, बल्कि यह भी बताया कि सही लेखन क्या है।

गुलेरी जी का लेखकीय जीवन बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से होता है। गुलेरी जी के रचनात्मक लेखन के चार प्रमुख पड़ाव हैं - समालोचक (1903-1906), मर्यादा (1911-12), प्रतिभा (1918-1920) और नागरी प्रचारिणी सभा (1920-1922)। इन चार पत्रिकाओं में गुलेरी जी का सर्जनात्मक लेखन प्रकाशित हुआ। उनके अनेक निबंधों के अलावा तीन कहानियों (सुखमय जीवन, बुद्धू का कांटा और उसने कहा था) के द्वारा अपने आप को हिंदी में मशहूर किया। निबंध लेखन के क्षेत्र में आप विलक्षण शैलीकार के रूप में आते हैं। आपने गूढ़ शास्त्रीय तथा सामान्य कोटि के विषयों पर समान अधिकार के साथ लिखा है। पांडित्यपूर्ण हास और

अर्थगत वक्रता की दृष्टि से आपकी शैली विशिष्ट है। आपके दो निबंध 'कछुआ धर्म' और 'मारेसि मोहिं कुठाऊँ' बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। 'मौलाराम की हस्ताक्षरित कलाकृती' जैसे मूल अंग्रेजी में लिखित और हिंदी में अनूदित निबंध भी हैं। 'सरस्वती' पत्रिका के द्वारा गुलेरी जी शोध-विद्वान और समीक्षक के रूप में सामने आते हैं। 1910 की 'सरस्वती' के 'जयसिंह काव्य' तथा 1913 की 'सरस्वती' में 'पृथ्वीराज विजय महाकाव्य' शीर्षक आपके दो लेख महत्वपूर्ण हैं। 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' की दूसरी जिल्द में प्रकाशित 'पुरानी हिंदी' विषयक स्थापनाएँ आपकी भाषा वैज्ञानिक सोच का परिचय देती हैं। 1920 में आप नागरी प्रचारिणी सभा की व्याकरण संशोधन समिति के सदस्य भी रहे।

बीस वर्ष की अवस्था में लेखनी संभाल कर आपने 19 वर्ष तक अनवरत लेखन कार्य कि या और अल्पायु में ही इस दुनिया से चले गए। 12 सितंबर, 1922 को आपका निधन हुआ। उस समय वे उनतालीस वर्ष दो महीने और पाँच दिन के थे।

गुलेरी जी के साहित्य-सृजन पर विचार करने के बाद हिंदी साहित्य के एक अद्‌भुत व्यक्तित्व की तस्वीर उभरती है। वे किसी चीज़ से बनकर नहीं रहे। न संस्कारों से और न पांडित्य से। संस्कारों ने उन्हें कर्मकांडी पंडित बनाया किंतु अपने विचारों में अपने सृजन में उन्होंने किसी रूढ़ि को, किसी कर्मकांड को नहीं माना। जात-पांत और स्त्रियों के अधिकारों के मामले में वे अपने समय के प्रगतिशील लोगों में से एक थे। वे विज्ञान की उपलब्धियों के प्रति जागरूक रहे। जीविका ने उन्हें राजभक्ति से बांध कर रखा था किंतु उनकी लेखनी सदा स्वतंत्र रही। विचारों की स्वतंत्रता को गुलेरी जी ने सबसे बड़ा अधिकार माना।

उनके आकर्षक व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए जीवनीकार मस्तराम कपूर लिखते हैं, "गौरवर्ण, लगभग छह फुट ऊंचा हृष्ट पुष्ट शरीर, विशाल वक्षस्थल, चौड़ा और ऊंचा ललाट, भरा हुआ प्रभावशाली चेहरा, तेजोमय आँखों पर मोटे शीशे की ऐनक, घनी बरौनीयाँ, प्लाई-कट मूछें, और सागर की तरह गंभीर - ऐसे थे चंद्रधर शर्मा गुलेरी। लंबे और बड़े बड़े कान, बारीक होंठ, लंबी भुजाएँ। सिर बहुत बड़ा, जिस पर छोटे बड़े घने बाल। सिर पर जयपुरी गोल पगड़ी, प्राचीन शैली की तनीदार बगलबंदी, स्वच्छ निर्मल पटलीदार धोती और परों में देसी चोंचदार जड़ाऊ जूती - आजीवन उनका यही परिधान रहा। माथे पर त्रिपुंड - गले में दुपट्टा और बगलबंदी के ऊपर बड़े-बड़े रुद्राक्षवाला कंठा। राजदरबार में जाना होता तो लाल वस्त्र और हाथों में कड़े पहनते। आपस में बातचीत करते समय थोड़े से हकलाया करते, परंतु भाषण और अध्यापन के समय अबाध गति से बोलते चले जाते थे।" (पृष्ठ 25)। वे अजात शत्रु थे। अपना समय और अर्थ नष्ट करके भी मैत्री का नाता निबाहने में तत्पर रहते। इस संबंध में बाबू श्याम सुंदर दास जी का कथन द्रष्टव्य है - "गुलेरी जी का स्वभाव बड़ा सरल, निष्कपट और आडम्बरहीन था। मित्रता के नाते को निबाहना ये खूब जानते थे।"

बोध प्रश्न

- चंद्रधर शर्मा गुलेरी के व्यक्ति चित्र को अपने शब्दों में उकेरिए।
- चंद्रधर शर्मा गुलेरी के नाम की सार्थकता पर विचार कीजिए।
- गुलेरी जी की चार कृतीयों के नाम लिखिए।
- 'सरस्वती' का परिचय दीजिए।

9.3.2 कहानीकार गुलेरी

गुलेरी जी की कुल तीन कहानियाँ देखने में आई हैं। 'सुखमय जीवन' और 'बुद्धू का काँटा' कहानियाँ 1911 में 'भारत मित्र' में छपीं और 'उसने कहा था' 1915 में 'सरस्वती' (भाग 16, खंड 1, पृष्ठ 314) में प्रकाशित हुई। पहली दो कहानियाँ तो इतनी प्रसिद्ध नहीं हुईं किंतु तीसरी कहानी ने सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए। पहली दो कहानियाँ भी अच्छी हैं, अपने समय से आगे हैं, पर तीसरी का जवाब नहीं। इन कहानियों में गुलेरी जी की मान्यताएँ भी हैं और जीवन भी। 'उसने कहा था' हिंदी कहानी की शिल्प विधि तथा विषय वस्तु के विकास की दृष्टि से 'मील का पत्थर' मानी जाती है। इसमें एक यथार्थपूर्ण वातावरण में प्रेम के सूक्ष्म तथा उदात्त स्वरूप की मार्मिक व्यंजना की गई है।

'सुखमय जीवन' कहानी छद्म लेखन पर किया गया व्यंग्य है। यह कहानी उन लोगों का मज़ाक उड़ाती है जो महज़ किताबी ज्ञान की बदौलत लिखते हैं, पर उन्हें जीवन का कोई अपना अनुभव नहीं होता। किताबी तालीम को तरजीह देते हैं और दुनियावी तालीम को कुछ नहीं समझते। ऐसे लोग घोखा देने की कोशिश में खुद धोखा खाते हैं। यह कहानी जयदेव नारायण वर्मा बी.ए. की कहानी है जो किताबों से पढ़कर सुखी वैवाहिक जीवन पर एक किताब लिखते हैं जबकि वे स्वयं अविवाहित हैं। पुस्तक गुलाब राय वर्मा को बहुत पसंद आती है। वे उसे अपनी पत्नी को रोज पढ़कर सुनाते हैं। उनकी पुत्री कमला इस कहानी लेखक पर मुग्ध हो जाती है। पुस्तकें लिखने वाले भी अनाड़ी, और पुस्तकें पढ़ने वाले भी अनाड़ी। यही इस कहानी का व्यंग्य है। कमला का वर्मा से विवाह तय हो जाता है। कुछ आलोचक इस कहानी को अतिनाटकीय और अस्वाभाविक बताते हैं। आप इसे यदि व्यंग्य रचना के रूप में देखें तो पढ़ने में आनंद आएगा।

दूसरी कहानी 'बुद्धू का काँटा' को डॉ. नगेंद्र पहली से बेहतर मानते हैं किंतु यह भी कहते हैं कि इसमें भी अतिरंजना और अप्रासंगिकता है। इस कहानी की व्यंग्य दृष्टि कुछ अधिक व्यापक है। आपको इसे पढ़ते समय ऐसा लगेगा जैसे कहानीकार उपन्यास लिखने वाले थे, पर कहानी लिख दिए। इस कहानी में सीधे सच्चे आदमी को इस तेज़ तर्रार दुनिया में मिसफिट दिखाया गया है। इस कहानी में लेखक एक प्रेम प्रसंग को (भागवती के पैर में काँटा चुभता है जिसे रघुनाथ निकालता है और जेब में रख लेता है। संयोग से इसी लड़की से उसका विवाह

होता है। वह सुरक्षित रखे हुए काँटे को दिखाकर अपने प्रेम को प्रकट करता है। पत्नी अपनी नादानी और उद्दंडता के लिए पति से माफी माँगती है।) 'प्रेमकथा' बना देता है । रघुनाथ का बुद्धूपन और ग्रामीण जीवन की ताज़गी इस कहानी की जान हैं।

इस प्रकार की हल्की फुल्की कहानियाँ लिखकर गुलेरी जी वास्तव में क्या कहना और समझाना चाहते थे? लेखक स्वयं बड़े विद्वान पंडित थे। वे खुद ज्ञान की दुनिया में रहते थे। यह पांडित्य उन पर हावी न हो जाए इसलिए वे शायद इन कहानियों को लिखकर अपने और अपने पाठकों के लिए व्यंग्य विनोद, हास्य-प्रहसन पेश करते थे। वे खुद भी खुश रहते थे और दूसरों को भी खुश करना चाहते थे। गुलेरी जी के जीवनीकार मस्तराम कपूर के अनुसार हँसी-खुशी की तलाश और रचना उनके लेखन का एक प्रमुख अभीष्ट था। वे ऐसे किसी अवसर को हाथ से न जाने देना चाहते थे जिसमें उन्हें इन वृत्तियों के परितोष की गुंजाइश दीखती थी।

'उसने कहा था' कहानी में भी गुलेरी जी उसी प्रकार की ताजगी और बेबाकी से अपनी कहानी शुरू करते हैं। कहानी में प्रेम एक आध्यात्मिक अनुभूति के रूप में है, पर कहानी का ढांचा ताजगी भरा है। इस कहानी की बंदिश भी उपन्यास की सी है। यह कहानी प्रेम की आध्यात्मिक अनुभूति सी है। इसका मतलब है कि इसमें स्त्री पुरुष का प्रेम शारीरिक संबंध पर आधारित नहीं है। प्रेम है और यह प्रेम दिल में है। यह प्रेम इतना पवित्र और सदा रहने वाला रहा कि विश्व युद्ध की विभीषिका भी उसका कुछ बिगाड़ नहीं पाती। इस कहानी ने प्रसिद्धि तो पाई ही, तत्कालीन दौर में दिशाहीन हिंदी कहानी को मार्ग दिखाने का भी काम किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने तब इस कहानी में यथार्थवाद की पहचान करते हुए लिखा था, "इसमें पक्के यथार्थवाद के बीच, सुरुचि की चरम मर्यादा के भीतर, भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यंत निपुणता के साथ संपुटित है।"

इन तीनों कहानियों को यदि आप उनके समय की कसौटी पर कस कर देखें तो इन कहानियों में आपको कुछ ऐसी विशेषताएँ नज़र आएंगी जिनकी ओर हमारा ध्यान अभी नहीं गया है। तिलस्मी, ऐय्यारी कथा साहित्य और फार्मूलाबद्ध सामाजिक साहित्य पर गुलेरी जी यह आरोप लगाते हैं कि यह साहित्य विलक्षण और असंभाव्य पात्रों को लाकर मात्र चटनी का स्वाद देनेवाला कुतूहल पैदा करता है। उनका आग्रह था कि लेखक को अपने आसपास की मामूली चीजों और आम किरदारों में भी खूबसूरती देखनी चाहिए। इस दुनिया की तस्वीर पेश करनी चाहिए जो हमारे आस-पास है। जिंदगी से जुड़ा यथार्थ पेश करना चाहिए। गुलेरी जी ने इन तीन कहानियों से इसी जिंदगी को पेश करके दिखाया। हिंदी कथा साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंध, प्रेम, कर्तव्य और बलिदान का जो रूप प्रारंभ से चलता आया था, उसे गुलेरी जी ने अपने ढंग से प्रस्तुत किया।

गुलेरी जी की इन तीनों कहानियों के किरदार या पात्र आम या सामान्य हैं। उनकी तरह के न जाने कितने लोग आपको आज भी अपने आस पास मिल जाएँगे। 'बुद्धू का काँटा' के बाबूजी, रघुनाथ और भागवंती से दुनिया अपरिचित नहीं। 'उसने कहा था' के पात्र भी आपको समाज में मिल जाएँगे जो प्रेम के लिए सब कुछ कुर्बान कर देते हैं। अपने आसपास की दुनिया को तिलस्मी दुनिया से सुंदर और बेहतर आपने दिखाया। जिंदगी की जिन स्थितियों के चित्र गुलेरी जी ने अपनी कहानियों में दिये वे आज भी हमारे लिए ताज़ा हैं।

डॉ. मस्तराम कपूर के शब्दों में गुलेरी जी की तीनों कहानियाँ परिस्थितियों पर इच्छा-शक्ति की विजय की रचनाएँ हैं, इसलिए वे आज भी ताजगी और ऊर्जा से ओतप्रोत हैं। इच्छा शक्ति के उद्धाम वेग ने उन्हें परिस्थितियों पर विजयी होकर ऐसी कहानियाँ लिखने में समर्थ बनाया जो आज भी पाठक को कुंठामुक्त करने में सहायक हो सकती हैं। दुर्भाग्य से आपको लंबी उम्र नहीं मिली और वह बहुत कम समय साहित्य को दे पाए। मिली होती, तो वे और भी बहुत कुछ दे पाते।

(विद्वानों और शोधार्थियों ने गुलेरी जी की कई दूसरी कहानियाँ और कई लेख आदि प्रस्तुत किए हैं और अब यह 'केवल तीन कहानियाँ' वाला जुमला बदला जा सकता है। 'हीरे का हीरा' नामक कहानी को गुलेरी जी का बताया जाता है। और भी कहानियाँ आपको आसानी से मिल जाएँगी। देखें - 'उसने कहा था और अन्य कहानियाँ' संपादक डॉ. मनोहर लाल। गद्य कोश में गुलेरी जी की कहानियाँ हैं - उसने कहा था, घंटाघर, धर्मपरायण रीछ, सुकन्या, सुखमय जीवन, बुद्धू का काँटा, हीरे का हार। लघुकथाएँ - पाठशाला, न्याय घंटा, न्याय रथ, जन्मांतर कथा, विद्या से दुख, महर्षि आदि।)

बोध प्रश्न

- गुलेरी जी की तीन प्रसिद्ध कहानियों के नाम बताइए।
- भागवती किस कहानी की पात्र है?
- गुलेरी जी की कौन-सी कहानी 1915 में प्रकाशित हुई? उसके दो प्रमुख पात्रों के नाम क्या हैं?

9.3.3 निबंधकार गुलेरी

चंद्रधर शर्मा गुलेरी का प्रमुख लेखन क्षेत्र निबंध रहा। उनका रचनाकाल निबंध साहित्य के लिए बहुत उर्वर था। वे द्विवेदी युग के लेखक थे। कथा साहित्य का तो वह शैशव काल ही था किन्तु निबंध-लेखन बहुत आगे बढ़ चुका था। उस समय के लेखक और निबंधकार अपने निबंधों में भाषा के साथ अनेक तरह से प्रयोग कर रहे थे। रामचंद्र शुक्ल आदि ने भी निबंध को एक साँचे में ढालना शुरू किया। अधिकांश निबंध लेखक इतिहास, पुरातत्व, प्राच्य विद्या, भाषा

विज्ञान आदि गंभीर विषयों पर लिख रहे थे। गुलेरी जी के सामने विषयीप्रधान निबंध, सामयिक लेख और गवेषणात्मक लेख आदि का भेद नहीं था। गुलेरी जी के निबंध लेखन विषयानुसार था। उन्होंने लगभग एक सौ छोटे-बड़े निबंध तथा टिप्पणियाँ लिखीं हैं। इन निबंधों को चार श्रेणियों में रखा जा सकता है- प्राच्य विद्या; इतिहास, पुरातत्व, भाषा विज्ञान; सामयिक स्थितियाँ, समस्याएँ एवं व्यक्ति; टिप्पणियाँ। निबंध लेखन के क्षेत्र में आप एक विलक्षण शैलीकार के रूप में आते हैं। गुलेरी संस्कृत और अपभ्रंशों के पंडित थे, हिंदी के संबंध में उनकी गवेषणा असाधारण महत्व की है। अपने निबंधों में वे अपने संस्कृत पांडित्य के साथ लोक-जीवन में रुचि तथा गहरी सहृदयता के साथ हल्का व्यंग्य विनोद का छोंक लगाते हैं। जैसा पहले कहा गया कि आपने गूढ़ शास्त्रीय तथा सामान्य कोटि के विषयों पर समान अधिकार से लिखा है। पांडित्यपूर्ण हास तथा अर्थगत वक्रता की दृष्टि से आपकी शैली विकसित हुई है।

गुलेरी जी के लेखों और निबंधों से उनकी बहुमुखी दिलचस्पियों और बहुज्ञता की झलक मिलती है। वे अपने विस्तृत ज्ञान का उपयोग बहुत सावधानी से करते हैं। एक विषय को दूसरे से जोड़ने की उनकी क्षमता बेजोड़ है। इसके लिए वे एक ज्ञान-क्षेत्र की बात को दूसरे से जोकर प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण और उद्धरण भी देते हैं। आपके दो निबंध 'कछुआ धर्म' और 'मारेसि मोहिं कुठाऊँ' बहुत प्रसिद्ध हुए थे। आपके एक निबंध की कुछ पंक्तियाँ आप देखें। किस प्रकार निबंधकार अपने ज्ञान और शैली से अवाक कर देते हैं, "आप जल्हण को जानते हैं, विल्हण को जानते हैं, कल्हण को जानते हैं - आपने हिंदी में एक बिंदी भी न लिखी। जो स्वयं कुछ लिखकर लोकज्ञान की मात्रा न बढ़ावे, उसके मुँह में जीभ कहाँ है कि अपनी समझ भला-बुरा लिखनेवालों पर नुक्ताचीनी करें? साझी का पूत न कमावे न कमाने दे।"

गुलेरी जी के निबंधों की सुपाठ्यता तथा रोचकता एक ओर तो इनकी विषयवस्तु पर आधारित है, दूसरी ओर इनकी प्रस्तुति से। विषय वस्तु की व्यापकता के कारण उनके कुछ निबंध गंभीर हैं। विश्वनाथप्रसाद मिश्र के अनुसार आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों को समझना आसान है, पर गुलेरी जी को समझना कठिन। परिपक्व बुद्धि का होने पर भी जो बहुश्रुत नहीं, वह गुलेरी जी की शैली की विशेषता देखकर ही रह जाएँगे। उनमें जो अनेक संकेत गर्भित हैं, उन्हें तभी समझा जा सकता है जब उनके सांकेतिक स्थल देख लिए गए हों। एक वाक्य है, आपके यहाँ होली कितने बजे मंगलेगी।" यहाँ 'मंगलेगी' का अर्थ या 'मंगलना' का अर्थ 'जलना' होगा।

प्रगाढ़ पांडित्यपूर्ण निबंधों से लेकर छोटी-छोटी टिप्पणियों तक गुलेरी जी ने जो भी लिखा उसमें मौलिकता का आग्रह बराबर बना रहा। उनकी ताज़गी का रहस्य यही है कि उन्होंने किसी बात को जिस तरह कहा, उस तरह किसी ओर ने वह बात नहीं कही। उनका सरोकार

अपने समय के केवल भाषिक और साहित्यिक आंदोलनों से ही नहीं, उस युग के जीवन के हर पक्ष से था। किसी भी प्रसंग में जो स्थिति उनके मन को भा जाती थी या उत्तेजित करती थी तो वे उस पर टिप्पणी किए बगैर न रहते थे। समय-समय पर लिखी गई इन टिप्पणियों में भाषा का आकर्षण तो है ही, विचारों का कम से कम शब्दों में संप्रेषण भी है। ये टिप्पणियाँ ठीक वैसी ही हैं जैसे मुक्तक काव्य में पद और उर्दू में अशआर होते हैं। उदाहरण के लिए 'समालोचक' में छपी यह टिप्पणी देखें- "काशी को ब्रजभाषा के पक्षपातियों और खड़ीबोली के विरोधियों का अड्डा कहा जाता है, यह ठीक नहीं है। ... डायरियों और आंदोलनों के छपने और खून लगाकर शहीद बनने से काम न होगा। यह होगा नए कवियों के जन्मने से। कोई यह न जाने कि मैं खड़ीबोली की कविता का विरोधी हूँ, पर मैं उसका समर्थक ही नहीं बल्कि लीक पीटने वाले ब्रज भाषा के कवियों का निंदक भी हूँ।" एक दूसरी टिप्पणी देखें, "हमारे अधपतन का कारण आपसी फूट है। यह महाद्वीप एक दूसरे को काटने को दौड़ती हुई बिल्लियों का पिटारा है।" 1904 में इस प्रकांड कर्म-कांडी पंडित ने धर्म को कर्म-कांड से नहीं बल्कि आचार विचार, लोक कल्याण और जन सेवा से जोड़ा। वे लिखते हैं, "आजकल वह उदार धर्म चाहिए जो हिंदू, सिक्ख, पारसी, क्रिस्तान, मुसलमान सबको एक भाव से चलावे और इनमें बिरादरी का भाव पैदा करे, किंतु संकीर्ण धर्म शिक्षा (आदि) हमारे बीच की खाई को ओर भी चौड़ी बनाएँगे।"

बोध प्रश्न

- गुलेरी जी के निबंधों की चार श्रेणियाँ बताइए।
- टिप्पणी से आप क्या समझते हैं? गुलेरी जी की टिप्पणियों का एक प्रमुख गुण क्या है?

9.3.4 कवि और पत्र लेखक गुलेरी

कवि गुलेरी - हम गुलेरी जी को कवि के रूप में नहीं जानते। पर उन्होंने कुछ कविताएँ भी लिखी। उनकी कविताओं का एक संकलन डॉ. विद्याधर शर्मा के संपादकत्व में जयपुर से प्रकाशित हुआ था जिसमें उनकी ये रचनाएँ है - एशिया की विजयदशमी, आहिताग्निका, झुकी कमान, स्वागत, रवि, कुसुमांजलि, बैनेकबर्न आदि। इनमें से 'झुकी कमान और 'बैनेकबर्न' कविताएँ अंग्रेजी कविताओं के अनुवाद हैं। उस समय खड़ीबोली और ब्रज भाषा के बीच बहुत सी रस्साकसी थी। गुलेरी जी ने ब्रज के स्थान पर खड़ीबोली में कविताएँ लिखीं। आपने कुछ कवितायें संस्कृत में लिखीं और कुछ सुभाषितों का हिंदी में अनुवाद भी किया। गुलेरी जी की 'एक बी.ए. ब्राह्मण' उपनाम से लिखी गई कविता में हिंदी की तत्कालीन स्थिति पर प्रकाश डाला गया है और शिक्षित वर्ग के विदेशी भाषा प्रेम पर कटाक्ष किया गया है। 'सो हूँ' शीर्षक इस कविता में विदेशी भाषा के नशे में डूबे हुए व्यक्ति की मानसिकता का वर्णन करते हुए गुलेरी जी लिखते हैं -

हमें जाति की ज़रा न चाह।
नहीं देश की भी परवाह।
हो जावे सब भले तबाह।
हम जावेंगे अपनी राह।

पत्र लेखक गुलेरी - पत्र लेखन को हिंदी साहित्य की एक प्रचलित विधा के रूप में देखा जाता है। गद्य-रूप के अंतर्गत कई माध्यमों में गुलेरी जी ने सक्रियता दिखाई। आपने अपने मित्रों को समय समय पर अनेक पत्र लिखे। गुलेरी : पत्र साहित्य (संपादक पंडित झाबर मल्ल शर्मा) नामक पुस्तक में उनके बहुत से पत्र प्रकाशित हुए हैं। इन पत्रों में व्यंग्य विनोद, अर्थ-गांभीर्य, लाक्षणिकता और भावप्रवणता के अनेक उदाहरण मिलते हैं। इस कारण ये पत्र हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। पंडित मुकुट धर पांडेय को अपने एक पत्र में गुलेरी जी ने उन्हें कम लिखने पर अच्छा लिखने की सीख देते हुए लिखा था, "दो-चार कविता या लेख लिखकर भी आदमी अमर हो सकता है जबकि बहुत लिखने के बाद भी सौ पचास वर्षों के बाद किसी का नाम तक लोगों को याद नहीं रहता।" (कहानी के क्षेत्र में कम लिखकर नाम कमानेवाले गुलेरी जी ने अपने रचनाकर्म से अपने वचन की सार्थकता सिद्ध की।)

बोध प्रश्न

- कवि के रूप में गुलेरी जी का एक वाक्य में परिचय दीजिए।
- किस वजह से गुलेरी जी के पत्र महत्वपूर्ण हैं?

9.3.5 शैलीकार गुलेरी

गुलेरी जी की शैली मुख्यतः वार्तालाप की शैली है। इस शैली में वे किस्साबयानी का लहज़ा अपनाते हैं। गुलेरी जी हिंदी के उन कुछ रचनाकारों में से हैं जो संस्कृत के पंडित होते हुए भी बोलता हुआ गद्य लिखते थे। गुलेरी जी की भाषा उनकी अपनी है, उनकी मिली जुली भाषा और सुधरी हुई शैली का उदाहरण मिलना कठिन है।

आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि गुलेरी जी का समय साहित्यिक भाषा के रूप में खड़ी बोली के सँवरने का काल था। इसलिए उनकी हिंदी में एक ओर तो 'पृष्णि', 'क्लृप्ति' और 'आग्मिघ्र' जैसे अप्रचलित संस्कृत शब्द मिलते हैं, दूसरी ओर 'बेर', 'बिछोड़ा' और 'पैंड' जैसे ठेठ लोकभाषा के शब्द भरे पड़े हैं। अँग्रेजी, अरबी फारसी आदि के शब्द ही नहीं पूरे के पूरे मुहावरे भी उनके लेखन में तत्सम या अनूदित रूप में दिखी देते हैं। उनके लेखन में आत्मीयता और अनौपचारिकता है। वे अपनी रचनाओं में उद्धरण और उदाहरण बहुत देते हैं। पर कई जगह उनके ये उदाहरण बहुत कठिनाई से समझ आते हैं। उदाहरण के लिए, वे अपनी कहानी 'उसने कहा था' में एक ओर तो यह बता देते हैं कि वे संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं, दूसरी ओर ये भी दिखा देते हैं कि उनकी हिंदी खुद-ब--खुद बोलती है। और यह वह बोलती हुई हिंदी है जिसमें

किस्म किस्म के शब्द हैं और तरह तरह के भाव हैं। एक जगह गुलेरी जी इस कहानी में भीषण सर्दी की रात में चाँद निकलने का वर्णन करते हुए 'क्षयी' शब्द का प्रयोग करते हैं। (लड़ाई के समय, चाँद निकल आया था, ऐसा चाँद जिसके प्रकाश से संस्कृत के कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है और हवा ऐसी चल रही थी जैसी कि बाणभट्ट की भाषा में दंतवीणोपदेशाचार्य कहलाती है।) पाठक को लगेगा कि कहानी का लेखक संस्कृत साहित्य का बेहतरीन विद्वान है। वे सीधे कह सकते थे कि बहुत ठंड थी, दाँत कटकटा रहे थे। परंतु गुलेरी जी की भाषा इकहरी नहीं, वह बहुस्तरीय है। इसमें आपको भाषा के कई 'रजिस्टर' मिलते हैं। वे पंजाबी के ठेठ शब्दों का भरपूर प्रयोग करते हैं। पंजाबी के ही नहीं दर्जनों भाषाओं के शब्द भरे पड़े हैं। उदाहरण के लिए, तेरी कुड़माई हो गई तो है ही, बादशाह ओ बादशाह, अपने हाथों हम झटका करेंगे, 10 खुमा जमीन, मुरब्बा आदि शब्द आपको दिखाई देते हैं। उर्दू भाषी को भी 'गनीम' का अर्थ कठिनाई से मालूम होगा। (क्या आप जानते हैं? दुश्मन को गनीम कहते हैं। विपक्षी का समानार्थी है यह अरबी शब्द)। इस 'प्रसंग-गर्भत्व' और 'अर्थ-गर्भत्व' को आप उनके लेखन के रसास्वादन के मार्ग में बाधक मानते हैं या साधक, यह आपकी योग्यता, क्षमता, ज्ञान और साहित्यिक अभिरुचि पर निर्भर करता है।

भाषा पर व्याकरण के अनुशासन के संबंध में गुलेरी जी की अपनी मान्यताएँ हैं। 'पुरानी हिंदी' जैसा अपेक्षाकृत लंबा आलेख के पढ़ने से आपको सब पता लग जाएगा। वे कठोर अनुशासन में बंधी भाषा के स्थान पर लचीली तथा जन-प्रवाह की भाषा के समर्थक थे। महावीर प्रसाद द्विवेदी के साथ इस विषय पर उनका विचार विमर्श चलता रहता था। विद्वान अध्येता कुसुम बांठिया का कहना है कि हर संदर्भ में गुलेरी जी की भाषा आत्मीय तथा सजीव रहती है, भले ही कहीं-कहीं वह अधिक जटिल या अधिक हलकी क्यों न हो जाती हो। अपने युग के दूसरे बहुत से व्यंग्यकारों के समान ही गुलेरी जी के लेखन में भी मस्ती और विनोद की गंगा बहती है। है। उनका विनोद-भाव लगातार रहता है। वे शिक्षा, सामाजिक-रूढ़ियों और राजनीति संबंधी लेखों में यदि झकझोरते हैं तो गुदगुदाते भी हैं।

गुलेरी जी की भाषा शैली उनके विचारों की अभिव्यक्ति मात्र न थी। वह युग संधि पर खड़े एक विवेकी मानस का और उस युग की मानसिकता का भी प्रामाणिक दस्तावेज़ है। इसी ओर इंगित करते हुए नामवर सिंह ने भी कहा था, "गुलेरी जी हिंदी में सिर्फ एक नया गद्य या नयी शैली नहीं गढ़ रहे थे, बल्कि वे वस्तुतः एक नयी चेतना का निर्माण कर रहे थे और यह नया गद्य नयी चेतना का सर्जनात्मक साधन है।"

बोध प्रश्न

- 'बोलती हुई हिंदी' विशेषण गुलेरी जी की भाषा को क्यों दिया जा सकता है?
- गुलेरी जी की भाषा शैली उनके हँसमुख व्यक्तित्व का परिचायक है। कैसे?
- उर्दू, अरबी, फारसी शब्दों के प्रति गुलेरी जी का क्या रवैया था? उदाहरण दें।

9.4 पाठ सार

इस इकाई के पाठ से पंडित चंद्रधर गुलेरी जी का विशद परिचय प्राप्त होता है। उनके साहित्य-सृजन पर विचार करने से हिंदी साहित्य के एक विलक्षण व्यक्तित्व की तस्वीर आँखों के सामने उपस्थित हो जाती है। अल्पायु में ही निधन होने के बावजूद उन्होंने 19-20 वर्षों में इतना विविधतापूर्ण लेखन किया कि अचरज होता है। इतिहास, पुरातत्व, लिपि विज्ञान, भाषा विज्ञान और साहित्य की विविध विधाओं में सर्जनात्मक लेखन करते हुए वे अपना एक निश्चित स्थान बना गए। उनकी रचनाओं में कहानियाँ, कथाएँ, आख्यान, ललित निबंध, गंभीर विषयों पर विवेचनात्मक निबंध, शोध पत्र, समीक्षाएं, संपादकीय टिप्पणियाँ, समकालीन साहित्य, समाज, राजनीति, धर्म, विज्ञान, कला आदि पर लेख वक्तव्य, वैदिक और पौराणिक साहित्य, पुरातत्व भाषा आदि पर प्रबंध, लेख और टिप्पणियाँ - सभी शामिल हैं। आपने अपने समय की अनेक पत्रिकाओं के लिए लिखा। साहित्य की सभी गतिविधियों में सक्रियतापूर्वक भाग लिया। समकालीन साहित्यकारों से पहचान बनाई। यही नहीं उनसे अपनी विद्वत्ता का लोहा भी मनवाया। जो भी लिखा उस पर अपनी छाप छोड़ी। जीविका के लिए चाहे वे राज समाज से जुड़े किन्तु लेखन कार्य उनका परम स्वतंत्र और निडरता से भरा रहा। 'उसने कहा था' कहानी केवल बानगी है। उनके लेखन का एक बड़ा हिस्सा विशुद्ध अकादमिक और शोधपरक है। उनके लेखन से रु-ब-रु होना उनके खुले दिमाग, मानवतावादी दृष्टिकोण और धर्म-राजनीति आदि से गहन सरोकार का परिचय देता है। उनकी लेखन शैली और भाषा से उनकी अनौपचारिक और आत्मीयता का पता चलता है। गुलेरी जी के संपूर्ण लेखन में मुख्यतः भारतीयों और समान्यतः विश्व नागरिकों और समस्त मानव समाज तथा सामाजिक संस्थाओं के प्रति ऐसी उदार दृष्टि मिलती है जो लगभग सौ वर्षों के बाद भी उसे प्रासंगिक बनाती है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध होते हैं -

1. चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ के दो दशकों में हिंदी साहित्यकार के रूप में अपनी पहचान बनाई और अपनी विद्वत्ता से प्रभावित किया।

2. गुलेरी जी के रचनात्मक लेखन के चार प्रमुख पड़ाव हैं - समालोचक, मर्यादा, प्रतिभा और नागरी प्रचारिणी सभा। इन चार पत्रिकाओं में गुलेरी जी का सर्जनात्मक लेखन प्रकाशित हुआ।
3. तीन कहानियों (सुखमय जीवन, बुद्धू का काँटा और उसने कहा था) के द्वारा आपने खुद को हिंदी में मशहूर किया।
4. निबंध लेखन के क्षेत्र में आप विलक्षण शैलीकार के रूप में जाने जाते हैं।
5. गुलेरी जी ने हिंदी-साहित्य में एक नई गद्य चेतना का निर्माण किया।

9.6 शब्द संपदा

1. अभीष्ट = चाहा हुआ, अभिप्रेत, मनोरथ
2. ऐय्यारी = धूर्तता, चालाकी।
3. गवेषणा = खोज, अध्ययन, अनुसंधान
4. छद्म = कपट, ढोंग, छल, असली रूप छिपाना
5. परितोष = पूर्णतः संतुष्ट करने वाला, पूर्णतः प्रसन्न या ख़ुश करने वाला
6. विभीषिका = त्रास, भय या दंड दिखाना
7. संपुटित = अंजलि या दोने के रूप में लाया हुआ, इकट्ठा किया हुआ या एक जगह लाया हुआ, एकत्र।

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. चंद्रधर शर्मा गुलेरी के व्यक्तित्व और कृतीत्व पर प्रकाश डालिए।
2. गुलेरी जी निबंधकार के रूप में अधिक सफल हुए या कहानीकार के रूप में? तर्क पूर्ण उत्तर दीजिए।
3. गद्यकार के रूप में चंद्रधर शर्मा गुलेरी की भाषा-शैली की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए।
4. "जिंदगी से जुड़ा यथार्थ' को प्रस्तुत करते हुए गुलेरी ने अपने समय को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया।" इस कथन की व्याख्या प्रस्तुत कीजिए।
5. 'गुलेरी जी ने अपने लेखन के द्वारा नई चेतना का निर्माण किया' इस कथन के पक्ष में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

6. गुलेरी जी के लेखन से उदाहरण और उद्धरण लेकर उनके व्यक्तित्व की चार विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
7. "गुलेरी जी की तीनों कहानियाँ परिस्थितियों पर इच्छा-शक्ति की विजय की रचनाएँ हैं" इस कथन को सिद्ध कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. निम्नलिखित विषयों पर टिप्पणी लिखिए -
   (i) कवि के रूप में गुलेरी
   (ii) टिप्पणी-लेखक गुलेरी
   (iii) गुलेरीजी का शब्द चयन
   (iv) गुलेरी रचना वैविध्य
2. गुलेरी जी की तीन प्रमुख कहानियों का मुख्य सरोकार क्या है?
3. बहुज्ञता को परिभाषित करते हुए गुलेरी जी की बहुज्ञता पर विचार कीजिए।
4. गुलेरी जी के लेखन की चार विशेषताओं को गिनाइए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. गुलेरी जी इस युग के गद्य-लेखक हैं - ( )
   (अ) भारतेन्दु युग (आ) तत्कालीन युग (इ) द्विवेदी युग (ई) इनमें से कोई नहीं
2. गुलेरी जी ने नहीं लिखा - ( )
   (अ) कछुआ धर्म (आ) उपन्यास (इ) संपादकीय (ई) पत्र
3. 'एशिया की विजयदशमी' क्या है? ( )
   (अ) निबंध (आ) कविता (इ) निबंध (ई) संस्मरण
4. निम्नलिखित में से कौन गुलेरी जी का समकालीन नहीं है? ( )
   (अ) भारतेन्दु हरिश्चंद्र (आ) महावीर प्रसाद द्विवेदी (इ) मदन मोहन मालवीय (ई) सभी
5. "गनीम' का समानार्थी है - ( )
   (अ) कमीन (आ) विरोधी (इ) कठिन (ई) सेवक

6. यह गुलेरी जी की कहानी नहीं है - ( )

(अ) उसने कहा था (आ) कछुआ धर्म (इ) सुखमय जीवन (ई) बुद्धू का काँटा

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. गुलेरी जी की …….. उपनाम इस लिखी गई कवितायें …….. की तत्कालीन स्थिति पर प्रकाश डालती हैं।
2. गुलेरी जी ने 1904 से 1922 तक अजमेर के …….. में अध्यापन किया।
3. लचीली भाषा रखने का सुझाव गुलेरी जी की पुस्तक …….. में भी मिलता है।
4. 'उसने कहा था' कहानी के बाद की कथा हमें …….. का हार में मिलती है।
5. गुलेरी जी के लेखन का एक बड़ा हिस्सा …….. और …….. है।
6. …….. के साथ गुलेरी जी का हिंदी के विषय में विचार विमर्श चलता रहता था।

III. सुमेल कीजिए -

गुलेरी जी के रचनात्मक लेखन के चार पड़ावों को उनके तिथि क्रम से मिलाइए-

1. 1903-1906	(अ) समालोचक
2. 1911-1912	(आ) प्रतिभा
3. 1918-1920	(इ) नागरी प्रचारिणी सभा
4. 1920-1922	(ई) मर्यादा

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. गुलेरी गरिमा ग्रंथ : झाबर मल्ल शर्मा
2. भारतीय साहित्य के निर्माता - चंद्रधर शर्मा गुलेरी : मस्तराम कपूर
3. हिंदी कहानी पहचान और परख : इन्द्र नाथ मदान

इकाई 10 : उसने कहा था : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 मूल पाठ : उसने कहा था : तात्विक विवेचन

10.3.1 कथावस्तु

10.3.2 चरित्र चित्रण

10.3.3 परिवेश

10.3.4 संरचना-शिल्प

10.3.4 शीर्षक की उपयुक्तता

10.4 पाठ सार

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

10.6 शब्द संपदा

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

कहानी हर रूप में उपन्यास से पुरानी विधा है। कहानी में कहने की विशेषता सबसे महत्वपूर्ण है। कविता लिखी जाती है पर कहानी कही जाती है। हिन्दी में कहानी जब छपकर पाठकों के सामने आई तब उन्नीसवीं शताब्दी चली गई थी और बीसवीं आ गई थी। शुरू से ही कहानी जमने लगी थी। 'उसने कहा था' कहानी 1915 में 'सरस्वती' पत्रिका में पहले पहल प्रकाशित हुई। इस कहानी ने हिन्दी कहानी विधा में क्रांति ही ला दी। पंडित गुलेरी जी की आज अनेक रचनाएँ मिल जाती हैं किन्तु इतने वर्षों तक आपने इसी कहानी ने बल पर पाठकों के दिल पर राज किया। जिस प्रकार अँग्रेजी लेखिका ऐमिली ब्रांटे अपने एक उपन्यास 'वदरिंग हाइट्स' के लिए अमर हैं, चंद्रधर शर्मा गुलेरी अपनी इस एक कहानी के कारण। इस दुखांत कहानी में कितना 'सुख' और 'आनंद' भरा है, यह बयान करना मुश्किल है। सिक्खों के जीवन की इस शौर्यभरी कहानी में उदात्तता का जो रचाव है उसे आप देखें। एक कहानी में लेखक कैसे बड़े बड़े भाव और विचार प्रस्तुत करता है, जाँचे।

इस कहानी के तात्विक विवेचन के लिए आप इतना अपनी तरफ से करें तो अच्छा रहेगा। आप इस कहानी को खुद पढ़ें। यह भी याद रखें कि कहानी केवल पढ़ने की चीज नहीं

होती। अच्छी कहानी में दृश्य और श्रव्य दोनों गुण होते हैं। इस कहानी के पढ़ने से आपकी आँखों के सामने जो दृश्य खड़ा होगा और वह जो आपके कानों को सुनाई देगा वह आपको अपनी दुनिया देखने की दूसरी नज़र देगा।

यहाँ दिये गए सार को भी देखें और साथ ही उसे भी पढ़ लें। तभी तो आप इसके महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या और विवेचन कर सकेंगे। कहानी में आए कठिन शब्दों, मुहावरों और लोकोक्तियों के अर्थ पर ध्यान दें। सहायता के लिए इकाई में दी गई शब्द सूची को देखें। कथ्य, भाषा आदि की दृष्टि से कहानी की विशेषताओं को तभी आप खुद भी लिख सकेंगे और तभी इसका तात्विक विवेचन कर सकेंगे जब आप अपने आप भी इसकी कोशिश करेंगे।

सबसे पहले आप इस कहानी का खुद पाठ कर लें। इस कहानी का सम्पूर्ण पाठ यहाँ नहीं दिया जा सकता क्योंकि इस इकाई में पृष्ठों की सीमा है। हाँ, यहाँ कहानी का सार ('नींबू निचोड़ पाठ' - नामवर सिंह) दे दिया गया है। इससे आप कथावस्तु को फिर से एक बार दुहरा सकेंगे। इसके बाद कहानी के तात्विक विमर्श की ओर बढ़ेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के पाठ के बाद आप -

- 'उसने कहा था' शीर्षक कहानी की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- इस कहानी में आए कठिन शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों आदि का अर्थ समझ सकेंगे।
- इस कहानी में आयी महत्वपूर्ण उक्तियों और कथोपकथन की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- इस कहानी कला की दृष्टि से इस कहानी की तात्विक विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- इस कहानी के प्रमुख पात्रों के चरित्र चित्रण की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- इस कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता से अवगत हो सकेंगे।

10.3 मूल पाठ : उसने कहा था : तात्विक विवेचन

आपने कहानी के मूल तत्व छह पढ़ें होंगे- विषयवस्तु, कथावस्तु या कथानक, चरित्र या पात्र, संवाद या कथोपकथन, भाषा शैली, वातावरण या देश काल और उद्देश्य। कहानी के इन्हीं प्रमुख तत्वों के आधार पर किसी कहानी की समीक्षा की जाती है। कथावस्तु की पाँच अवस्थाओं का जिक्र भी होता है - आरंभ, विकास, कौतूहल, चरम सीमा और अंत। आपके लिए यह बना बनाया पैटर्न या ढांचा आसान रहेगा। इसी को आधार मानकर आप भी 'उसने कहा था' की समीक्षा कर सकते हैं। तात्विक विवेचन में आप इसके पार और परे भी जा सकेंगे। चूंकि 1915 में लिखी गई यह कहानी विशेष भी है और विशिष्ट भी, इसलिए इस कहानी में जो 'रस' है उसे हम ऊपर ऊपर उथलेपन से नहीं बल्कि गंभीरता से देखेंगे और 'जीवन के गंभीर उपभोगों से

खींचे हुए इस गाढ़े रस' (डॉ. नगेन्द्र के शब्द) का पान करेंगे। दूसरे शब्दों में आप इस इकाई को पढ़ते वक्त दिल से भी उतना ही काम लेंगे, जितना दिमाग से लेंगे।

10.3.1 कथावस्तु

'उसने कहा था' कहानी की शुरुआत अमृतसर के भीड़ भरे बाजार से शुरू होती है। 12 वर्ष का एक लड़का 8 वर्ष की एक लड़की को तांगे के नीचे आने से बचाता है। लड़का लड़की से पूछता है कि क्या तेरी (कुड़माई) मंगनी हो गई है। इस पर लड़की 'धत' कह कर भाग जाती है। दोनों बाजार में अक्सर कभी सब्जी वाले, कभी दूध वाले के यहां मिलते हैं और लड़का बार-बार उससे यही प्रश्न पूछता है। कुछ दिन बाद लडका फिर उस लड़के से वही सवाल पूछता है। उस दिन वह लड़की जवाब दे देती है कि हाँ उसकी (कुड़माई) मंगनी हो गई। (हाँ, हो गई / कल, देखते नहीं, यह रेशम से कढ़ा सालू।) इस बात पर लड़का उदास हो जाता है और वहाँ से भाग जाता है। इस लड़के का नाम लहना सिंह है और वह लड़की बाद में 'सूबेदारनी' के रूप में हमारे सामने आती है।

उस घटना के लगभग पच्चीस वर्षों के बाद वह लड़का सेना में भर्ती होता है। यह कहानी का दूसरा भाग है। वह बारह वर्ष का बालक अब 77 राइफल्स में जमादार है। और अंग्रेजों की ओर से भारत की सेना का हिस्सा बनकर प्रथम महायुद्ध के दौरान यूरोप में लड़ने जाता है। उसके साथ सेना में सूबेदार हजारा सिंह, वजीरा सिंह और बोधा सिंह (हज़ारा सिंह का बेटा) आदि हैं।

उनके बीच प्रेम, शौर्य और मस्ती की चर्चाएं अक्सर चलती रहती हैं। बोधा सिंह बीमार होता है, तब लहना सिंह उसका पूरा ख्याल रखता है।

एक बार सूबेदार हजारा सिंह के बुलाने पर जब लहना सिंह उसके घर जाता है तो सूबेदारनी लहना सिंह को पहचान लेती है, और उसे बुलाकर कहती है कि जिस प्रकार तुमने मेरी बचपन में रक्षा की थी (एक बार घोड़े की लातों से बचाया था) वैसे ही उसके पति को बचाना। सूबेदारनी आंचल पसार कर और बचपन की मुलाक़ात को याद दिलाकर एक तरह से अपने सुहाग और पुत्र की रक्षा का वचन ले लेती है। लहना सिंह यही करता है। युद्ध भूमि पर उसने सूबेदारनी के बेटे बोधा सिंह ही जान बचाई। पर इस कोशिश में वह खुद बहुत गंभीर रूप से घायल हो जाता है। वह अपने घाव की परवाह न करके जर्मन सैनिकों का मुक़ाबला करता है। सूबेदारनी के पति सूबेदार हज़ारा सिंह और उसके पुत्र बोधा सिंह को गाड़ी में सकुशल गाड़ी में बैठाते हुए बस इतना ही कहता हैकि सूबेदारनी को कहना 'उससे जो उन्होंने कहा था वह उसने कर दिया।' सूबेदार पूछता ही रह गया उसने कहा क्या था। बाद में उसने वजीरा से पानी मांगा और कमरबंद खोलने को कहा। उसका कमरबंद खून से तर था। मौत को सामने खड़ी देख उसके

दिमाग में जिंदगी की एक एक घटना फिल्म के फ़्लैशबैक सी घूम गई और अंतिम वाक्य जो उसके मुँह से निकला, वह था, उसने कहा था।

लहना सिंह की युद्ध में मृत्यु हो जाती है। अखबारों में तो बस इतना ही छपता है, फ्रांस और बेल्जियम - 68 सूची - मैदान में घावों से मरा। नंबर 77 सिक्ख राइफल्स जमादार लहना सिंह। इस प्रकार यह कहानी त्याग, प्रेम और देशभक्ति इत्यादि की भावनाएं प्रकट करती है। बचपन का प्यार किस तरह निभाया जाता है और वह भी एक पुरुष द्वारा।

उसने कहा था कहानी के पाँच खंड या भाग हैं। इनमें से चार युद्धस्थल पर आधारित हैं और एक अमृतसर पर। प्रथम खंड का असफल प्रेमी कहानी के दूसरे भागों में सफल सैनिक, समझदार व्यक्ति और संवेदनशील-मानवतावादी नायक के रूप में उपस्थित होता है।

(यह हमेशा याद रखने वाली कहानी है जिस पर फिल्म भी बन चुकी है। पता कीजिए। पता क्या कीजिए, यू ट्यूब पर जाकर देख लें। 1960 में बनी इस फिल्म में सुनील दत्त और नन्दा (निर्देशक मोनी भट्टाचार्य और निर्माता बिमल राय) की प्रमुख भूमिकाएँ हैं। प्रथम विश्व युद्ध (1914-15), भारतीय सिनेमा का आरंभ (1913), और उसने कहा था (1915) एक ही काल खंड की बातें हैं। इस विश्व युद्ध में करीब तेरह लाख भारतीयों ने हिस्सा लिया था और यह सबसे बड़ी फौज थी।)

पहली नज़र में आपको ऐसा लगेगा कि यह भी कोई बात है। एक लड़का है। एक लड़की है। दोनों मिलते हैं। आकर्षण होता है। यह तो होता ही रहता है। यह भी होता रहता है कि शादी एक दूसरे से न होकर किसी दूसरे से हो जाती है। उससे नहीं होती किसी और से हो जाती है। जीवन भर उसकी याद बनी रहती है। पर इस घटना के बाद जो होता है, वह प्रेम की अजीब दास्तां है। लहना सिंह का प्रेम केवल सूबेदारनी से ही नहीं है। वह सबसे प्रेम करता है - अपने देश से, घर से, वजीरा से... नामवर सिंह के शब्दों में, "बिल्कुल हलवा-हलवा ही नहीं है कहानी, बल्कि इस कहानी में जीवन के कुछ कडवे और भी सत्य हैं। अनकहे सत्य। सबको मिलाकर के सौंठ-मिर्च की तरह से ऐसा घोल तैयार किया गया है, जिसमें कहीं-कहीं वो खटास अगर न हो और थोड़ी काली मिर्च न डाली जाए तो ये मिठास अपच पैदा करेगी, मन भर जाएगा।"

बोध प्रश्न

- 'उसने कहा था' कहानी कितने भागों में बांटी गई है? इसके कितने भागों में पुद्ध का वर्णन है?
- कहानी के चार प्रमुख पात्रों के नाम बताइए।

- किसने क्या कहा था?

10.3.2 चरित्र चित्रण

गुलेरी जी की इस कहानी में दो बातें दिल में घर कर जाती हैं। एक तो अमृतसर के बाज़ार का वर्णन और दूसरे दो प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण। 'उसने कहा था' कहानी में अनेक पात्र हैं किन्तु प्रमुख पात्र दो ही हैं - लहना सिंह और सूबेदारनी। वजीरा सिंह, बोधा और शायद लहना सिंह की पत्नी भी हैं। ये सब गौण पात्र हैं जो कहानी को आगे बढ़ाते हैं। लहना सिंह और सूबेदारनी का पवित्र प्रेम इस कहानी की धुरी है। सूबेदारनी ने जो कहा था, वह लहना सिंह ने किया। जान की बाज़ी लगाकर किया। जान देकर किया। लहना सिंह इस कहानी का प्रमुख पात्र (प्रोटागोनिस्ट) है। कहानी का समूचा घटनाचक्र उसके इर्द-गिर्द ही घूमता है। वह सभी अन्य पात्रों से जुड़ा है और यह जरूरी है कि हम कथानायिका(सूबेदारनी) के साथ-साथ सूबेदार हज़ारा सिंह और उसके बेटे बोधा सिंह को भी जान लें। वजीरा सिंह और लफ़्टन साहब तो हैं ही। कम से कम तीन को जरूर जान लें - वजीरा सिंह, लहना सिंह और फिर सूबेदारनी।

वजीरा सिंह – सबसे पहले हम वजीरा सिंह को लेते हैं। वह गौण पात्र है। उसको 'कॉमिक रिलीफ़' देने के लिए कहानीकार ने रचा है। वह पलटन का विदूषक है। उसका पंजाबीपन उसकी हर हरकत और बात में है। पर उससे उसका महत्व कम नहीं हो जाता। वह ऐसा किरदार है जो लड़ाई के मैदान में भी हँसी-मज़ाक करता है। प्रेम के गीत गाता है। वह कथानायक के आसपास विदूषक के जैसा घूमता रहता है। वह जर्मन लोगों का मज़ाक उड़ाता है। उसकी इस हंसी मज़ाक से पूरी खंदक का गंभीर वातावरण खुशनुमा हो जाता है। वही वजीरा सिंह कहानी में घायल दिखाया जाता है और सपने में बर्राता जाता है। जब वह कह रहा था कि "हाँ अब ठीक है, पानी पिला दे। बस अब दिहाड़ में आम खूब फलेगा, चाचा भतीजा दोनों बैठकर आम खाना। जितना बड़ा तेरा भतीजा है, उतना ही बड़ा वह आम है। जिस महीने में मैंने इसे लगाया था।" तब वजीरा सिंह के आँसू टप-टप गिर रहे थे, लहना के नहीं। ये आमवाली, बच्चेवाली, बेटेवाली घटना है। पर वजीरा सिंह बच जाता है।

वजीरा सिंह बात दिल को लगने वाली कहता है। पंजाबी है, ठेठ पंजाबी। न जाने कितनी भेद भरी और मर्म-स्पर्शी बातें बोलता है। एक उदाहरण देखें - 'जाड़ा क्या है, मौत है और निमोनिया से मरने वाले को मुरब्बे नहीं मिला करते।" युद्ध में गोली खाने वाले को सम्मान मिलता है, निमोनिया से मरने वालों को नहीं। मुरब्बा ठेठ पंजाबी-उर्दू शब्द है- जिसका अर्थ जाने बिना कोई इस कथन का आनंद नहीं के सकता।

हज़ारा सिंह - हज़ारा सिंह सूबेदारनी का पति है। वह जमादार लहना सिंह का अफसर है। वह अंग्रेज़ सरकार का वफादार है और उसकी वफादारी का उसे ईनाम इकराम भी मिला

था। उसका पुत्र बोधा सिंह है। वह लहना सिंह को अपना वफादार समझता था। लहना सिंह जब बोधा सिंह की जी जान से सेवा करता है तब सूबेदार उससे अपनी सेहत का ख्याल रखने को कहता है। वह लहना सिंह की मौत के बाद उसके प्रति अपनी संवेदना कैसे व्यक्त करता है, पता नहीं चलता। उसका चरित्र मुख्य नहीं, कहानी को आगे बढ़ाने वाला जरूर है।

सूबेदारनी - चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' में सूबेदारनी तत्कालीन परंपरागत भारतीय नारी के रूप में प्रस्तुत की गई है। वह कहानी में केवल दो बार आती है। एक बार कहनी के आरंभ में, दूसरी बार कहानी के अंतिम भाग में, वह भी लहना सिंह की स्मृतियों में। वह परिवार की उस सीमा-रेखा के भीतर रहती है जिसका गुणगान किया जाता है।

वह बचपन में एक छोटी सी कन्या के रूप में कहानी के प्रारम्भ में आती है जिसे कथानायक लहना सिंह (जो खुद भी बच्चा ही है) अमृतसर के भीड़ भरे बाज़ार में तांगे के नीचे कुचले जाने से बचाता है।यह चंचल बालिका उस चंचल बालक की हँसी-मज़ाक में रोज़ पूछी गई एक बात का बड़ा माकूल जवाब देती है। "तेरी कुड़माई हो गई?" के उत्तर में उसका 'धत' कहकर भाग जाना और फिर एक दिन यह कहकर लड़के का दिल तोड़ देना "हाँ, हो गई ...कल, देखते नहीं रेशम के बूटोवाला सालू", बहुत मनोरंजक प्रसंग हैं। ये उनकी मुलाकातें इस बालिका के मन में (और बालक लहना सिंह के मन में भी) पवित्र प्रेम का अंकुर पैदा करते हैं। और जैसा बाद में पता चलता है, इस कन्या के स्त्री बन जाने पर भी उसके मन के किसी कोने में यह याद हमेशा मौजूद रहती है।

जिसके साथ लड़की की कुड़माई (सगाई) हुई थी उसकी पत्नी के रूप में वह फिर से लहना सिंह से मिलती है। यह उसी रेशमी सालू वाली लड़की का स्त्री रूप है। वह एक ममतामयी माँ है (जिसके चार बच्चों में से एक ही जीया)। और एक आदर्श पत्नी भी। वह लहना सिंह को इतने सालों बाद भी पहचान लेती है। अपने पति और पुत्र दोनों को युद्ध के मैदान में खतरों से बचाने के लिए वह अपने बचपन के साथी को पुरानी यादों का वास्ता देती है, "मैंने तो तेरे को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ, मेरे तो भाग फूट गए। सरकार ने बहादुर का खिताब दिया है। लायलपुर में जमीन दी है, आज नमक हलाली का मौका आया है पर सरकार ने हम तीमियों की घंघरीया पलटन क्यों न बना दी, जो मैं भी सूबेदार जी के साथ चली जाती? एक बेटा है। फौज में भर्ती हुए उसे एक ही वर्ष हुआ। उसके पीछे चार हुए एक भी न जीया"।

इस कथन में सूबेदारनी के चरित्र के अनेक पक्ष दिखाई देते हैं - ममतामयी माता, अपने पुत्र और पति के लिए चिंतित। वीर प्रसूति माता जो 'पलटन' में जाकर लड़ने के लिए भी तैयार

है। देश भक्त नारी जो 'नमक हलाली' करने के वक्त को खोना नहीं चाहती। लाचार और निरुपाय स्त्री जो पति के 'बहादुर' खिताब और लायलपुर की ज़मीन के बावजूद 'मेरे तो भाग ही फूट गए' जैसे जुमले बोली है। सूबेदारनी अपने समय की नारी है। वह अपने परिवार के लिए लहना सिंह से भिक्षा मांगती है। उसके आगे अपना आंचल पसारती है। एक वात्सल्यमयी माता और पतिपरायण पत्नी के रूप में सूबेदारनी लहना सिंह को एक बार फिर से उसके लिए 'कुछ भी' कर गुजरने को प्रेरित कर देती है।

इस कथन में सूबेदारनी युद्ध की अमानवीयता का भी जिक्र करती है। इसे भी देखना चाहिए। सूबेदारनी के पास क्या बचा रहता यदि उसके पुत्र और पति को यह लड़ाई खा जाती? सूबेदारनी उन सभी स्त्रियाँ और देश में रह गए लोगों का प्रतिनिधित्व करती है जो युद्ध के दौरान और युद्ध के बाद उसके परिणाम भोगने के लिए रह जाते हैं। उनके अरण्य रोदन को कोई नहीं सुनता। सूबेदारनी अपने दिल पर जो बोझ लिए रहती है, उसको कुछ देर के लिए ही वह उतारकर सांस लेती है।

शेक्सपीयर के नाटक 'ट्वेल्थ नाइट' की एक पात्र व्योला के समान सूबेदारनी भी कहाँ अपने प्रेम को शब्दों में अभिव्यक्त कर पाती है। वह भी उसे गमों की तहों में छुपाकर रखती है। अपनी उलझन को सुलझाने का उसके पास न मौका है और न समय। वह टी. एस. एलियट की 'वेस्ट लैंड' की उस स्त्री की तरह नहीं जो प्रथम विश्व युद्ध में शामिल होने के लिए चार साल से गए अल्बर्ट के वापस आने से इसलिए चिंतित है क्योंकि उसका पति इतने दिन बाद आकर उसके टूट गए दाँतों और फिसल गई सुंदरता को देख उससे मुँह फेर लेगा। सूबेदारनी को चिंता है तो अपने पति और पुत्र की, अपने आप की नहीं। एक आम स्त्री की तरह वह बस अपने पति-पुत्र की रक्षा का वचन अपने पूर्व रक्षक से लेती है। और 'मैं' को छोड़ इस कहानी की 'उस' बनकर खुद को पृष्टभूमि में रखकर संतोष प्राप्त करती है।

लहना सिंह

जमादार लहना सिंह इस कहानी का प्रमुख चरित्र है जो इस कहानी के दिये गए शीर्षक का हुक्म बजा लाने की खातिर कहानीकार रचता है। वह जो कुछ इस कहानी के बाद के हिस्से में करता है, वह इस कहानी के पहले हिस्से में किए गए वादे का परिणाम है। कहानी के शुरू में लहना सिंह वय संधि पर खड़ा मनमौजी लड़का है। यह लड़का एक लड़की से अमृतसर के बाज़ार में अचानक टकरा जाता है और कहानी बन जाती है।

लहना सिंह युद्ध के मैदान में कुशल योद्धा है पर यह उसका नियंत्रित और सुथरा व्यक्तित्व है। बालक लहना कुछ दूसरे ही रंग ढंग का है। आरंभ में उसकी एक लड़की(बाद में सूबेदारनी) से छेड़छाड़ और निरंतर चुहलबाज़ी और फिर उस चुलबुली कन्या की कुड़माई की खबर सुनकर उसकी बेढंगी प्रतिक्रिया। टूटे हुए दिल के इस अनगढ़ आशिक का यह हाल हुआ,

"रास्ते में लड़के को मोरी में धकेल दिया, एक छाबड़ी वाले की दिन भर की कमाई खोई, एक कुत्ते पर पत्थर मारा और एक गोभी वाले ठेले में दूध उड़ेल दिया। सामने नहाकर आती हुई किस वैष्णवी से टकराकर अंधे की उपाधि पाई, तब कहीं घर पहुँचा।"

लहना सिंह इस कहानी की जान है। उसका चरित्र ऐसा है जैसे खरा सोना। उसके चरित्र में कई खूबियाँ गुलेरी जी ने कूट कूट कर भर दीं हैं। वह आदर्श नायक है। आदर्श प्रेमी है। वह अपने भाई को बहुत चाहता है। देश के लिए मर मिटने का जोश है। उसकी रगों में उसका गाँव लहू बनकर दौड़ता है। प्रेम उसके दिल की धड़कन है। वह उस लड़की की गुजारिश को ताउम्र निभाता है जो उसे बचपन में मिली थी। विनोदप्रिय, कर्तव्यनिष्ठ, वीर, विवेकशील, परिवार की मर्यादा का रक्षक, कुशल निर्णायक, संवेदनशील, निडर, वचन का पक्का रूमानी लहना सिंह प्रेम के लिए बलिदान की भावना को चरम तक ले जाता है।

ये जो उसके गुण गिनाए गए हैं वे ऊपर से थोपे हुए नहीं। उदाहरण के लिए, यदि उसमें प्रेम और त्याग न होता तो उसका बलिदान न होता। अगर उसमें बुद्धिमत्ता और सतर्कता के गुण न होते तो युद्ध में पूरी सेना की टुकड़ी का सफाया हो जाता। कहानी बनती ही नहीं यदि वह प्रत्युतपन्नमति का परिचय न देता। अपने वचन की रक्षा के लिए वह खुद के लिए मौत को गले लगा लेता है। वह बुद्धिमान भी है और इसका परिचय कई बार देता भी है। अपनी बातों में फंसाकर वह जर्मन सैनिक को जान से मार देता है। लहना सिंह सूबेदार से कहता है, "बिना फेरे घोडा बिगड़ता है, बिना लड़े सिपाही, मुझे तो संगीन चढ़कर मार्च का हुक्म मिल जाए फिर सात जरमनों को मारकर अकेला ना लौटूँ तो मुझे बारबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो। इस दिन धावा किया था, चार मील तक एक भी जर्मन नहीं छोड़ा। "इस संवाद में लहना सिंह का साहस और धर्मपरायणता आपस में मिलकर कैसी भली जुगलबंदी करते हैं?

सरदारों और संता-बंता के चुटकुले सुनने वाले लोग इस कहानी में लहना सिंह की कोई ऐसी वैसी हरकत नहीं देख सकते। वह पूरी मुस्तैदी से और बिना कोई बेवकूफी किए काम करता है। केवल मोर्चे पर नकली भेष में उन्हें मारने की खातिर आए जर्मन फौजी को ही नहीं अपने गाँव में आए जासूस की भी पोल खोलकर रख देता है। उसका कहना है, "माझे के लहना को चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिए।" कहा जा सकता है कि लहना सिंह अपनी कर्तव्यनिष्ठा को युद्ध के मोर्चे से लेकर सामाजिक परिवेश तक निभाता है। 'तेरी मिट्टी' से 'अपनी मिट्टी' तक सब उसे जान से प्यारी है।

कैशोर्य प्रेम का प्रतिदान देने के लिए लहना सिंह ने कोई चूक नहीं की। वह जान की बाज़ी लगाने वाला सैनिक है। एक आम सैनिक की तरह वह अधिकारी का, साहब का हुक्म बजा लाना उसका स्वभाव है। देश के लिए वह शहीद नहीं हुआ। वह तो अँग्रेजी सरकार का जवान था। लाम पर जाना उस समय आज की तरह न था। वह शहीद हुआ अपने प्रेम और कर्तव्य दोनों

के लिए। अपने परिवार से पहले वह 'उस' के परिवार को बचाने की भावना के रहते शहीद हुआ। हाँ, अपने उदात्त चरित्र और बलिदान की वजह से वह लाशों की सूची में एक नाम और नंबर भर बनकर नहीं रह जाता। वह अपनी कहानी छोड़ जाता है जिसे उसके लोग शायद सुनकर गर्व से भरकर उसको याद करेंगे।

कुछ दिन पीछे लोगों ने अखबारों में पढ़ा-मैदान में घावों से मरा नंबर-77 सिक्ख राइफल सरदार लहना सिंह। वह सहयोगी चरित्र के रूप में एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। कथानायक ने अपना वचन पूरा किया, इस संदेश का कथानायक वही तो है। वह सूबेदार और उसके पुत्र बोधा सिंह की प्राण रक्षा तो कर देता है पर खुद इस दुनिया से चला जाता है। न उसे कीरत सिंह की गोद नसीब होती है और न ही आम का वह पेड़। उसके पीछे वजीरा सिंह आँसू बहा रहा है और बस। उसके जाने के बाद उसके परिवार का क्या हुआ होगा?

यह कहानी आपको सोचने के लिए - खूब सोचने को मजबूर करती है। इस कहानी की कथा आपको भी जीवन भर के लिए याद रहेगी। बार-बार पढ़ने वाली यह कहानी अपने पात्रों के कारण आपको भी अपने साथ बहा ले जाएगी।

बोध प्रश्न

- बालक लहना सिंह और जमादार लहना सिंह के चरित्र की चार चार विशेषताएँ गिनाइए।
- लड़की की कुड़माई किस से हुई थी?

10.3.3 कथा परिवेश

जैसा कि आप जानते हैं 'उसने कहा था' प्रथम विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखी गयी कहानी है। इस तरह यह कहानी अपने युग की कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं को प्रस्तुत करती है। कथा-लेखक ने खुद तो युद्ध में भाग नहीं लिया फिर भी सैनिकों की दिनचर्या और सैनिक कार्यवाहियों का चित्रात्मक शैली में वर्णन किया है। चाहे शुरू में अमृतसर के बाज़ार का वर्णन हो या बाद में युद्ध के मोर्चे का, इस कहानी का सबसे बड़ा आकर्षण और गुण इसका परिवेशगत यथार्थ का अंकन है। अमृतसर की आम भीड़ भरी सड़कों पर बचपन में अचानक टकराई लड़की के पति और पुत्र की सुरक्षा का आश्वासन देने वाला लहना सिंह अपने उदात्त चरित्र से पाठक को बांध लेता है। अमृतसर में मामा के यहाँ बीते दिन, भेंट और पहचान, और युद्ध के मोर्चे पर गाँव घर की स्मृतियों का फैलाव यह सब कुछ कथा परिवेश को पंजाबियत से भरता है।

वस्तुतः इस कहानी के सभी पात्र पंजाबी हैं। उनका पंजाबीपन युद्ध के मैदान में भी नहीं छूटता। यह पंजाबीपन इक्के तांगेवालों में भी है। उनका बेबाकी से बात करना, खुलापन और हँसी-मज़ाक और साथ में अटूट साहस लहना सिंह और अन्य पात्रों में कूट टूट कर भरा है। एक उदाहरण देखें - वजीरा सिंह पलटन का विदूषक था। बाल्टी में गंदा पानी भरकर खाई के बाहर फेंकता हुआ बोला, 'मैं पाधा बन गया हूँ। करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण।' इस पर सब खिलखिला पड़े और उदासी के बादल छंट गए।'

बोध प्रश्न

- कथा परिवेश का क्या अर्थ है? उदाहरण देकर लिखें।
- पलटन का विदूषक किसे कहा गया है और क्यों?

10.3.4 संरचना शिल्प

आलोचक मधुरेश ने लिखा है कि 'उसने कहा था' वस्तुतः हिंदी की पहली कहानी है जो शिल्प विधान की दृष्टि से हिंदी कहानी को एक झटके से प्रौढ़ बना देती है। प्रेम, बलिदान, और कर्तव्य की भावना से अनेक कहानियाँ लिखी गयी हैं किन्तु यह कहानी अपनी मार्मिकता और सघन गठन के कारण आज भी अद्वितीय बनी हुई है। पूर्व दीप्ति शैली, चित्रात्मकता, व्यंगात्मकता, कल्पनाशीलता, आंचलिकता, भाव प्रधान शैली के गुणों से युक्त यह कहानी अपने समय से 50 वर्ष आगे की कहानी लगती है।

कहनी की भाषा दैनिक बोलचाल की भाषा है जिसमें पंजाबी, उर्दू, फारसी के शब्द प्रयोग से स्वाभाविकता और नाटकीयता आ गई है। लोकोक्तियाँ और मुहावरे पढ़कर कोई भी उन्हें लपके बिना न रहेगा। 'चार दिन तक पलक नहीं झपकी', 'जरा तो आँख लगने दी होती', 'आँख मारते-मारते' आदि। कहानी की शुरुआत ही बंबूकार्ट वालों की बोली से होती है। युद्ध के मैदान में भी विनोद प्रियता इसी बोली से आई है, "होश में आओ! कयामत आई है और लपटन साहब की वर्दी पहन कर आई है। उनकी वर्दी पहनकर कोई जर्मन आया है। सौहरा साफ उर्दू बोलता है।" कहीं संस्कृत की तत्सम शब्दावली, कहीं पंजाबी तड़का और कहीं हाट-बाज़ार की बोली। भाषा एक दम सधी हुई, तनी हुई और खुर्राट है।

आप खुद भी कुछ दूसरे उदाहरण देखें।

बोध प्रश्न

- कहानी की भाषा को क्यों मिली जुली कहा जा सकता है?
- यह कहानी अपने समय से आगे क्यों और कैसे है?

कथोपकथन

कथोपकथन या संवादों की दृष्टि से यह कहानी अपने समय की दूसरी कहानियों से बहुत अलग है। लेखक ने अपने पात्रों से वैसी ही भाषा बुलवाई है जो उनकी सामाजिक स्थितियों के अनुरूप हैं। शुरू में दोनों बच्चे और खास तौर से लड़का बहुत चुलबुला और हाजिरजवाब है। हाजिरवाब लड़की भी कम नहीं। एक उदाहरण देखें - तेरे घर कहाँ है?/ मगरे में - और तेरे/ माँझे में। यहाँ कहाँ रहती है?/ अतर सिंह की बैठक में, वे मेरे मामा होते हैं।/ मैं भी मामा के यहाँ आया हूँ, उनका घर गुरु बाज़ार में है। / तेरी कुड़माई हो गई? / इस पर लड़की ने आँखें तरेर कर

कहा 'धत'। / दो तीन बार यही प्रश्न आया 'तेरी कुड़माई हो गई' उत्तर भी यही आया 'धत'। / पर एक दिन फिर पूछा, उत्तर आया। / हाँ हो गई। / कब? / कल, देखते नहीं यह रेशमी कढ़ा हुआ सालू।

एक दूसरा संवाद उस समय का है जब जमादार लहना सिंह सूबेदार हज़ारा सिंह और बोधा सिंह के घर जाता है। उस समय सूबेदार कहता है, "लहना, सूबेदारनी तुमको जानती है। बुलाती है । जा मिल आ।" संवादों की अदायगी यहाँ भी सीधे दिल में तीर की तरह जा लगती है।

बोध प्रश्न

- इस कहानी की संवाद अदायगी की एक प्रमुख विशेषता क्या है? उदाहरण भी दीजिए।

10.3.5 शीर्षक की उपयुक्तता

यह कहानी प्रेम कहानी है। पर निखालिस भारतीय प्रेम कहानी जिसका नायक और नायिका न तो आज के प्रेमी-प्रेमिकाओं की तरह प्रेम-सप्ताह मनाते हैं और न प्रेम दिवस। न वे गुलाबों का लेना देना करते हैं और न साथ निभाने की कसमें खाते हैं। वे अपने प्रेम का इजहार नहीं करते, पर प्रेम करते हैं।

उसने कहा था? यह इस कहानी का शीर्षक है और क्या खूब शीर्षक है। आपने हिंदी कहानी का ऐसा चुंबकीय शीर्षक शायद ही पहले देखा हो। 'उसने कहा था' किसने क्या कहा था? एक दम दिल से सवाल निकलता है। आपके दिल से भी जरूर निकलेगा। इस सवाल का जवाब मिलता है, बराबर मिलता है। कहानी में ही मिलता है। कहानीकार ने न तो इस कहानी का शीर्षक किसी पात्र के नाम पर रखा और न किसी घटना के। 'उसने कहा था' का संकेत सूबेदारनी के एक कथन पर आधारित है। 'उसने कहा था' को कहानी के शीर्ष पर शीर्षक के रूप में रखने से इसके महत्व का पता चलता है। शीर्षक इस कहानी की शुरुआत के उसके अंत से जोड़ता है। लहना सिंह से सूबेदारनी ने बचपन की एक घटना को याद दिलाते हुए कहा था, "याद है एक दिन तांगे वाले का घोड़ा दही वाले की दुकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाए थे। आप घोड़ों की टांगों में चले गए थे और मुझे उठाकर दुकान के तख्त पर खड़ा कर दिया था। ऐसे ही इन दोनों को बचाना। यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।" यही था जो उसने कहा था और जिसको निभाने के लिए लहना सिंह ने जान की बाजी लगा दी। और अंत में लहना सिंह ने भी संदेश देते हुए कहा था, "सूबेदारनी होरा को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना। और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उन्होंने कहा था वह मैंने कर दिया।" लहना सिंह यहाँ 'उसके लिए' 'उन्होंने' का प्रयोग करके अपना आदर व्यक्त करता है। कहानीकार गुलेरी इस सारे वृत्तान्त में इसी प्रेम की आदर के रूप

में परिणति को दर्शाते हैं। यही इस कहानी का प्रतिपाद्य है। सूबेदारनी के कहे की ओर संकेत कराने वाला यह शीर्षक सार्थक भी है और उपयुक्त भी। इसमें संदेह नहीं। आप इस कहानी का कोई दूसरा शीर्षक जरूर सोच सकते हैं पर वह इससे बेहतर होगा, यह कहना कठिन है।

बोध प्रश्न

- किसने किससे क्या कहा था और क्यों?
- इस कहानी का एक दूसरा शीर्षक सुझाइए और अपने सुझाए शीर्षक की उपयुक्तता का एक उपयुक्त कारण भी बताइए।

10.4 पाठ सार

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की यह कहानी प्रेम के उच्च स्तर (ऊंचे दर्जे) की कहानी है। इस कहानी में मानवीय मूल्यों की रक्षा करने की भावना का प्रसार किया गया है। कहानी कला के तत्वों के आधार पर यह कहानी हिन्दी की कहानियों में प्रमुख स्थान रखती है। इस कहानी का शीर्षक, इसका फलक, और इसके चरित्रों का गठन तीनों अनूठे हैं। अमृतसर के बाज़ार से शुरू होती इस कहानी में फ्रांस की युद्ध भूमि तक के दृश्य हैं। बचपन में एक लड़की और लड़के की मुलाक़ात और हँसी मज़ाक के बीच पैदा हुए प्रेम से लेकर उनके जवान से अधेड़ होने के बाद भी उसके लिए जान पर खेल जाने वाले लहना सिंह की यह कहानी गजब की है।आठ वर्ष की बालिका और बारह वर्ष के बालक के बीच उपजे स्नेह के अंकुर से उपजी इस कहानी का अंत युद्ध के मैदान में होता है जहाँ लहना सिंह सूबेदारनी के कहने से उसके पति और पुत्र की रक्षा मरणासन्न अवस्था में भी करता है।

पाँच खंडों में विभक्त इस कहानी में नाटकीय ढंग से मानवीय सम्बन्धों को प्रस्तुत किया गया है। युद्ध क्षेत्र में साहस, वीरता, चतुराई और त्याग के अनेक चित्र और संवाद हैं। कहानी में प्रयुक्त लोक भाषा का प्रयोग और कहानी कहने में फ्लेशबैक पद्यति का निर्वाह कहानी को पठनीय और स्मरणीय बनाता है। अमृतसर के बाज़ार की दौड़ धूप का हू ब हू जीवंत वर्णन से लेकर पात्रों के आपसी संवाद और युद्ध के मैदानों में भी जोश भरे ज़िंदादिल लोगों के ठहाकों से सरोबार इस कहानी में लहना सिंह का सूबेदारनी के कहने से कुछ भी कर गुजरना इस कहानी को चिर-स्मरणीय बनाता है। कहानी कला के तत्वों के आधार पर 'उसने कहा था' की समीक्षा करने पर इसे सफल कहानी कहा जा सकता है।

यह आदर्श कहानी प्रेम का रूमानियत भरा यथार्थ चित्रण, मानवीय चरित्र का उदघाटन, इंसान की मजबूरी, प्रेम के विविध रंग-रूप, मिलिटरी जीवन का यथार्थ और सबसे अधिक सम्पूर्ण मानवता के लिए संदेश को लेकर कालजयी बनी है। लहना सिंह की दृष्टि से ही नहीं इस कहानी को सूबेदारनी को केंद्र में रखकर पढ़ने से यह कहानी 'जिसने कहा था' हो जाती है। सूबेदारनी के उदात्त और पवित्र प्रेम और उस पर अडिग विश्वास की कहानी के रूप में भी इसका एक पाठ बनता है। किसने कहा था? कब कहा था? क्यों कहा था? क्या कहा था? कैसे

कहा था? किस से कहा था? क्यों कहा था? आदि प्रश्नों के उत्तरों को खोजती बताती यह कहानी गुलेरी जी के इस पूरे नाटकीय संयोजन को सफल बनाती है। यही इसका प्रतिपाद्य है। सूबेदार की पत्नी बन जाने पर उस लड़की(सूबेदारनी) के लिए इस लड़के (लहना सिंह) के मन में वह भाव न रहा। वह उसे माथा टेकता है। जब सूबेदारनी युद्ध भूमि को जाते हुए अपने पति और पुत्र (हज़ारा सिंह और बोधा सिंह) की रक्षा का भार लहना सिंह को सौंपती है तो वह उसे आदेश मानता है । वह इस आज्ञा का पालन करने के लिए जान दे देता है। यह आत्मोत्सर्ग इसलिए क्योंकि- उसने कहा था।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अंतर्गत चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' के तात्विक विवेचन और विश्लेषण से निम्नलिखित उपलब्धियाँ प्राप्त हुईं -

1. इस कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता के निर्णय करने में आसानी हुई।
2. एक उदात्त प्रेम कथा के रूप में लहना सिंह और सूबेदारनी के बचपन से लेकर लहना सिंह की युद्ध के मैदान में मृत्यु तक की कथा के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि सूबेदारनी ने लहना सिंह को बचपन के प्रेम-संबंध का वास्ता देकर अपने पुत्र और पति की रक्षा करने का वचन लिया था जिसे लहना सिंह ने ताउम्र निभाया।
3. इसी दौरान इन दोनों के चरित्र की विशेषताओं का पता चला। कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता के संबंध में यह कहा जा सकता है कि जो उसने (सूबेदारनी ने) कहा था वह उसने (लहना सिंह ने) पूरा किया।
4. कहानी कला की दृष्टि से 'उसने कहा था' शीर्षक कहानी एक सफल रचना सिद्ध होती है। शैली, भाषा और संवाद की दृष्टि से कई नए प्रयोग हैं। शैली में पूर्व दीप्ति शैली, भाषा में यथार्थपरकता और संवादों में ताज़गी भरी वाचालता इसकी मुख्य विशेषताएँ हैं।

10.6 शब्द संपदा

1. आत्मोत्सर्ग = किसी अच्छे काम के लिए या दूसरों के लिए अपना सुख,लाभ आदि छोड़ने की क्रिया या भाव
2. उदात्त = महान, श्रेष्ठ, ऊंचा या भव्य
3. प्रौढ़ = पूर्णतः बढ़ा हुआ, (जैसे - प्रौढ़ बुद्धि, प्रौढ़ व्यक्तित्व)। मध्य अवस्था को प्राप्त (जैसे - प्रौढ़ उम्र)।
4. मर्मस्पर्शी = दिल को लगने वाला, दिल पर प्रभाव डालने वाला, हृदयस्पर्शी।
5. माकूल = उचित, ठीक, श्रेष्ठ
6. वय संधि = वय का अर्थ है आयु, उम्र या अवस्था। संधि का अर्थ है जुड़ाव, जुड़ना।

वय: संधि का अर्थ हुआ, जीवन में उम्र की विभिन्न अवस्थाओं (शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था एवं वृद्धावस्था) में एक अवस्था से अगली अवस्था में जाने का समय या अवधि।

7. विधा = रीति, ढंग, प्रकार आदि। साहित्य में **विधा** शब्द का प्रयोग एक वर्गकारक के रूप में किया जाता है। विधाओं की उपविधाएँ भी होती हैं। उदाहरण के लिये, कहानी गद्य की एक विधा है।
8. शौर्य = वीरता या बहादुरी

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'उसने कहा था' कहानी का मूल्यांकन कहानी के शीर्षक और उसके प्रतिपाद्य के आधार पर कीजिए।
2. कहानी कला की दृष्टि से 'उसने कहा था' की सारगर्भित समीक्षा कीजिए।
3. 'उसने कहा था' कहानी के नायक लहना सिंह का चरित्र चित्रण कीजिए।
4. सूबेदारनी ने 'उसने कहा था' में स्त्री के रूप में किन किन संवेदनाओं की प्रस्तुति की है?
5. 'उसने कहा था' कहानी में पात्र नहीं 'परिवेश' केंद्र में है? क्या आप इस कथन से सहमत हैं? उदाहरण देते हुए अपनी सहमति / असहमति व्यक्त कीजिए।
6. 'उसने कहा था' केवल एक लड़के-लड़की की प्रेम कहानी नहीं है, यह युद्ध की विभीषिका का वर्णन भी है। विवेचना कीजिए

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'उसने कहा था' कहानी में कहानीकार की जीवन-दृष्टि अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'उसने कहा था' प्रेम की महानता का चित्रण है। स्पष्ट कीजिए।
3. 'कल, देखते नहीं यह रेशमी कढ़ा हुआ सालू' यह कथन कैसा है? इसे सुनते ही सुननेवाले की क्या प्रतिक्रिया हुई और क्यों?
4. 'और अब घर जाओ तो कह देना कि मुझे जो उसने कहा था वह मैंने कर दिया' इस कथन का मर्म और आशय स्पष्ट करें।

5. 'जाड़ा क्या है, मौत है और निमोनिया से मरने वाले को नहीं मुरब्बे नहीं मिला करते।' वजीरा सिंह के इस कथन का क्या अभिप्राय है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. कहानी में लहना सिंह के चरित्र की प्रमुख विशेषता हैं - ( )
   (अ) चालबाजी (आ) बड़बोलापन (इ) मूढ़ता (ई) वचनबद्धता
2. सूबेदारनी के पति का नाम है? ( )
   (अ) लहना सिंह (आ) बोधा सिंह (इ) वजीरा सिंह (ई) हज़ारा सिंह
3. 'उसके बालों और उसके ढीले सुथने से जान पड़ता था कि दोनों सिख हैं" इस कथन में 'दोनों' कौन हैं? ( )
   (अ) वजीरा सिंह और बोधा सिंह (आ) लहना सिंह और हज़ारा सिंह
   (इ) लहना सिंह और सूबेदारनी (ई) सभी
4. 'उसने कहा था' कहानी का मुख्य उद्देश्य है - ( )
   (अ) लहना सिंह की बहादुरी दिखाना
   (आ) भारतीय सैनिकों की युद्ध में वीरता दिखाना
   (इ) लहना सिंह और सूबेदारनी की प्रेम कहानी
   (ई) सूबेदारनी के कहे को वचन मानकर पालन करना दिखाना

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'उसने कहा था' कहानी का कथ्य ..... और .....के सम्बन्धों पर आधारित है।
2. 'उसने कहा था' कहानी के ..... खंड या भाग हैं। इनमें से ..... युद्ध स्थल पर आधारित हैं और ..... अमृतसर पर।
3. ..... पलटन का विदूषक है।
4. कहानीकार द्वारा कहानी में ..... शैली का प्रयोग किया गया है।
5. सूबेदारनी ने अपने ..... और .....की रक्षा करने को कहा।

III. सुमेल कीजिए -

1. कथा का प्रारम्भ	(अ) मैदान में घावों से मरा
2. कथा का विकास	(आ) तेरी कुड़माई हो गई
3. कथा का अंत	(इ) क्या हुआ?
4. गौण पात्र	(ई) लहना सिंह - सूबेदारनी
5. मुख्य पात्र	(उ) हज़ारा सिंह - बोधा सिंह

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. चंद्र धर शर्मा गुलेरी : मस्त राम कपूर
2. हिन्दी कहानी पहचान और परख : इन्द्र नाथ मदान

इकाई 11. प्रेमचंद : एक परिचय

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ – प्रेमचंद : एक परिचय
11.3.1 प्रेमचंद : जीवन एवं व्यक्तित्व
11.3.1.1 प्रेमचंद का जीवन परिचय
11.3.1. 2 प्रेमचंद का व्यक्तित्व
11.3.2 प्रेमचंद का कृतीत्व
11.3.2.1 प्रेमचंद का कहानी साहित्य
11.3.2.2 प्रेमचंद का उपन्यास साहित्य
11.4 पाठ सार
11.5 पाठ की उपलब्धियाँ
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

छात्रो! हिंदी साहित्य की गद्य विधा में कथा- साहित्य सबसे आधुनिक है हिंदी कथा-साहित्य में प्रेमचंद को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। जिस समय हिंदी कथा-साहित्य तिलिस्मों की भूलभुलैया में भटक रहा था, उस समय प्रेमचंद एक नए दृष्टिकोण को लेकर उपस्थित हुए। उन्होंने साहित्य के उद्देश्य को केवल मनोरंजन के रूप में न स्वीकार करते हुए जीवन की समालोचना के रूप में स्वीकार किया। प्रेमचंद ने समाज के शोषित, पददलित तथा सर्वहारा वर्ग को अपने लेखन की विषय-वस्तु बनाया। पात्रानुकूल भाषा उनके साहित्य की महत्वपूर्ण विशेषता है। उनकी भाषा में सामान्य मनुष्य की सरलता झलकती है। लगभग 300 कहानियाँ तथा दर्जन भर उपन्यास लिखकर हिंदी साहित्य संसार में 'उपन्यास सम्राट' के रूप में जाने जाते हैं। उनके उपन्यास स्वयं में युग जीवन के सजीव चित्र है। हिंदी का सामान्य से सामान्य पाठक भी उनके नाम से भली-भाँति परिचित है। जिस प्रकार काव्य के क्षेत्र में गोस्वामी तुलसीदास ने जनसाधारण को प्रभावित किया, उसी प्रकार प्रेमचंद ने कथा साहित्य के क्षेत्र में सामान्य पाठक को प्रभावित किया। इस इकाई में प्रेमचंद के जीवनवृत्त तथा उनके साहित्य- संसार पर दृष्टिपात करेंगे।

11.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से बाद आप –

- प्रेमचंद के जीवन संबंधित विविध पहलुओं से परिचित हो सकेंगे।

- उनके साहित्य से परिचित हो सकेंगे।
- उनकी जीवन दृष्टि से अवगत हो सकेंगे।
- उनके साहित्य में निहित सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक संदर्भों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- तत्कालीन परिस्थितियों की समझ प्राप्त कर सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : प्रेमचंद : एक परिचय

11.3.1 प्रेमचंद : जीवन एवं व्यक्तित्व

11.3.1.1 प्रेमचंद का जीवन परिचय –

साहित्य को किसी भी समाज की समस्त संवेदनाओं का कोष कहा जा सकता है। साहित्य का आधार ही मानव-जीवन है। इसी मानवीय संवेदनाओं, वेदनाओं तथा संघर्ष आदि को प्रेमचंद ने अपनी कलम द्वारा शब्दों में पिरोकर मुखर वाणी प्रदान की। साहित्यकार साहित्य सृजन की प्रक्रिया में अपने कठिन-मृदु अनुभवों को अपनी रचनाओं के माध्यम से उजागर करता है। अर्थात साहित्यकार का व्यक्तित्व अपनी कृतीयों के माध्यम से उजागर होता है। अतः प्रेमचंद के साहित्य संसार को समझने के लिए उनके समग्र जीवन को समझना आवश्यक है।

जन्म : -

हिंदी के महान साहित्यकार प्रेमचंद का जन्म शनिवार दिनांक 31 जुलाई, 1880 को बनारस शहर से करीब चार मील दूरी पर स्थित लमही नामक ग्राम में एक निम्नमध्यवर्गीय परिवार में हुआ। उनका बचपन का नाम धनपतराय था। उनके चाचा प्यार से उन्हें नवाबराय कहकर पुकारते थे। उनके पिताजी का नाम अजयाबरय और माताजी का नाम आनंदी देवी था। आठ वर्ष की उम्र में माता आनंदी देवी की मृत्यु हो गई। पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। सौतेली माँ के व्यवहार की कटुता का अनुभव भी इन्हें प्राप्त हुआ।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंद के माता-पिता के नाम बताइए।

बचपन :-

प्रेमचंद का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था। वे बचपन से ही शांत स्वभाव के थे। प्रेमचंद के पिता अजायबराय डाक खाने में डाक मुंशी थे जिनका मासिक वेतन दस रुपये से शुरू होकर अवकाश-प्राप्ति के समय चालीस रुपये पहुँचा था। बड़ी मुश्किल से इनके परिवार का पोषण हो पाता था। बचपन से प्रेमचंद को एक किसानी जीवन का वातावरण मिला। उनके साहित्य में दैन्य जीवन के जो चित्र मिलते हैं, वे उनके स्वयं भोगे हुए क्षणों की मार्मिक अभिव्यक्ति हैं। प्रेमचंद का बचपन आर्थिक तंगी में गुजरा। उन्होंने अपने बचपन के संबंध में लिखा है। "अंधरा के पुल का चमरौधा जूता मैंने बहुत दिनों तक पहना है। जब तक मेरे पिता जीवित रहे तब तक उन्होंने मेरे लिए बारह आने से ज्यादा का जूता कभी नहीं ख़रीदा और चार आने गज से ज्यादा का कपड़ा कभी नहीं ख़रीदा।" (प्रेमचंद घर में – शिवरानी देवी, पृ. 2) बचपन में ज्यादातर माँ का प्यार नहीं मिला। माता की मृत्यु के पश्चात् उन्हें अधिक दुःख सहना

पड़ा। सौतेली माँ से हमेशा ही तिरस्कार, दुर्व्यवहार होने लगा। सौतेली माँ उन्हें डांटती-झिड़कती रहती थी, इसलिए प्रेमचंद को घर के बाहर ही रहना पसंद था।

बोध प्रश्न-

- प्रेमचंद के पैतृक परिवार की आर्थिक दशा कैसी थी ?

शिक्षा :-

प्रेमचंद की प्रारंभिक शिक्षा वाराणसी में हुई। उनकी आरंभिक शिक्षा उर्दू एवं फारसी में हुई। अध्ययन में उनकी रुचि बचपन से थी। तेरह वर्ष तक वे हिंदी बिलकुल ही नहीं जानते थे। तेरह वर्ष की उम्र तक उन्होंने कई उपन्यासों को पढ़ लिया था। प्रेमचंद को उर्दू और फारसी की शिक्षा एक मौलवी साहब से प्राप्त हुई, जो पेशे से दर्जी थे, मगर साथ ही मदरसा भी चलाते थे। इस संदर्भ में उनके पुत्र अमृतराय लिखते हैं, "मौलवी साहब ने नवाब की फारसी की जड़ काफी मजबूत कर दी। उर्दू के बारे में कहा जाता है कि उर्दू पढाई नहीं जाती, घलुये में आती है : पढाई तो फारसी में की जाती है। जो भी बात हो इसमें शक नहीं कि इन मौलवी साहब ने फारसी की बुनियाद खूब पक्की कर दी थी कि उस पर यह महल खड़ा हो सका।"(प्रेमचंद : कलम का सिपाही, अमृत राय, पृ. 16) गोरखपुर के मिशन स्कूल से इन्होंने आठवीं पास की। नवाब जब नवीं कक्षा में थे, तब उनका विवाह हुआ। अगले साल उन्हें मैट्रिक की परीक्षा देनी थी, दुर्भाग्यवंश उनके पिता अजायबराय लंबी बीमारी के बाद परलोक सिधार गए। नतीजतन नवाब परीक्षा में न बैठ सके। सब 1898 में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा सेकंड डिवीज़न में उत्तीर्ण की। गणित में कमजोर होने के कारण उन्हें किसी कॉलेज में 'इंटर' क्लास में प्रवेश न मिल पाया। धनाभाव के कारण स्थानीय विद्यालय में शिक्षक की नौकरी कर ली । चूँकि अध्ययन-अध्यापन की रुचि बचपन से ही थी तो उन्होंने अध्यापन के साथ-साथ अपनी पढाई जारी रखी। सन् 1902 में इलाहबाद के ट्रेनिग की परीक्षा अव्वल दर्जे में उत्तीर्ण की। सन् 1910 में उन्होंने अंग्रेजी, दर्शन, फारसी और इतिहास विषयों को लेकर इंटर उत्तीर्ण किया। सन् 1919 में स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरांत शिक्षा-विभाग में इंस्पेक्टर पद पर नियुक्त हो गए।

बोध प्रश्न –

- प्रेमचंद ने इंटरमीडिएट परीक्षा किन विषयों को लेकर उत्तीर्ण की।

विवाह :-

प्रेमचंद जब नौवीं कक्षा में थे तब उनकी उम्र पंद्रह साल की थी। नौंवी क्लास की वार्षिक परीक्षा कुछ दिन पहले उनके पिताजी ने प्रेमचंद के विवाह का प्रबंध कर दिया। बिदाई के बाद जब वे बारात लेकर अपने घर लमही पहुंचते हैं। प्रेमचंद ने जब अपनी दुल्हन को देखा तो ऐसा लगा जैसे उनके शरीर का खून सूख गया हो, दुल्हन उम्र में उनसे बड़ी थी, एक कंधा दूसरे कंधे से ऊँचा, रंग काला और बहुत ही बदसूरत थी। प्रेमचंद और उनकी पत्नी के बीच तकरार बढ़ती गई और अंत में उन्होंने अपनी पत्नी को छोड़ दिया।

सन् 1905 में प्रेमचंद की उम्र पच्चीस वर्ष से ऊपर चल रही थी, पर वे विवाहित होकर भी दांपत्य जीवन से वंचित थे। अंततः उन्होंने दूसरा विवाह करने का निश्चय किया, पर किसी

विधवा युवती से। "सलीमपुर (जिला फतेहपुर) के मुंशी देवीप्रसाद की लड़की शिवरानी देवी ग्यारह साल की होकर विधवा हो गई थी। मुंशी दुखी थे और चाहते थे कि इस बेचारी का दूसरा विवाह हो। पंडितों से पूछा। समाचार पत्रों में इश्तिहार निकलवाया। इसके जवाब में कई पत्र आए। इनमें से के प्रेमचंद का था। इसमें अपनी शिक्षा तथा नौकरी के बारे में लिखा था और कहा था कि पहली बीवी मर चुकी है। देवी प्रसाद ने उन्हें फतेहपुर बुलाया, पसंद किया, वरच्छा दी और किराये के पैसे दिए। प्रेमचंद के घरवाले विधवा-विवाह के विरुद्ध थे, इसलिए प्रेमचंद ने उन्हें खबर तक न दी। विधवा से विवाह करना इनकी देलेरी थी।"(कलम का मजदूर : प्रेमचंद, मदन गोपाल, पृ. 28) सन् 1906 में महाशिवरात्रि के दिन उनका दूसरा विवाह मुंशी देवीप्रसाद की बाल विधवा पुत्री शिवरानी देवी से संपन्न हुआ। शिवरानी देवी के रूप में उन्हें आदर्श सहधर्मचारणी मिली। प्रेमचंद जी के साहित्य साधना के अनुरूप परिस्थिति निर्माण करने के लिए उन्होंने हमेशा प्रयास किया । शिवरानी देवी ने प्रेमचंद को राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के लिए सक्रिय साथ दिया। इन्द्रनाथ मदान को अपने सफल वैवाहिक जीवन को स्पष्ट करते हुए पत्र लिखते हैं। "मैंने एक बाल विधवा से की और मैं उनके साथ अत्यंत प्रसन्न हूँ। उसकी रुचि साहित्यिक है।... वह निर्भीक साहसी, दृढ़, विश्वसनीय, भूल स्वीकार करनेवाली और अत्यधिक प्रोत्साहन देनेवाली स्त्री है।"(प्रेमचंद : एक विवेचन, इन्द्रनाथ मदान, पृ. 26)

बोध प्रश्न

प्रेमचंद ने शिवरानी देवी के बारे में पत्र में क्या लिखा ?

आजीविका :-

प्रेमचंद के पिता अजायबलाल की मृत्यु के उपरांत संपूर्ण परिवार का भार प्रेमचंद पर पड़ा। परिवार में उनकी सौतेली माँ, सौतेली माँ का एक साल का बच्चा, साथ में चाची के छोटे सौतेले भाई विजय बहादुर अपनी बहन के साथ रहने आ गए। धनाभाव के कारण प्रेमचंद को नौकरी की जरूरत महसूस हुई। सौभाग्य से पाँच रुपये मासिक वेतन एक वकील के लड़कों को पढ़ाने का मौका मिल गया। चुनार के मिशन स्कूल में अठारह रुपये वेतन पर मास्टर की नौकरी की, परन्तु वहां का घुटनशील वातावरण उन्हें रास नहीं आया। इस तरह प्रेमचंद जी चुनार से बनारस लौट आए, साथ ही उन्होंने नए काम की तलाश शुरू की। क्वींस कॉलेज के प्रिंसिपल बेकन साहब प्रेमचंद के पारिवारिक एवं चारित्रिक गुणों से भलीभाँति परिचित थे। उन्हीं की सिफारिश से प्रेमचंद की नियुक्ति 2 जुलाई, 1900 को बहराइच के जिला स्कूल में मास्टर के पद पर हुई। बीस रुपये प्रति माह वेतन पर सरकारी नौकरी क्रमवार प्रारंभ हुई।

प्रेमचंद का बहराइच से ढाई महीने में ही तबादला प्रतापगढ़ के जिला स्कूल में हुआ। बीस रुपये पारिवारिक जरूरतों के लिए काफी न थे। इसलिए प्रेमचंद ने ठाकुर साहब के लड़कों को ट्यूशन पढ़ाना शुरू किया। लगभग दो वर्ष प्रतापगढ़ में रहने के बाद महकमें से दो साल छुट्टी लेकर इलाहाबाद में मास्टरी की ट्रेनिंग की। कालेज के प्रिंसिपल केम्प्स्टर ने प्रेमचंद के चारित्रिक गुणों से प्रभावित होकर मॉडल स्कूल का हेडमास्टर बनाकर उन्हें इलाहाबाद बुला लिया। यहाँ से 1905 में उनका कानपुर स्थानांतरण हुआ, जहाँ वे 'जमाना' पत्रिका के संपादक दयानारायण निगम के संपर्क में आए और इसी पत्रिका में उनकी कहानियाँ और आलोचनाएं छपने लगीं। सन्

1909 में आपकी स्कूलों के सहायक निरीक्षक के रूप में पदोन्नति हो गई। यह पद उनके स्वास्थ्य के अनुकूल नहीं था, इसलिए उन्होंने सन् 1915 बस्ती के सरकारी विद्यालय में पुनः अध्यापक की ही नौकरी स्वीकार कर ली। इसी बीच में उनका गोरखपुर में तबादला हो गया।

गोरखपुर में एक बार महात्मा गांधी की सभा का आयोजन हुआ। प्रेमचंद उस सभा में गए और गांधीजी के भाषण का उनके मन पर प्रभाव हुआ। तब से प्रेमचंद नौकरी से विरक्त होने लगे। लगभग पच्चीस साल की नौकरी को त्याग दिया। सरकारी नौकरी छोड़ने के बाद उदरनिर्वाह की चिंता सताने लगी। कानपुर में मारवाड़ी पाठशाला की नौकरी करने का निर्णय लिया। यहाँ पर भी उनकी स्वाभिमानी वृत्ति आडे आई। इस नौकरी को छोड़कर उन्होंने स्वत्रंत लेखन व्यवसाय की तरफ ध्यान दिया। आर्थिक स्वावलंबन के लिए सरस्वती प्रेस की स्थापना की और 'हंस' पत्रिका प्रकाशन प्रारंभ की। 'हंस' में जनजागरण और राष्ट्र-प्रेम संबंधी रचनाओं का बाहुल्य रहता था, इसलिए आएं दिन जमानतें जब्त होती रहती थीं। इसी दौर में कर्मचारियों द्वारा हड़ताल भी की गई । प्रेस की आर्थिक स्थिति काफी ख़राब हो गई। सन् 1928 से 1931 तक वे लखनऊ से प्रकाशित 'माधुरी' पत्रिका का 200/- रुपया मासिक पर संपादन करते रहे।

इन्हीं दिनों सन् 1934 में प्रेमचंद को बंबई के अजंता मूवीटोन से 9000 रु. वार्षिक पर आमंत्रण मिला। सिनेमा के सहयोग से वे अपनी विचारधारा को और अधिकाधिक लोगों तक पहुंचा सकते थे। परंतु बंबई जाने पर उनके हाथ निराशा लगी। उन्होंने देखा कि फिल्म डायरेक्टरों का दृष्टिकोण सिने दर्शकों का सस्ता और कामोत्तेजक मनोरंजन कर उनकी जेबें खाली कराना था। इसलिए वे बंबई से लौटे आए। प्रेस का घाटा उनके अंतर्मन को घुन की तरह खाए जा रहा था। स्वास्थ्य दिनोंदिन गिरता जा रहा था। लंबी बीमारी से विवश हो, 'हंस' किसी प्रकार चालू रखने के लिए उसे 'भारतीय साहित्य परिषद्' को सौंप दिया। अंत में परिषद् ने भी उसका प्रकाशन बंद कर दिया।

अपने गिरते स्वास्थ्य की स्थिति में भी प्रेमचंद ने सन् 1935 में 'प्रगतिशील लेखक संघ' के लखनऊ में आयोजित प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता स्वीकार करके बड़ा सारगर्भित वक्तव्य देकर लेखकों का मार्गदर्शन किया।

इस प्रकार साहित्य का यह सिपाही आजीवन अपनी आजीविका के लिए संघर्षरत रहा और आर्थिक विपन्नता से जूझता रहा।

बोध प्रश्न –

- महात्मा गांधी के भाषण का प्रेमचंद पर क्या असर हुआ ?

नाम परिवर्तन :-

देश – प्रेम और दीन-दलित वर्ग के उद्धार की भावना प्रेमचंद के हृदय में कूट-कूटकर भरी हुई थी। सन् 1907 में इनका पहला कहानी संग्रह 'सोजेवतन' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इसमें अधिकांश कहानियाँ राष्ट्र-भावना और देश-प्रेम से ओत-प्रोत थी। ब्रिटिश सरकार को इन कहानियों में 'देशद्रोह' की गंध प्रतीत हुई और जिलाधीश ने उन्हें आदेश दिया कि वे आगे से अपनी रचनाएँ छपवाने से पूर्व जिलाधीश को दिखा लिया करें। प्रेमचंद बड़े संकट में फँस गए।

उन्होंने अपने मित्र मुंशी दयानारायण नियम को एक पत्र में लिखा "...नवाबराय तो गालिबन हुए कुछ दिनों के लिए इस जहाँ से गए। दुबारा याददेहानी हुई कि तुमने मुआहिदे में अखबारी मजामीन नहीं लिखे, मगर इसका मंशा हर किस्म की तहरीर से था गोया मैं कोई मजमून, ख्वाह किसी मजमून पर – हाथी दांत पर ही क्यों न हो- लिखूँ , मुझे पहले वह जनाब फैजनआब कलेक्टर साहब बहादुर की खिदमत में पेश करना पड़ेगा और मुझे छठे-छमासे लिखना नहीं, यह तो मेरा रोज का धंधा ठहरा। हर माह एक मजमून जनाबे वाला की खिदमत में पहुँचेगा तो वह समझेंगे कि मामिन अपने फराइजे सरकारी में खयानत करता हूँ और काम मेरे सर थोपा जायेगा। इसलिए कुछ दिनों के लिए नवाब राय मरहूम हुए। उनके जानशी कोई और साहब होंगे। आप मेरा मजमून किताबत कराने के बाद मुंशी चिराग अली को दे दिया करेंगे। "(प्रेमचंद : कलम का सिपाही, अमृतराय, पृ. 112-113) अब यहीं से 'नवाबराय' दूसरे नाम की आवश्यकता हुई और उसकी तलाश प्रारंभ हुई।

मुंशी दयानारायण ने 'प्रेमचंद' नाम प्रस्तावित किया। इसके उत्तर में नवाब राय ने लिखा "प्रेमचंद अच्छा नाम है। मुझे भी पसंद है। अफसोस सिर्फ यह है कि पांच-छः साल में 'नवाब राय' को फरोग देने की जो मेहनत की गयी, वह सब अकारथ हो गयी। यह हजरत किस्मत के हमेशा लंडूरे रहे और शायद रहेंगे।.." (प्रेमचंद : कलम का सिपाही, अमृतराय, पृ.113)

इस प्रकार पैतृक नाम धनपतराय से चाचा का दिया हुआ नाम 'नवाब राय' लुप्त होते-होते, सन् 1910 में आकर 'प्रेमचंद' का जन्म हुआ। इस नए नाम से प्रकाशित होने वाली पहली कहानी' बड़े घर की बेटी' है।

बोध प्रश्न –

- प्रेमचंद के नवाबराय से प्रेमचंद बनने की परिस्थियाँ क्या थी?

देहावसान :-

सन् 1926 के गर्मी के दिनों में प्रेमचंद को उल्टी और खून के दस्त हुए। उसके पश्चात् उनकी तबियत बिगड़ने लगी। 18 जून, 1936 फको गोर्की की मृत्यु हुई। उनकी शोक सभा में जाकर भी कमजोर के कारण वे भाषण न दे सके। धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य बिगड़ता गया। उन्हें खून की उल्टियाँ होने लगी। पेट का दर्द असह्य होता जा रहा था। नीद नहीं आती थी। रात की रात जागते कटती थी। इन सबके बावजूद कलम का सिपाही अपनी रचना 'मंगलसूत्र' लिखने बैठ ही जाता था।

25 जुलाई, 1936 की रात पुनः खून की उल्टियाँ होने लगीं। उनका इलाज शुरू हुआ। जाँच से पता चला कि उन्हें 'सिरोसिस ऑफ़ लीवर' है। स्वास्थ्य ठीक होने की उम्मीद कम होती गई, फिर भी कोशिश जारी थी। दो अन्य डॉक्टरों को भी दिखाया गया। धीरे-धीरे पैसा ख़त्म होने लगा। वे अपने मित्रों को बुलाकर मिलते रहे। उन्हें अपने जाने का गम न था, अपितु दोस्तों के बिछुड़ने का दर्द था। अब वे बहुत कमजोर हो गए थे, इतने कमजोर कि बात करने में भी थकान होती थी।

अततः 8 अक्तूबर, 1936 को सरस्वती के सपूत, साहित्य का दृढ़ सेनानी, कलम के सिपाही, दीन-दलितों के बंधु और सर्व हितैषी प्रेमचंद कठिनाइयों से लड़ते-लड़ते सदा के लिए अमर हो गए।

भीष्म साहनी प्रेमचंद के बारे में लिखते हैं "कुछ लेखक हैं जो अपने जीवन में तो बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त कर लेते हैं, लेकिन मरने के बाद उनका नाम उनके साथ मर जाता है। लेकिन प्रेमचंद जैसे कुछ लेखक होते हैं, जो मरने के बाद भी बड़े चाव और आग्रह से पढ़े जाते हैं। कहीं कोई भूख है जिसे प्रेमचंद की रचनाएँ आज भी शांत कर पाती हैं।"(प्रेमचंद : व्यक्तित्व और रचनादृष्टि, संपादक – दयानंद पाण्डेय, पृ.20)

बोध प्रश्न –

- भीष्म साहनी ने प्रेमचंद के बारे में क्या लिखा है ?

11.3.1.2 प्रेमचंद का व्यक्तित्व:-

प्रेमचंद के व्यक्तित्व उनके जीवन के तथ्यों से होता है। उन्होंने परम्पराओं की बेड़ियों को छिन्न-भिन्न करते हुए विधवा से विवाह का साहसिक कर्दम उठाया। अपने पहले कहानी संग्रह 'सोजे वतन' में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लिखकर अपने देशप्रेम का परिचय देते हुए अपनी बीस वर्ष की सरकारी नौकरी की आहुति चढ़ा दी थी। यद्यपि बाहर से उनका व्यक्तित्व बहुत सादा था, पर अंदर से क्रांतिकारिता उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी।

'सादा जीवन उच्च विचार' की उक्ति प्रेमचंद पर पूर्णतया चरितार्थ होती है। साहित्यकार जैनेंद्र ने उन्हें पहली बार देखा तो वे लिखते हैं "जीने के नीचे से ऊपर झाँकने पर मुझे जो कुछ दिखा उससे मुझे बहुत धक्का लगा। जो सज्जन ऊपर खड़े थे, उनकी बड़ी घनी मूँछे थीं। पाँच रुपये वाली काली, लाल इमली की चादर ओढ़े हुए थे जो काफी पुरानी और चिकनी थी। बालों ने आकर माथे को कुछ ढँक-सा लिया था और माथा छोटा मालूम होता था। सिर जरूरत से छोटा प्रतीत होता था। वे मामूली धोती पहने हुए थे, जो घुटनों से जरा नीचे आ गयी थी। प्रेमचंद इन्हीं को जानकर कुछ सुख मेरे मन को नहीं हुआ। क्या जीतेजी प्रेमचंद इन्हीं को मानना होगा ? प्रेमचंद के नाम पर खड़ा वह व्यक्तित्व साधारण, इतना स्वल्प, इतना देहाती मालूम हुआ कि उनके व्यक्तित्व संबंधी समस्त धारणाएँ छिन्न-भिन्न हो गयी।"(प्रेमचंद : एक कृती व्यक्तित्व, जैनेन्द्र कुमार, पृ. 19)

प्रेमचंद सरल, सहज और सादगी की साकार प्रतिमा थे। पहली नजर में प्रेमचंद को देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि प्रेमचंद यही हैं। इसके बावजूद वे स्वाभिमानी भी बहुत थे। उत्तर प्रदेश के गवर्नर हेली ने प्रेमचंद को रायसाहब का ख़िताब देने की इच्छा प्रकट की । लेकिन प्रेमचंद ने उसे अस्वीकृत करते हुए अपनी पत्नी से कहा – "उनको धन्यवाद लिख दूँगा और लिख दूँगा कि मैं जनता का सेवक हूँ। अगर जनता की राय साहबी मिलेगी तो सिर – आँखों पर। गवर्नमेंट की राय साहबी की इच्छा नहीं।" (प्रेमचंद : घर में, शिवरानी देवी, पृ. 119)

प्रेमचंद विनोदप्रिय व्यक्ति थे। इसी स्वभाव के कारण अपरिचित व्यक्ति भी अपना संकोच छोड़कर उनसे बातचीत करता था। इस बारे में जैनेंद्र कुमार प्रेमचंद की पहली मुलाक़ात के अनुभव से लिखते हैं – "मैंने इतनी खुली हँसी जीवन में शायद ही कभी सुनी थी।।" (प्रेमचंद : एक कृती व्यक्तित्व, जैनेंद्र कुमार, पृ. 23) प्रेमचंद मनुष्य जीवन को एक रंगभूमि मानते थे। हँसी मजाक से आनेवाले सुख-दुखों को समान भाव से स्वीकार करना चाहिए। यही प्रेमचंद की धारणा थी।

प्रेमचंद के मन में स्त्री जाति के प्रति श्रद्धा थी। वे स्त्रियों को पुरुषों से बड़ा समझते थे। अपनी पत्नी के प्रति उनके मन में सहधर्मिणी ही नहीं, अपितु समानाधिकारिणी की भावना विद्यमान थी, इसका उदाहरण उन्होंने बाल-विधवा शिवरानी देवी से विवाह करके प्रस्तुत किया था।

प्रेमचंद परंपरागत वर्ण-व्यवस्था में आस्था न रखकर व्यक्ति विशेष को उसके आचरण की पवित्रता एवं दया-भाव के आधार पर ऊँची या अधम श्रेणी का प्राणी मानने के पक्षपाती थे। तीर्थ स्थानों में व्याप्त दुराचरण के वे घोर विरोधी थे- "हमारे तीर्थस्थान क्या है ? ठगों के अड्डे और पाखंडों के अखाड़े। जिधर देखिये धर्म के ढोंग का बाजार गर्म है।" (विविध प्रसंग, प्रेमचंद, पृ. 157)

प्रेमचंद पर गांधीवाद का प्रभाव था। गांधी जी ही उनके समकालीन राजनीतिक क्षितिज के प्रमुख सितारे थे। प्रेमचंद गांधी जी के विचारों का अनुमोदन करते थे। उन्होंने गांधी जी के भाषण से प्रभावित होकर अपनी बीस साल पुरानी सरकारी नौकरी त्याग दी थी। वे कहते हैं- "दुनिया में गांधी को सबसे बड़ा मानता हूँ। उनका भी उद्देश्य यही है कि मजदूर और काश्तकार सुखी हों, वह इन लोगों को आगे बढ़ाने के लिए आंदोलन मचा रहे हैं। मैं लिखकर उनको उत्साह दे रहा हूँ। महात्मा गांधी हिंदू- मुस्लमानों की एकता चाहते हैं, तो मैं भी हिंदी और उर्दू को मिला करके हिंदुस्थानी बनाना चाहता हूँ।" (प्रेमचंद : घर में, शिवरानी देवी, पृ. 111)

प्रेमचंद का झुकाव एक ओर गांधीवाद की ओर था, तो दूसरी ओर साम्यवाद एवं मार्क्सवाद से भी वे प्रभावित थे। वे मजदूरों और काश्तकारों के हिमायती थे। परंतु यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद को न तो पूर्णतया कांग्रेस की गांधीवादी नीतियाँ स्वीकार थीं, न ही वे साम्यवाद के क्रांति-सिद्धांत में पूर्ण आस्था रखते थे। प्रेमचंद के गांधीवादी तथा साम्यवादी होने के विषय में डॉ. राजेश्वर गुरु का मत द्रष्टव्य है – "प्रेमचंद अपने को जितना कम्युनिस्ट समझते हैं, उससे अधिक कम्युनिस्ट और जितना गांधीवादी मानते, उससे कम गांधीवादी हैं। या यों कह लीजिए कि प्रेमचंद का आदि गांधीवाद है और अंत साम्यवाद।" (प्रेमचंद: एक अध्ययन, डॉ. राजेश्वर गुरु, पृ. 106)

प्रेमचंद हिंदू-मुस्लिम एकता के घोर समर्थक थे। अपनी कहानियों, उपन्यासों, नाटकों तथा लेखों में उन्होंने उसका जबरदस्त समर्थन किया है। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से सांप्रदायिक समस्या पर तर्कसंगत और मानवीय विवेक से संपन्न विचार प्रस्तुत किए हैं। अपने

लेख 'साम्प्रदायिकता और संस्कृति' में वे लिखते हैं- "अब संसार में केवल एक संस्कृति है और वह है आर्थिक संस्कृति।"

11.3.2 प्रेमचंद का कृतीत्व :

हिंदी कथा साहित्य में प्रेमचंद का आगमन एक शलाका पुरुष की भांति हुआ। प्रेमचंद का कथा साहित्य न केवल भारतीय साहित्य में अपना स्थान रखत्ता है, अपितु पाश्चात्य साहित्य के समकक्ष स्वयं को स्थायित्व प्रदान करता है। प्रेमचंद का साहित्य तत्कालीन परिवेश का जीवंत चित्र है। प्रेमचंद का कथा-साहित्य यथार्थ के धरातल पर नयी सोच, अर्थवत्ता व शिल्पगत नये आयाम लेकर उपस्थित हुआ। प्रेमचंद-पूर्व साहित्य में मानवीय दृष्टिकोण प्रायः का अभाव था। प्रेमचंद ने अपने साहित्य में यथार्थ का चित्रण करके आदर्श का दिशा-निर्देश दिया है और काल्पनिक घटनाओं एवं चरित्रों को दूर रखकर व्यावहारिक एवं अपने आस-पास के चरित्रों को उकेरा है। प्रेमचंद साहित्य, समाज व राजनीति को एक शृंखला के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार ये तीनों चीजें साथ-साथ चलने वाली है। उनकी रचनाओं में सामाजिक सुधारों अथवा राष्ट्रीय चेतना का सच्चा इतिहास मिलता है। सामाजिक व राजनीतिक घटनाओं के प्रति उनका स्वयं का विचार है कि "साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल से प्रभावित होता है। जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना कठिन हो जाता है। उसकी विशाल आत्मा अपने देश बंधुओं के कष्टों से विकल हो उठती है और इस तीव्र विकलता में वह रो उठता है पर उसके रुदन में व्यापकता होती है। वह स्वदेशी होकर भी सार्वभौमिक होता है।" (कुछ विचार, प्रेमचंद, पृ. 95)

प्रेमचंद के साहित्य का प्रयोजन 'अर्थकृते' न होकर 'व्यवहारविदे' है। उनका साहित्य 'कला, कला के लिए' न होकर 'जीवन के लिए' था। प्रेमचंद ने जिस समय अपना साहित्यिक कार्य आरंभ किया, उस समय हिंदी साहित्य में परंपरागत काल्पनिकता बहुल मनोरंजक साहित्य का बोलबोला था। उन्होंने मनोरंजन के चंगुल से कथा-साहित्य को निकालकर यथार्थ के धरातल पर स्थिर करने का कार्य लिया । वस्तुतः प्रेमचंद का साहित्य अपने युग की परिस्थितियों और समस्याओं का दर्पण है।

प्रेमचंद की शिक्षा फारसी से शुरू हुई थी। तेरह वर्ष तक वे हिंदी बिलकुल ही नहीं जानते थे। उन्होंने बचपन में ही कई उर्दू कथा पुस्तकें तथा अंग्रेजी से उर्दू में अनुदित पुस्तकों को पढ़ लिया था। प्रेमचंद की प्रारंभिक रचनाएँ उर्दू में प्रकाशित हुईं। इस संदर्भ में डॉ. गोपीचंद नारंग का कथन है, "प्रेमचंद की शख्सियत और उनके फन को उनके प्रारंभिक संस्कार और संपादन की पृष्ठभूमि को उर्दू जबान के चेतन-अवचेतन प्रभाव के बगैर समझा ही नहीं जा सकता।" (प्रेमचंद : भारतीय साहित्य संदर्भ, सं. निर्मला जैन, पृ. 15)

प्रेमचंद ने धनपत राय तथा नवाब राय नाम से उर्दू में कई कहानियाँ तथा उपन्यास लिखे। 'सोजे वतन' कहानी संग्रह को सरकार द्वारा जब्त किए जाने पर 'धनपत राय: नवाब राय' ने अपना नाम बदलकर 'प्रेमचंद' नाम से हिंदी में लिखना आरंभ किया। उन्होंने अपनी उर्दू कहानियों तथा उपन्यासों का हिंदी में अनुवाद भी किया।

11.3.2.1 प्रेमचंद का कहानी साहित्य:

साहित्य अपने काल का प्रतिबिम्ब होता है। जो भाव और विचार लोगों के हृदयों को स्पंदित करते हैं, वे ही साहित्य पर भी अपनी छाया डालते हैं। प्रेमचंद के समग्र साहित्य पर दृष्टिपात किया जाए, तो उनके साहित्य की पृष्ठभूमि सामाजिक ही रही है, जिनमें धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा ऐतिहासिक घटनाओं का समावेश रहा है। उनका मानना था कि कथा-साहित्य काल्पनिक होते हुए भी सत्य है। यही वजह है कि उनकी कहानियाँ मनोरंजन के बाबजूद अपनी सार्थकता सिद्ध करती थीं। उनकी कहानियों का उद्देश्य सदैव शिक्षा प्रदान करना था। प्रेमचंद ने तीन सौ (300) से अधिक कहानियाँ लिखी। उनकी लगभग सभी कहानियाँ 'मानसरोवर (आठ खंड)' में संकलित हैं।

मानसरोवर (खंड-एक)

अलग्योझा, ईदगाह, माँ, बेटों वाली विधवा, बड़े भाई साहब, शान्ति, नशा, स्वामिनी, ठाकुर का कुँआ, घरजमाई, पूस की रात, झाँकी, गुल्ली-डंडा, ज्योति, दिल की रानी, धिक्कार, कायर, शिकार, सुभागी, अनुभव, लांछन, आखिरी हीला, तावान, घासवाली, गिला, रसिक संपादक, मनोवृत्ति आदि ।

मानसरोवर (खंड – दो)

कुसुम, खुदाई फौजदार, वैश्या, चमत्कार, मोटर के छींटे, कैदी, मिस पद्मा, विद्रोही, उन्माद, न्याय, कुत्सा, दो बैलों की कथा, बालक, मुफ्त का यश, बासी भात में की कथा, दूध का दाम, बालक, जीवन का शाम, डामुल का कैदी, नेउर, गृह-नीति, क़ानूनी कुमार, लाटरी, नया विवाह, शूद्रा, जादू आदि ।

मानसरोवर (खंड - तीन)

विश्वास, नरक का मार्ग, स्त्री और पुरुष, उद्धार, निर्वासन्, नैराश्य –लीला, कौशल, स्वर्ग की देवी, आधार, एक आँच का कसर, माता का ह्रदय, परीक्षा, तेवर, नैराश्य, दंड, धिक्कार, लैला, मुक्तिधन , दीक्षा, क्षमा, मनुष्य का परम धर्म, गुरु मंत्र, सौभाग्य के कोड़े, विचित्र होली, मुक्ति-मार्ग, डिक्री में रुपये, शतरंज के खिलाड़ी, वज्रपात, सत्याग्रह, भाड़े का टट्टू, बाबा जी का भोग, विनोद आदि ।

मानसरोवर (खंड - चार)

प्रेरणा, सद्गति, तगादा, दो कब्रें, ढपोरशंख, डिमान्स्ट्रेशन, दरोगा जी, अभिलाषा, खुचड़, आगा-पीछा, प्रेम का उदय, सती, मृतक – भोज, भूत, सवा सेर गेंहूँ, सभ्यता का रहस्य, समस्या, दो सखियाँ, मांगे की घडी, स्मृति का पुजारी आदि ।

मानसरोवर (खंड – पाँच)

सती, हिंसा परमो धर्मः, बहिष्कार, चोरी, लांछन, कजाकी, आंसुओं की होली, अग्नि – समाधि, सुजान –भगत, पिसन्हारी का कुँआ, सोहाग का शव, आत्म-संगीत, एक्ट्रेस, ईश्वरीय न्याय, ममता, मंत्र, प्रयाश्चित, कप्तान साहब, इस्तीफा आदि।

मानसरोवर (खंड - छह)

यह मेरी मातृभूमि है, राजा हरदौल, त्यागी का प्रेम, रानी सारंधा, शाप, मर्यादा की बेदी, मृत्यु के पीछे, पाप का अग्निकुण्ड, आभूषण, जुगनू की चमक, गृह-दाह, पछतावा, आप-बीती, राज्य-भक्त, अधिकार –चिंता, धोखा, लाग – डाट, अमावस्या की रात्री, चकमा, दुराशा आदि।

मानसरोवर (खंड - सात)

जेल, पत्नी से पति, शराब की दुकान, जुलूस, मैकू, समर-यात्रा, शान्ति, बैठक का दिवाला, आत्माराम, दुर्गा का मंदिर, बड़े घर की बेटी, पंच-परमेश्वर, शंखनाद, निहाद, फातिहा, बैर का अंत, दो भाई, महातीर्थ, विस्मृति, पारब्ध, सुहाग की साडी, लोकमत का सम्मान, गाग-पूजा आदि।

मानसरोवर (खंड - आठ)

खून सफ़ेद, गरीब की हाय, बेटी का धन, धर्म-संकट, सेवा-मार्ग, शिकारी राजकुमार, बलिदान, बोध, सच्चाई का उपहार, ज्वालामुखी, पशु से मनुष्य, मूठ, ब्रह्मा का स्वांग, विमाता, बूढी काकी, हार की जीत, दफ्तरी, विध्वंस, स्वत्व-रक्षा, पूर्व-संस्कार, दुस्साहस, बौड़म, गुप्त धन, आदर्श विरोध, विषम समस्या, अनिष्ट शंका, सौत, सज्जनता का दण्ड, नमक का दरोगा, उपदेश, परीक्षा आदि।

प्रेमचंद की कहानियाँ ग्राम्य-जीवन की यथार्थवादी कहानियाँ हैं। उनमें निहित आदर्शवाद और कहानियों से निकलने वाला संदेश मानवतावादी चिंतनधारा से ओत-प्रोत है। प्रत्येक घर में घटनेवाली घटनाओं को प्रेमचंद ने अपने कहानी-साहित्य में चित्रांकित किया है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद की कहानियाँ समकालीन जीवन की प्रति-सृष्टि है। प्रेमचंद ने घटना, कथानक, चरित्र और संवेदना को ध्यान में रखकर कहानियाँ लिखी हैं। उन्होंने अपने सभी कहानियों को सबसे अधिक जीवन व्यापी, जनव्यापी और देशव्यापी बनाया है। प्रेमचंद की आरंभिक कहानियों में जमीनदार, किसान, देहाती, व्यापारी, इंजीनीयर, ठेकेदार, वकील, मौलवी, नमक के दरोगा, जमादार, अदालत के कर्मचारी, डिप्टी मैजिस्ट्रेट, देशसेवी, वकील के मोहर्रिर, कारिन्दा, पुलिस के दरोगा, चौकीदार आदि पात्र वर्णन का विषय बने हैं। इन कहानियों के अधिकतर पात्र पतोंमुख, अनैतिक तथा जर्जर दिखाई पड़ते हैं। इन पात्रों को

'कर्तव्य' से अधिक 'धन' प्रिय है। धनप्राप्ति के लिए वे सबकुछ करने के लिए व्यग्र प्रतीत होते हैं। धन भी अनुचित साधनों से प्राप्त करना चाहते हैं। इसप्रकार उन्होंने अपनी कहानियों में समाज की विभिन्न प्रकार की कपट-लीलाओं का चित्र उपस्थित किया है, परंतु कहानियों का अंत 'आदर्शात्मक' ही था।

प्रेमचंद का साहित्य ग्राम्य की उपज है। उसका मुख्य कारण यही है कि उनका लमही की भूमि पर पैदा होना व शिक्षा-दीक्षा तथा नौकरी भी ग्रामीण क्षेत्रों में होने के कारण उनका ग्राम्यांचल से बहुत अधिक लगाव हो गया। जिसके परिणामस्वरुप उनकी आत्मा गाँव में ही रहती थी। प्रेमचंद ने सर्वप्रथम अपनी लेखनी से ग्रामीण जीवन के सभी वृत्तियों का अध्ययन किया और बताया कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। किसान को भारत के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में माना जो गाँव में बसता है। प्रेमचंद ने भारतीय किसान के जीवन को अपने कथा – साहित्य के माध्यम से उकेरा है। 'मुक्तिमार्ग', 'मुक्तिधन', 'सवा सेर गेहूँ' तथा 'कफ़न' ऐसी कहानियाँ हैं जिनमें किसानों की निर्धनता, साहूकारों तथा जमींदारों द्वारा शोषण तथा बेबसी का वास्तविक चित्रण देखने को मिलता है।

प्रेमचंद युग में अछूतों के साथ अन्याय भी एक साधारण बात थी। छूत-अछूत के ढकोसलों में निम्न वर्ग की जनता उच्च वर्ग के अत्याचारों से पीसी जा रही थी। 'मंदिर', 'ठाकुर का कुँआ', 'खून सफ़ेद', 'सद्गति' आदि कहानियों में हृदय विदारक चित्र हैं। प्रेमचंद ने तत्कालीन समाज में उच्च कहे जाने वाले लोगों के साथ किसी प्रकार की दया नहीं की। प्रेमचंद का विचार था कि मानव संस्कृति के विकास में एक ऐसा वर्ग तैयार हो गया है जो कर्महीन, धर्महीन, मानवताहीन, नीच, कुटिल होने पर भी जनता पर शासन करता है। वह अमीरों का सेवक और गरीबों का शुभचिंतक बन कर जोंक के समान समाज के प्राणियों को रक्तहीन करता जाता है। 'सद्गति' कहानी पात्र दुखी कुलीन वर्ग के पंडित घासीराम द्वारा पीड़ित होकर उसका मारा जाता है। "दुखी की लाश को गीदड़ और गिद्ध, कुत्ते और कौए नोंच रहे थे। यही जीवन पर्यंत की भक्ति, सेवा और निष्ठा का पुरस्कार था।" (मानसरोवर भाग -4, पृ.26)

प्रेमचंद ने अपने सामयिक अनुभव के आधार पर राजनीतिक गतिविधि और राजनीतिक वातावरण में कुछ राजनैतिक कहानियाँ लिखी हैं। 'शराब की दुकान', 'जुलूस', 'मैकू', 'समर यात्रा', 'सुहाग की साडी', 'पत्नी से पति', 'जेल', 'सत्याग्रह', 'कुत्सा', 'कैदी', 'माँ', 'तावान' आदि कहानियों में राजनीतिक वातावरण से सम्बंधित कथानक उभर कर आए हैं। ऐसी कहानियों से जो राजनैतिक वातारण में तथा राजनैतिक उद्देश्य से लिखी गई हैं, उस युग के राष्ट्रीय आंदोलन की यथार्थता का अनुभव होता है।

भारतीय संस्कृति के आदर्श को प्रस्तुत करने हेतु प्रेमचंद ने ऐतिहासिक कहानियों की योजना की। ऐतिहासिक कहानियों द्वारा प्रेमचंद इतिहास की अच्छी बाते ग्रहण करने और त्रुटियों और बुराइयों को छोड़ देने की प्रेरणा प्रदान करते हैं। प्रेमचंद की 'रानी सारंधा', 'मर्यादा की बेदी', ;राजा हरदौल', 'राज्य भक्त', 'सती' आदि कहानियाँ अपने इतिहास के वे उज्ज्वल पृष्ठ हैं, जिसमें वीरों की स्त्रियाँ बलिदान देकर सतीत्व की रक्षा की थी। प्रेमचंद ने उत्तर मुगलकाल

और पूर्व अंग्रेज काल पर भी कहानियां लिखीं। 'शतरंज के खिलाडी', 'धिक्कार', 'न्याय', 'दिल की रानी', 'जिहाद', 'क्षमा' आदि ऐसी कहानियाँ हैं जिसमें मुसलमानों के इतिहास को रेखांकित किया गया है।

प्रेमचंद का उद्देश्य 'साहित्य' के माध्यम से सच्चाई प्रकट करना था। प्रेमचंद प्रगतिशील व्यक्ति थे। उन्होंने संघर्षों से जूझना सीखा था, शांत बैठकर विलाप करना नहीं। प्रेमचंद ने अपनी कहानियिओं के माध्यम से तत्कालीन भारतीय सामाजिक एवं राजनैतिक चित्र को खींचने का प्रयास किया। उनकी कहानियों में सामाजिक कुरीतियों, भ्रष्टाचार, वर्ग-भेद, किसानों-मजदरों तथा स्त्रियों का शोषण आदि का पर्दाफाश दिखाई देता है। प्रेमचंद की सरल और सहज भाषा जनमानस का स्पर्श करती हैं। उन्होंने जनभाषा को कलात्मक नयी देन दी है।

बोध प्रश्न –

1) 'मानसरोवर' कहानी-संग्रह कितने भागों में विभक्त है ?
2) प्रेमचंद की 5 ग्राम्य जीवन प्रधान कहानियों के नाम बताइए।
3) वर्गभेद को उजागर करने वाली कहानियाँ कौन सी हैं ?

11.3.2.2 प्रेमचंद का उपन्यास साहित्य

1. असरारे मआबिद- प्रेमचंद का यह उपन्यास मूलतः उर्दू में रचित है। इसका प्रकाशन उर्दू साप्ताहिक आवाज-ए-खल्क़ में 8 अक्टूबर, 1903 से 1 फरवरी, 1905 तक धारावाहिक रूप में हुआ था। बाद में इसका हिंदी संस्करण 'देवस्थान रहस्य' नाम से प्रकाशित हुआ।
2. हमखुर्मा व हमसवाब- यह भी मूलतः उर्दू रचना है। इसका प्रकाशन 1907 ई. में हुआ। इसके हिंदी संस्करण का नाम 'प्रेमा' है।
3. किशना- प्रेमचंद का यह उर्दू उपन्यास उपलब्ध नहीं है। केवल यह जानकारी मिलती है कि इसकी समीक्षा उर्दू पत्रिका 'ज़माना' में अक्टूबर-नवंबर 1907 में छपी थी। इसलिए इसे 1907 में प्रकाशित माना जाता है।
4. रूठी रानी- प्रेमचंद का उर्दू में रचित यह उपन्यास 1907 में 'ज़माना' पत्रिका में प्रकाशित हुआ था।
5. जलवए ईसार- 1912 में प्रकाशित यह उपन्यास भी उर्दू में रचित है।
6. सेवासदन- यह 'प्रेमचंद का पहला हिंदी उपन्यास' है। यह 1918 ई. में प्रकाशित हुआ। रोचक तथ्य यह है कि प्रेमचंद ने 'सेवासदन' को भी मूलतः उर्दू में ही लिखा था। लेकिन इसका हिंदी संस्करण पहले प्रकाशित हुआ। बाद में 'बाजारे-हुस्न' नाम से उर्दू संस्करण

भी प्रकाशित हुआ। इसीलिए 'सेवासदन' को प्रेमचंद का पहला हिंदी उपन्यास माना जाता है। 'सेवासदन' स्त्री समस्या पर केंद्रित उपन्यास है। इसमें दहेज-प्रथा, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति, स्त्री-पराधीनता आदि समस्याओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। डॉ. रामविलास शर्मा ने भारतीय नारी की पराधीनता को 'सेवासदन' की मुख्य समस्या माना है।

7. प्रेमाश्रम - 1922 में प्रकाशित 'प्रेमाश्रम' प्रेमचंद का 'किसान जीवन पर पहला उपन्यास' है। यह अवध के किसान आंदोलनों के दौर में लिखित इस उपन्यास के बारे में वीर भारत तलवार ने लिखा है, "1922 में प्रकाशित 'प्रेमाश्रम' हिंदी में किसानों के सवाल पर लिखा गया पहला उपन्यास है। इसमें सामंती व्यवस्था के साथ किसानों के अंतर्विरोधों को केंद्र में रखकर उसकी परिधि के अंदर पड़नेवाले हर सामाजिक तबके का- ज़मींदार, ताल्लुकेदार, उनके नौकर, पुलिस, सरकारी मुलाजिम, शहरी मध्यवर्ग- और उनकी सामाजिक भूमिका का सजीव चित्रण किया गया है।" (द्रष्टव्य- किसान राष्ट्रीय आंदोलन और प्रेमचंद : 1918-22)। वैसे हिंदी में पहले प्रकाशित इस उपन्यास का भी मसौदा प्रेमचंद ने उर्दू में 'गोशाए-आफियत' नाम से तैयार किया था।
8. रंगभूमि - 1925 में प्रकाशित 'रंगभूमि' एक बड़े आकार का तथा व्यापक राष्ट्रीय परिवेश को समेटने वाला उपन्यास है। इसमें प्रेमचंद ने एक अंधे भिखारी सूरदास को कथा का नायक बनाकर हिंदी कथा साहित्य में क्रांतिकारी बदलाव की नींव रखी। सूरदास का संघर्ष मूलतः स्वभूमि, स्वराज्य तथा स्वसंस्कृति की रक्षा का संघर्ष है जिसके कारण इस उपन्यास को 'महाकाव्यात्मक उपन्यास' भी कहा जाता है।
9. निर्मला - यह दहेज प्रथा और अनमेल विवाह की समस्याओं को रेखांकित करने वाला उपन्यास 'निर्मला' 1925-'26 में 'चाँद' पत्रिका में धारावाहिक प्रकाशित हुआ। इसका पुस्तक रूप में प्रकाशन 1927 में हुआ। इस उपन्यास में भारतीय समाज में स्त्री की कारुणिक स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है। आकार में छोटा होते हुए भी इसकी गणना प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यासों में की जाती है।
10. कायाकल्प- 1926 में प्रकाशित 'कायाकल्प' को प्रेमचन्द का एक नवीन प्रयोगशील किंतु शिथिल उपन्यास माना जाता है। 'कायाकल्प' के केंद्र में दांपत्य प्रेम की पवित्रता की समस्या है। लौंगी के आदर्श प्रेम और पति-भक्ति तथा वागीश्वरी के अहल्या को उपदेश के सहारे लेखक ने यह प्रतिपादित किया है कि साधना तथा आत्मिक संयोग के अभाव में विलास और तृष्णा पर आधारित दांपत्य जीवन सुखमय नहीं हो सकता।

11. प्रतिज्ञा - विधवा जीवन तथा उसकी समस्याओं को रेखांकित करने वाले उपन्यास 'प्रतिज्ञा' का प्रकाशन 1927 में हुआ।
12. गबन - 1928 में प्रकाशित उपन्यास 'गबन' के केंद्र में सरकारी दफ्तर में गबन की घटना है, जिसके सहारे मुख्य पात्र रमानाथ तथा उसकी पत्नी जालपा के दाम्पत्य जीवन और जालपा के प्रखर व्यक्तित्व को उभारा गया है।
13. कर्मभूमि - स्वतंत्रता आंदोलन के परिवेश के यथार्थ अंकन करने वाले उपन्यास 'कर्मभूमि' का प्रकाशन 1932 में हुआ। इसमें प्रेमचंद ने अछूत समस्या, मंदिर में दलितों के प्रवेश तथा लगान से जुड़ी समस्याओं को भली प्रकार उभारा है। वस्तुतः यह उपन्यास महात्मा गांधी की स्वराज्य-दृष्टि और उनके व्यावहारिक कार्यक्रमों पर आधारित है
14. गोदान - 1936 में प्रकाशित 'गोदान' प्रेमचंद का अंतिम 'पूर्ण' उपन्यास है। इसे भारतीय किसान जीवन का प्रामाणिक दस्तावेज कहा जाता है। होरी और धनिया के माध्यम से किसान जीवन के संघर्ष, तेजस्विता, निरीहता, करुणा और मर्यादा की मार्मिक अभिव्यक्ति के लिहाज से 'गोदान' हिंदी साहित्य की कालजयी रचना है।
15. मंगलसूत्र (अपूर्ण)- 1948 में प्रकाशित 'मंगलसूत्र' प्रेमचंद का अधूरा उपन्यास है, जिसे बाद में उनके पुत्र अमृतराय ने पूरा किया।

बोध प्रश्न -

- प्रेमचंद का पहला हिंदी उपन्यास कौन सा है?
- रंगभूमि' उपन्यास का कथानायक कौन है?
- 'निर्मला' उपन्यास में किन समस्याओं का चित्रण हुआ है?
- 'गोदान' उपन्यास का क्या महत्व है?

11.4 पाठ सार

कथा सम्राट प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880ई. को बनारस (उत्तर प्रदेश) के पास लमही गाँव में एक साधारण परिवार में हुआ। पिता ने उनका नाम धनपत राय रखा था, लेकिन स्कूल में प्रवेश के समय चाचा ने उनका नाम नवाब राय लिखवाया। आगे चलकर जब उनके लेखन पर ब्रिटिश सरकार के अधिकारियों ने देश द्रोह के आरोप लगाए, तो उन्होंने यह नाम भी छोड़ दिया और 'प्रेमचंद' नाम अपना लिया।

प्रेमचंद ने आरंभ में उर्दू में कहानियाँ और उपन्यास लिखे। लेकिन बाद में वे हिंदी में लिखने लगे। वे अपनी रचनाओं की प्रारंभिक रूपरेखा अंग्रेजी में लिखते थे। उन्होंने 300 से अधिक कहानियाँ लिखीं जो 'मानसरोवर' के 8 खंडों में प्रकाशित हैं। उनके हिंदी उपन्यासों में

सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, निर्मला, कायाकल्प, प्रतिज्ञा, गबन, कर्मभूमि, गोदान और मंगलसूत्र शामिल है।

प्रेमचंद का निधन 8अक्टूबर, 1936 को हुआ।

11.5 पाठ की उपलब्धियां

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं-

1. प्रेमचंद एक युग प्रवर्तक कथाकार थे। उन्होंने अपनी कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से भारतीय किसान जीवन और मध्य वर्ग की समस्याओं का प्रामाणिक चित्रण किया।
2. प्रेमचंद की सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना अत्यंत प्रबल थी। वे साहित्य की परंपरागत कसौटी को बदलना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की नींव रखी।
3. प्रेमचंद का जीवन बेहद विषम और संघर्षमय रहा। लेकिन उन्होंने लेखन को कभी भी मनोरंजन और विलासिता का माध्यम नहीं बनाया। इसलिए वे सिनेमा जगत में भी असंतुष्ट होकर लौट आए थे।
4. प्रेमचंद ने शताब्दियों से पददलित, अपमानित और तिरस्कृत कृषकों और गरीबों को नायकत्व प्रदान किया। इसीलिए उन्हें हिंदी जगत में 'कथा सम्राट' के रूप में ख्याति प्राप्त हुई।

11.5 शब्द संपदा

चमरोंधा	=	मोटे चमड़े से बना सस्ता जूता।
बुनियाद	=	नींव ।
उदर निर्वाह	=	पेट भरना, जीविका।
कामोत्तेजक	=	वासना को उत्तेजित करने वाला ।
चरितार्थ	=	ठीक ठीक घटित होना या पूरा उतरना।
शलाकां पुरुष	=	अलौकिक गुणों वाले महापुरुष।
हृदय विदारक	=	अत्यंत करुणा, दया और शोक उत्पन्न करने वाला।

11.6 परिक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए ।

1. प्रेमचंद के व्यक्तित्व पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए।
2. प्रेमचंद की कहानियों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यासों का परिचय दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए ।

1. प्रेमचंद के बाल्यकाल की परिस्थितियों का वर्णन कीजिए।
2. प्रेमचंद के कथा साहित्य के महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. प्रेमचंद के नाम-परिवर्तन की परिस्थितियों पर चर्चा कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. प्रेमचंद बचपन से ही .....स्वभाव के थे। ( )
   (अ) चंचल (ब) क्रोधी (क) शांत (ड) रसिक
2. प्रेमचंद की दूसरी पत्नी का नाम .....था। ( )
   (अ) शिवरानी देवी (ब) कमला देवी (क) धनिया (ड) आनंदी देवी
3. 'सोजेवतन' का प्रकशन .....में हुआ था. ( )
   (अ) 1880 ई (ब) 1905 ई (क) 1907 ई (ड) 1936 ई
4. प्रेमचंद के अधूरे उपन्यास का नाम .....है। ( )
   (अ) मंगल भवन (ब) मंगल सूत्र (क) प्रतिज्ञा (ड) रंगभूमि

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. प्रेमचंद की भाषा में सामान्य मनुष्य की _____ झलकती है ।
2. माधुरी पत्रिका 1928 से 1931 तक _____ शहर से प्रकाशित होती थी।
3. कहीं कोई _____है, जिसे प्रेमचंद की रचनाएँ आज भी शांत कर पाती है।
4. प्रेमचंद _____एकता के घोर समर्थक थे।
5. साहित्यकार बहुधा अपने _____से प्रभावित होता है।
6. प्रेमचंद की शिक्षा _____से शुरू हुई थी।

I. सुमेल कीजिए।

1. पूस की रात	(अ) प्रेमचंद की माता
2. सेवासदन	(ब) रंगभूमि
3. नवाबराय	(क) प्रेमचंद के पिता
4. आनंदी देवी	(ड) कहानी
5. सूरदास	(इ) उपन्यास

11.7 पठनीय पुस्तकें

1. प्रेमचंद घर में : शिवरानी देवी

प्रेमचंद – कलम का सिपाही : अमृतराय

प्रेमचंद – एक कृती व्यक्तित्व : जैनेंद्र कुमार

प्रेमचंद और उनका युग : राम विलास शर्मा

प्रेमचंद की भाषाई चेतना : सं; दिलीप सिंह और ऋषभदेव शर्मा

.

इकाई 12 ईदगाह : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मूल पाठ : ईदगाह : तात्विक विवेचन
12.3.1 कथावस्तु
12.3.2 चरित्र चित्रण
12.3.3 संवाद
12.3.4 वातावरण
12.3.5 उद्देश्य
12.3.6 शैली और शिल्प
12.4 पाठ सार
12.5 पाठ की उपलब्धियाँ
12.6 शब्द संपदा
12.7 परीक्षार्थ प्रश्न
12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

प्रेमचंद हिंदी कहानी के विकास में केंद्रीय स्थान के अधिकारी हैं। उन्हें 'कलम के सिपाही' और 'कथा सम्राट' के रूप में जाना जाता है। 'ईदगाह' बाल मनोविज्ञान पर आधारित उनकी एक प्रसिद्ध कहानी है जिसमें सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश बड़ी कुशलता से गूँथा गया है। प्रस्तुत इकाई में आप इसी कहानी का अध्ययन करेंगे।

12.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- प्रेमचंद का साहित्यिक परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रेमचंद की कहानी संबंधी धारणाओं से अवगत हो सकेंगे।
- 'ईदगाह' कहानी की कथावस्तु को जान सकेंगे।
- इस कहानी में निहित बाल मनोविज्ञान के विविध पहलुओं से परिचित हो सकेंगे।
- इस कहानी में निहित गरीबी, सद्भाव, त्याग, विवेक और संवेदना के मर्म को समझ सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : ईदगाह : तात्विक विवेचन

12.3.1 कथावस्तु

रोजा मुस्लिम समाज का पवित्र व्रत है जो तीस दिनों तक रखा जाता है। महीने भर का यह पाक व्रत रमजान के महीने में रखा जाता है। इसके पूर्ण होने पर आसमान में चाँद देखकर ईद का त्योहार मनाया जाता है। विशेष तौर पर इस मुबारक ईद के अवसर पर सामूहिक नमाज अदा की जाती है। वह स्थान जहाँ ईद के अवसर पर सामूहिक नमाज अदा की जाती है उसे

ईदगाह कहते हैं। नमाज अदा करने के लिए इस स्थान पर सैकड़ों की तादाद में लोग जमा होते हैं। नमाज अदा करने के बाद वे लोग परस्पर 'ईद मुबारक' कहकर आपस में गले मिलते हैं। ईदगाह के स्थान के आस-पास मेले की भी व्यवस्था होती है। ईद के नाम पर शहर, गाँव और कस्बों में रहने वाले बालकों के मन का सारा उत्साह इस मेले के लिए ही होता है। इस तथ्य से आप पूर्व परिचित हैं कि किसी भी कहानी के कथावस्तु का विकास चार चरणों में संपन्न होता है- आरंभ, आरोह, चरम और अंत। ईदगाह के कथावस्तु का विकासक्रम निम्नोक्त है-

आरंभ : 'ईदगाह' कहानी का आरंभ मेले में जाने के उत्साह से शुरू होता है। मन के भीतर के उत्साह से ईद की खुशियाँ दुगुनी-चौगुनी हुई जा रही हैं। खुशियों में यह इजाफा केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं है, प्रकृती भी इसके लपेटे में है। वृक्षों की हरियाली और आसमान की लालिमा गजब लग रहे हैं। इनकी रौनक से सुबह बहुत सुहाना हुआ जाता है। और यह ताप के गुण वाला सूर्य आज सबकी आँखों को शीतल लग रहा है। यह सुबह ईद की खुशनुमा सुबह है। किसी के कुरते में बटन नहीं है और घर में सुई धागा भी नहीं है। कुरते में बटन टांकने के लिए वह पड़ोस के घर से सुई धागा लाने जा रहा है। किसी के जूते कड़े हो गए हैं। उनपर तेल लगाने के लिए वह तेली के घर जा रहा है। ईद के हर्षोल्लास की इस आपाधापी से गाँव में बसे इन लोगों की प्राकृतीक सामाजिक मानसिकता और पारस्परिक निर्भरता के साथ ही आपसी लगाव का भी पता चलता है। इस अवसर पर कुदरत का अनोखा सुहानापन भी इसीलिए नजर आ रहा है क्योंकि अंतर्मन निर्मल और बहुत प्रसन्न है। ईदगाह जाने का रास्ता आसान नहीं है। यह तीन कोस का पैदल रास्ता है। इसलिए बच्चे बड़ों की देखरेख में ही ईदगाह जाएँगे। किसान जल्दी-जल्दी बैलों को सानी-पानी दे रहे हैं। ईदगाह में सैंकड़ों आदमियों से मिलना-जुलना होगा। घर लौटते-लौटते देर हो जाएगी इसलिए बाहर जाने से पहले वे अपने पशुओं की व्यवस्था भी कर दे रहे हैं। बच्चों को ईद का त्योहार मनाना है और इसके लिए उनके पास अपने जमा किए हुए एवं ईदी के नाम पर मिले हुए बहुत पैसे हैं। घर की आर्थिक परेशानियों के बीच इस ख़ुशी को बच्चों के मन-मुताबिक मनाने की चिंता अब्बाजान और अम्मीजान की है। दूध, सेवैयां और शक्कर जुटाने की मशक्कत उनकी है। बच्चों को 'क्या खबर कि चौधरी आँखें बदल ले तो यह सारी ईद मुहर्रम हो जाए।' बच्चों के पास कुबेर का खजाना है जिससे वे मेले में अपनी मनचाही सारी वस्तु (खिलौने) ले लेंगे और सारी पसंद की मिठाइयाँ खा सकेंगे। हामिद चार-पाँच वर्ष का एक दुबला-पतला गरीब बालक है। वह इन सब बच्चों से अधिक प्रसन्न है। कारण कि उसे मालूम है कि उसके अब्बाजान रूपये कमाने गए हैं और उसकी अम्मीजान खुदा के घर से उसके लिए नियामतें लाने गईं हैं। जब ये दोनों वापस आएँगे तब हामिद के रुतबे के आगे इन बच्चों की शान फीकी पड़ जाएगी। यह हामिद की उम्मीद है। हकीकत यह है कि उसके पिता हैजा के कारण अल्ला मियां को प्यारे हो गए और माँ पर भी मन और शरीर का रोग भारी पड़ा और वो भी परलोक सिधार गई। हामिद और उसकी बूढ़ी दादी अमीना- बस ये दो जन ही अब एक परिवार हैं। हामिद के मन में उसके माता-पिता के आने की उम्मीद भरी रोशनी उसकी दादी की ही जलाई हुई है। अमीना के घर में भी अन्न का एक दाना नहीं है और आज ईद का त्योहार है। इससे बड़ा उसका असमंजस है कि यह नन्हा-सा बच्चा कैसे इतनी दूर पैदल जाएगा। और मेले की

भीड़-भाड़ में कहीं यह खो गया तो...! कहानी के आरंभ में मोटे तौर पर कहानी के मुख्य किरदारों का परिचय कराते हुए लेखक ने ईदगाह में जाने के लिए बड़े और बच्चों के असमंजस और कौतूहल भरे चितवन को उपस्थित किया है। इसमें पाठकों के लिए कुछ जिज्ञासा का भाव लेखक ने छोड़ा है, जैसे कि कौन-कौन मेले में कैसे गया? क्या हामिद को अमीना ने मेले में जाने दिया? वह गया तो कैसे गया? मेले में बच्चों ने क्या किया? क्या अमीना सेवैयाँ बना पाई? इत्यादि। हामिद की आनंद भरी चितवन से कहानी की सकारात्मक दिशा का संकेत मिल जाता है।

आरोह : ईदगाह में जाने के नाम से बच्चों की प्रसन्नता और बड़ों की चिंताओं और असमंजस का कोई पारावार नहीं है। इन दोनों तथ्यों की सूत्रबद्धता से कहानी अपने आरोह की ओर अग्रसर होती है। और पूर्व उल्लिखित जिज्ञासाओं का समाधान इस आरोह से चरम तक की स्थिति में मिल जाता है। कहानी के क्रमिक विकास में उसकी आरोह की स्थिति में पात्रों की मनोगति का विकास और घटनाओं के क्रम का संयोजन मुख्य घटक का रोल निभाते हैं। इस कहानी की कथावस्तु के आरंभ में अमीना रो रही थी अपनी बदकिस्मती पर यह सोचकर कि आज यदि आबिद होता तो उसकी ईद ऐसी न होती। आबिद अमीना का मृत पुत्र है। पर अब जब हामिद गाँव के लोगों और बच्चों के साथ ईदगाह में जाने के लिए तैयार है, अमीना उसे तीन पैसे देती है। फहीमन के कपड़ों को सिलने पर उसे आठ पैसे मिले थे, जिसे उसने ईद के लिए बचाकर रखे थे। अब बचे हुए पाँच पैसों से उसे ईद की तैयारी करनी है और सारी रस्म निभानी है। सेवैयाँ खिलाने की रस्म अदायगी करनी है। वह इसकी तैयारी में जुटी है। और हामिद गाँव वालों के साथ गाँव को पार करके शहर में प्रवेश कर गया है। शहर के पक्के मकान, ऊँची चारदीवारी, अदालत, कॉलेज और क्लब घर की ऊँची इमारतें उनमें कौतूहल जगाती हैं। लड़के चारदीवारी से घिरे बागों में दूर से कंकड़ फेंकते हैं। माली दौड़ा आता है। उन्हें गाली देता है। उनकी प्रसन्नता इसमें है कि उन्होंने माली को उल्लू बनाया। उनकी आपसी बातचीत ही कौतुहल भरी है। वे कॉलेज में पढ़नेवाले बड़े-बड़े आदमियों को देखकर अचंभित होते हैं यह सोचकर कि न जाने ये लोग कब तक पढ़ते रहेंगे। उन बच्चों की चर्चा का विषय क्लबघर की मेमें भी हैं। अपने गाँव के स्त्री समाज से वे उनकी क्रियाशीलता की तुलना भी करते हैं। ग्रामीण और शहरी परिवेश में स्त्री समाज को केंद्र बनाकर मनोविश्लेषनात्मक वर्णन करते हुए उन बच्चों की टोली आगे बढ़ती है। आगे हलवाइयों की सजी हुई दुकानें हैं। इन्हें देखकर हामिद और मोहसिन की आपस में जिन्नात की चर्चा शुरू हो जाती है। मोहसिन कहता है कि उसके अब्बा ने बताया है कि आधी रात को एक जिन्नात आता है और सारी बची हुई मिठाइयाँ खरीद लेता है। जिन्नात की बात से हामिद हैरान और प्रभावित होता है। वह मोहसिन से उसके आकार के बारे में भी पूछता है। वह जानना चाहता है कि इन जिन्नातों को कैसे खुश कर सकते हैं। मोहसिन ने जिन्नात का आकार और गुण तो बता दिया पर उसे खुश करने का मंतर उसके पास भी न था। पर उसने एक बड़े काम की बात बताई कि चौधरी साहब के कब्जे में बहुत से जिन्नात हैं। इसीसे वे सबकी समस्या का समाधान भी कर देते हैं और इसीसे उनका सम्मान और रुतबा भी ज्यादा है। यहाँ महाजनी सभ्यता और उनके बाहुबली प्रभाव की व्यंजना करना भी लेखक का उद्देश्य रहा है।

आगे पुलिस लाइन आता है। हामिद कहता है यदि ये कांस्टेबल रात भर जाग कर पहरा न दें तो चोरियाँ हो जाएँगी। उसकी बात को काटकर मोहसिन कहता है कि ये लोग पहरा क्या देंगे, ये लोग चोरियाँ करवाते हैं। हामिद आश्चर्य व्यक्त करता है और कहता है कि यदि ये लोग चोरियाँ करवाते हैं तो इन्हें कोई पकड़ता क्यों नहीं है? मोहसिन कहता है कि यही तो चोरों को पकड़नेवाले हैं, इन्हें कौन पकड़ेगा? मोहसिन के मामा किसी थाने में कांस्टेबल हैं। इस विभाग की ये ख़ुफ़िया बातें उन्होंने ही अपने भांजे को बताई है। उनकी तनख्वाह 20 रुपए है और वे अपने घर 50 रुपए भेजते हैं। चाहें तो वे लाखों कमा ले पर ऊपरी आय उतनी ही ली जाती है जितने में बदनामी न हो। काले कमाई की भी अपनी नीति है जिसे बड़ी सफाई से निभाया जाता है। आगे मोहसिन कहता है कि एक बार उसके मामा के घर में आग लग गई। सब-कुछ जल गया। फिर एक दिन सौ रुपए कर्ज लाए तो जरूरत का सामान आया। बात करते-करते ये बहुत दूर निकल आए थे। अब घनी बस्ती के बीच से गुजर रहे थे। यहाँ से रास्ते में ईदगाह जानेवालों की कई टोलियाँ दीख रही थी। नगर की चीजें न सिर्फ बच्चों के लिए बल्कि सभी ग़रीबों के लिए अनोखी थी। उन्हें सब सुंदर लग रहा था पर वे अपने अस्तित्व और अपने सामर्थ्य को बूझते थे और उसी में पूर्ण संतुष्ट थे। पर बच्चे तो बच्चे ही थे। वे नई और अनोखी लगनेवाली चीजों को देखकर उसे ही ताकते रह जाते थे। इसी चक्कर में हामिद मोटर के नीचे आते-आते बचा। और अब सब ईदगाह के सामने खड़े हैं। नमाज अदा की गई और सभी गले मिले। ये ग्रामीण भी पीछे की पंक्ति में खड़े हो गए। इस तरह विभिन्न घटनाक्रमों का संयोजन करते हुए प्रेमचंद अपनी कहानी को गति देते हैं।

चरम : ईदगाह की रौनक अब मेले की ओर चली जहाँ मिठाई और खिलौनों को देख कर बच्चों के साथ ग्रामीण भी ललच रहे हैं। हिंडोला और चर्खी उनके मन को विशेष रूप से लुभा रहा है। एक जगह बैठे हुए जमीन से आसमान और आसमान से जमीन की सैर या धरती पर ही चक्कर काटते रहना, उन्हें विशेष रोमांचक लग रहा था। बच्चों को मँहगे खिलौना लेते देखकर भी हामिद अपने मन को रोकता है। वह उन खिलौनों को छूना चाहता है पर कोई छूने को उससे कहता ही नहीं। यही नहीं सबको मिठाइयाँ खाते देखकर हामिद उनकी ओर ललचाई आँखों से देखता है पर कुछ लेता नहीं। हामिद क्यों कुछ नहीं ले रहा है? यह बात पाठक के मन की जिज्ञासा को तीव्र करता है। हामिद मेले में खाली हाथ नहीं आया है। उसके पास तीन पैसे हैं। वह चाहे तो खिलौने और मिठाई ले सकता है। पर वह यह सब केवल देख रहा है। वह अपने तीन पैसों का ठोस उपयोग करना चाहता है। भले ही उसकी आँखों में अपने अब्बा और अम्मी द्वारा बहुत-सी थैलियाँ (पैसों की) और नियामतें (उपहार) लाने का सपना है पर घर में रोज वह अपनी बूढ़ी दादी को देखता है। वह अपना यथार्थ जानता है और समझता भी है। उसे अपनी हैसियत का अंदाज है। फिर भी ये तीन पैसे उसे मैला घूमने के लिए ही मिले थे जैसे और बच्चों को मिले। और आर्थिक बदहाली प्रायः आम समस्या होती है। अपनी आमदनी के मुताबिक खर्च करने की आदत रखनेवाले भी अक्सर अपनी मनमर्जी के आगे अपना हाथ तंग पाते हैं। यहाँ जब सारे बच्चे मेले का लुफ्त उठा रहे हैं, हामिद केवल जायजा ले रहा है। अंत में वह चिमटा खरीदता है। लोहे का चिमटा जो जल्दी टूटेगा नहीं जबकि बाकी सारे खिलौने टूटने वाले हैं। चिमटा

उपयोगी तो है ही साथ ही इसे खिलौने के रूप में भी उपयोग में लाया जा सकता है। फकीरों का चिमटा, मजीरा और बंदूक - इन तीन खिलौनों की तरह हामिद अपने चिमटे का उपयोग कर सकता है। हामिद की बातों का रंग सब पर जम रहा था और अब उसका चिमटा ही 'रुस्तमें हिंद' था। बालक हामिद के मन का बूढ़ापन जिसमें वह व्यर्थ के क्षणभंगुर सामान न खरीद कर चिमटा लेता है यह सोचकर कि चिमटा बड़े काम की चीज है। रोटियाँ तवे से उतार लो, चूल्हे में सेंक लो। कोई आग मांगने आए तो निकाल कर उसे दे दो। अम्माँ बेचारी को कहाँ फुरसत मिलती है कि झट से बाजार आएँ और इतने पैसे ही कहाँ मिलते हैं। रोज हाथ जला लेती है। यही नहीं इस बच्चे को यह भी पता है कि बड़ों की दुआएं सीधे अल्लाह के दरबार में जाती हैं। खिलौनों के लिए किसी को कोई दुआ नहीं मिलनेवाली है। पर दादी उसे छाती से लगा लेंगी। यह बहुत प्रकार से बालक हामिद अपने बूढ़े मन को संतुष्ट कर रहा है। और अपने बालमन को अपने विवेकशील तर्कों के पक्ष में कर रहा है। उसके सारे दोस्त भी अपने खिलौनों के बारे में उसके विचारों से सहमत हो गए हैं। और अब सबकी आँखों में चिमटे की ललक है। पर वे मेले से दूर आ चुके हैं। चाहकर भी वे चिमटा नहीं खरीद सकते। अब रंग जमाने की बारी हामिद और उसके चिमटे की थी। उनका रंग खूब जमा। रास्ते में भूख लगने पर महमूद ने अपने केले केवल हामिद के साथ बांटकर खाए। यह सारी स्थिति कहानी के चरम विकास का बिंदुवार आंकलन है। 'जो काम का है' उसको केवल बड़े ही नहीं बालक भी तवज्जो देते हैं। कौतूहल का पहला चरम था कि हामिद क्या लेगा? उसने चिमटा ले लिया। अब दूसरा चरम बिंदु है कि घर लौटकर उनके खिलौनों या खरीदे हुए सामानों के बारे में जानकर घरवालों की प्रतिक्रिया क्या होनेवाली है।

अवरोह : यह कथानक का अंतिम चरण है। इसमें कहानी का मर्म उद्घाटित होता है। ग्यारह बजे दिन तक सभी गांववाले मेले से लौट आए। आते ही मोहसिन की छोटी बहन ने उससे उसका खिलौना भिश्ती छीनकर दौड़ पड़ी। भिश्ती टूट गया। पहले दोनों आपस में लड़े फिर उनका शोर सुनकर माँ ने दोनों को मारा। नूरे ने अपने खिलौने वकील के बैठने के लिए अच्छा इंतजाम किया। तख़्त और कागज की कालीन पर उन्हें बिठाकर वह बांस का पंखा झलने लगा। थोड़ी देर में ही वकील गिरकर स्वर्ग सिधार गए। जिन्हें घूरे पर डालकर उनका अंतिम संस्कार किया गया। अब बचा महमूद का सिपाही। उसे गाँव में पहरा देने का काम सौंपा गया। इसके लिए उसे पालकी की जगह टोकरी में बिठाया गया। नूरे उसे उठाकर अपने द्वार पर घूमने लगा। पहरा रात में दिया जाता है इसलिए अँधेरा कर दिया गया। अँधेरे में उसे चोट लगी और सिपाही गिर गया। उसके पैरों में विकार आ गया। महमूद ने गूलर के दूध से उसे जोड़ने की कोशिश की जब न जुड़ा तो बेचारे की दूसरी टांग भी तोड़ दी गई। इसलिए ताकि वह एक जगह बैठ सके। अब वह सन्यासी हो गया। अब वह बैठे-बैठे पहरा देता। कभी सन्यासी बन जाता तो कभी उससे बाट का काम भी लिया जाता है। मियाँ हामिद अपने घर जाते हैं। जनाब की आवाज सुनकर ही दादी बाहर आ जाती हैं और उसे भरपूर प्यार करती हैं। उसे अकेले मेले में भेजते हुए उनका मन जितना घबरा रहा था उससे कई गुणा ज्यादा प्यार अब उनकी आँखों में उमड़ रहा था। यह उमड़ाव घबराहट से जीत का था। अमीना हामिद के हाथों में चिमटा देखकर चौंकी

और उससे पूछा कि यह क्यों ले आया? क्या सारे मेले में तुम्हें कोई और चीज नहीं मिली? हामिद जानता है कि उसने ठीक ही किया है पर दादी के क्रोध और अचरज मिश्रित भाव को देखकर उसने अपराधी के भाव से अपना पक्ष रखा कि तवे से तुम्हारी उँगलियाँ जल जाती थीं, इसलिए मैंने इसे खरीदा। चिमटा खरीदकर उसने अपने विवेक, सद्भाव और त्याग का परिचय पहले ही दे दिया था। अब अपनी दादी के क्रोध और विस्मय को समझकर उसने जो कहा उससे; वह बड़ों के प्रति विनम्रता और अदब-लिहाज का परिचय दे रहा है। अमीना उस बालक के मन में अपने प्रति प्रेमभाव को देखकर छोटे बालक की भांति रो पड़ी। मेले जैसे आकर्षक जगह में भी हामिद के मन में दादी की स्मृति बनी हुई थी। यह स्मृति और प्रेम इतना प्रगाढ़ और स्थायी था कि तमाम लोभ और आकर्षण इसके सामने फीके साबित हो गए। अमीना की दुनिया केवल हामिद से थी और हामिद की अपनी दादी से। हामिद के इस आचरण ने अमीना के मन की वह कसक भी दूर कर दी कि आबिद होता तो उसके दिन ऐसे न होते। जो नहीं है वह नहीं आ सकता। पर जो है उसकी तो पूरी संभाल कर लें जैसे हामिद ने किया। अमीना का फफककर रो पड़ने में केवल आज का यह क्षण ही नहीं पूर्व के अभाव और अपनों के सदा के लिए खो जाने की तकलीफ भी बराबर शामिल है। अपने बेटे और बहू की एकमात्र अंतिम निशानी अपने पौत्र के मन में अपनी जगह को देखकर अमीना का गदगद होना स्वाभाविक है। वृद्ध अभिवावक की सबसे बड़ी आवश्यकता आपके मन में उनका स्थान है। यही इस कहानी का अंत है।

बोध प्रश्न

- ईदगाह से लेखक का क्या आशय है?
- मेले में जाने के लिए गाँववालों ने क्या-क्या तैयारियाँ की हैं? बच्चों की उत्सुकता का कारण क्या है?

12.3.2 चरित्र चित्रण

चरित्र चित्रण से अभिप्राय कहानी के पात्रों की गतिविधियों का लेखा-जोखा है। कहानी की कथावस्तु के अनुरूप पात्रों का चयन और संयोजन लेखकीय कौशल की दक्षता का प्रमाण होता है। कथावस्तु की गतिशीलता इन पात्रों के सुनियोजन पर ही निर्भर करता है। इस कहानी में मुख्य पात्र हैं- हामिद और अमीना। इस कहानी का केंद्र बिंदु है 'ईदगाह का मैला'। इस मुख्य आयोजन के इर्द-गिर्द सभी पात्रों की रचना इस प्रकार से की गई है कि कहानी की गति एक सकारात्मक दिशा की ओर बढ़े।

अमीना :

एक वृद्ध स्त्री है। जिसका बेटा आबिद हैजे का शिकार होकर मर गया। उसकी पत्नी भी उसके जाने के साल भर बाद चल बसी। इन दोनों का बेटा हामिद है। वृद्ध अमीना का एकमात्र सहारा जिसे वो जी-जान से चाहती हैं। धन और जन दोनों के अभाव में जीती हुई अमीना कुछ देर के लिए ईद के त्योहार को जरुर कोसती है। रोती भी है। यह भी सोचती है कि आज यदि उसका बेटा आबिद होता तो उसकी ईद भी ऐसी न होती। धोबन, नाइन, मेहतरानी, चुड़िहारिन सभी ईद के दिन सेवैयाँ लेने घर आएँगी- घर में अन्न का एक दाना भले नहीं है पर जो आगंतुक आएगा उसके सत्कार और आशापूर्ति की व्यवस्था करना अमीना अपना कर्त्तव्य

समझती है और करती भी है। वह सोचती है, "किस-किस से मुँह चुराएगी? और मुँह क्यों चुराए? साल भर का त्योहार है। जिंदगी खैरियत से रहे, उनकी तकदीर भी तो उसी के साथ है: बच्चे को खुदा सलामत रखे ये दिन भी कट जाएँगे।" हामिद का मुँह देखकर अमीना गरीबी को अंगूठा दिखाकर प्रसन्नता के साथ जीने की कोशिश करती है। इस उम्मीद में कि ये दिन फिर बदलेंगे। मेले से लौटे हामिद की हाथ में चिमटा देखकर पहले अपने बच्चे की नासमझी पर अपनी छाती पीटती है फिर उसकी संवेदनाओं को जानकार फफक कर रो देती है। नन्हे हामिद के मन में अपने लिए स्नेह देखकर मानो उसकी सारी दबी हुई पीड़ाएँ उसके आँसुओं के साथ बह रही हों।

हामिद :

हामिद दुबला-पतला, चार-पाँच साल का गरीब, समझदार और संवेदनशील बालक है। वह जानताहै कि दोस्तों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार किया जाता है न कि उन्हें चिढ़ाया जाता है; जैसा कि मेले में हामिद के साथ उसके दोस्तों ने चिढ़ाने वाला व्यवहार किया था। उसका मन और हृदय आशा से ओतप्रोत है। उसके मन में यह आशा की किरण उसकी दादी अमीना ने जगाया है। "उसके अंदर प्रकाश है और बाहर आशा। विपत्ति अपना सारा दल-बल लेकर आए हामिद की आनंद भरी चितवन उसका विध्वंस कर देगी।" वह अपनी दादी से कहता है कि तुम डरना नहीं अम्मा, मैं सबसे पहले आऊँगा। वह तर्कशील और बुद्धिमान भी है। तभी तो उसने अपने दोस्तों के मनमोहक खिलौनों के सामने अपने चिमटे का रंग जमा लिया। हामिद विनम्र भी है। चिमटे को देखकर चौंकती हुई दादी के प्रश्नों को सुनकर उसने अपराध भाव से कहा, "तवे से तुम्हारी उंगलियाँ जल जाती थीं इसीलिए चिमटा लिया।" इसके पीछे उसकी दूरदर्शिता भी है- हिंडोला, खिलौने और मिठाई पर तीन पैसा खर्च करना उसे पैसा व्यर्थ गंवाना लगा। वह अपने तीन पैसों का ठोस उपयोग करना चाहता था। वह जानता था कि पैसे हमेशा घर में भी नहीं रहते। अपनी दादी की कड़ी मेहनत की कमाई का उसने चिमटा खरीदकर सदुपयोग किया। गरीबी ने उस छोटे बालक को परिपक्व बना दिया था। कथन यह सच ही है कि दुख सबको माँजता है।

चौधरी कायम अली :

चौधरी को महाजनी सभ्यता एवं पूंजीपति वर्ग के प्रतीक के रूप में लेखक ने इस कहानी में रखा है। बच्चे नहीं जानते कि यदि चौधरी आँखें फेर ले तो उनकी ईद मुहर्रम हो जाए। अर्थात खुशियाँ गम में बदल जाएँ। पर्व-त्योहार का अवसर हो या कोई और आर्थिक तंगी का दौर गांववालों को चौधरी का ही भरोसा था। भले ही चौधरी उनसे तीन का तेरह वापस ले। किसान के जीवन में त्रासदी का पर्याय चौधरी है। बच्चे इतना जानते थे कि चौधरी के पास जिन्नात रहते हैं जो उन्हें सारे जहाँ की खबर देते हैं। किसी का मवेशी भी यदि खो जाए तो चौधरी उसका पता बता देता है। प्रत्यक्ष आरोप से बचने के लिए और फिर कहानी, कहानी लगे इसलिए भी जिन्नात पात्र का चयन लेखक ने किया है। प्रभुत्वशाली वर्गों ने किसान के जीवन को कितना तहस-नहस किया है, समय उसका साक्षी है।

मोहसिन :

बालटोली का जिन्नात से परिचय मोहसिन ने ही कराया। उसने हामिद से बात करते हुए यह भी कहा कि उसके पिता कहते हैं कि मेलेवाले हलवाइयों की सारी बची हुई मिठाई आधी रात को जिन्नात खरीद लेते हैं। उसके जिन्नात वाले विश्वास को देखकर लगता है कि वह सामान्य बुद्धि का बालक है। पर वह पुलिस की कार्य शैली के बारे में सही ज्ञान रखता है। कारण कि उसके मामा कांस्टेबल हैं। मेले में उसका पसंदीदा खिलौना भिश्ती है। उसने रेवड़ी दिखाकर हामिद को चिढ़ाया। रेवड़ी देने के लिए हामिद को बुलाया पर उसे दिया नहीं। यह उसके चरित्र का नकारात्मक पहलू है। मित्र के साथ ऐसा अनुदार (अन+उदार) व्यवहार अनुपयुक्त है और इसे क्रूरता की श्रेणी में रखा जाता है।

नूरे :

मोहसिन के क्रूर विनोद में सहयोगी रहा। उसने मिट्टी का वकील ख़रीदा।

महमूद :

यह भी मोहसिन द्वारा हामिद के साथ किए गए क्रूर विनोद में सहयोगी रहा। हामिद को कुछ न खरीदता देखकर उसने उसे चालाक समझा जबकि हामिद असमंजस में था।सिपाही खिलौना महमूद को पसंद आया। हामिद के चिमटे का लोहा जब सारे दोस्तों ने मान लिया तब गाँव लौटते हुए भूख लगने पर महमूद ने हामिद को अपने केले खिलाए।

सम्मी :

सम्मी भी नूरे, महमूद और मोहसिन की तरह हामिद को चिढ़ाता रहा। चिमटा का रंग जमने के बाद सभी दोस्तों की टोली का व्यवहार हामिद के साथ मित्रता का हो गया था। सभी अपने खिलौने उसे दे रहे थे और बारी-बारी से उसका चिमटा लेकर देख रहे थे। बाल व्यवहार में हुए परिवर्तन से लेखक ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि बालकों का स्वभाव यदि उद्दंड है तो भी उनमें अनुकूल परिवर्तन संभव है। उद्दंडता का निराकरण संभव है। हामिद की भांति सभी जन्मजात उदात्त और उत्कृष्ट चरित्र के नहीं होते पर उनका हृदय परिवर्तन संभव है।

बोध प्रश्न

- अमीना का चरित्र चित्रण कीजिए।
- हामिद, नूरे, मोहसिन, महमूद और सम्मी का चरित्र चित्रण कीजिए।

12.3.3 संवाद

संवाद कहानी में अर्थ भरते हुए उसे रोचक बनानेवाले हों तो कहानी का विकासक्रम बाधित नहीं होता है। इस कहानी में संक्षिप्त संवाद अधिक हैं। खिलौनों की तुलना करते हुए बच्चों का सामूहिक संवाद जहाँ मनोरंजक शास्त्रार्थ-सा लग रहा है वहीँ मेले में आने से पूर्व रास्ते में हुई उनकी बातों से देश और समाज के प्रति उनकी रुचि और ज्ञान दोनों का प्रदर्शन हो रहा है। बच्चों के सामूहिक संवाद से जहाँ शहर के माहौल के संबंध में उनके ज्ञान का पता और विचार का स्तर उजागर हो रहा है वहीँ परिवेशगत भिन्नता का व्यक्ति पर पड़नेवाला प्रभाव भी दृष्टिगोचर

हो रहा है। विशेष रूप से स्त्री क्षमता की परख बच्चों के बातचीत से उजागर हो रही है। ग्रामीण और शहरी परिवेश का प्रभाव और स्त्री क्षमता की व्यावहारिक परख ये छोटे बच्चे कर रहे हैं। हामिद और मोहसिन का संवाद समाज की विसंगतियों को उभारने वाला और सच का आईना दिखानेवाला है। इस संवाद में ग्रामीण जीवन की त्रासदी और 'जागते रहो, जाते रहो' कहनेवाले कांस्टेबलों का सच अभिव्यक्त हुआ है। कुछ संवादों के उदाहरण निम्नवत हैं-

बच्चों का सामूहिक संवाद

"इतने बड़े कॉलेज में कितने लड़के पढ़ते होंगे? सब लड़के नहीं हैं जी! बड़े-बड़े आदमी हैं सच! ... हामिद के मदरसे में दो-तीन बड़े-बड़े लड़के हैं, बिलकुल तीन कौड़ी के। रोज मार खाते हैं, काम से जी चुराने वाले। इस जगह भी उसी तरह के लोग होंगे और क्या! क्लब घर में जादू होता है सुना है यहाँ मुर्दों की खोपड़ियाँ दौड़ती हैं। और बड़े-बड़े तमाशे होते हैं। पर किसी को अंदर नहीं जाने देते।...और मेमें भी खेलती हैं सच! हमारी अम्माँ को यह दे दो, क्या नाम है, बैट, तो उसे पकड़ ही न सके।

महमूद: हमारी अम्मीजान का तो हाथ काँपने लगे, अल्ला कसम।

मोहसिन: चलो मनों आटा पीस डालती हैं। जरा-सा बैट पकड़ लेंगी तो हाथ काँपने लगेंगे! सैंकड़ों घड़े पानी रोज निकालती हैं। किसी मेम को एक घड़े पानी भरना पड़ जाए तो आँखों तक अँधेरी आ जाए।

महमूद : लेकिन दौड़ती तो नहीं, उछल-कूद तो नहीं सकती।

मोहसिन: हाँ, उछल-कूद तो नहीं सकती! उस दिन मेरी गाय खुल गई थी और चौधरी के खेत में जा पड़ी थी। अम्मा इतना तेज दौड़ी कि मैं उन्हें न पा सका।"

दुकानदार और हामिद का संवाद

"हामिद : यह चिमटा कितने का है?

दुकानदार : तुम्हारे काम का नहीं है जी!

हामिद : 'बिकाऊ है कि नहीं?'

दुकानदार : 'बिकाऊ क्यों नहीं है? और यहाँ क्यों लाद लाए हैं?'

हामिद: तो बताते क्यों नहीं कई पैसे का है?

दुकानदार : छः पैसे लगेंगे।

हामिद का दिल बैठ गया।

दुकानदार : ठीक-ठीक पांच पैसे लगेंगे। लेना हो तो लो नहीं तो चलते बनो।

हामिद ने कलेजा मजबूत करके कहा तीन पैसे लोगे?

दुकानदार की घुड़कियाँ न सुननी पड़े यह सोचकर वह आगे बढ़ गया पर दुकानदार ने उसे बुलाकर चिमटा दे दिया।"

अमीना और हामिद का संवाद

"अमीना: यह चिमटा कहाँ था?

हामिद: मैंने मोल लिया है।

अमीना: कै पैसे में?

हामिद: तीन पैसे दिए।

अमीना ने छाती पीट ली। यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पिया लाया क्या चिमटा! 'सारे मेले में तुझे और कोई चीज न मिली जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया?'

हामिद ने अपराधी भाव से कहा- तुम्हारी तवे से उँगलियाँ जल जाती थीं, इसलिए मैंने इसे लिया।"

जहाँ अमीना और हामिद का संवाद बेहद मर्मस्पर्शी है वहीँ दुकानदार के साथ हामिद का संवाद हामिद के हिम्मत की निशानी है। वह छोटा बच्चा चिमटा लेना चाहता है। जानता है छः पैसे का है, पांच में मिल सकता है पर उसके पास केवल तीन पैसे हैं। यदि दुकानदार की घुड़की के डर से बिना कुछ बोले, अपनी कमी आँककर वह चुपचाप निकल जाता तो वह खाली हाथ रह जाता। वह डरा जरुर पर डर को मारकर उसने कहा, "तीन पैसे लोगे।" और बढ़ गया क्योंकि मिलने की आशा न थी और घुड़की का डर बरक़रार था। पर हुआ उल्टा। दुकानदार ने उसे बुलाकर छः पैसे का सामान तीन पैसे में ही दे दिया। मंजिल की ओर पूरे मन से बढाए गए कर्दम को सफलता जरूर चूमती है। अदब से बोलने से सब होता है।

बोध प्रश्न

- ईदगाह कहानी के संवादों के अनुसार परिवेशगत भिन्नता के आधार पर स्त्री क्षमता की जो परख बालकों ने की है, उसे स्पष्ट कीजिए।
- कुछ संवादों के आधार पर बाल मन का विश्लेषण कीजिए।

12.3.4 वातावरण

ईदगाह कहानी में जो वातावरण लेखक ने चुना है, वह बीसवीं सदी का भारत है। किसानों की अवस्था जर्जर थी। अपनी आर्थिक तंगहाली के कारण वे महाजनों एवं पूंजीपतियों का मुँह जोहते थे। यह उनकी विवशता बन गई थी कि सामान्य जीवन यापन करने के लिए भी महाजनों को सलाम ठोंकना जरूरी था। कहानी ईदगाह से जुड़ी हुई है। यह उल्लास का अवसर है इसलिए किसान के जीवन की त्रासदी का विवरण यहाँ अभीष्ट नहीं है। संकेत जरूर दिया गया है क्योंकि यह उस समय के भारत का अभिन्न अंग था। इस कहानी में वातावरण के तहत भौतिक और मानसिक दोनों ही प्रकार के वातावरण का विवरण मिलता है। भौतिक वातावरण के तहत प्राकृतीक परिवेश, स्थान और घटनाओं का वर्णन किया गया है तथा मानसिक वातावरण के तहत मनोजगत के भाव संचरण को विशेष रूप से व्याख्यायित किया गया है। इन दोनों ही वातावरण के कुछ उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं-

प्राकृतीक परिवेश- "कितना मनोहर, कितना सुहावना प्रभाव है। वृक्षों पर अजीब हरियाली है। खेतों में कुछ अजीब रौनक है, आसमान पर कुछ अजीब लालिमा है। आज का सूर्य देखो कितना प्यारा, कितना शीतल है, यानी संसार को ईद की बधाई दे रहा है।"

ईदगाह का वर्णन- "सहसा ईदगाह नजर आई। ऊपर इमली के घने वृक्षों की छाया है। नीचे पक्का फर्श है जिसपर जाजम बिछा हुआ है। और रोजेदारों की पंक्तियाँ एक-के-पीछे एक न जाने कहाँ तक चली गईं हैं, पक्की जगत के नीचे तक जहाँ जाजम भी नहीं है। नए आनेवाले

आकर पीछे की क़तार में खड़े हो जाते हैं। आगे जगह नहीं है। यहाँ कोई धन और पद नहीं देखता। इस्लाम की निगाह में सब बराबर हैं। इन ग्रामीणों ने भी वजू किया और पिछली पंक्ति में खड़े हो गए। कितना सुंदर संचालन है, कितनी सुंदर व्यवस्था! लाखों सिर एक साथ सजदे में झुक जाते हैं, फिर सबके सब एक साथ खड़े हो जाते हैं, एक साथ झुकते हैं, और एक साथ खड़े हो जाते हैं, एक साथ खड़े हो जाते हैं, एक साथ झुकते हैं, और एक साथ खड़े हो जाते हैं। कई बार यही क्रिया होती है जैसे बिजली की लाखों बत्तियां एक साथ प्रदीप्त हो और एक साथ बुझ जाएँ, और यही क्रम चलता रहे। कितना अपूर्व दृश्य था, जिसकी सामूहिक क्रियाएँ,विस्तार और अनंतता हृदय को श्रद्धा, गर्व और आत्मानंद से भर देती थी। मानों भ्रातृत्व का एक सूत्र इन समस्त आत्माओं को एक लड़ी में पिरोए हुए हैं।"

अमीना का मानसिक जगत - "बच्चे में कितना त्याग, कितना सद्भाव और कितना विवेक है! दूसरों को खिलौने लेते और मिठाई खाते देखकर इसका मन कितना ललचाया होगा? इतना जब्त इससे हुआ कैसे? वहाँ भी इसे अपनी बुढ़िया दादी की याद बनी रही।"

हामिद का मानसिक जगत - "हामिद लोहे की दुकान पर रुक जाता है। सब आगे बढ़ जाते हैं। सबील पर सबके सब शरबत पी रहे हैं। देखो सब कितने लालची हैं। इतनी मिठाइयाँ लीं मुझे किसी ने एक भी न दी। उसपर कहते हैं, मेरे साथ खेलो। मेरा यह काम करो। अब अगर किसी ने कोई काम करने को कहा, तो पूछूँगा। खाएँ मिठाइयाँ, आप मुँह सड़ेगा, फोड़े-फुंसियाँ निकलेंगी, आप ही जबान चटोरी हो जाएगी। तब घर से पैसे चुराएँगे और मार खाएँगे। किताब में झूठी बातें थोड़े ही लिखी हैं। मेरी जबान क्यों खराब होगी। अम्माँ चिमटा देखते ही दौड़कर मेरे हाथ से ले लेंगी और कहेंगी- मेरा बच्चा अम्माँ के लिए चिमटा लाया है। कितना अच्छा लड़का है। इन लोगों के खिलौनों पर कौन इन्हें दुआएं देगा? बड़ों की दुआएँ सीधे अल्लाह के दरबार में पहुँचती हैं, और तुरंत सुनी जाती हैं। मैं भी इनसे मिजाज क्यों सहूँ? मैं गरीब सही, किसी से कुछ मांगने तो नहीं जाता। आखिर अब्बाजान कभी न कभी आएँगे। अम्माँ भी आएँगी ही। फिर इनलोगों से पूछूँगा कितने खिलौने लोगे? एक-एक को टोकरियों खिलौने दूँ और दिखा दूँ कि दोस्तों के साथ इस तरह का सलूक किया जाता है। यह नहीं कि एक पैसे की रेवड़ियाँ लीं तो चिढ़ा-चिढ़ा कर खाने लगे। सबके सब हँसेंगे कि हामिद ने चिमटा लिया है। हँसे! मेरी बला से!"

भौतिक परिवेश के वर्णन के तहत जहाँ प्रकृती की रमणीयता और स्थान एवं भौतिक क्रियाओं का उद्देश्य सामने आता है वहीं मानसिक जगत के विवरण से व्यक्ति विशेष की चारित्रिक विशेषताओं का पता चलता है।

बोध प्रश्न

- ईदगाह कहानी में वर्णित बाह्य वातावरण की चर्चा कीजिए।
- क्या मानसिक वातावरण का वर्णन ईदगाह कहानी में मिलता है? यदि हाँ तो सोदाहरण स्पष्ट करें।

12.3.5 उद्देश्य

ईदगाह कहानी मूल रूप से हामिद की कहानी है। इसमें पात्रों की गतिविधियों के द्वारा सामाजिक और दोनों मनोविश्लेषनात्मक दोनों ही पक्षों को पूर्ण रूप से उभारा गया है। हामिद

और अमीना के साथ इस कहानी का एक मुख्य किरदार गरीबी भी है। हामिद के व्यक्तित्व का प्रवर्तन इससे ही हुआ है। उसके पास केवल तीन पैसे हैं। वह बहुत खिलौने-मिठाई नहीं खरीद सकता है। वह तर्क बनाता है कि मिठाई खाने से फोड़े-फुंसी होंगे और खिलौने टूट जाएँगे। इन पर खर्च करके वह अपने तीन पैसे बर्बाद नहीं करना चाहता है। यद्यपि उसके मन में यह तमन्ना है कि जब उसके पिता बहुत सी थैलियाँ लेकर और माँ बहुत सी नियामतें लेकर आएँगी तो वह अपने दोस्तों को टोकड़ी भरकर खिलौने देगा। पर अभी वह अपनी बूढ़ी दादी की मेहनत की कमाई को जरा सी ख़ुशी के लिए बर्बाद नहीं करना चाहता है। वह जानता है कि उसके घर में रोज पैसे नहीं आते हैं। ये तीन पैसे उसका खजाना है। जिससे वह अपनी दादी के लिए चिमटा खरीदता है। जो बहुत सालों तक टिकेगा। और इसको देखकर उसकी दादी खुश होंगी। उसे दुआएँ देंगी। पांच वर्ष के बालक को अपनी बूढ़ी दादी की चिंता है। इसलिए वह चिमटा खरीदता है। इस कहानी में मुख्य रूप से बाल मनोविज्ञान का विश्लेषण किया गया है। कई बालक इस कहानी के पात्र हैं, जैसे- मोहसिन, महमूद, नूरे, सम्मी। मेले में इनके क्रियाकलापों एवं हामिद के प्रति इनके व्यवहार से इनका जो मनोभाव प्रकट होता है, उसका विश्लेषण करना ही लेखक का उद्देश्य रहा है। हामिद और अमीना के व्यवहारों का भी मनोविश्लेषण की दृष्टि से ही अंकन किया गया है। कुछ सामाजिक विसंगतियों को उभारते हुए लेखक ने दूसरे पक्ष में शहरी और ग्रामीण परिवेश का अंतर भी स्पष्ट किया है। इन परिवेशों का स्त्री जीवन पर प्रभाव भी संक्षिप्त रूप में सामने रखा है। आबिद के जाने के बाद उसकी पत्नी कुछ ही दिनों में चल बसी। यहाँ स्त्री-पीड़ा का संकेतात्मक चित्रण उसके निवारणार्थ ही प्रस्तुत किया गया है। समस्यायों और परिस्थितियों का चित्रण यथार्थ के अनुरूप लेखक ने किया है। उन्होंने अपनी ओर से कोई समाधान प्रस्तुत नहीं किया है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि प्रधान इस कहानी को ऐतिहासिक महत्व की कहानी माना जाता है।

बोध प्रश्न

- ईदगाह कहानी का उद्देश्य क्या है?

12.3.6 शैली और शिल्प

ईदगाह कहानी को लेखक वर्णनात्मक पढ़कर ऐसा लगता है मानो लेखक स्वयं उपस्थित होकर कहानी कह रहे हों। यथार्थ का वाचन करते हुए इस कहानी में प्रेमचंद ने मेले का वर्णन ग्रामीणों के स्वभाव का वर्णन, प्रकृती के साथ ग्रामीण और शहरी परिवेश का वर्णन, बूढ़े हामिद और बालिका अमीना का वर्णन बहुत रोचकता के साथ किया है। त्योहार का अवसर लेखक ने लिया और उस अवसर पर सामाजिकों का कार्य-व्यापार जो जैसा समाज में चलता है उसका चित्रण किया है। चार-पाँच वर्ष के बालक तो वास्तव में अपनी दुनिया में ही रमनेवाले होते हैं। जितनी बड़ी-बड़ी बातें हामिद को सूझीं उतनी उन्हें न सूझती हों शायद पर गरीबी ने समय से पूर्व ही बालक को परिपक्व कर दिया है। उत्तरदायित्व का बोध कर्त्तव्य निर्वहन सिखा ही देता है।

इस कहानी में लेखक ने वर्णनात्मक और संवादात्मक शैली के साथ चित्रमयी भाषा का प्रयोग किया है जिससे दृश्यों और पात्रों का शब्द चित्र उपस्थित हो जाता है। भाषा में प्रयुक्त

मुहावरों से भाषिक सौंदर्य की अभिवृद्धि हुई है। कहानी में प्रयुक्त कुछ मुहावरे इस प्रकार हैं- राई का पर्वत बनाना, आँखें बदलना, मुँह चुराना, काम से जी चुराना, छाती पीटना इत्यादि।

वर्णनात्मक शैली : कहानी का आरंभ ही वर्णनात्मक शैली से हुआ है। स्थान, घटना और पात्रों का स्थूल वर्णन करने के साथ-साथ पात्रों के मनोजगत का भी सर्वांग विश्लेषण इस कहानी में उपलब्ध है। मानसिक जगत के उदाहरणों की चर्चा वातावरण के अंतर्गत पहले किया जा चुका है। शहरी परिवेश के लोग जो मेले में जा रहे थे उनका वर्णन देखिए- "एक से एक भड़कीले वस्त्र पहने हुए, कोई इक्के तांगे पर सवार, कोई मोटर पर, सभी इत्र में बसे, सभी के दिलों में उमंग।"

संवादात्मक शैली : संवादात्मक शैली अपनाकर लेखक ने पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। बच्चों की बातचीत में उनका ही स्तर और मनोविज्ञान दिखाई देता है।

"मोहसिन: अच्छा! अबकी जरूर देंगे हामिद, अल्लाह कसम ले जा।

हामिद: रखे रहो। क्या मेरे पास पैसे नहीं हैं।

सम्मी: तीन ही तो पैसे हैं। तीन पैसे में क्या-क्या लोगे?"

चित्रमयी भाषा : वर्णन और संवाद दोनों ही शैलियों में प्रयुक्त भाषा में चित्रमयी भाषा के कई उदाहरण मिलते हैं। उदाहरण- "उस दिन मेरी गाय खुल गई थी और चौधरी के खेत में जा पड़ी थी। अम्मा इतना तेज दौड़ी कि मैं उन्हें न पा सका।" इस पंक्ति से वह दृश्य आँखों के सामने आ जाता है जो यहाँ शब्दबद्ध है।

लेखक का आत्मकथ्य : कहानी के बीच-बीच में लेखक का स्वगत कथन आया है। जिसका एक उदाहरण यहाँ देखिए-

"बुढ़िया का क्रोध तुरंत स्नेह में बदल गया। और स्नेह भी वह नहीं, जो प्रगल्भ होता है और शब्दों में अपनी सारी कसक शब्दों में बिखेर देता है। यह मूक स्नेह था, खूब ठोस, रस और स्वाद से भरा हुआ।....अमीना का मन गदगद हो गया। बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पार्ट खेला था। बुढ़िया अमीना बालिका अमीना बन गई। वह रोने लगी। दामन फैलाकर हामिद को दुआएँ देती जाती थी और आँसू की बड़ी-बड़ी बूंदे गिराती जाती थी। हामिद इसका रहस्य क्या समझता!"

बोध प्रश्न

- इस कहानी के शैली और शिल्प पर प्रकाश डालिए।

12.4 पाठ सार

ईदगाह सामाजिक पृष्ठभूमि की मनोविश्लेषण चिंतन युक्त कहानी है। इस कहानी का आरंभ ईदगाह के मेले में जाने की उत्सुकता और उत्फुल्लता से होता है। ईद के मुबारक अवसर पर सारी प्रकृती भी इतनी सुंदर और रमणीय प्रतीत होती है मानो वह भी सारे संसार को ईद की बधाई दे रही हो। बच्चों की खुशी का कोई ठिकाना नहीं है। उनकी चिंता है कि सबलोग ईदगाह जाने में देर क्यों कर रहे हैं? अभिभावकों को गृहस्थी की चिंता है। कुछ के अब्बाजान चौधरी के पास जा रहे हैं। चौधरी गाँव में चल रही महाजनी सभ्यता का प्रतीक है। महाजनों की छत्रछाया में किसानों के जीवन के हश्र से आप सुपरिचित हैं। अमीना के घर में भी अन्न का एक दाना नहीं है। वह अपना अतीत सोचते हुए खुद से ही कहती है कि इस घर में ईद का क्या

काम? किसने बुलाया इस निगोड़ी ईद को? अगर आज आबिद होता तो उसके घर में भी खुशियाँ होतीं। आबिद और उसकी पत्नी काल का ग्रास बन गए। अब नन्हा हामिद ईदगाह जाना चाहता है। बच्चे को अकेले भेजते हुए अमीना का मन कचोटता है। पर उसे सिवैयों का भी जुगाड़ करना है। फहीमन के कपड़े सिलने से मिले आठ पैसों में से तीन हामिद के पास और पांच पैसे अमीना के पास हैं। ग़रीबों की ईद ऐसी ही होती है। हामिद को अमीना ने विश्वास दिलाया है कि उसके पिता बहुत सी थैलियां लेकर और माँ खुदा के घर से ढेर सारे तोहफे लेकर आएँगी। हामिद और बच्चों और गाँववालों के साथ मेले के लिए रवाना होता है। तीन कोस का पैदल रास्ता सभी बड़ी फुर्ती से तय कर लेते हैं। शहर पहुँचने पर उन्होंने अमीरों के बाग़ देखे। उनमें पत्थर फेंके। बड़ी-बड़ी इमारतें, अदालत, कॉलेज और क्लब भी देखें। आपस में इनपर चर्चा भी हुई। क्लब की चर्चा चली तो शहर की मेमों और गाँव की अपनी अम्मा की तुलना बच्चे करने लगे। इस तरह दो भिन्न परिवेश में रहने वाली स्त्रियों के कार्यक्षमता की परख बालदृष्टि के माध्यम से प्रेमचंद खोज रहे हैं। मोहसिन और हामिद की बातचीत हुई तो उसमें जिन्न और कांस्टेबल चर्चा का विषय बने। तभी पता चला कि चौधरी का रुतबा और सम्मान इन जिन्नों के कारण ही है। जिन्हें चोरों को पकड़ने के लिए रखा गया है वे ही चोरों के साथ मिलकर धनोपार्जन कर रहे हैं। ये समाज की विषम परिस्थितियाँ हैं और बहुत पेचीदे भी हैं। इन विषम परिस्थितियों की समझ इन बालकों को कितनी है इसका पता मोहसिन की इस बात से चलता है कि हराम का माल हराम में ही जाता है। ईदगाह पहुंचकर वहाँ नमाज अदा करने के बाद सभी गले मिलकर एक दूसरे को ईद की मुबारकबाद देने लगे। सब होने के बाद बच्चों और ग्रामीणों ने मेले की ओर रुख किया। मेले में एक से बढ़कर एक खिलौने और मिठाई थे। सभी उसका लुफ्त उठा रहे थे। पर हामिद लुहार की दूकान पर रुक गया। चिमटा देखकर उसे याद आया कि तवे से उसकी दादी की उंगलियाँ जल जाती हैं। उसने अपने तीन पैसों से चिमटा खरीदा बिना इसकी परवाह किए कि उसके दोस्त उसपर हँसेंगे। हामिद के हाथों में चिमटा देखकर पहले उसकी दादी चौंकी और फिर बहुत रोई। उस नन्ही-सी जान के मन में अपने लिए प्रेम को महसूस करके दादी की सारी पीड़ाएँ पिघलकर आँसू बनकर बहने लगीं। कहानी में गाँव और शहर के स्थूल और सूक्ष्म वातावरण का चित्रण है। स्थूल वातावरण से अभिप्राय भौतिक वातावरण से है जिसके अंतर्गत प्राकृतीक परिवेश, स्थान और घटनाओं का वर्णन किया गया है। सूक्ष्म वातावरण से अभिप्राय पात्रों के मनोजगत की चेष्टाओं और भावों के वर्णन से है। वर्णनात्मक और संवादात्मक शैली में चित्रमयी भाषा का प्रयोग करते हुए इस कहानी की रचना की गई है। कहानी की भाषा सरल और मुहावरेदार है तथा वर्णन सजीव है। संवादों में रोचकता का पूर्ण निर्वाह किया गया है। ईदगाह, मैला या अन्य स्थलों और पात्रों का वर्णन भी रुचिकर प्रतीत होता है। कहानी लेखक द्वारा ही कहा जा रहा है इससे बीच-बीच में उनके स्वगत कथन आए हैं जिससे कहानी की अभिव्यंजना प्रभावी हुई है। इस कहानी में मूल रूप से मनोविश्लेषण ही दिखाई देता है। हर पात्र और घटना का संयोजन लेखक ने मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किया है। यथार्थ का वर्णन करते हुए लेखक ने केवल पात्रों और घटनाओं की रुचिकर प्रस्तुति दी है। उन्होंने समस्यायों को उठाया है। विवशताओं को दिखाया है पर कोई समाधान नहीं प्रस्तुत

किया है। हामिद के माध्यम से उन्होंने एक उदात्त नायक के चरित्र बल, तर्क और नीतियों को विशदता से उजागर किया है।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. प्रेमचंद ने 'ईदगाह' के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है कि अन्य धर्मों की भाँति ही इस्लाम प्रेम, एकता, बराबरी और भाईचारे का संदेश देता है।
2. त्योहार के उल्लास पर अभाव और विपन्नता हावी नहीं हो पाती है। अमीना का चरित्र उल्लास और अभाव के समन्वय का प्रतीक है।
3. आनंद भरे हृदय से किसी भी विपत्ति का विध्वंस किया जा सकता है जिसका उदाहरण हामिद का चरित्र है।
4. कहानी के पात्र हामिद के अनुसार पैसे को ख़राब करना व्यर्थ है। उसका आवश्यकता के अनुरूप सदुपयोग होना चाहिए। मित्रों के साथ मित्रता का सुंदर व्यवहार होना चाहिए न कि कपट और चालाकी भरा क्रूर विनोद वाला व्यवहार। बड़ों की दुआएँ सीधे अल्लाह के दरबार में पहुँचती हैं और सुनी भी जल्दी जाती हैं। नीति और न्याय में बहुत बल है।
5. स्व नियंत्रण, त्याग, सद्भाव, विवेक और प्रेम का उदाहरण है हामिद का चरित्र। लेखक ने पाँच साल के छोटे बच्चे को उदात्त नायक बनाकर प्रस्तुत किया है।
6. ग्रामीण स्त्री की कार्य क्षमता आवश्यकता के अनुरूप स्वतः उद्घाटित हो जाती हैं।
7. वृद्धावस्था में निर्मल स्नेह की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। मनुष्य अपनी हर अवस्था में इसका आकांक्षी होता है।
8. इस कहानी के अनुसार पूँजीपति प्रणाली किसानों के लिए घातक बनी हुई है। यह उनके जीवन की त्रासदी है। इसकी औकात ईद को मुहर्रम बनाने वाली है और आमजन की रक्षक पुलिस व्यवस्था यदि अपनी व्यवस्था करने में लगी है तो आम जन की कौन कहे।

12.6 शब्द संपदा

1. कनकौआ = पतंग
2. कुबेर = धन के देवता, यक्षराज
3. कोई पारावार नहीं है = कोई सीमा नहीं है।
4. गंडेवाला = मजबूत धागेवाला अभिमंत्रित गंडा (ताबीज) जो गले में पहनते हैं उसका धागा बहुत ज्यादा मजबूत होता है। (गंडेवाला कनकौआ- महत्वपूर्ण पतंग)
5. धेलचा = अधेला, आधा पैसा (धेलचा कनकौआ- साधारण पतंग)
6. पाक = पवित्र
7. बूझते = जानते, यह अधिकतर जानना क्रिया के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे- जानना-बूझना या जानबूझ कर।
8. भिश्ती = मशक (पानी भरने के उपयुक्त चमड़े का थैला) से पानी ढोने

वाला व्यक्ति

9. लेई-पूँजी = घर की सारी संपत्ति

10.वजू = नमाज पढ़ने से पूर्व जल से इंद्रियों के शुद्धिकरण की क्रिया

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. ईदगाह कहानी का तात्विक विवेचन कीजिए।
2. इस कहानी की पात्र योजना पर प्रकाश डालिए।
3. ईदगाह कहानी पर मनोविश्लेषण की दृष्टि से प्रकाश डालिए।
4. इस कहानी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. क्या ईदगाह एक सामाजिक कहानी है? इसे स्पष्ट करते हुए बताइए कि समाज के किन विषम पहलुओं पर इस कहानी में प्रकाश डाला गया है?
2. ईदगाह कहानी की संवाद योजना पर प्रकाश डालिए।
3. बूढ़े हामिद और बालक हामिद का अंतर ईदगाह कहानी से खोजकर बताइए।
4. ईदगाह कहानी का संदर्भ लेते हुए गरीबी, सद्भाव, त्याग और विवेक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. आग में बहादुर ही कूदते हैं जनाब- यह कथन किसने कहा? ( )
   (अ) हामिद (आ) मोहसिन (इ) महमूद (ई) सम्मी
2. ईदगाह कहानी के लेखक कौन हैं? ( )
   (अ) अमीना (आ) प्रेमचंद (इ) अज्ञेय (ई) नगेंद्र
3. ईदगाह कहानी कब लिखी गई? ( )
   (अ) 1933 ई. (आ) 1916 ई. (इ) 1932 ई. (ई) 1930 ई.
4. चौधरी को सारे जहाँ की खबर कौन दे जाता था? ( )
   (अ) जिन्नात (आ) पुलिस (इ) वकील (ई) गाँववाले

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. कोई ....किसी .....कनकौए को काट गया हो।
2. तुम्हारे .....का मुँह रोज आग में लगेगा।
3. .....ने आँखें फेर ली तो सारा ईद .....हो जाए।

4. .....का मन गदगद हो गया।

III. सुमेल कीजिए -

1. अमीना	(अ) हामिद
2. नूरे	(आ) भिश्ती
3. मोहसिन	(इ) चिमटा
4. हामिद	(ई) सिपाही
5. महमूद	(उ) वकील

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. मानसरोवर भाग-1 : प्रेमचंद
2. साहित्य - तत्त्व और आलोचना : नलिन विलोचन शर्मा
3. प्रेमचंद और उनका युग : रामविलास शर्मा
4. प्रेमचंद : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी
5. कथाकारों की दुनिया : ऋषभदेव शर्मा

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 13 : जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय

रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 मूल पाठ : जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय

13.3.1 जयप्रकाश कर्दम का व्यक्तित्व

13.3.2 जयप्रकाश कर्दम का कृतीत्व

13.3.3 जयप्रकाश कर्दम की विशेष उपलब्धियाँ

13.4 पाठ सार

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

13.6 शब्द संपदा

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

साहित्य की प्रत्येक धारा या विधा के जनक एवं संस्थापकों में कुछ अग्रणी एवं प्रमुख नाम अवश्य होते हैं। जिन साहित्यकारों ने हिंदी साहित्य जगत में दलित विमर्श को प्रतिष्ठित करने का कार्य किया उनमें जयप्रकाश कर्दम का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। जयप्रकाश कर्दम का जन्म, लालन पालन जिस वातावरण में हुआ, बाल्यकाल से वर्तमान तक उसमें रहकर उन्होंने जिन संघर्षों का अनुभव किया उसे अपने साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है और उसमें वे सफल भी हुए हैं। प्रस्तुत इकाई जयप्रकाश कर्दम के व्यक्तित्व और कृतीत्व पर केंद्रित है।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- जयप्रकाश कर्दम के जीवनवृत्त से परिचित हो सकेंगे।
- जयप्रकाश कर्दम के व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।
- जयप्रकाश कर्दम की रचना यात्रा से अवगत हो सकेंगे।
- जयप्रकाश कर्दम की उपलब्धियों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी साहित्य में जयप्रकाश कर्दम के महत्व और स्थान को समझ सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : जयप्रकाश कर्दम : एक परिचय

13.3.1 जयप्रकाश कर्दम का व्यक्तित्व

देशकाल और वातावरण किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण के प्रमुख घटक होते हैं। किसी भी साहित्यकार की जीवन यात्रा में परिवेश और संघर्ष की भूमिका इसलिए भी विशेष महत्व रखती है क्योंकि इन्हीं से वह अपने साहित्य लेखन की सामग्री प्राप्त करता है। व्यक्ति का जन्म स्थान, परिवार की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक स्थिति के साथ साथ उसके सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति विशेष या अनेक व्यक्तियों का प्रभाव, उसकी शिक्षा-दीक्षा, चिंतकों, विचारकों के विचारों का प्रभाव इत्यादि का प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर किसी न किसी रूप दिखाई देता ही है। अतः किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का अध्ययन हेतु उसके जन्म, माता-पिता, परिवार, परिवेश, शिक्षा, सेवा आदि का अध्ययन किया जाना समीचीन होता है।

बाल्यकाल एवं पारिवारिक परिवेश

जयप्रकाश कर्दम का जन्म इन्द्रगढ़ी (मिसलगढ़ी) ग्राम, जिला - गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश निवासी मजदूर, तांगा चालक श्री हरि सिंह कर्दम के ज्येष्ठ पुत्र रूप में 5 जुलाई, 1958 को हुआ। इनकी माता का नाम उत्तर कली था जो कि एक सामान्य ग्रहणी थीं। निर्धनता अपने आप में अभाव और कष्टों का स्रोत होती है। उनके पिता टी.बी. के मरीज थे। सन 1976 में जयप्रकाश जी बारहवीं कक्षा के छात्र थे तभी उनके पिता की मृत्यु हो गई। उनके चार भाई एवं तीन बहने हैं। उनके भाई बहनों में ज्येष्ठता क्रम से देखने पर हम पाते हैं कि सबसे बड़ी बहन सोनवती, फिर जय प्रकाश कर्दम, रणजीत सिंह, मधुबाला, मालती, संदीप कुमार तथा कुलदीप हैं। सोनवती जयप्रकाश जी से तीन वर्ष बड़ी थीं। छोटा भाई रणजीत सिंह विद्युत विभाग दिल्ली में सेवारत हैं और गाजियाबाद में रहते हैं। बहन मधुबाला दिल्ली के रोहिणी में रहती हैं। उनके पति दिल्ली पुलिस में सेवारत हैं। उनकी बहन मालती के पति नेशनल थर्मल पावर कॉर्पोरेशन नोएडा में नौकरी करते हैं। छोटा भाई संदीप कुमार भी पारिवारिक रूप से अच्छी स्थिति में हैं। उनकी पत्नी जिला एटा उत्तर प्रदेश में अध्यापिका के रूप में सेवारत हैं। उनका सबसे छोटा भाई मैट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण न कर सका और वह गाँव में रहकर मेहनत मजदूरी करता है।

16 अक्टूबर, 1988 को जयप्रकाश कर्दम का विवाह दिल्ली निवासी सुश्री तारा बौद्ध से हुआ। उनकी पत्नी उच्च शिक्षित तो हैं ही साथ ही अम्बेडकरवाद एवं बौद्ध सिद्धांतों अनुयायी प्रगतिशील विचारों की महिला हैं। व्यवसाय से वे माध्यमिक विद्याल में शिक्षिका रहीं हैं। कर्दम की दो बेटियाँ कम्पिला और विशाखा व एक बेटा कुणाल है। उनकी बड़ी बेटी कम्पिला एम.बी.बी.एस. करके अस्पताल में कार्यरत है। उनकी छोटी बेटी विशाखा दिल्ली के एक कॉलेज में सहायक प्रोफेसर के पद पर कार्यरत है। उनका पुत्र कुणाल इंजीनियर है।

बचपन से कर्दम जी ग्रामीण परिवेश में पले बढ़े। जब तक पिता जीवित थे तब उन्हें कम कठिनाईयों का सामना करना पड़ा परंतु पिता की मृत्यु के बाद परिवार का ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण आर्थिक संकट से जूझना पड़ा। अध्ययन जारी रखने तथा माता एवं भाई बहनों के भरण पोषण हेतु उन्हें मेहनत मजदूरी करनी पड़ी। दलित होने के कारण दैन्यता तो सदा से ही थी और मजदूरी तो उन्हें आठवीं कक्षा के बाद से करनी ही पड़ी परंतु वो कभी कभार करनी होती थी परंतु पिता की मृत्यु के बाद उन्हें बहुत ही कठिन दौर से गुजरना पड़ा। जातिवाद तो गाँव में प्रचलित ही था और आए दिन किसी न किसी सवर्ण द्वारा अपमानित होना कुछ नया नहीं था। स्कूल, कॉलेज, गाँव, गली, मुहल्ला सर्वत्र जातिवाद के कारण अन्य दलितों की तरह कर्दम जी के परिवार को काफी जीवन संघर्ष करना पड़ा।

बोध प्रश्न

- बचपन में जयप्रकाश कर्दम का पारिवारिक परिवेश कैसा था?

शिक्षा एवं रोजगार

जयप्रकाश कर्दम आरंभिक कक्षा से पांचवी तक अपने गाँव के महानन्द मिशन हरिजन प्राइमरी पाठशाला में पढ़े। छठी कक्षा से इंटरमीडियट तक की पढ़ाई अध्यात्मिक नगर इंटर कॉलेज से साइंस विषयों से पूरी की। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण उन्होंने दर्शनशास्त्र, अंग्रेजी और हिंदी विषय के साथ 1980 में स्नातक बी.ए. की परीक्षा पास की। उन्होंने कई विषयों से स्नातकोत्तर की उपाधियाँ ली यथा- 1982 में दर्शनशास्त्र (1982), हिंदी (1984), इतिहास (1986) तथा वर्ष 2000 में उन्होंने मेरठ विश्वविद्यालय से श्रीलाल शुक्ल के उपन्यास रागदरबारी का समाज शास्त्रीय अध्ययन विषय से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की।

अल्पायु में पिता की मृत्यु के बाद परिवार का बोझ जयप्रकाश कर्दम कंधों पर पड़ने के बाद उन्हें छोटी उम्र में ही मेहनत मजदूरी करनी पड़ी परंतु विपरीत एवं कठिन परिस्थितियों का समाने करते हुए उन्होंने अपने परिवार की देखभाल करते हुए अध्ययन जारी रखा। उन्होंने भवन निमार्ण में बेलदारी से लेकर स्टील फैक्टरी, डी.सी. एम. ग्रुप की हिंडन रीवर मिल में मजदूरी की और उसके बाद एक वकील के पास मुंशी के रूप में भी कार्य किया। वकील के पास जयप्रकाश कर्दम को घर व ऑफिस दोनों के काम करने पड़ते थे। जब उन्होंने वकील के घर के काम करने से इनकार किया तो उसने उन्हें तत्काल नौकरी से निकाल दिया।

उन्होंने एयरमैन की परीक्षा पास की किन्तु छोटे भाई की पढ़ाई के कारण वे उसमें नहीं जा सके। स्नातक द्वितीय वर्ष के समय में उनकी नौकरी बिक्रीकर विभाग में लग गई। उसके बाद की पढ़ाई उन्होंने नौकरी के साथ ही की। सन 1984 में उनकी नौकरी विजया बैंक में लगी तो उन्होंने बिक्रीकर विभाग की नौकरी से त्यागपत्र देते हुए बैंक में नौकरी प्रारंभ की। बैंक में उनकी पदस्थाना इलाबाद एवं मेरठ दोनो जगह रही। उसके बाद उन्होंने उत्तर प्रदेश सरकार में पी.एस.सी. परीक्षा पास करते हुए तहसीलदार की नौकरी प्रारंभ की। उसके बाद मे संघ लोक सेवा आयोग से 1989 में चयनित होकर केंद्रीय सचिवालय के राजभाषा विभाग में सहायक

निदेशक के रूप में पदस्थ हुए। 1996 में वे उपनिदेशक के रूप में पदोन्नत हुए। इसके अतिरिक्त उन्होंने अलग अलग कालावधियों के लिए भारतीय उच्चायोग, पोर्ट लुई (मॉरिशस) में द्वितीय सचिव शिक्षा एवं संस्कृति के पर, वाणिज्य मंत्रालय में सहायक निदेशक के रूप में भी कार्य किया। जयप्रकाश कर्दम जी नौकरी के साथ-साथ साहित्य सृजन में निरंतर सक्रिय रहे और वर्तमान में सरकारी सेवा से सेवानिवृत्त होकर साहित्य सृजन में लगे हुए हैं। वे 1999 से निरंतर दलित वार्षिकी का संपादन भी कर रहे हैं।

बोध प्रश्न

- जयप्रकाश कर्दम ने कहाँ-कहाँ काम किया?

साहित्य के प्रेरणा स्रोत

जयप्रकाश कर्दम अपना सबसे बड़ा प्रेरणा स्रोत डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर को मानते हैं। उन्हें डॉ. अम्बेडकर अभावग्रस्त जीवन, जातीय संघर्ष में बहुत कुछ समान सा लगता है। अम्बेडकर साहित्य अध्ययन को ही वे अपने साहित्य सृजन का मूल स्रोत मानते हैं। उन्हें मेक्सिम गोर्की की आत्मकथा ने भी बहुत प्रभावित किया। क्योंकि गोर्की के पिता का देहांत भी बचपन में ही हो गया था और उन्होंने बहुत संघर्ष करते हुए स्वयं को स्थापित किया था। उनके लेखन का प्रारंभ एक पत्रकार के रूप में हुआ। 1977-78 के दौरान गाजियाबाद से प्रकाशित साप्ताहिक पत्र 'घोर क्रांति' में एक स्तंभ 'खुला पत्र' लिखते थे, जो कि प्राय: नेताओं से संबंधित होता था। राधाचरण विद्यार्थी जो एक सम्पादक एवं पत्रकार थे, उन्होंने जयप्रकाश कर्दम को निरन्तर लिखते रहन के लिए प्रेरित किया। सन् 2005 में विद्यार्थी जी की मृत्यु हो गई। उनके गाँव के ही डॉ. देवी सिंह और रामसहाय एडवोकेट ने भी लेखन के लिए हमेशा कर्दम जी का हौंसला बढ़ाया। इनके अलावा उनके चाचा हरपाल व उनके दो मित्रों मुकुटलाल तोमर और हुकम सिंह से भी सदा आगे बढ़ने एवं लेखन के लिए प्रेरणा एवं नैतिक बल मिला। प्रेमचंद, रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि लेखकों का भी उन पर बहुत प्रभाव पड़ा। आरंभ में उन्होंने पत्र पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानी इत्यादि भेजने प्रारंभ किए परंतु अधिकांश जगह से उन्हें निराशा ही हाथ लगी परंतु उन्होंने हार नहीं मानी और 1983 में उनकी प्रथम पुस्तक 'वर्तमान में दलित आंदोलन' प्रकाशित हुई। उसके बाद 1986 में 'करुणा' उपन्यास प्रकाशित हुआ। इससे उनकी लेखन गति में तेजी आई और जिस उपन्यास से जयप्रकाश कर्दम को हिंदी साहित्य जगत में प्रसिद्धि मिली उसका नाम है 'छप्पर' (1994)।

बोध प्रश्न

- कर्दम की प्रथम पुस्तक का नाम और प्रकाशन वर्ष बताइए।
- कर्दम के उपन्यास 'करुणा' और 'छप्पर' कब-कब प्रकाशित हुए?

फैलोशिप, पुरस्कार एवं सम्मान

जयप्रकाश कर्दम को साहित्य सृजन और उनके सामाजिक कार्यों के लिए उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। वह पुरस्कार और सम्मान निम्न रूप से है।

फैलोशिप

मानव संसाधन विकास मन्त्रालय (संस्कृति विभाग) भारत सरकार द्वारा फैलोशिप, भारतीय बौद्ध महासभा, उत्तर प्रदेश द्वारा फैलोशिप

पुरस्कार एवं सम्मान

उत्तर प्रदेश विकास संगठन द्वारा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर रत्न पुरस्कार, विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरिशस द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी अंतराष्ट्रीय निबंध प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार, केंद्रीय हिंदी संस्थान द्वारा महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार, राष्ट्रपति द्वारा 2007 में पद्मभूषण मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार, राष्ट्रीय अस्मितादशी साहित्य अकादमी, उज्जैन द्वारा साहित्य सारस्वत सम्मान, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश द्वारा संत कबीर सम्मान, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, उत्तर प्रदेश द्वारा संत रैदास सम्मान, मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी द्वारा कृती सम्मान, भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली द्वारा डॉ. बाबासाहेव अम्बेडकर राष्ट्रीय सम्मान, बहुजन अन्याय एक्शन समिती, अमरावती (महाराष्ट्र) द्वारा सम्मान, भारतीय दलित साहित्य अकादमी, भोपाल द्वारा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अस्मिता सम्मान आदि, हिंदी अकादमी दिल्ली ने दलित साहित्य और विमर्श के लिए राष्ट्रपति द्वारा राहूल सांकृत्यायन सम्मान, हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा विशेष योगदान सम्मान, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा लोहिया साहित्य सम्मान, दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी द्वारा संत रविदास सम्मान, सत्यशोधक समाज, मुम्बई द्वारा सत्यशोधक सम्मान।

13.3.2 जयप्रकाश कर्दम का कृतीत्व

जयप्रकाश कर्दम का बाल्यकाल, यौवन बहुत ही अभावग्रस्त एवं संघर्षपूर्ण रहा। कहीं न कहीं उनके बचपन का संघर्ष उनके लेखन की प्रेरणा रही है। यूं तो जयप्रकाश कर्दम के लेखन आरंभ पत्रकारिता से हुआ परंतु सृजनात्मक साहित्य भी साथ-साथ चलता रहा। उनके साहित्य सृजन का आरंभ कहानी से हुआ है। उनकी प्रथम कहानी 'अलगोझा' थी, जो गाजियाबाद से एक पत्रिका में 1976-77 में प्रकाशित हुई थी। लेखक ने आरंभिक काल में तीन उपन्यासों का लेखन भी किया। उनके चाचा के एक रजिस्टर में उन्होंने एक उपन्यास लिखा जिसे उन्होंने पॉकेट बुक्स, रोहतक को छापने के लिए भेजा परंतु प्रकाशन बंद हो जाने के कारण न तो वह उपन्यास

छप सका और न ही उन्हें वापस मिल सका। दूसरा उपन्यास मधु पब्लिकेशन, गाजियावाद को भेजा उन्हें वह अच्छा लगा। उन्होंने उसे रख लिया। बाद में जयप्रकाश कर्दम नौकरी में व्यस्त हो गये। तीसरा उपन्यास उनके घर में ही चूहों ने कतर डाला। इस तरह से उनके तीनों उपन्यास की पांडुलिपियाँ उनके पास नहीं रही। फिर भी वे निराश नहीं हुए।

प्रत्येक साहित्यकार का साहित्य सृजन निरुउद्देश्य कभी नहीं होता। जयप्रकाश कर्दम के मतानुसार "लेखन का उद्देश्य केवल समाज का दर्पण ही नहीं समाज परिवर्तन की चेतना के प्रसार में उसकी भूमिका हो। साहित्य केवल कला के लिए नहीं माना जा सकता वह जीवन के लिए भी होता है, तथा जीवन की संगतियों को उजागर कर उनके उन्मूलन के उपाय सुझाएँ।" जयप्रकाश कर्दम का साहित्य दलित चेतना से प्रतिपूरित है, जो दलित जीवन के प्रश्नों को बहुत ही विचारात्मक ढंग से उठाने का कार्य करता है। उन्होंने दलित साहित्य को साहित्य की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास किया है।

बोध प्रश्न

- कर्दम की प्रथम कहानी कौन-सी थी?
- कर्दम का साहित्य किस चेतना से परिपूरित है?

विभिन्न विधाओं में साहित्य सृजन

बहुआयामी व्यक्तित्व के स्वामी जयप्रकाश कर्दम का हिंदी साहित्य में सम्मानजनक स्थान रहा है। उनके साहित्य सृजन की प्रेरणा उनकी स्वानुभूति, दलितों के प्रति आस्था, गौतम बुद्ध, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, महात्मा फुले आदि के विचार रहे हैं। उनका साहित्य सामाजिक परिवर्तन का पैरोकार रहा है। उन्होंने अपने साहित्य में दलितों को केंद्र मानकर कहानी, उपन्यास, काव्य, वैचारिक लेख आदि का सृजन किया है।

काव्य साहित्य

मूलत: जयप्रकाश कर्दम की अभिरुचि कथा-साहित्य के प्रति अधिक रही है परंतु उन्होंने पर्याप्त मात्रा में काव्य सृजन भी किया है। उन्होंने पहली कविता 'बाबा तेरे अभाव में' यह 'दलित केसरी' इलाहाबाद से प्रकाशित हुई है। उन्होंने हिंदी साहित्य के दलित साहित्य को समृद्ध करने में अपना बहुमोल योगदान दिया है। कर्दम जी के पांच काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं, 'गूंगा नहीं था' (1997), 'तिनका तिनका आग' (2004), 'बस्तियों के बाहर' (2013), 'दुनियाँ के बाजार में' (2021) तथा 'लाशों के शहर में' (2022)।

बोध प्रश्न

- कर्दम की पहली कविता कौन सी है?

गूँगा नहीं था मैं

यह काव्य संग्रह 1997 में सागर प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। इस काव्य संग्रह में कुल 25 कविताएँ हैं। इस काव्य संग्रह की कविताओं में दलित समाज के अस्तित्व, उनकी अस्मिता और स्वाभिमान को बहुत ही मार्मिकता के साथ चित्रित किया गया है। सदियों से त्रस्त, उपेक्षित, शोषित दलित समाज की गहराई को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इस काव्य संग्रह की कविताएँ दलित-जीवन के जीवन बोध को सामने लाती है जिसमें दलित जीवन की व्यथा, उनका दर्द, उनके अधिकारों के प्रति अपनी काव्यशैली के माध्यम से प्रस्तुत करने का कार्य किया गया है।

तिनका-तिनका आग

जयप्रकाश कर्दम का दूसरा काव्य संग्रह 'तिनका-तिनका आग' सन 2004 में सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। इस काव्य संग्रह में कुल 38 कविताएँ संकिलत हैं। इस संग्रह की पहली कविता 'अप दिपो भव' पारंपरिक हिंदू दर्शन और बौद्ध दर्शन के अंतर करने वाली कविताएँ हैं। 'मनुष्यता', 'लहू और यंत्रणा', 'कलम' एवं अन्य कविताएँ दलित समाज में व्याप्त भूख, यंत्रणा, सांप्रदायिकता, उत्पीड़न और जातिभेद आदि की स्थितियों को बहुत गंभीरता से चित्रित करती हैं। भारतीय समाज में दलित सामाजिकी का दिग्दर्शन कराने वाला यह संग्रह दलित विमर्श का एक प्रमुख काव्य संकलन माना जा सकता है। दलित चारों तरफ से कुरीतियों, अशिक्षा, भेदभाव, छुआछूत, वर्गभेद, अस्पृश्यता, भूख, गरीबी आदि से घिरे हुए हैं। उनका कोई कर्णधार या उद्धारक नहीं। उन्हें स्वयं के लिए स्वयं संघर्ष स्वयं से एवं समाज से करना होगा। उनकी जैसे गुजरी या गुजर रही है गुजर ही जाएँगी परंतु उन्हें अगली पीढ़ी के लिए कुछ करना होगा। उन्हें इस व्यवस्था के चंगुल से बाहर आने के लिए कुछ करना होगा। नहीं तो, सदियों से दासता झेलते दलित न जाने कब तक कीड़े मकोड़ों सा जीवन जीने के लिए विवश रहेंगे। इस संदर्भ में वर्तमान पीढ़ी में क्रांति का बीज बोने का काम 'तिनका-तिनका आग' काव्य संग्रह की कविताएँ करने में पूरी तरह से सक्षम हैं।

बस्तियों से बाहर

जयप्रकाश कर्दम का तृतीय काव्य संग्रह 'बस्तियों से बाहर' सन 2013 में अमन प्रकाशन, कानपुर द्वारा प्रकाशित किया गया। इसमें कुल 46 कविताएँ हैं, जिसमें गीतों का समावेश किया गया है। इस काव्य संग्रह की कविताओं के संकलन जैसा न होकर रचनाओं के उतार-चढ़ाव सहित पर्याप्त वैविध्यपूर्ण संकलन है। इस काव्य संग्रह की प्रथम कविता 'आदमी और कविता' है, जो कि कवि द्वारा किए गए आदमी और कविता के मध्य के निरालेपन का परिलक्षण कराती है। 'स्त्री बनती वेटी', तुम्हारी कोख में नीम कविताओं में मानव जीवन की कोमल संवेदनाओं को अभिव्यक्ति मिली है। "काव्य संग्रह की प्रतिनिधि कविता 'बस्तियों से बाहर' आज के समय का

ज्वलंत और जरूरी प्रश्न है और इसे मानक प्रगति के तमाम आधुनिक मॉडलों पर एक व्यंग्यात्मक टिप्पणी के रूप में भी देखा जा सकता है। भौतिकता के दृष्टिकोण से मानव समाज ने प्रगति तो बहुत की है परंतु आज भी उसके मन में जातिगत संकीर्णता कूट कूट कर भरी हुई है। 'ढोल', 'देवभूमि', 'नया भारत बनाएँ', 'विन्यास', 'सर्वनाम' तथा 'और वह चला' आदि महत्वपूर्ण कविताएँ हैं। इस संग्रह में जयप्रकाश कर्दम द्वारा 1980 के दशक में रचित कुछ गीत भी हैं।

दुनियाँ के बाजार में (2021)

'दुनिया के बाजार में' शीर्षक काव्य संग्रह में संकलित कविताओं में जयप्रकाश कर्दम भारतीय समाज के विभिन्न आयामों को सामने तो लाते ही हैं अमीरी और गरीबी के बीच की खाई की ओर भी इंगित करते हैं। उनकी संवेदना देश और समाज के उस व्यक्ति के लिए व्यक्त होती है जो क्रंकीट के ताजमहलों को देखकर भौचक है। जयप्रकाश कर्दम के इस काव्य संग्रह में कुल 111 कविताएँ हैं। यह रचनाएँ समाज के वंचित वर्ग को समर्पित हैं जो संगठन शक्ति के महत्व को न समझते हुए बिखरा हुआ है। संग्रह की अधिकांश कविताएँ मनुष्य और मानवता को बचाए रखने की बात करती हैं। समाज में अनंत काल से व्याप्त अमीरी और गरीबी की खाई को पाट कर सभ्य समाज की संकल्पना पर बल देती हैं। 'दुनियाँ के बाज़ार में' शीर्षक कविता इस संग्रह की प्रतिनिधि कविता है। इसमें कवि ने इंसानियत, प्यार और अदब को महत्व देते हुए समाज की यथार्थ स्थिति को स्पष्ट किया है। कुल मिलाकर 'दुनियाँ के बाज़ार में' कविता संग्रह वर्तमान काल की परख करता हुआ संग्रह है, जो हमारे दैनिक सामान्य जीवन में प्रतिपल होते परिवर्तनों का दिग्दर्शन कराता है।

लाशों के शहर में (2022)

क़लमकार पब्लिशर्स द्वारा प्रकाशित 'लाशों के शहर में' जयप्रकाश कर्दम का 2022 में प्रकाशित काव्य संग्रह है। साहित्य सृजक के कर्म में निपुण जयप्रकाश कर्दम समाज और सामाजिकता के विभिन्न सरोकारों के पाठकों को दपर्ण दिखाने का कार्य करते हैं। खुली और पैनी दृष्टि से समाज का अवलोकन करते हुए वे सामाज की स्थितियों को यथारूप अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त प्रदान करते हुए लेखकीय जागरूकता का परिचय देते हैं। प्रेम, स्वातंत्र्य, न्याय और समानता, सौहार्दय, सद्भाव और सह-अस्तित्व की अनुगूंज से प्रतिपूरित उनकी कविताएँ बहुत ही सरल भाषा में प्रभावी ढंग से अपनी बात रखती हैं। प्रेम का संवेग, संबंधों की पहचान और अनुभवों का ताप इस संग्रह की कविताओं में बहुत ही परिपक्व रूप में परिलक्षित होता है। बड़ी बड़ी बातों को छोटे छोटे शब्द चित्रों के माध्यम से कहना कर्दम जी की विशेषता मानी जा सकती है। वे भाषा प्रयोग एवं बिंव के स्तर पर भारी भरकम शब्दों बचते हुए अपनी आप बहुत ही सहज एवं सरल ढंग से कहते हैं जो कि पाठकों के हृदय में स्थान बनाते हुए शुषुप्त संवेदनाओं को जगृत करते हुए मन मस्तिष्क को झकझोरती हैं। इस कविता संग्रह में कर्दम जी

की अपेक्षाकृत छोटी कविताएँ संगृहीत हैं, जिनमें बहुत सी लघु कविताएँ हैं, जो आकार में छोटी होने के बावजूद शिल्प, संवेदना और स्वरूप, प्रत्येक दृष्टि से अपना गंभीर प्रभाव छोड़ने में सक्षम हैं।

बोध प्रश्न

- कर्दम के विभिन्न कविता संग्रहों के नाम और प्रकाशन वर्ष लिखिए।

खंडकाव्य : राहुल

जयप्रकाश कर्दम का 'राहुल' नामक खंडकाव्य 2011 में साहित्य संस्थान प्रकाशन गाजियाबाद द्वारा प्रकाशित किया गया। इस खंडकाव्य के माध्यम से कर्दम जी ने बौद्ध साहित्य में 'राहुल' जैसे अल्प चर्चित परंतु महत्वपूर्ण चरित्र का पुनर्निरूपण करने का कार्य किया है। बौद्ध साहित्य में शुद्धोधन, यशोधरा, राहुल आदि वंचित पात्र है। 'राहुल' (खंड काव्य) के कथानक को पाँच सर्ग में विभक्त किया गया है।

प्रथम सर्ग में राहुल के जन्म के अवसर पर परिवार और राज्य में आनंद का उत्सव मनाया जाता है पर पिता सिध्दार्थ के मन के अंतर्द्वन्द को लेखक ने सिध्दार्थ और यशोधरा के संवाद के माध्यम से सिध्दार्थ के मन में उठ रहे प्रश्नों का चित्रण किया है। भारतीय समाज में प्राचीन काल से ही सामान्यत: संतान वह भी पुत्र का जन्म सम्पूर्ण वंश के लिए उत्साह का कारण रहा है क्योंकि पुत्र का वंश वृद्धि का प्रमुख घटक माना जाता है। परंतु यहां पिता सिद्धार्थ का द्वंद एक नवीन सोच एवं परंपरा की ओर इंगन करता है। द्वितीय सर्ग में सिद्धार्थ के अभिनिष्क्रमण हेतु गृहत्याग का चित्रण प्राप्त होता है। तृत्तीय सर्ग में धम्मचक्र परिवर्तन में संघ में दीक्षित होने की घटना, सिद्धार्थ को बुद्धत्व की प्राप्ति और देश के विभिन्न स्थलों पर भ्रमण एवं धम्म का प्रचार का वर्णन किया गया है। चतुर्थ सर्ग में राहुल-बुद्ध मिलन में सिद्धार्थ गौतम का कपिलवस्तु में आगमन और सदा से ही पितृस्नेह से वंचित राहुल की मनोदशा का बहुत ही मार्मिक चित्रण किया गया है। राहुल एवं यशोधरा के मध्य प्रश्नोंत्तर के माध्यम से न सिर्फ एक मां की पीड़ा को अभिव्यक्त किया गया है बल्कि बाल सुलभ जिज्ञासाओं के माध्यम से एक पितृ स्नेह वंचित बालक की मानसिक स्थिति का वर्णन बहुत ही प्रभावित करता है। पंचम सर्ग 'गमन' सर्ग में शुद्धोधन के अपने पुत्र प्रेम से वंचित रहने की घटना, राहुल को गौतम बुद्ध के साथ ले जाने की घटता है कपिलवस्तु के सभी लोगों को बुद्ध धर्म का सार बताने की घटना का वर्णन इस सर्ग प्राप्त होता है।

इस खंडकाव्य में राहुल समस्त समाज के वंचित वर्गों के प्रतीक रूप में चित्रित किया गया है। माध्यम एक बालक है परंतु पीड़ा समस्त वंचित समाज की है। वंचितों की त्रासदी ही होती है गुस्से एवं क्रोध में कसमसाना और कुछ न कर पाना। यशोधरा और गौतम के संवाद के माध्यम से राहुल का क्षोभ व्यक्त होता है। अपने वंचन के संबंध में राहुल के तर्क बहुत ही सटीक हैं। इन प्रश्नात्मक तर्कों के माध्यम से लेखक का उद्देश्य दलित समाज को अपने अधिकारों के प्रति जागृत करना है। राहुल का स्वयं एवं अपनी माता यशोधरा के अधिकारों के लिए आवाज उठाना दलित

समाज में यह प्रेरणा देने के लिए किया गया है कि स्वयं के साथ अपने स्वजनों एवं समाज के अधिकारों के प्रति सचेत रहना ही जीवन को बेहतरी का माध्यम है।

बोध प्रश्न

- राहुल किस वर्ग का प्रतीक है?

कथा साहित्य

जयप्रकाश कर्दम का लेखन पत्रकारिता से प्रारंभ हुआ और उम्र और लेखन की परिपक्वता के साथ-साथ उसमें कई विधाएँ शामिल होती गईं। कथा साहित्य में प्रमुख रूप से हमें उपन्यास, बाल उपन्यास, कहानियाँ प्राप्त होती हैं। कथा साहित्य को अग्रलिखित रूप में देखा जा सकता है-

उपन्यास

जयप्रकाश कर्दम अभी तक कुल छह उपन्यासों की रचना की है परंतु उनके तीन प्रारंभिक उपन्यास कतिपय कारणों से प्रकाशित नहीं हो पाए। उनके तीन उपन्यास प्रकाशित हुए पाए जाते हैं। प्रथम प्रकाशित उपन्यास 'करुणा' है, जो 1986 में प्रकाशित हुआ। दूसरा उपन्यास 'छप्पर' 1994 में प्रकाशित हुआ। तीसरा 'उत्कोच' उपन्यास है जिसका प्रकाश वर्ष 2019 हैं।

करुणा

जयप्रकाश कर्दम का पहला उपन्यास 'करुणा' 1986 में प्रकाशित हुआ। इसका प्रकाशन भारत-सावित्री प्रकाशन, गाजियाबाद द्वारा हुआ है। उपन्यास का मूल विषय बौद्ध धर्म पर आधारित है। उपन्यास में धामपूर गाँव के हरिशंकर के परिवार का वर्णन मिलता है। पिता की मृत्यु के बाद घर की सभी जिम्मेदारियों का बोझ रमेश के कंधे पर आ जाता है। रमेश ने एम.ए. पास कर लिया था। घर की आर्थिक स्थिति ठिक न होने से रमेश रोजगार की तलाश में इधर-उधर भटकता है और नसबंदी कर लेता है। माँ अपने बेटे के जीवन को नष्ट होते हुए नहीं देख सकी। इस सदमे से वह मर गई। रमेश ने खुद अभावों में जीवन बिताया पर अपने छोटे भाई बहनों पर कोई आँच नहीं आने दी। उपन्यास की नायिका करुणा रमेश के गुणों से काफी प्रभावित होती है। दोनों के विचार एक-दूसरे से मिलते-जुलते थे। रमेश गाने-बजाने संगीत में काफी रुचि रखता था। रमेश के खयालों में बूची करुणा नए-नए सपने देखने लगती है। एक दिन अचानक रमेश दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है। उसी घटना से कणों की सभी आशा-अकांक्षाओं पर पानी फेर जाता है। इस आघात को करुणा सह नहीं पाती। जीवन से निराश होकर वह बौद्धधर्म में दीक्षा लेकर लोककल्याण के काम में जुट जाती है। धामपूर गाँव में ठाकूर सुखदेव सिंह का बेटा सुरज दिन भर गाँव में शराब पिकर आवारा गदी करता है। गाँव के चमार की बेटी अंगूरी पर सूरज की नजर चढ़ जाती है। सूरत उस प्रलोभन देता है। पर अंगुरी नहीं मानती है। एक दिन हिंसा पर उत्तर आता है। अंगूरी का अकेला देखकर उस पर झपट पड़ता है। वह शोर मचाकर इसका प्रयास विपन करती है। यह घटना रमेश को बर्दाश नहीं होती। वहगाँव में पंचायत

बुलवाकर सूरज को गाँव से दो साल के लिए बेदखल कर देता है। इस घटना से सूरज के मन में रमेश के प्रति प्रतिशोध की भावना बढ़ती जाती है।

रमेश ने अपनी बहन की शादी तीन साल पहले निर्विघ्न कर देता है, परंतु वह माँ न बन सकी इसलिए उसके ससुरालवालों ने मायके भेज दिया। इस सदर्भ को वह सह नहीं पायी और अपनी जीवन यात्रा को एक दिन समाप्त कर लेती है। इस घटना का सूरज फायदा उठाकर रमेश को जेल भेजता है। रमेश के जेल जाने से उसके छोटे भाई-बहनों को विपदाओं का सामना करना पड़ता है। गाँव में सूरन एक वेश्या से शादी कर लेता है। यह बात ठाकुर साहब को ठीक नहीं लगती वाप-बेटे के संघर्ष में ठाकूर साहब का खून सूरज के हातों हो जाता है। इस कारण सूरज को जेल हो जाती है। उपन्यास के अंत में रमेश जेल से छुटने के बाद वह बुद्ध विहार जाता है। वहाँ उसे करुणा मिलती है। रमेश भी मानवकल्याण के लिए भिक्षु बन जाता है और करुणा के साथ आदर्श समाज की स्थापना के लिए पूरे मनोयोग से सद्धर्म का प्रचार करने लग जाता है।

'करुणा' नायिका प्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास में "गाँव के सामंती समाज में दलितों की स्थिति और संघर्ष के साथ-साथ समाज में व्याप्त दहेज प्रथा, रिश्वत खोरी, भ्रष्टाचार आदि बुराइयों को उजागर किया गया है। बौद्ध धर्म कुरीतियों से मुक्त तथा प्रगतिशील है, तथा पाखंड और विश्वासों से मुक्त वैज्ञानिकता पर आधारित बौद्ध धर्म को अपनाने से समाज में समानता, शांति और सद्भाव कायम किया जा सकता है। जो समाज की प्रगति का आधार है। इसलिए लेखक न 'करुणा' उपन्यास के माध्यम से एक आदर्श शोषण मुक्त समाज की स्थापना करने का प्रयास किया है।

बोध प्रश्न

'करुणा' में दलित समाज की किन समस्याओं का चित्रण है?

छप्पर

जयप्रकाश कर्दम का दूसरा उपन्यास 'छप्पर' 1994 में प्रकाशित हुआ। 'छप्पर' उपन्यास का हिंदी दलित साहित्य का पहला उपन्यास माना जाता है। लक्ष्मी नारायण सुधाकर छप्पर उपन्यास के संदर्भ में लिखते हैं. दलित संवेदना और पीड़ा को उजागर करनेवाला प्रथम उपन्यास दलित साहित्य की अमूल्य धरोहर हर प्रकार से रूप में एक सफल कृती हैं। दलित जीवन के संघर्षो और संभावनाओं को उजागर करनेवाला उपन्यास है। उसकी कथा गंगा के तट पर बसे उत्तर प्रदेश के मातापुर गाँव की है। गाँव में सुक्खा अपने परिवार के साथ रहता है। गाँव में ब्राम्हण पुरोहित, ठाकूर जमीनदार की सत्ता थी। सुक्खा दलित होने के बावजूद अपने बेटे चंदन को शहर पढ़ने भेजता है। यह घटना गाँव के सवर्ण लोगों को अच्छी नहीं लगती। चंदन शहर के संत नगर में हरिया के साथ रहता है। चंदन कठिन परिस्थितियों का सामना करते हुए पढ़ाई के साथ समाज सुधार का काम भी करता है। चंदन दलित समाज में व्याप्त अन्याय और असमानता को मिटाकर सवर्ण-अवर्ण, छूत-अछु, अमीर-गरीब और मालिक-मजदूर इन सब में समानता लाने तथा समाज में खुशहाली और भाईचारा पढ़ाने के लिए कार्य करता है। इस काम

में चंदन सामाजिक क्रांति का प्रतीक बन गया है। चंदन अपने कॉलेज के सहपाठियों से अपमानित होकर दलित युवकों का एक सर्कल बना लेता है, जिसमें रत्न, रामहेत, नंदलाल आदि जैसे दलित युवक एक साथ रहते थे। रामहेत बिजनेस करना चाहता रतन प्रशासनिक सेवा में काम करना चाहता है, नंदलाल वकिल बनना चाहता था। पर चंदन का विचार सबसे अलग करने का था वह अपनी सारी ताकद दलितों के सामाजिक उत्थान में लगाना चाहता है। उपन्यास का नायक चंदन शिक्षा का महत्व अपनी बस्ती के लोगों को समझाता है एक स्कूल भी चलाता है। एक दिन कमला अपने बच्चे का नाम स्कूल में और बस्ती में दर्ज करने के लिए आई तभी चंदन उनके जीवन से रू-ब-रू होता है। समाज में महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों की घटना कमला के साथ भी घटित हुई है। इस घटना से चंदन का खून खौल उठता है। समाज को बुराई पर काम करने के लिए चंदन शिक्षा को महत्व देता है। चंदन को पढ़ने शहर भेजा इसलिए गाँव से बेदखल सुक्खा जंगल में झोपड़ी बनाकर रहता है पर चंदन को इस घटना का कोई पत्ता नहीं चलने देता। एक तरह कमला अपने वर्गीय अंतर्विरोध के साथ एक ओर स्थित है तो दूसरी ओर रजनी अपने सामंती मूल्यों और संस्कारों का परित्याग करके दलित वर्ग की मदद के लिए सामाजिक न्याय और समानता के लिए अपने परिवार और गाँव के सवर्ण लोगों के साथ लड़ती है। चंदन के समानतावादी आंदोलन में उतर जाती है। आंदोलन की चिंगारी गाँव-गाँव, शहर-शहर में पहुँच जाती है। जन्म के आधार पर श्रेष्ठ या हीन भाव का लोप होने लगता है। गाँव के पंडित पुरोहित, सेठ-साहूकार, जमींदारों को इस आंदोलन का भारी नुकसान झेलना पड़ता है। इससे गाँवों में सभी जगह पर समानता आ जाती है। अंत में मातापुर गाँव के ठाकुर हरनामसिंह को भी बदलना पड़ता है। 'छप्पर' उपन्यास में गाँव के दलित किसानों की स्थिति, दलित युवकों को उच्च शिक्षा के लिए संघर्ष, दलित महिलाओं पर हो रहे अत्याचार, दलितों के लिए शिक्षा का अभाव तथा दलितों के विभिन्न प्रश्न और समस्याओं को उठाने का काम लेखक ने किया है।

बोध प्रश्न

- 'छप्पर' उपन्यास में सामाजिक न्याय के लिए कौन लड़ता है?

उत्कोच

जयप्रकाश कर्दम द्वारा लिखित उपन्यास 'उत्कोच' सन 2019 में प्रकाशित हुआ, जिसका शाब्दिक अर्थ है घूस, रिश्वत, भ्रष्टाचार। यथानाम यह उपन्यास वर्तमान समाज में चहुँ ओर व्याप्त भ्रष्टाचार को विभिन्न संदर्भों के माध्यम से चित्रित करता है। यह उपन्यास, सामाजिक, पारिवारिक एवं बहुपक्षीय अफसरशाही पर तीखा प्रहार करता है। वर्तमान समाज में भ्रष्टाचार मानव के रक्त तक में इस प्रकार घुल-मिल गया है कि मानव में यह परिकल्पना बहुत गहरे तक पैठ चुकी है कि कोई भी कार्य बिना रिश्वत के हो ही नहीं सकता। समाज का प्रत्येक व्यक्ति प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भ्रष्टाचार का हिस्सा बन चुका है। प्रत्येक व्यक्ति यहाँ तक कि भ्रष्टाचार में बहुत ही गहरे तक संलिप्त व्यक्ति भी भ्रष्टाचार को समाप्त करने की वकालात करता

दृष्टिगत होता है परंतु अपने स्तर पर ही सही उसे मिटाने की पहल कोई नहीं करता। जो व्यक्ति भ्रष्टाचार को पूरी ईमानदारी से मिटाने की कोशिश करता है, जो जीवन के प्रत्येक मोड़, हर कर्दम पर सिर्फ सिद्धांत रूप में ही नहीं बल्कि व्यावहारिक रूप में भी भ्रष्टाचार का विरोध करता है, उसे अस्वीकार करता है, ऐसा व्यक्ति स्वयं ही समाज की परंपरागत व्यवस्था से बाहर होने लगता है और वह स्वयं को समाज से निवार्सित-सा महसूस करने लगता है। विक्रय कर विभाग में क्लर्क के पद पर कार्यरत 'उत्कोच' उपन्यास का नायक 'मनोहर' पिछड़ी जाति का एक ऐसा व्यक्ति है, जो रिश्वत लेन-देन का समर्थन नहीं करता है। वह क्लर्क के रूप में कार्य करते हुए कई बार ऑफिसर पद की परीक्षा पास करता है, किंतु रिश्वत के अभाव में हर बार उसे कम अंक दिए जाते हैं जिसके कारण वह ऑफिसर के रूप में पदोन्नत नहीं हो पाता है। भ्रष्टाचार विरोधी सिद्धांतों, नैतिक मूल्यों एवं अव्यावहारिक दृष्टिकोण पर सदैव अडिग रहता है। जिसके फलस्वरूप उससे उसके साथी कर्मचारी असंतुष्ट रहते हैं। उसे कार्यालय में सहकर्मियों की उपेक्षा, उपहास और उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। साथ ही घर में उसकी पत्नी श्यामा भी इसी कारण पहले उससे असंतुष्ट रहने लगती है और मानसिक तनाव के चलते बीमार पड़ जाती है तथा अंतत: उसकी मृत्यु हो जाती है। जयप्रकाश कर्दम ने इस उपन्यास में विस्तार से एक आदर्शवादी युवक के मानसिक और सामाजिक संघर्ष को दर्शाया है व सरकारी दफ्तरों में फैले भ्रष्टाचार की जड़ को भी जनसामन्य के समक्ष लाने का कार्य किया है।

बोध प्रश्न

- 'उत्कोच' का नायक कौन है?

कहानी संग्रह

जयप्रकाश कर्दम ने पत्रकारिता के बाद कहानी लेखन से ही अपनी साहित्यिक यात्रा प्रारंभ की। उनकी पहली कहानी 'अल्गोझा' गाजियावाद से निकलनेवाली एक पत्रिका में सन 1976-77 में प्रकाशित हुई थी, जो कि उनके पास भी उपलब्ध नहीं है। प्रकाशित एवं उपलब्ध कहानियों में 'मास्टर का लड़का' उनकी पहली कहानी 'क्रिमिनल्स' नामक साप्ताहिक पत्र में प्रकाशित हुई। कर्दम जी के दो कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। प्रथम कहानी संग्रह का नाम 'तलाश' है तथा दूसरे कहानी संग्रह का नाम 'खरोंच' है।

तलाश

प्रथम कहानी संग्रह 'तलाश' (2005) का प्रकाशन स्वराज प्रकाशन, दिल्ली से हुआ। उसमें कुल तलाश साँग, नो बार, मोहरे, बट्टन मर गई, मूमेंट, लाठी, जरूरत, ज़हर, कामरेड का घर, गँवार तथा शीत लहर आदि बारह कहानियाँ संग्रहित हैं। प्रतिनिधि कहानी 'तलाश' है जो दलितों के प्रति जातिगत ऊँच-नीच एवं उपेक्षापूर्ण व्यवहार के चित्रण पर आधारित है। बिक्री

कर विभाग में अधिकारी के रूप में स्थानांतरण पर आए रामवीर सिंह द्वारा रहने के लिए किराए के मकान की तलाश और समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव का बहुत ही यथार्थ चित्रण इस कहानी में प्राप्त होता है। 'साँग' कहानी में एक ऐसे गरीब दलित मजदूर परिवार का चित्रण किया गया है जो अत्याचार सहते सहते तंग आ चुका है। कहानी की नायिका चंपा अपने और अपने पति पर हुए अन्याय और शोषण का विरोध करती है। शोषण सहने की एक सीमा होती है, सीमा पार होने पर चंपा के मन में प्रतिकार भावना जाग जाती है और वह विद्रोह करती है। 'नो-बार' कहानी में लेखक ने सुशिक्षित समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव को प्रस्तुत किया है। तथाकथित रूप से समानता के पक्षधर दीखने वालों में आंतरिक तौर पर बहुत ही गहरा जातिवाद होता है। 'मोहरे' कहानी में दलित का बुद्धिमान और परिश्रमी होना गैर-दलितों को बहुत ही नागवार गुजरता है। किसी न किसी घटना में उस शिक्षक का फंसाकर उसे सबकी नजरों में गिराने हेतु किए जाने वाला षड़यंत्र बहुत ही जीवंतता के साथ चित्रित किया गया है। 'मूवमेंट' कहानी में दलित आंदोलन में काम करनेवाले कार्यकर्ता को अपना मूल्यांकन करने के लिए मजबूर करती है। जो समाज के लिए काम करते समय घर के लिए अधिक समय नहीं दे पाता। स्त्री-पुरुष समानता के बारे में समाज के सामने लंबे चौबे भाषण देता है, परंतु अपनी पत्नी सुनिता के साथ समानता का न्याय नहीं कर पाता है। 'लाठी' कहानी में शोषण का शिकार हुए समाज के लोगों का आक्रोश दिखाया है। हरिसिंह नामक दलित व्यक्ति का खेत पुलिया के निकट मढैया के बदानी जाट के खेतों से लगा हुआ है। पानी के दिन वह अपने खेत में पानी लगाना चाहता है, पर बदनी उसे पानी नहीं खोलने देता है और उस पर लाठी चलाता है। हरिसिंह का चाचा फग्गन लाठी का जवाब लाठी से देना चाहता है। 'कामरेड का घर' कथनी और करनी में बेमेल जीवन जीने वाले तथाकार्थित फर्जी मार्क्सवादियों की वास्तविकता को उजागर करती है। 'गँवार' कहानी में अंबेडकरवादी विचारधारा के संप्रेषण की कहानी है, जो कि नई पीढ़ी को शैक्षणिक योग्यता और बुद्धिमत्ता का पाठ पढ़ाती है।

बोध प्रश्न

'तलाश' संग्रह में शामिल किन्हीं छह कहानियों के नाम लिखिए।

खरोंच

जयप्रकाश कर्दम का दूसरा कहानी संग्रह 'खरोंच' 2013 में पांडुलिपि प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह में भी 'सूरज', 'छपकली', 'खरोंच', 'पेंशन', 'हाउसिंग सोसाइटी', 'मजदूर खाता', 'रास्ते', 'मॉनीटर', 'गोष्ठी', 'पगड़ी', 'मंगलसूत्र' तथा 'मंदिर' नामक कहानियाँ संग्रहित हैं। ये सारी कहानियाँ भी दलित-चेतना से परिपूर्ण कहानियाँ हैं। 'खरोंच' कहानी में दलित व्यक्ति की प्रगति सवर्ण समाज के लोगों से देखी नहीं जाती है और वे उसे तरह

तरह से प्रताड़ित करते हैं। खरोंच जलन में मारी तो कार पर जाती है परंतु वह खरोंच कार से ज्यादा रंगलाल के हृदय पर लगती है। 'सूरज' कहानी में महानगर के स्कूल, कॉलेज में दलित छात्रों पर होनेवाली रैगिंग की समस्या को दिखाते हुए दलित छात्रों के पढ़ाई में तेज एवं होशियार होने पर उनकी प्रताड़ना एवं शोषण पर लेखनी चलाई गई है। प्रताड़ना से व्यथित दलित छात्र की हत्या हो जाती है जिसे आत्महत्या दिखाकर मामले को वास्तविकता से परे मनोवांछित रंग दे देते हैं। 'हाउसिंग सोसाइटी', 'मजदूर खाता', 'रास्ता', 'मॉनिटर' कहानियों में दलित जीवन की समस्याओं को चित्रित किया गया है। 'मंगलसूत्र' कहानी में महिलाओं के आर्थिक प्रश्न और सेक्स की समस्या को उठाया है। शादी के बाद स्त्री के जीवन में मंगलसूत्र की महत्ता को दिखाते हुए उसकी आड़ में किए जाने वाले स्त्री शोषण को प्रस्तुत किया गया है। 'मंदिर और गांधी' कहानी में नई वैचारिक क्रांति का परिचय लेखक ने दिया है। यह कहानी पुरानी परंपराओं के बदलाव का बिगुल बजाती है । इस संग्रह की कहानियों के दलित पात्र अपने दलित होने पर गर्व करते हैं। अपने अनुभव, अंतर्द्वंद्व और आत्मसंघर्ष के माध्यम से नये समाज की स्थापना करने के लिए सदा प्रयत्नरत रहते हैं।

बोध प्रश्न

'खरोंच' कहानी संग्रह के दलित पात्रों की क्या विशेषता है?

बाल उपन्यास

जयप्रकाश कर्दम ने एक उपन्यास 'श्मसान का रहस्य' लिखकर बाल साहित्य में अपना योगदान दिया है। बाल साहित्य से संबंधित अन्य कृतीयाँ हैं - बुद्ध और उनके प्रिय शिष्य, डॉ. आंबेडकर का बचपन, बुद्ध की शरणागत नारियाँ, बुद्ध का समय, बौद्ध दार्शनिक, बौद्ध गाथाएँ, संतों की दुनिया आदि।

यात्रा संस्मरण

जर्मनी में दलित साहित्य : अनुभव और स्मृतियाँ

'जर्मनी में दलित साहित्य : अनुभव और स्मृतियाँ' नामक पुस्तक जयप्रकाश कर्दम की जर्मनी यात्रा से संबंधित एक बहुत ही महत्वपूर्ण दस्तावेज है जो कि 19 प्रकरणों में विभक्त है। जर्मनी के हॉल वाल्टर ने 2006 में बताया कि जर्मनी के फ्रैंकफर्ट शहर में 'विश्व पुस्तक मैला' है। 25 सितंबर, 2006 को सुबह 8.30 बजे दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा से एअर इंडिया का विमान ए आई 137 से लगभग 8 घंटे की निर्बाध यात्रा के बाद कर्दम जर्मनी के फ्रैंकफर्ट हवाई अड्डे तक पहुँचने, वहाँ बॉन विश्व विद्यालय जाना, इण्डोलॉजी विभाग में मसूद मिर्जा, मशीरूल हसन, 1982-1985 तक पुणे विश्वविद्यालय फिर 1987 से 1991 तक तथा 1995 से 1998 तक बनारस हिंदू विश्विविद्यालय में जर्मन भाषा के प्राध्यापक रहे रायनहाल्ड आदि महानुभूतियों से मिलना। कर्दम जी द्वारा उस यात्रा में एक स्थान पर काव्यपाठ में 'गूँगा नहीं था मैं', 'मेरी चाह, 'शब्द' आदि कविताओं के पाठ के स्मृतियाँ हैं। उनका सैन

विश्वविद्यालय, जर्मन स्टूडियो मेले, फ्रैंकफर्ट पुस्तक मेले में टेलीविजन वार्ता में प्रतिभाग, स्टुगार्ट गमन, उल्म में आइंस्टीन स्मारक का दर्शन, म्यूनिख में हिटलर के कंडिशनिंग कैंप का भ्रमण एवं वाल्टर हॉन के साथ दलित आंदोलन पर भी चर्चा आदि बहुत ही विस्तारित चित्रण इस संस्मरण में प्राप्त होता है।

साक्षात्कार : 'मेरे संवाद' पुस्तक का प्रथम संस्कारण 2013 में प्रकाशित हुआ था। इसमें कर्दम जी द्वारा लिए गए 24 विभिन्न व्यक्तियों के साक्षात्कार प्रकाशित किए गए हैं।

विचार प्रबंध / आलोचना / वैचारिक साहित्य

जयप्रकाश कर्दम द्वारा रचित विचार प्रबंध, आलोचना तथा वैचारिक साहित्य की भी बहुत महत्ता है। इनमें डॉ. अंबेडकर और उनके समकालीन (1991), बौद्ध धर्म के आधार स्तंभ (1999), बुद्ध की शरणागत नारियाँ (2016), बुद्ध और उनके प्रिय शिष्य (2016), इक्कीसवीं सदी में दलित आंदोलन (साहित्य और समाज चिंतन, 2007), दलित विमर्श : साहित्य के आईने में (2009), डॉ. अंबेडकर : दलित और बौद्ध धर्म (2009), समाज, संस्कृति और दलित (2015), दलित साहित्य : सामाजिक बदलाव की पटकथा (2016), दलित साहित्य एवं चिंतन : समकालीन परिदृश्य (2018), रागदरबारी का समाजशास्त्रीय अध्ययन (2018), दलित कविता : समकालीन परिदृश्य (2018) इत्यादि प्रमुख हैं।

संपादित पुस्तकें

जयप्रकाश कर्दम एक सफल संपादक के रूप में भी प्रसिद्ध है। उन्होंने कुछ पुस्तकों का संपादन किया है, जो निम्नांकित हैं - जाति : एक विमर्श (1999), धमांतरण और दलित (2002), ओमप्रकाश वाल्मीकि : व्यक्ति, विचारक और सृजक (2016)।

अनुवाद कार्य

जयप्रकाश कर्दम एक अच्छे अनुवादक भी हैं। उन्होंने 'द चमार्स' का अंग्रेजी से हिंदी भाषा में 'चमार' नाम से अनुवाद किया है। इस पुस्तक का प्रकाशन 1989 में हुआ।

13.4 पाठ सार

जयप्रकाश कर्दम अपने साहित्यिक जीवन में हिंदी के दलित साहित्य की निरंतर सेवा करते आ रहे हैं। उन्होंने अपने लेखन का विषय दलित समाज रखा है। दलित समाज को अपने अधिकारों के प्रति जागृत करने के लिए अपनी कलम के माध्यम से जागृत करने के लिए प्रयासरत हैं। कर्दम जी का हिंदी दलित साहित्य जितना प्रसिद्ध रहा है उतने ही वे एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में भी जाने जाते हैं। गाँव से लेकर दिल्ली जैसे बड़े महानगर में भारत सरकार के उच्च अधिकारी पद तक पहुँचने के लिए उनको जीवनभर संघर्ष करना पड़ा है। इन्हीं संघर्षों ने उनको एक अच्छा सफल इन्सान बनाया है। डॉ.बी.आर. अम्बेडकर के त्रिसूत्र

'शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो' का अपने जीवन में पूरी तरह आत्मसात करते हुए उन्होंने अपना और अपने परिवार का उन्नयन किया और साहित्य सृजन के माध्यम से दलित समाज को जागृत करने का पुनीत कार्य कर रहे हैं।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं –

1. हिंदी साहित्य में बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में अस्मितामूलक विमर्शों का उदय हुआ। इनमें सामाजिक विकास की दौड़ में हाशिये पर रह गए समुदायों ने अपनी पीड़ा, आक्रोश, संघर्ष और पहचान को स्वानुभूति के आधार पर दर्ज कराया।
2. इन अस्मितामूलक विमर्शों में दलित विमर्श का महत्वपूर्ण स्थान है जिसका संबंध भारत में सदियों से चली आ रही वर्ण व्यवस्था में उत्पन्न उस विकार से है जिसने जातिगत भेदभाव, ऊच-नीच और छुआछूत को जन्म दिया।
3. हिंदी के दलित साहित्य को समृद्ध करने वाले रचनाकारों में जयप्रकाश कर्दम एक बहुआयामी प्रतिभा के धनी साहित्यकार के रूप में समादृत हैं।
4. जयप्रकाश कर्दम ने यों तो विभिन्न विधाओं के साहित्य को समृद्ध किया है, लेकिन एक प्रमुख दलित कथाकार के रूप में विशेष प्रसिद्धि है।

13.6 शब्द संपदा

1. अस्पृश्यता = छुआछूत की भावना
2. उत्कोच = रिश्वत
3. दलित = दबा-कुचला वर्ग
4. विपदा = विपत्ति, कष्ट, परेशानी

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. जयप्रकाश कर्दम के आरंभिक जीवन पर प्रकाश डालते हुए बचपन उनके द्वारा किए गए संघर्षों पर सारगर्भित टिप्पणी लिखिए।
2. जयप्रकाश कर्दम के पारिवारी सदस्यों का परिचय देते हुए उनके शैक्षिक स्तर पर प्रकाश डालिए।
3. जयप्रकाश कर्दम के यौवनकालीन संघर्ष पर प्रकाश डालते हुए उनके आर्थिक सामाजिक जीवन पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
4. दलित विमर्श के आलोक में जयप्रकाश कर्दम द्वारा भोगे गए जातिगत भेदभाव पर विस्तृत चर्चा कीजिए।

5. जयप्रकाश कर्दम के व्यक्तित्व के सबल पक्षों का उल्लेख करते हुए उनके कृतीत्व पर विस्तृत वेचन कीजिए।
6. जयप्रकाश कर्दम के काव्य साहित्य में वर्णित सामाजिक भेदभाव पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
7. जयप्रकाश कर्दम के कृतीत्व एवं उपलब्धियों पर विस्तार से विवेचन कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. जयप्रकाश कर्दम के जन्म एवं परिवार का विवरण दीजिए।
2. जयप्रकाश कर्दम की कहानी 'तलाश' का सारांश लिखिए।
3. जयप्रकाश कर्दम के काव्य साहित्य का परिचय दीजिए।
4. जयप्रकाश कर्दम के व्यक्तित्व का परिचय दीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. चंदन किस उपन्यास का नायक है? ( )
   (अ) छप्पर (आ) करुणा (इ) खरोंच (ई) तलाश
2. 'करुणा' उपन्यास का मूल विषय किस पर आधारित है? ( )
   (अ) सांप्रदायिकता (आ) राजनीति (इ) इस्लाम (ई) बौद्ध धर्म
3. 'राहुल' किस विधा की रचना है? ( )
   (अ) कहानी (आ) गीत (इ) महाकाव्य (ई) खंड काव्य

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'बस्तियों से बाहर' जयप्रकाश कर्दम का ..... काव्य संग्रह है।
2. 'लहू और यंत्रणा' नमक कविता कर्दम के ..... संग्रह में शामिल है।
3. कर्दम की पहली कहानी ..... थी जो अप्राप्त है।

III. सुमेल कीजिए -

1. तलाश	(अ) 2019
2. उत्कोच	(आ) 2005
3. छप्पर	(इ) 1986
4. करुणा	(ई) 1994
5. राहुल	(उ) 2022
6. लाशों के शहर में	(ऊ) 2011

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम : दलित अभिव्यक्ति - संवाद और प्रतिवाद : (सं) रूपचन्द्र गौतम
2. डॉ. जयप्रकाश कर्दम संवाद पर संवाद : (सं.) रूपचन्द गौतम
3. जयप्रकाश कर्दम के साहित्य में दलित-चेतना का अनुशीलन : शिवाजी सुखदेव दलवी
4. कवि जयप्रकाश कर्दम एक अध्ययन : सुनील बनसोडे, सचिन कांबले
5. आलोचना की तीसरी परंपरा जयप्रकाश कर्दम : नामदेव

इकाई 14 : तलाश : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मूल पाठ : तलाश: तात्विक विवेचन

14.3.1 कथावस्तु

14.3.2 चरित्र चित्रण

14.3.3 संवाद

14.3.4 परिवेश चित्रण

14.3.5 उद्देश्य

14.3.6 भाषा शैली

14.4 पाठ सार

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

14.6 शब्द संपदा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

समीक्षकों एवं विवेचकों के मतानुसार भारत देश में संपूर्ण जनसंख्या का हर छठा व्यक्ति दलित है। दलित का अर्थ है टूटा हुआ, दमित किया हुआ, दबा-कुचल हुआ दला हुआ अर्थात् भारतीय जाति व्यवस्था में सबसे निम्न स्तर पर पाए जाने वाले पूर्णत: हाशियाकृत लोग ही दलित हैं। अस्पृश्यतामूलक व्यवहार भारतीय समाज में सदियों से चला आ रहा है और यह व्यवहार 'चतुर्वर्णीय व्यवस्था' की देन माना जाता है। चतुर्वर्णीय व्यवस्था में निम्न कही जाने वाली जातियों के लिए कई प्रकार के अपमानजनक संबोधन इस्तेमाल किए जाते हैं। चूँकि ये वर्ग चतुर्वर्ण व्यवस्था में भी नहीं आते इसलिए इन्हें पंचम भी कहा गया। दलित साहित्य में दलित जीवन की विभिन्न त्रासदियों का चित्रण हुआ है। दलित का जीवन जन्म से लेकर मृत्यु तक असमानताओं, शोषण, अत्याचार से परिपूर्ण रहता है। जयप्रकाश कर्दम ने अपनी रचनाओं में इस समुदाय की पीड़ा और आक्रोश को अभिव्यक्त किया है। विवेच्य कहानी 'तलाश' एक साथ गरीब, अशिक्षित एवं उच्च शिक्षित, उच्च पदाधिकारी दोनों प्रकार के दलितों के अपमान, शोषण और तिरस्कार की कहानी है।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- भारतीय सामाजिक ढाँचे में दलित जीवन के यथार्थ से परिचित हो सकेंगे।
- दलित कहानी की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- दलित साहित्य के सौंदर्यशास्त्रीय तत्वों वेदना और विद्रोह की अभिव्यक्ति के बारे में जान सकेंगे।
- विवेच्य कहानी 'तलाश' की तात्विक विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- इस कहानी में निहित संवेदना और सामाजिक यथार्थ से परिचित हो सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : तलाश : तात्विक विवेचन

'तलाश' कहानी जयप्रकाश कर्दम की बहुचर्चित कहानियों में से एक है। यह कहानी स्पष्ट बोध कराती है कि किस प्रकार वर्ण व्यवस्था का दलित अस्मिता के सम्पूर्ण जीवनाधिकारों पर कुंडली मार कर बैठी हुई है और किस प्रकार दलितों के मुख्य धारा नामक घेरे में बार-बार घुसने के प्रयासों के बावजूद उन्हें बड़ी ही निर्ममता से दलितेत्तर लॉबी बाहर धकेल देती है। बड़े-बड़े मंचों पर अपनी सहृदयता का प्रपंच दिखाते हुए दलितों की प्रगति के सारे मार्ग अवरुद्ध या बंद कर दिए गए हैं।

जन्मजात जातिगत पूर्वाग्रहों के प्रति विद्रोह का भाव दलित साहित्य के प्रमुख तत्वों में से एक है, क्योंकि दलितों के जीवन में उत्पन्न ही दलित के घर में जन्म लेने से होती है। भले ही दलित कितना भी लायक हो, बुद्धिमान हो दलित की संतान होने का दंश उसे जीवन भर झेलना पड़ता है। वहीं किसी सवर्ण के घर में जन्म लेने का लाभ मूर्ख से मूर्ख सवर्ण को मिलता रहता है। अल्पतम ज्ञान के सहारे भी सर्वणों का जीवन बहुत सरल रहता है वहीं दलितों का जीवन संघर्षरत ही रहता है।

कार्यालयों में दलित अधिकारी की प्रति सवर्ण अधीनस्थों का रवैया नकारात्मक अधिक रहता है। कभी जाति तो कभी आरक्षण पर टिप्पणी करना सर्वणों का महत्वपूर्ण टाइमपास होता है कार्यालयों में। दलित व्यक्ति के अधिकारी होने पर भी उसके पास अधिकार नहीं होते वहीं सवर्ण क्लर्क के पास भी जातिगत लॉबी के आधार पर उससे ज्यादा अधिकार होते हैं। सवर्ण साथी अधिकारी भी दलित अधिकारी पर नकारात्मक और अपमानजनक टिप्पणी करते हैं। किसी न किसी बहाने जाति का अहसास दिला ही देते हैं। यदि दलित उनसे तेज है कर्मठ है तो दलित इतना होशियार हो कैसे गया। उसे किसी न किसी बहाने हतोत्साहित करने का प्रयास किया जाता है कभी-कभी उसे अपमानित करने के लिए उसके साथ हाथापाई भी की जाती है। प्रशासन और पुलिस दोनों ही चुप लगा कर आनंदित होते हैं।

समाज में गरीब को रोजगार से दूर रखने की साजिश देखने को मिलती है 'तलाश' कहानी में भी। जाति एवं धर्म के नाम पर रामवती को दो वक्त की रोटी मिलने के आधार को

गुप्ता की पत्नी छूत हो जाएगी के बहाने समाप्त कर देती है। गुप्ता नामक मकान मालिक जब रामवीर सिंह को घर खाली करने का कह देता है और रामवीर सिंह भी अपने सिद्धांतों से समझौता न करते हुए नया किराए का मकान ढूंढने निकल पड़ते हैं तो गुप्ता की सवर्ण पत्नी अपने कृत्य में सफल हो जाती है क्योंकि नई जगह जहाँ रामवीर को घर मिलेगा और क्या वह उसके नए मकान तक काम करने जा पाएगी। उत्तर ना में ही आएगा। इस प्रकार एक सवर्ण धनवान महिला एक दलित स्त्री की शत्रु सिद्ध होती है और यह किस्सा कोई नया नहीं है। ऐसा होता आया है और हो रहा है। इसका सिलसिला कब रूकेगा यह भी पता नहीं।

अस्मिता का संघर्ष दलित जीवन और उनके साहित्य का सबसे बड़ा संघर्ष है अपने मूल्य आधारित जीवन में व्याप्त अमूल्यता में परिवर्तन लाने की चेतना दलित साहित्य की प्रमुख चेतना है। 'तलाश' कहानी का मुख्य पात्र रामवीर सिंह इसका जीवंत उदाहरण है। समाज में व्याप्त असमानता और भेदभाव मुख्यधारा की अराजकता से उत्पन्न वो खाई है जो पटने के स्थान पर बढ़ती ही जा रही है। रामवीर सिंह दलित वर्ग का वाणिज्य कर अधिकारी है। दलित होने के कारण उसे मनपसंद किराए का मकान नहीं मिलता है क्योंकि वह मांस, मछली आदि खाता है। सवर्ण मकान मालिकों की पहली शर्त होती है वो उनके मकान में न तो मांस, मछली खा सकता है और न ही पकवा सकता है। मनपसंद मकान पाने के लिए रामवीर को मांस, मछली न खाने के लिए समझौता करना ही पड़ता है।

'तलाश' कहानी का मुख्य उद्देश्य सामाजिक जीवन, दलितों के उत्पीड़न, शोषण तथा गुलामी के अभिशाप से मुक्ति की आकांक्षा है। कर्दम जी इस कहानी के नायक रामवीर सिंह के माध्यम से अपने इर्द गिर्द व्याप्त अस्पृश्यता के नकारात्मक वातावरण में यथासंभव-सकारात्मक परिवर्तन लाना चाहते हैं। बदलाव की भावना से कहानी के नायक रामवीर के हृदय में परिवर्तन की जो आकांक्षा पनप रही है वह अच्छी पहल है और अकारण ही नहीं है परंतु समाज में व्याप्त मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों और जातीय शोषण ने उसे ऐसी पहल करने के लिए विवश किया है। पढ़ा लिख दलित अधिकारी जब भेदभाव का शिकार है तो अनपढ़ रामवती को कितना झेलना पड़ता होगा इसका अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। यदि भेदभाव न किया जाता तो ऐसा सोचने की आवश्यकता ही नहीं थी।

बोध प्रश्न

- 'तलाश' कहानी का मुख्य उद्देश्य क्या है?
- 'तलाश' शीर्षक कहानी में किसकी तलाश की जा रही है?

14.3.1 कथावस्तु

'तलाश' कहानी जयप्रकाश 'कर्दम' की आत्मकथात्मक कहानी है जिसमें रामवीर नामक पात्र को एक सजग एवं सशक्त दलित पात्र के रूप में तराशा गया है। रामवीर को जिस प्रकार मकान को लेकर नाना प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ा उसी प्रकार जयप्रकाश जी

को भी जीवन के किसी मोड़ पर इस प्रकार के भेदभाव और समस्याओं का सामना करना पड़ा। यह कहानी उनके व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित प्रतीत होती है।

'तलाश' कहानी का प्रारंभ रामवीर की मकान की तलाश से होता है। रामवीर एक वाणिज्य कर अधिकारी के रूप में स्थानांतरण पर आया है। वह विगत सप्ताह से सरकारी गेस्ट हाउस में ठहरा हुआ है। अतिथि ग्रह में अतिथि की तरह अल्प अवधि तक ही ठहरा जा सकता है। किसी अन्य शहर के निवासी को नये शहर में किराए के मकान रहने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प नहीं होता है। रामवीर सरकारी नौकरी करने के साथ-साथ लेखन का शौकीन व्यक्ति है इसलिए उसे ऐसे किराए के मकान की आवश्यकता होती है जहाँ शांतिपूर्ण वातावरण के साथ-साथ बिजली, पानी, साफ सफाई, नौकर आदि की पर्याप्त व्यवस्था हो जिससे वह नौकरी के साथ-साथ अपना लेखन कार्य भी कर सके। रामवीर एक किराए के मकान की तलाश प्रारंभ करता है। वह एक के बाद एक कई मकान देखता है कुछ मकान उसको पसंद नहीं आते और कुछ के मालिकों की शर्तें उसे स्वीकार्य नहीं होती। कहीं उसका दलित समुदाय से होना आड़े आता है तो कहीं अकेला रहना तो कहीं खान-पान की आदतें एवं मकान मालिकों की हिदायतें। बहुत सारी परेशानियों एवं मांस न पकाने की शर्त मानने के बाद रामवीर को उसकी आवश्यकताओं के अनुकूल एक मकान किराए पर मिलता है। मकान किसी गुप्ता का होता है। गुप्ता भी अन्य मकान मालिकों की तरह रामवीर से उसके बारें में पूछताछ करता है, जानकारी प्राप्त करने के दौरान जब उसे पता चलता है कि रामवीर एक व्यापार कर अधिकारी है तो तुरंत मकान किराए पर देने के लिए तैयार हो जाता है। और इस तरह रामवीर भी राहत की सांस लेता है।

किराए के मकान में रहने की बहुत सी सीमाएँ होती हैं और बहुत सारी बंदिशें भी। मकान मालिक हर आने जाने वाले, काम-काज करने वाले तथा आने-जाने के समय आदि का पूरा ब्यौरा रखता है। नौकरी पेशा व्यक्ति के अकेले जीवन-यापन करने में कई समस्याएं आम होती हैं जैसे घर की साफ सफाई, भोजनादि की नियमित व्यवस्था इत्यादि। रामवीर को भी इन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं का निराकरण नौकर रख हो सकता है सो रामवीर भी रामबती नामक दलित महिला (चूहड़ी) को घर की साफ सफाई के लिए लगा लेता है। बाद में वह खाना बनाने का कार्य भी उसी से करवाने लगता है। यह कोई बहुत अलग या अप्रत्याशित घटना नहीं कही जा सकती है एक नौकरी पेशा और शहरी व्यक्ति के जीवन में। लेकिन इस कहानी में ये बहुत बड़ी घटना के रूप में प्रस्तुत होती हैं क्योंकि प्रमुख कारण है रामवीर का स्वयं दलित होना। उसका किराएदार होना और सबसे प्रमुख रामवीर द्वारा एक दलित महिला रामबती से घर के काम करवाना। मकान मालिक गुप्ता की पत्नी जो कि एक घोर कर्मकांड़ी महिला है उसे रामबती के घर में प्रवेश से घोर आपत्ति है क्योंकि रामबती एक चूहड़ी है। यदि वह घर कि वस्तुओं को छुएगी तो संपूर्ण घर अशुद्ध हो जाएगा। इस संबंध में वह अपने पति गुप्ता को खरी खोटी सुनाती है और उसे डांटते हुए पहले रामवती को घर से निकलवाने की जिद करती है और रामवीर रामवती को न निकाले तो रामवीर को भी घर से बाहर निकालने

का फरमान अपने पति गुप्ता को सुना देती है। परिणामस्वरूप गुप्ता रामवीर से रामबती को काम से हटाने को कहता है। किंतु रामवीर जो कि एक तर्कशील सुशिक्षिसत व्यक्ति है गुप्ता को समझाने की कोशिश करता है कि जाति आधारित भेदभाव करना उचित नहीं है। सभी इंसान संविधान के सम्मुख बराबर हैं और जाति.पाति से कोई छोटा या बड़ा नहीं होता। किन्तु गुप्ता के उपर इन बातों का कोई असर नहीं पड़ता है और वह शर्त रख देता है कि या तो रामबती को काम से हटा दो नहीं तो कमरा खाली कर दो। कहानी के अन्त में रामवीर गुप्ता की बात न मानकर कमरा खाली करने को तैयार हो जाता है और उस दिन वह काम पर न जाकर दूसरे मकान की तलाश में जुट जाता है।

कहानी वैसे तो यहीं समाप्त होती है परंतु अपनी समाप्ति के साथ भारत की जाति आधारित सामाजिक व्यवस्था पर अनेक अनकहे परंतु सर्वविदित प्रश्नों को छोड़ती है। कथावस्तु की दृष्टि से कथावस्तु बहुत ही कसी हुई है किसी भी प्रकार से अनावश्यक तथ्यों एवं कथ्य को समाहित न करते हुए लेखक ने सीधे तौर पर देश काल और वातावरण का ध्यान रखते हुए संक्षिप्त वर्णन करने हुए कहानी के उद्देश्य को बहुत ही सटीकता के साथ पूरा किया है।

बोध प्रश्न

- 'तलाश' में लेखक के जीवन का कौन सा व्यक्तिगत अनुभव दिखाई देता है?
- इस कहानी में मकान की तलाश में कौन-कौन सी समस्याएँ आती हैं?

14.3.2 चरित्र चित्रण

कहानी कला के अनुसार कम से कम पात्रों के माध्यम से अपने उद्देश्य को प्राप्त करती है वह कहानी उत्तम कहानी कहलाती है। प्रस्तुत कहानी इस दृष्टि से उपयुक्त कहानी है। कहानी में उद्देश्यानुसार रामवीर और रामवती दो प्रमुख पात्र हैं। गुप्ता एवं उसकी पत्नी गौण किंतु प्रमुख सहयोगी पात्र हैं।

रामवीर

रामवीर दलित समुदाय का शिक्षित एवं नौकरी पेशा व्यक्ति है। वह पेशे से वाणिज्य कर अधिकारी है। एक शहर में स्थानांतरण पर आता है। कार्यालय के अतिथि गृह में एक सीमित अवधि तक ही रहने की अनुमति होती है अत: उसे रहने के लिए एक किराए के मकान के आवश्यकता होती है। वह अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप किराए का मकान ढूंढने की बहुत कोशिश करता है परंतु उसे इस प्रक्रिया में बहुत सी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है । इस समस्याओं में कई समस्याएं तो आम किराएदारों को होने वाली समस्याएँ हैं परंतु रामवीर को दलित होने के कारण तथा खान-पान की अपनी आदतों के कारण होती हैं। जिनमें से एक प्रमुख समस्या है उसका मांसाहारी होना। अधिकांश मकान मालिक सवर्ण जाति के होते हैं तो वे प्रथम बातचीत के समय ही मांस मछली के मकान में प्रवेश निषेध का फरमान पहले ही सुना देते हैं। बहुत भटकने के बाद जब कोई मकान नसीब नहीं होता है तो रामवीर थकहार कर मांसाहार मकान में न करने की शर्त को स्वीकार करने के लिए विवश होकर एक बनिया जाति के गुप्ता के घर को किराए पर लेता है।

रामवीर सरकारी अधकारी है। साफ सुथरा एवं शानोशौकत से रहता है। नाम एवं पहनावे आदि से वह दलित बिल्कुल नहीं लगता है परंतु प्रत्येक जाति में जन्में व्यक्ति के कुछ जन्मजात गुण एवं दोष होते हैं। जिससे दूसरे व्यक्ति बहुत ही सहजता है से अगले की जातिपांति का अंदाजा लगा लेते हैं। गुप्ता तो वाणिज्य कर अधिकारी से भविष्य में लाभ लेने के लालच में रामवीर की जाति संबंधी बात पर ध्यान नहीं देता है परंतु गुप्ता की पत्नी तुरंत ताड़ जाती है कि रामवीर उच्च जाति का नहीं है।

रामवीर एक लेखक है और वह अपने लेखक होने के दायित्वों का निर्वहन सिर्फ कागज कलम तक सीमित नहीं रखता है वह संयमित और समभाव सदभाव की विचारधारा का व्यक्ति है। वैसे यह और बात है कि एक दलित का समभावी कोई अर्थ नहीं रखता है क्योंकि भारतीय समाज व्यवस्था में दलित सब में मिलने का आकांक्षी होता है परंतु उसे अपने में मिलाने का सभी विरोध करते हैं। समभावी होना तो दूसरों को चाहिए न कि किसी दलित को क्योंकि भारत की सामाजिक ढाँचा ही ऐसा बना हुआ है।

रामवीर भेदभाव एवं छुआछात दूर करने का प्रयास करता है इसलिए वह रामबती नामक चूहड़ी जाति की महिला से घर की साफ सफाई एवं खाना बनवाने का कार्य कराता है क्योंकि रामवती जरूरतमंद होने के साथ साफसुथरी एवं ईमानदार अपने कार्यों में दक्ष महिला है।

रामवीर डॉ. अम्बेडकर से सिद्धांतों का अनुयायी है और भारत के संविधान को सामाजिक समता का आधार मानता है। इसलिए जब गुप्ता उसे सामाजिक जाति पांति का ज्ञान देते हुए जातिभेद समझा रहा होता है तो रामवीर उसे भारतीय संविधान की दुहाई देता है परंतु गुप्ता रामवती को काम न निकालने पर उसे ही घर से निकल जाने का आदेश देता है।

रामवीर अपने सिद्धांतों पर अडिग रहने वाला व्यक्ति है वह अपने समतामूलक सिद्धांत पर टिका रहता है और रामवती को काम से हटाने की शर्त को नहीं मानता है और स्वयं नया किराए का मकान ढूँढने निकल पड़ता है।

बोध प्रश्न

- रामवीर किसके सिद्धांतों का अनुयायी है?

रामवती

रामवती एक चूहड़ी जाति की मजदूर स्त्री है जो साफ सफाई का काम करती है। वह बहुत ही ईमानदार, सफाई पंसद एवं कर्मठ स्त्री है। जो अपनी कार्य शैली, गुणवत्ता एवं कुशलता से रामवीर को प्रभावित करती है। रामवीर उसे खाना बनाने का काम भी सौंप देता है। कहानी के अनुसार प्रत्यक्षत: उसका इतना ही महत्व है कि वह रामवीर के यहाँ काम करती है। उसकी जाति उसके लिए सबसे बड़ा अभिशाप है। चूहड़ी जाति से होने के कारण गुप्ता की पत्नी को उसका घर में प्रवेश तक पसंद नहीं है। वह घोर अछूत है उसके घर में प्रवेश मात्र से गुप्ता का घर अपवित्र हो जाता है। खाना बनाने का कार्य करने पर निश्चित रूप से रामवती रसोई के नलादि को हाथ लगाती होती। उसके ऐसा करने से गुप्ता परिवार का धर्म भ्रष्ट हो रहा है इसलिए वह

रामवीर जो कि उसके घर में किराए पर रहता है उसे रामवती से कार्य न करवाने के लिए के लिए जिद पकड़ लेती है और ऐसा न करने पर रामवीर से अपना मकान खाली करवा लेती है।

गुप्ता

गुप्ता वैसे तो एक मकान मालिक है परंतु वस्तुत: वह सवर्ण जाति व्यवस्था का वह प्रतिनिधि है जो पूजा पाठ करता है। पैसा कमाने लिए भ्रष्टाचार करता है और पाखंड प्रदर्शन प्रिय है। स्त्री विमर्श की दृष्टि से एक आज्ञाकारी पति है जो अपनी पत्नी की बात मानता है। सुबह शाम अपने घर में पूजा करने के बाद भी वह मोहल्ले के मंदिर में भी नियमित रूप से जाता है। जब रामवीर किराए हेतु मकान की बातचीत करने आता है तो पहले तो वह मकान मालिक वाले रुतबे से बातचीत करता है परंतु जैसे ही उसे पता चलता है कि रमावीर वाणिज्य कर अधिकारी है तो उसकी बातचीत का तरीका तुरंत बदल जाता है क्योंकि उसे रामवीर भविष्य में काम आने वाला व्यक्ति लगता है।

बहुत ही लालची मौका परस्त व्यक्ति होने पर भी वह अपनी पत्नी से दब कर रहने वाला व्यक्ति है। पत्नी के कहने पर ही वह रामवीर को घर खाली करने के लिए कहता है। गुप्ता घोर जातिवादी और छुआछूत मानने वाला व्यक्ति है वह समाज और सामाजिकता की दुहाई देते हुए रामवती को काम से हटाने के लिए कहता है परंतु जब रामवीर जाति के आधार पर रामवती हो काम से हटाने के लिए सहमत नहीं होते हैं और गुप्ता को नियम कानून, संविधान के प्रावधानों के बारे में बतात हैं तो अपनी जातिवादी मानसिकता को बिल्कुल भी सुधारने के लिए तैयार नहीं होता और चूंकि वह मकान का मालिक है रामवीर से ऊपर है इसलिए रामवीर को मकान खाली करने के लिए कह देता है।

बोध प्रश्न

- मकान मालिक किसका प्रतिनिधि है?

गुप्ता की पत्नी

गुप्ता की पत्नी धार्मिक कर्मकांडी, घरेलू, जातिवादी संकीर्ण मानसिकता वाली, पैसे का घमंडी महिला है जो अपने पैसों के आगे किसी को कुछ भी नहीं समझती है। वह अपने पति पर शासन करने वाली महिला है। चूंकि रामवीर उसके मकान में किराए पर रहता है वह मानती है कि वह पूरी तरह से उसके दवाब में रहे। वह रामवीर के घर में आने जाने हर व्यक्ति पर नजर रखती है। जब वह देखती है कि रामवती नामक दलित महिला रामवीर के घर में आती है तो वह तुरंत सक्रिय हो जाती है और दलित स्त्री के घर घुसने से छूत होने की बात अपने पति से कहती है। गुप्ता के द्वारा एक बार टाल दिए जाने पर वह हार नहीं मानती है और अंतत: रामवीर को घर से निकलवा कर ही चैन की साँस लेती है।

धनवान होने का घमंड गुप्ता की पत्नी में स्पष्ट परिलक्षित होता है क्योंकि जब उसका पति गुप्ता कहता है कि रामवीर वाणिज्य कर अधिकारी है और देर सबेर उसके काम आ सकता है तो वह कहती है जिसके मुंह पर चांदी का जूता मारोगे, वही काम करेगा। इससे स्पष्ट होता है कि

वह अपने धन के घमंड में पूरी तरह चूर महिला है जिससे के लिए रिश्ते एवं संबंध कुछ भी नहीं है वह हर चीज को पैसों से खरीदने पर विश्वास रखती है।

गुप्ता की पत्नी के मन में अंधविश्वास और वर्णश्रेष्ठता बहुत ही गहरे तक बैठी हुई है। कहानी में ऐसा उल्लेख नहीं है कि वह शिक्षिशत या अशिक्षति। आमतौर पर यही माना जाता है कि शिक्षिगत व्यक्ति कुछ हद तक ही सही अंधविश्वास से दूर होता है अत: गुप्ता परिवार धनवान तो है परंतु शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। तभी तो वह रामवीर द्वारा संविधान में प्रावधानित समता के सिद्धांत को सामाजिक रीतिरिवाज एवं विरादरी के नियमों के आगे पूरी तरह से नकार देता है और इस नकार पर गुप्ता की पत्नी प्रभाव अधिक होता है।

बोध प्रश्न

- गुप्ता की पत्नी का चरित्र कैसा है?

14.3.3 संवाद

जीवन में कार्य व्यापार के सुचारू संचालन के लिए जिस तत्व की सर्वाधिक आवश्यकता पड़ती है वह है संवाद। व्यक्ति हो या साहित्य संवाद ही उसके उद्देश्य को उकेरने में सर्वाधिक प्रभाव होता है। संवाद कला की दृष्टिच से विवेचन करने पर हम 'तलाश' कहानी को सर्वथा उपयुक्त एवं प्रभावी मान सकते हैं। जय प्रकाश कर्दम जी ने यथा आवश्यकता बहुत ही संयमित संवादों के माध्यम से मन्तव्य को प्रस्तुत किया है। प्रतिरोध के साहित्य की एक विशेषता आक्रामकता भी मानी गई है परंतु प्रस्तुत कहानी में आक्रामक संवादों के स्थान पर तर्कशीलता का अधिक परिलक्षण होता है।

परस्पर संवाद में नैरन्तर्य होना कहानी को रोचक बनाता है -

आपका नाम क्या है। गुप्ता का पहला सवाल था।

मुझे आर.वी.सिंह कहते हैं। रामवीर सिंह ने जबाव दिया।

जैसे ही गुप्ता को पता चलता है कि वह रामवीर सिंह एक व्यापार कर अधिकारी है उसका अन्वेषी वार्तालाप में नाट्यात्मक परिवर्तन दिखाई देता है इस संवाद को कर्दम जी ने सटीक शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत किया है - "पहले वह मकान मालिक के दंभ के साथ बात कर रहा था अब रामवीर सिंह को अदब से साहब संबोधित कर बहुत ही विनम्रतापूर्वक बातें करने लगा- मकान में आपको कोई तकलीफ नहीं होगी साहब, न किसी तरह का कोई डिस्टर्बेंस होगा। किसी चीज की कोई कमी दिखाई देती हो तो बता दें मैं तुरंत पूरी करवा दूँगा।" यह संवाद व्यक्ति के पद की गरिमा तथा स्वार्थी लोगों की स्वार्थलोलुपता दर्शाता है।

संवाद कौशल का एक और उदाहरण दृष्टव्य है- पहले की बात छोड़िए साहब, वह तीन सौ रुपए देते थे, बिजली पानी अलग। लेकिन आपको जो उचित लगे दे दें। पिछले किराएदार का हवाला देकर गुप्ता ने प्रकारान्तर से किराया बता दिया।

'तलाश' कहानी में सवर्णों की मानसिकता का द्योतन तथा एक दलित व्यक्ति के पक्ष को रखने का संवाद बहुत ही सुंदर है और यही दलित साहित्य का सौंदर्य है। रामवीर सिंह (विक्रीकर अधिकारी) जो कि गुप्ता नामक व्यक्ति के यहाँ एक किराये पर रहता है। वह अकेले होने के कारण पहले घर की साफ-सफाई के लिए और बाद में खाना बनाने के लिए रामबत्ती नामक दलित स्त्री को काम पर रख लेता है। परंतु सवर्ण मकान मालिक गुप्ता की पत्नी को यह बात ठनकी की एक दलित महिला उसका घर गंदा कर रही है। यह सुन रामवीर सिंह को गुप्ता समझाता कि "इन्सान तो सब है साहब। पर इन्सान -इन्सान में भेद होता है। सब इंसान बराबर नहीं होते। हजारों साल समाज में यह भेद बना हुआ है। समाज के बीच समाज के अनुसार चलना पड़ता है। समाज जिन बातों को मानता है हमें भी उन बातों को माननी पड़ती है। यहि मोहल्ले को यह पता चल गई कि हमारे घर में चुहडी खाना बनाती है तो मुसीबत आ जाएगी।"

गुप्ता की इस भेदभाव वाली मानसिकता को दूर करने या कुछ सुधार लाने के लिए रामवीर सिंह कहता है - 'लेकिन खाना तो उससे मैं अपना बनवाता हूँ। जब मुझे कोई एतराज नहीं तो किसी और का क्या दिक्कत होगी।' रामवीर ने प्रश्नसूचक दृष्टि से गुप्ता की ओर देखा।

'ठीक है खाना आप बनवाते हैं साहब। पर मकान तो मेरा है। एक चूहड़ी के प्रवेश से रसोईघर अपवित्र होता है मेरा।'

इससे आज के सवर्ण समाज की मानसिकता का परिचय होता है। यहाँ जातिवाद की जड़ों की गंभीरता और गहराई का पता चलता है। साथ ही सवर्ण अपनी पुरानी सोच बदलने को तैयार नहीं है।

बोध प्रश्न

- कहानी में संवाद की क्या महत्व है?

14.3.4 परिवेश चित्रण

प्रत्येक कहानी देशकाल के कारण ही जन्म लेती है, इसलिए हर देश की कहानी दूसरे देशों से भिन्न होती है। भारत में या इस देश के किसी भी भू-भाग में लिखी कहानियों का अपना वातावरण होता है, जिसकी संस्कृति, सभ्यता, रूढि, संस्कार का प्रभाव उन पर स्वभाविक रूप से पड़ता है। यह अपने आप उपस्थिति हो जाता है। यह तो आधार है, जिस पर सारा कार्यकलाप होता है। जहाँ तक प्रश्न है दलित कहानी में परिवेश चित्रण का तो उसका सम्पूर्ण कथ्य ही भेदभाव, तिरस्कार, उपेक्षा, अन्याय और शोषण पर आधारित होता है क्योंकि इस देश में सदियों से प्रचलित जातीय भेदभाव कम होने के स्थान पर बढ़ता जा रहा है। भले ही ऊपरी तौर पर ये भेदभाव कम दिखे परंतु अंदर ही अंदर आग सुलगती सी दीखती है। जैसे अधिकांश सवर्णों का जिनका तथ्यात्मक अध्ययन से कोई सरोकार नहीं होता है वे बात करते हैं कि दलितों को आरक्षण नहीं मिलना चाहिए। आरक्षण उन दलितों को जो उन्नत नहीं हो पाए हैं। जिस दलितों

को नौकरी मिल गई है और उनका आर्थिक स्तर उन्नत हो चुका है उनका आरक्षण बंद कर देना चाहिए। इत्यादि परंतु इस बात को कोई सवर्ण नहीं कहता कि सवर्णों से सदियों से आराम भोग लिया है अब हम उच्च पद, स्तर और अर्थार्जन के साधनों को छोड़ दलितों, पिछड़ों को दे देते हैं। जितने लात घूंसे सवर्णों ने दलितों को जाति के नाम पर मारे हैं अब वे हमें भी मार लें। फिर सामान्य सा सर्वविदित तथ्य एवं सत्य है कि आज तक किसी आरक्षित श्रेणी का कोटा पूरा हुआ है जो छोड़ने के पीछे पड़े हुए है सवर्ण। देश के किसी भी संस्थान में कर्मचारियों या अधिकारियों का आकलन किया जा सकता है आज तक किसी भी विभाग में आरक्षित पद भरे ही नहीं गए। देश में जनसंख्या को देखें तो सवर्ण 15 प्रतिशत भी नहीं है परंतु सरकारी पदों पद पदस्थ सवर्णों का प्रतिशत किसी से छुपा नहीं है।

दूसरे दृश्य को देखें, जिसमें हम पाते हैं कि न सिर्फ ग्रामीण बल्कि शहरी क्षेत्रों में भेदभाव घरों में काम करने वालियों, सड़क नाल साफ करने वालों, सब्जी बेचने वालों, गार्डों, चौकीदारों, पास पडोस में रहने वालों के स्तर तक पर बहुतायत में देखा जाता है।

इस कहानी के माध्यम से लेखक ने हमें रोजगार की तलाश में इंसान को एक स्थान से दूसरे स्थान का आवागमन, निवास, जीवन यापन आदि दर्शातें हुए वहाँ पर जाति के आधार पर होने वाली कठिनाईयों से परिचित कराते हुए प्रतिदिन भेदभाव के प्रति संघर्ष के वातावरण को चित्रित किया है। प्रस्तुत कहानी के देशकाल और वातावरण को अग्रलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है –

नौकरी पेशा व्यक्ति के एक स्थान से दूसरे स्थानांतरण पर कार्यालयीन एवं सामाजिक तौर पर सामंजस्य की कठिनाइयाँ।

मकान की तलाश में सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक स्थिरतियों से पनपे संघर्ष का चित्रण।

जातिवादी सामाजिक, धार्मिक एवं मनोवैज्ञानिक आदि स्तरों पर दलितों का संघर्ष।

गरीब को रोजगार से वंचित करने में जातिवादी मानसिकता का चित्रण।

सवर्णों का दलितों की सही बातों को भी जातिगत दंभ में न मानने की मानसिकता का चित्रण।

दलित का सवर्ण मानसिकता के समक्ष न झुकने का परिणाम छत से बेघर होना होता है और प्रत्येक दलित को सबक की यदि समाज में रहना है तो सवर्ण व्यवस्था के अनुसार चुपचाद दबे कुचले बने रहो नहीं तो सबक सिखा दिया जाएगा। कहानी में तो सिर्फ किराए के मकान से निकाला जाता है कई बार वास्तविक जीवन में तो दलित को प्रतिरोध करने पर दुनिया से ही रूखसत कर दिया जाता है।

इसी प्रकार चुभने वाले तथ्य एवं स्थितियाँ ही दलित कहानियों का परिवेश होती हैं। परिवेश चित्रण में कर्दम जी को सफलता प्राप्त हुई है।

बोध प्रश्न

- दलित जीवन का परिवेश कैसा है?

14.3.5 उद्देश्य

प्रत्येक क्रिया या प्रतिक्रिया का कोई न कोई सार्थक या निरर्थक उद्देश्य होता है। किसी विधा की रचना बिना उपदेश के नहीं होती हम बिना उपदेश के जीवन जीना नहीं चाहते। कहानी की रचना भी बिना उपदेश के नहीं होता। कहानी काल का कोई ना कोई प्रयोजन हर कहानी के रचना के पीछे रहता है। यह उद्देश्य कहानी के आवरण में छिपा रहता है। प्रकट हो जाने पर उसका कलात्मक सौंद्धर्य नष्ट हो जाता है। प्रस्तुत कहानी का उद्देश्य निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट होता है -

भारतीय समाज में प्रचलित जातिवाद के प्रभाव एवं दुष्प्रभाव का चित्रण।
नौकरी पेशा लोगों की कार्यालय एवं कार्यालयेत्तर कठिनाईयों का प्रस्तुतीकरण।
दलितों का सवर्ण मानसिकता के साथ संघर्ष और दैनिक जीवन में व्यतवहारगत भेदभाव।

बोध प्रश्न

- आपके विचार से 'तलाश' का मुख्य उद्देश्य क्या है?

14.3.6 भाषा शैली

शैली कहानी को सुसज्जित करनेवाला कलात्मक आवरण होती है। इसका संबंध कहानीकार के आंतरिक और बाह्य पक्षों में रहता है। कहानी लेखन अपनी कहानी को अपने प्रकार से कहना चाहता है। वह उसे वर्णनात्मक, संवादात्मक, आत्मकथात्मक, विवरणात्मक किसी भी रूप में लिख सकता हैं। उसकी शैली ऐसी हो की पाठको में अपनी ओर आकृष्ट करे। साधारणता या भाषा शक्ति द्वारा होता है। कहानीकार की भाषा में इतनी शक्ति हो जो साधारणता पाठकों को भी अपनी ओर आकृष्ट कर ले। कहानी का आरम्भ, मध्य और अन्त सुगठित हो, शीर्षक लघु और रोचक हो। अताएव कहानी की रचना एक कलात्मक विधान है, जो अभ्यास और प्रतिभा के द्वारा रूपाकार ग्रहण की जा सकती है।

यद्यपि दलित साहित्य का मूल स्वर ही विद्रोह है। अन्याय, शोषण एवं भेदभाव के विरूद्ध आक्रोश एवं प्रतिरोध की भावना अधिकांशत: दिखाई पड़ती है। कर्दम जी दलितों में जाग्रत आत्मसम्मान एवं स्वाभिमान की भावना को कहानियों में अभिव्यक्त करते हैं। जयप्रकाश कर्दम जी की भाषा शैली अन्य दलित लेखकों से भिन्न नजर आती है। इनकी भाषा बहुत ही सहज एवं सटीक है। शांत भाव से बहती हई नदी की सतह पर पानी का बहाव कुछ धीमा नजर आता है परंतु गहराई में एक तूफान होता है। उसी प्रकार कर्दम जी ने शिल्प के स्तर पर नया प्रयोग करके भाषा को विस्फोटक आक्रोश से बचाया है। अन्य दलित लेखकों के साहित्य में गाली गलौज पूर्ण भाषा का उपयोग आक्रात्मकता को प्रस्तुत किया गया है, परंतु कर्दम जी बहुत ही

शांत भाव से बात भी पूरी करते हैं और शारीरिक भंगिमाओं की तुलना में आक्रमण वैचारिक अधिक होता है। घाव भी गंभीर होता है और चोट भी दिखाई नहीं देती है।

प्रस्तुत कहानी में मात्र एक प्रकरण में आक्रामक भाषा का प्रयोग हुआ है वह भी दलित की ओर से नहीं एक सवर्ण की ओर से। गुप्ता की बीवी कहती है, "अफसर है तो क्या हमारा धर्म बिगाड़ेगा वो। जरूरत पड़ने पर जिसके मुँह पर चाँदी का जूता मारोगे वो ही काम कर देगा। फिर आर. वी. सिंह का मूत हाथ में लेने की क्या जरूरत है।" गुप्ता की बीवी के मुंह से ये शब्द अनायास ही नहीं निकल रहे हैं, बल्कि उसके अंदर जो भेदभाव कूटकूट कर भरा है वह उसको इस तरह की बातें करने को मजबूर कर रहा है। इस प्रकरण की भाषा से कर्दम जी बहुत ही कुशलता के साथ उस आरोप से सिरे से खारिज करते हुए पाए जाते हैं जिसमें अधिकांश सवर्ण लेखक दलित लेखकों की भाषा एवं जीवन शैली को गाली गलौजपूर्ण बताते हैं। यहाँ कर्दम जी सिद्ध करने में सफल होते हैं कि अहंकार और भेदभाव और स्वभाग की उग्रता सवर्ण का मूल चरित्र है। दलितों को तो सोची समझी दलित दमन नीति के तरह दोषी ठहराया जाता है ताकि दलित हीनभावना से उभर ही नहीं पाए। सम्पूर्ण कहानी में शैली सरल, भाषा सरल एवं बोध गभ्यता के साथ अपने उद्देश्य को प्राप्त करती है।

बोध प्रश्न

- कर्दम ने अपनी भाषा को किससे से बचाया है?

14.4 पाठ सार

'तलाश' कहानी दलित मुक्ति संघर्ष की अभिव्यक्ति है। इस कहानी के माध्यम से जयप्रकाश कर्दम जी ने भारतीय समाज की जड़वादी मानसिकता की भर्त्सनात्मक आलोचना की है साथ ही शिक्षित होने के उपरांत दलितों में उत्पन्न आत्मसम्मान, वैचारिकी, ज्ञान, संघर्ष आदि को प्रस्तुत करते हुए यह संदेश देने का कार्य किया है कि अब दलित वैचारिकी रूप पहले की तरह न तो शून्य हैं और न ही दमित होने को तैयार हैं। भारतीय समाज की संरचना का मूलाधार ही जातिवादी है। जाति का नाम लिए बगैर यहाँ न तो किसी कार्य का प्रारंभ होता है और न ही समापन। तकनीकी, वैश्वीकरण और औद्योगिक विकास के फलस्वरूप लोगों के रहन सहन में भौतिकवादी परिवर्तन तो आ गया परन्तु वैचारिकता के स्तर पर भारत का जातिवाद पोशक समाज आज भी सदियों पीछे खड़ा है। सवर्ण यह कभी नहीं चाहते कि जातिवाद समाप्त हो क्योंकि उनके ऐसा चाहने से उनका प्रभुत्व एवं श्रेष्ठता, उच्चता का भाव कम होता है। यहाँ तक जिन भौतिक संसाधनों का उपभोग सवर्ण समाज करता आ रहा है उनका उपभोग यदि कोई दलित करता है तो सवर्ण समाज का प्रतिनिधि भले ही वह किसी भी रूप में हो अंदर तक तिलमिला जाता है। कानूनी कारणों या किसी अन्य कारणवश यदि वह सीधे तौर पर दलित का अपमान नहीं भी करता है तो भी अपने मन ही मन यह कहता है कि अब तो दलित भी बराबरी

करने लगे। संसाधनों का उपयोग, उपभोग ही तो सामाजिक स्तर पर श्रेष्ठता एवं निम्नता सिद्ध करता है। समाज जातिवाद का तिलिस्म सा बना हुआ है जो कि समाज की संरचना को जातीयता पर आधारित कर और अधिक जटिल बनाता है। दलित व्यक्ति चाहे जितनी उन्नति कर ले, अपनी बुद्धिमता एवं कौशल से आगे बढ़ जाए परंतु जाति के आधार पर हमेशा सवर्णों की दृष्टि में उसका कोई मूल्य नहीं होता। वे यदि कुछ न भी मिले तो आरक्षण को ही गाली गलौज करने लगते हैं। नाना प्रकार से उस पर कटाक्ष करते हैं। वार्तालाप करते समय भा जुबां पर कुछ और आंखों में कुछ और भाव होता है। सदियों से चली आ रही इस संरचना को बदलने की आवश्यकता है। धर्म के नाम पर जो भी अमानवीय व्यवहार दलितों के साथ हुआ है और वर्तमान में भी हो रहा है उसे परिवर्तित करने की आवश्यकता है। जाति के आधार पर दलितों के कौशल, कमर्ठता, बुद्धिमता और परिश्रम को नकारा जाता है या फिर प्रताड़ित किया जाता है तो यह उचित नहीं है। इन सभी अन्यायों, शोषण, अत्याचार, भेदभाव से उपजी मानसिक शोषण की त्रासदी एक दलित को विद्रोह करने के लिए मजबूर करती है और देश धीरे धीरे गृहयुद्ध की ओर बढ़ सकता है क्योंकि किसी की व्यक्ति या समाज के वर्ग के सहने की भी एक सीमा होती है। जब घड़ा भर जाएगा तब उसमें भरा पदार्थ बाहर निकलने लगता है और स्थिकति वैसी ही हो चली है। इस प्रकार 'तलाश' कहानी के अध्ययन से हम दलित शोषण, वेदना और विद्रोह से परिचित होते हैं। हमें दलित साहित्य आंदोलन में जयप्रकाश कर्दम जी का योगदान और स्थान का ज्ञान हुआ है। इसके अलावा उनके लेखन की वैचारिकी और साहित्यिक योगदान से परिचित किया गया है। उनके अनुसार शोषण मुक्ति की दिशा में प्रत्यक्ष तथा वैचारिक संघर्ष एक सकारात्मक परिणाम लेकर आएगा।

निष्कर्ष स्वरूप निवेदन किया जा सकता है कि तलाश कहानी है किसी व्यक्ति विशेष के रूप में रामवीर सिंह, रामबती अथवा सवर्ण वर्ग के प्रतिनिधि गुप्ता की कहानी नहीं है अपितु पूरे भारतीय समाज में व्याप्त जातिवादी भेदभेदभाव के परिदृश्य को प्रस्तुत करने वाली कहानी है। जयप्रकाश कर्दम ने 'तलाश' कहानी के पात्रों के माध्यम से भारतीय समाज में प्रचलित परंपरागत भेदभाव की विचारधारा को पाठकों के समक्ष रखने का प्रयत्न किया है और इसमें वे सफल भी हुए हैं। वर्गगत या जातिगत भेदभाव को कम करने या उसके कम होने की दिशा में यदि कोई आशा की किरण नजर आती है तो वह केवल शिक्षित वर्ग है, परंतु वहाँ भी दलित शिक्षिईत तो इस दिशा में प्रयत्नरत दिखाई देते हैं क्योंकि कहीं न कहीं विभिन्न स्तरों पर अधिकांश दलित शिक्षितों का भी यह भोगा हुआ यथार्थ होता है। जिसे वे सीधे प्रतिवाद करने के स्थान पर वैचारिक संघर्ष के माध्यम से कम या समाप्त करना चाहते हैं। जिस समतामूलक स्वतंत भारत के स्वप्नदृष्टा स्वतंत्रता सेनानी देशभक्त और महापुरुष थे उसे स्वतंत्रता प्राप्ति के 75 वर्ष बाद भी हम साकार नहीं कर सके हैं। इतना अवश्य है कि खुलकर दलितों का विरोध करने

या प्रताड़ित करने के मामलों में कुछ कमी अवश्य हुई परंतु पूर्ण समता स्थापित करने की दृष्टि से अभी भी न जाने कितने वर्षों तक संघर्ष चलता रहेगा।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. दलित साहित्य मुख्य रूप से सवर्ण और दलित समुदाय के बीच के अंतर को उजागर करना है।
2. कर्दम ने दलित समुदाय की अपमानजनक स्थितियों और उनके मनोवैज्ञानिक प्रभाव को मुखरतापूर्वक व्यक्त किया है।
3. 'तलाश' कहानी उपनिवेशबाद और भूमंडलीकरण के दलितों पर सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभावों को भी उजागर करती है।
4. यह कहानी भारतीय सामाजिक परंपरा में जातीय प्रश्न और अंतर्द्वंद्वों का परिचय देने में समर्थ है।
5. कर्दम का कथा साहित्य डॉ.बी.आर. अम्बेडकर की विचारधारा से प्रभावित है।

14.6 शब्द संपदा

1. दलित = जिसका दलन या शोषण हुआ हो
2. नकारात्मक = विरोधात्मक
3. फरमान = आदेश
4. बंदिश = प्रतिबंध
5. भूमंडलीकरण = सार्वभौमिक
6. मुक्ति = बंधन से मुक्ति
7. शोषण = किसी व्यक्ति पर होने वाला शारीरिक व मानसिक अत्याचार
8. सकारात्मक = सहमति
9. स्थानांतरण = एक स्थान से दूसरे स्थान में जाना

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ)दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'तलाश' कहानी वस्तुत घर की तलाश की कहानी है या दलितों की अस्मिता की तलाश की, विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
2. भारतीय समाज में प्रचलित जातिवाद के मूल कारणों पर प्रकाश डालिए।
3. दलितों के शिक्षित होने पर परविर्तन परिलक्षित होते हैं। 'तलाश' कहानी के संदर्भ में इस कथन की पुष्टि कीजिए।
4. 'तलाश' कहानी की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए।
5. दलित कहानी की भाषा पर प्रकाश डालते हुए तलाश कहानी की भाषा एवं शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ)लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'तलाश' कहानी की कथावस्तु का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. 'तलाश' कहानी के प्रमुख पात्रों का परिचय दीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'तलाश' कहानी किस चेतना का उदाहरण है? ( )
   (अ) स्त्री चेतना (आ) आदिवासी चेतना (इ) दलित चेतना (ई) पर्यावरण चेतना
2. 'तलाश' कहानी में कौन मकान की तलाश में भटकता है? ( )
   (अ) रामरत्न (आ) रामवीर (इ) गुप्ता (ई) रामवती
3. रामवीर किसेक सिद्धांतों का अनुयायी है? ( )
   (अ) बुद्ध (आ) महावीर (इ) गांधी (ई) अंबेडकर

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'तलाश' कहानी ..... व्यवस्था के बारे में बताती है।
2. 'तलाश' कहानी में गरीब को ..... से दूर रखने का षड्यंत्र दिखा गया है।
3. रामवीर भारत के संविधान को ..... समता का आधार मानता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. गुप्ता की पत्नी	(अ) संकीर्ण मानसिकता
2. रामवीर	(आ) मजदूर स्त्री
3. गुप्ता	(इ) अंबेड़करवादी
4. रामवती	(ई) घमंडी

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. जयप्रकाश कर्दम, तलाश
2. जयप्रकाश कर्दम, जाति एक विमर्श
3. अभय कुमार दुबे, आधुनिकता के आइने में दलित

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 15 : मेहरुन्निसा परवेज़ : एक परिचय

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मूल पाठ : मेहरुन्निसा परवेज़ : एक परिचय
15.3.1 जीवन परिचय
15.3.2 परिवार
15.3.3 शिक्षा-दीक्षा
15.3.4 पुरस्कार
15.3.5 रचना परिचय
15.3.6 युग परिचय
15.3.7 मेहरुनिस्सा परवेज़ की रचनाओं का मूल कथ्य
15.4 पाठ सार
15.5 पाठ की उपलब्धियाँ
15.6 शब्द संपदा
15.7 परीक्षार्थ प्रश्न
15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

मेहरुनिस्सा परवेज़ आधुनिक हिन्दी साहित्य में एक लोकप्रिय नाम है। बहूमूखी व्यक्तित्व से संपन्न प्रगतिशील धारा की स्त्री लेखिका होने के नाते भी उनका एक महत्वपूर्ण स्थान है। ऐसे व्यक्तित्व से संपन्न महिला कथाकार के संबंध में इस इकाई में अध्ययन किया जाएगा। मेहरुनिस्सा परवेज़ ने साहित्य रचना के क्षेत्र में जब कर्दम रखा तब तक साहित्य लेखन के क्षेत्र में परिवर्तन की शुरुवात हो चुकी थी। सठोत्तरी कथाकारों ने भोगे हुए यथार्थ, अनुभवों की प्रामाणिकता व निजी अनुभूतिओं की अभिव्यक्ति पर बल दिया जाने लगा था। मेहरुनिस्सा परवेज़ के रचनात्मक अवदान के आधार पर कहा जा सकता है कि उन्होंने अपने साहित्य का निर्माण सठोत्तरी साहित्यिक्त तत्वों के साथ किया है। बदलते हुए परिवेश के सामाजिक परिवेश के बीच कथा- साहित्यकार मेहरुनिस्सा परवेज़ ने अपनी अप्रतिम रचनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया। इनकी रचनाओं में आदिवासी जीवन की समस्याएँ सामान्य जीवन के अभाव और नारी-जीवन की दयनीयता की मुखर अभिव्यक्ति हुई है।

15.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप -

- मेहरुनिस्सा परवेज़ के जीवन, रचनात्मक व्यक्तित्व के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- उनके युगीन-परिवेश को समझ पाएंगे।
- उनके कथा-साहित्य में अभिव्यक्त संवेदना, कथ्य, और अनुभूति की सामाजिकता के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- हिन्दी साहित्य में उनके योगदान से परिचित हो सकेंगे।
- उन की रचनाओं में उपस्थित भौगोलिक, स्थानिक परिवेश के साथ उनकी साहित्यिक अभिव्यक्ति के वैशिष्ट्य को समझ सकेंगे।

15.3 मूल पाठ: मेहरुन्निसा परवेज़ : एक परिचय

15.3.1 जीवन परिचय

मेहरुनिस्सा परवेज़ का जन्म 10 दिसम्बर 1944 को बालाघाट, मध्य प्रदेश में एक यात्रा के दौरान चलती हुई बैलगाड़ी में हुआ था। उनके जन्म कि घटनाओं कि विशेषता एवं समानता के कारण उनका नाम मेहरुनिस्सा परवेज़ रखा गया था। वह भारत की आधुनिक महिला साहित्यकार और कहानीकार हैं। मध्य प्रदेश के आदिवासी ज़िले बालाघाट में जन्मी मेहरुन्निसा परवेज साहित्यिक पत्रिकाओं को पढ़ते एवं आस-पास के वातावरण को देखते हुए साहित्यिक लेखन के क्षेत्र में आ गईं। इस संदर्भ में परवेज जी स्वयं कहती हैं कि "घर में साहित्य का माहौल नहीं था, किंतु परिस्थितियाँ ऐसी थीं, जिन्होंने मेरे मन को साहित्य रचना की ओर प्रेरित किया।"

15.3.2 परिवार

मेहरुनिस्सा परवेज़ का परिवार सुसंस्कृत और संपन्न था। उनकी माता शाहजादी बेगम मुगल घराने की थी और पिता अब्दुल हमीदखान डेप्युटी कलेक्टर थे। महरुनिस्सा परवेज़ का परिवर सामंतवादी परिवार था लेकीन वहाँ पर्दा प्रथा और धार्मिक कट्टरपन के बजाए रहन-सहन और आचरण व्यवहार में पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव था। यही कारण है कि महरुनिस्सा परवेज ने एक सामंतवादी परिवार में पैदा होने के बाद भी धार्मिक आडंबर से दुर ही रही। अपने साहित्य सृजन में वह अपने परिवार कि भूमिका को स्वीकार करते हुए कहती है कि उनके साहित्य सृजन के प्रेरणा स्त्रोत उनके पिताजी ही रहें। "मै पिता से अधिक प्रभावित हूँ। मुझमे लेखन की जो क्षमता है जिसके प्रेरक मेरे पिता थे। पिता के पास अनेक पुस्तके थी, जिनमें महापुरुषों की जीवनियाँ, काव्यसंग्रह आदि थे, इसलिए अधिकांश पुस्तकों का परिचय हुआ।

पिता के घर के खुले वातावरण में रहने के बाद ससुराल में मेहरुनिस्सा परवेज़ को धार्मिक रूढ़ियों से पूर्ण वातावरण प्राप्त हुआ जहां उनका दम घुटने लगा। मेहरुनिस्सा परवेज़ का ससुराल रायपुर में था। राउफ परवेज़ खुद एक शायर थे इसलिए मेहरुनिस्सा की लेखन क्षमता और समझ का सम्मान करते थे। फिर भी ससुराल के लोग मेहरुनिस्सा को पर्दे में रखना छाते थे परंतु प्रगतिवादी चेतना से परिपूर्ण मेहरुनिस्सा ने धार्मिक कट्टरपन का विरोध किया और

साहित्यिक एवं सामाजिक कार्यों में निडर होकर भाग लिया। नारी स्वतंत्रता एवं समानता की भावना उनके लेखन में ही सीमित होकर नही रहा बल्कि उनके जीवन में भी इसके उदाहरण देखने को मिलते हैं।

15.3.3 शिक्षा-दीक्षा

मेहरुनिस्सा के शिक्षा प्राप्ति के संबंध में कहा जा सकता है कि उन्हें जो तालिम मिली वह उनके साहित्य सृजन और अपनी जिंदगी के निर्वाह के लिए पर्याप्त हो। इसका कारण यह भी है कि मुस्लिम परिवारों में बहुत जल्दी शादी करने की परंपरा है जिसकी वजह से मेहरुनिस्सा परवेज़ की शादी पंद्रह साल की उम्र में ही हो गई और उनकी पढ़ाई वहीं ठप हो गई। उनकी शिक्षा हिन्दी और मराठी माध्यमों से हुई। हालांकि जब वह चौथी कक्षा में अध्ययन कर रही थी तब उनका परिवार बस्तर आ गया था। उनका बचपन बस्तर के आदिवासियों के बीच गुजरा जिसका प्रभाव उनके ऊपर भी हुआ। बस्तर की जीवन शैली, समस्याओं और रीति रिवाजों को उन्होने अपने कथा साहित्य में उजागर किया है। बस्तर की बोलियों से परिचित होने के कारण वहाँ के लोगों के साथ उनके बेहतर संबंध भी रहें। "मेरे शरीर में बस्तर की हवा, बस्तर की माटी, जंगलों की महक, मेरे बालों में बस्तर के लोक गीतों की लड़ियाँ कुछ इस तरह घुल मिल गयी हैं कि मैं अपने आपको बस्तर से अलग करके सोच भी नहीं पाती हूँ।" मेहरुनिस्सा परवेज़ कि पढ़ाई नियमित रूप से नहीं हो पाई। फिर कई सालों बाद टुकड़ों में उन्होने एम.ए. तक की पढ़ाई पूरी की। उनके अथक परिश्रम और संघर्ष के परिणाम से वह लेखन कार्य की ओर भी मुड़ी।

15.3.4 पुरस्कार

सन् 2016 में डॉ राही मासूम रजा साहित्य सम्मान से अलंकृत किया गया। वर्ष 1995 में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा साहित्य भूषण सम्मान मिला। सन 1980 में 'कोरजा' उपन्यास पर मध्यप्रदेश सरकार का 'अखिल भारतीय वीरसिंह जुदेव पुरस्कार' राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया गया। इसी उपन्यास पर उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ से भी इनको सम्मान प्राप्त हुआ। 1995 में सुभद्रा कुमारी चौहान पुरस्कार प्राप्त हुआ। मेहरुनिस्सा परवेज़ को सन 2005 में पद्मश्री पुरस्कार से नवाजा गया। भारत भूषण सम्मान जून 2013 को प्राप्त हुआ।

मेहरुनिस्सा परवेज़ ने वर्ष 1962 से लिखना प्रारम्भ किया और उनकी पहली कहानी वर्ष 1963 में 'नई कहानियाँ' में छपी थी जिसका नाम था 'पाँचवीं कब्र' जो आगे चलकर पाँच अलग-अलग भाषाओं में भी अनूदित होकर प्रकाशित हुई थी।

15.3.5 रचना परिचय

मेहरुन्निसा परवेज की कहानियों में पारंपरिक घरों की बंदिशें, महिलाओं के संघर्ष, आदिवासी अंचल की समस्याएँ बहुधा आती हैं। वर्ष 1969 में उनका पहला उपन्यास 'आंखों की दहलीज' प्रकाशित हुआ था।

उपन्यास : आंखों की दहलीज (1969), कोरजा (1972), अकेला पलाश (1977)। **कहानी संग्रह :** आदम और हव्वा (1972), टहनियों पर धूप (1977), गलत पुरुष (1977), फाल्गुनी (1978), अंतिम पढ़ाई (1982), सोने का बेसर (1990), अयोध्या से वापसी (1991), एक और सैलाब (1991), कोई नहीं, कानी बाट, ढहता कुतुबमीनार (1993), रिश्ते (1992), अम्मा (1997), समर (1999), लाल गुलाब (2006)

मेहरुनिस्सा परवेज़ द्वारा कथेत्तर साहित्य के रूप में लेख और संस्मरण भी जो धर्मयुग और अन्य दूसरे पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। उनकी कहानियां धर्मयुग, हिन्दुस्तान, सारिका आदि राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई है। कुछ कहानियां मध्य प्रदेश, दिल्ली, आगरा, केरल के शिक्षा मंडल विश्वविद्यालय द्वारा पाठ्यक्रम में शामिल की गई हैं। प्राय: सभी रचनाएं भारतीय भाषाओं में अनुदित हुई हैं। 1982-83 में उनके उपन्यास 'उसका घर', 'आंखों की देहलीज' कन्नड़ भाषा में प्रकाशित हुई है। पंजाब, मेरठ, जयपुर विश्वविद्यालयों में रचनाओं पर शोध कार्य हुआ है। सन् 1995 में कहानियों 'झूठन', 'सोने का बेसर' और 'फाल्गुनी' पर दिल्ली दूरदर्शन ने धारावाहिक का निर्माण किया है। इसके अलावा स्वयं वेश्यावृत्ति पर 'लाजो बिटिया' 1997 में एवं निर्माण किया है। वीरांगना रानी अवंतीबाई पर 1998 में धारावाहिक का निर्माण किया है। सन् 1974 में बाल एवं परिवार कल्याण परियोजना, जिला बस्तर की अध्यक्ष रही। आकाशवाणी सलाहकार समिति की सदस्य, 1977 में बस्तर जिले की ओर से समाज कल्याण परिषद मध्य प्रदेश की सदस्य नियुक्त हुईं तथा जिले की महिला कांग्रेस की अध्यक्ष रही हैं।

बोध प्रश्न

- मेहरुन्निसा परवेज के जीवन का प्रभाव साहित्य पर कितना पड़ा?
- मेहरुन्निसा परवेज के लेखन का प्रारम्भ कब हुआ था?
- मेहरुन्निसा परवेज की प्रारम्भिक रचना का नाम बताइए।

15.3.6 युग- परिवेश

साठोत्तरी कथा साहित्य में कई महिला कथाकारों का उदय हुआ जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से समाज में मौजूद यथार्थ को, निम्न मध्यवर्गीय स्त्रियों के दर्द व पुकार को पहचाना और उसे कथा साहित्य में शामिल कर उन यथार्थ को बदलने के लिए प्रेरित भी किया। इसी दौर में कथाकार मेहरुनिस्सा परवेज़ का भी हिन्दी कहानी में उदय होता है। मेहरुनिस्सा परवेज़ ने स्त्रियों के जीवन की हर परिस्थिति के अनुभूत क्षणों को अपने कथा साहित्य में अभिव्यक्त करने में सफल रही हैं।सामाजिक विसंगतियों, कुरीतियों और आधुनिकता के मोह में बंधे मनुष्य की विडंबनाओं का जीवंत चित्रण इनके कथा साहित्य में मिलता हैं। मेहरुनिस्सा परवेज़ के कथाओं में सबसे उल्लेखनीय रूप से जो दर्ज है वह है मुस्लिम मध्य वर्गीय चेतना का वर्णन। उन्होंने बड़ी सरलता और ईमानदारी से जीवन की विविध समस्याओं का यथार्थवादी ढंग से चित्रण किया हैं। महरुनिस्सा परवेज़ अपने लेखन के परिवेश को अभिव्यक्त करते हुए कहती है "पुरानी मान्यताओं और गांधीवादी विचारधारा को ताक पर दिए बैठी है। वातावरण में एक अजीब सी

भयावहता और दिग्भ्रमित आतंक फैला हुआ है। बेईमानी, घूसख़ोरी, भ्रष्टाचार और भाई भतीजावाद की जहर लोगों के खून में मिल गया है।" इस परिवेश का वर्णन करते हुए वह अपने लेखकीय जीवन के बारे में लिखती है "लेखक असंभव जीवन को जीने का सरल रास्ता बता देता है। दोबारा खड़े होने के लिए कोई आसान-सा नुस्खा बता देता है। कथा के मंत्र का सूत्र पाठक के हाथ में पकड़ा देता है। पराजय और घुटन से परेशान पात्र अपने लिए एक सुरक्षित स्थान खोज लेता है।" मेहरुनिस्सा परवेज़ के इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि वह जीवन के सच्छई के प्रति न केवल साहित्य में जागरूक है बल्कि व्यक्तिगत स्तर पर वह क्या सोचती समझती है और उसे अपने जीवन में कितना उतारती है उसको लेकर भी वह बेहद सचेत हैं।

स्वतंत्रता के बाद जहाँ मूल्यों में परिवर्तन आया वहीं नैतिक मूल्यों का द्वंद्व भी बढ़ता गया। मेहरुन्निसा परवेज ने अपने उपन्यासों में समाज में व्याप्त समस्याओं को उठाकर नवीन-दृष्टि का परिचय दिया है। मेहरुन्निसा परवेज ने परंपरागत मूल्यों को त्यागकर प्राचीन और आधुनिक नैतिक मूल्यों में फँसी नारी के द्वंद्व को चित्रित किया है। नैतिक मूल्य मानव विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इन गुणों का होना अत्यंत आवश्यक है और आज इन मूल्यों में परिवर्तन आने से द्वंद्व की भावना उत्पन्न होती जा रही है जैसे- राग-द्वेष, प्रेम, अहिंसा, करुणा, पवित्रता, कर्तव्य-बोध आदि सभी मूल्यों के अंतर्गत आते है। पुरुष और स्त्री के शौर्य की भिन्नता बता नारी के शौर्य में इन मूल्यों का परिवर्तित रूप-स्वरूप बताया गया है।

हिंदी की महिला रचनाकारों में मेहरुन्निसा परवेज का स्थान विशिष्ट है। लेखिका ने अपने उपन्यासों में जीवन की विविध समस्याओं और उसमें बदलते मूल्यों का यथार्थवादी चित्रण किया है। आदर्श एवं संस्कारों में घुटते पात्रों के द्वंद्व की समस्या को चित्रित कर नैतिकता का अंतर्द्वंद्व को भी उभारता है। उनके प्रमुख उपन्यास है- 'आँखों की दहलीज', 'उसका घर', 'अकेला पलाश', 'पत्थर वाली गली', 'समरांगण', 'पासंग' आदि।

मेहरुन्निसा परवेज़ अपनी कहानियों में स्त्री जीवन के त्रासद पक्ष को बेहद क़रीने ढंग से उकेरती हैं मानों दर्द पर बर्फ़ के फाहें रख रही हों। जब कहानी में चरित्र गढ़ती हैं, वह केवल कहानी की स्वर में नहीं बोलती हैं वरन समाज के चेहरे पर मौजूद झुर्रियों के बरक्स आसमानी तकलीफ़ को थपकी देती हैं। 'पासंग' की नायिका कुमसुम की जिंदगी का फ़ैसला इद्दत के साथ तय की जाती है जो कि मेहरूम जमाने में बेहद दर्दनाक है। प्रेम के पत्ते झड़ जाने के बाद इंतज़ार का पतझड़ पाकिस्तान में जाकर सिंधु में विभक्त हो जाता है। घर में घर की लाज रखने की रवायत ने किसी भी स्त्री को आज़ाद करने के बाद भी कैंद सी ज़िन्दगी बक्सी है। दरख़्त के दरिया में ज़िन्दगी-ज़िन्दगी की तलाश करती है लेकिन दूर तक नज़र दौड़ाने के बावजूद कहीं कोई नज़र नहीं आता है। कथाकार मेहरुन्निसा ने अपने युगीन परिवेश का निरीक्षण किया है। उनकी रचनाएँ इस बात तफ़तीश करती हैं कि वह नारी मन की पीड़ा को विभिन्न रूपों, स्वरूपों और समस्याओं को नज़दीक देखा है, जिसे अपनी रचना में सिरजा है। मेहरून्निसा परवेज़ की कहानियों में समाज तथा परिवार में लड़की की दुर्दशा, पिता की भूमिका में पिता का नए-नए रंग-ढंग आदि को देखा जा सकता है। अपनी रचनाओं के माध्यम से सामाजिक स्थितियों का

चित्रण करते वक्त बेहद गम्भीर, गहन व गमगीन हालात को उभारती हैं। आपकी कहानियाँ वक्त का शिनाख्त करते हुए बदलाव को तरजीह देती हैं।

बोध प्रश्न

- महरुनिस्सा परवेज़ की रचनाओं में प्रमुख रूप से किस समाज का चित्रण है?

15.3.6 मेहरुनिस्सा परवेज़ की रचनाओं का मूल कथ्य

मेहरुन्निसा परवेज़ जी एक विलक्षण कथा-लेखिका होने के साथ-साथ एक उच्चकोटि की समाज-सेविका भी हैं। उन्होंने जीवन के आरंभ से लेकर निरंतर उपेक्षित, अभावग्रस्त, शोषित और पीड़ित समाज के लिए कार्य किया है, संघर्ष किया है और इन विभिन्न वर्गों को पूर्ण सहानुभूति प्रदान की है। नारी जो सदियों से पुरुष के दबाव में रही और पराधीन होकर रही, उसे समर्थ बनाकर पुरुष के समकक्ष खड़ा कर देना मेहरुन्निसा जी का स्वप्न रहा है और ऐसा करने में उनको आश्चर्यजनक सफलता भी मिली है। उनकी लेखनी की विशेषता यह रही कि अधिकांश रचनाओं में उन्होंने अपने भोगे हुए यथार्थ को कल्पना के रंग में डुबो कर चित्रित किया है। उनके लेखन की प्रेरणा प्रारंभ में उनके जज पिता से और फिर बस्तर के परिवेश से और अंततः बाल्यावस्था के स्वयं देखे और भोगे कटु यथार्थ से मिली। मेहरुन्निसा जी ने बाल्यकाल से लेकर पहले विवाह के फलस्वरूप ससुराल में रहने तक जो कुछ देखा और भोगा उसकी अभिव्यक्ति उपन्यासों में तो हुई ही, अनेक कहानियों में भी हुई। पात्रों के नाम भिन्न हैं लेकिन व्यक्त यथार्थ सब वही है जो लेखिका ने भोगा है। बाल्यकाल से लेकर यौवन काल तक की अनेक घटनाओं पर नज़र डाली जाय तो अनेक ऐसी बातों की जानकारी मिलती है जिसका संबंध नारी जीवन की यातनाओं से है। उनके माता-पिता के कटु संबंध, पिता का ऐय्याशी स्वभाव, अशिक्षित माँ का प्रतिशोध पूर्ण स्वभाव आदि सब बालिका मेहरुन्निसा ने निकट से देखा था। छोटी उम्र में विवाह होने की असलियत जानकर उनके कोमल हृदय पर जो चोट पड़ी थी, उसके दर्द से वह उबर न सकी। मुस्लिम जीवन और उसमें नारी की स्थिति, आदिवासी जीवन और वहाँ की नारी की पशुवत् स्थिति और ईसाई समाज की नारी की स्थिति, सब कुछ उन्होंने क़रीब से देखा था और उनके बालमन पर अंकित हो गया था। इन सब स्थितियों से उनकी दृष्टि नारी उत्पीड़न और इसके कारणों पर लग गई थी। उनकी कहानियों में बेरोज़गारी और अनुपयोगिता बोध, आर्थिक अभाव, प्रेम, वियोग, तलाक़ आदि विभिन्न प्रवृत्तियों का चित्रण होने से विविधता बहुत है परन्तु लेखिका की दृष्टि यहाँ भी प्रमुख रूप से नारी शोषण पर ही रहती है। यह कहना उचित होगा कि मेहरुन्निसा परवेज़ जी का पात्र चयन उनके कौशल का परिचायक है।

अपने तमाम दायित्वों का निर्वाह करने के साथ-साथ मेहरुन्निसा जी ने संपादन जैसा चुनौतीपूर्ण कार्य भी किया। बेटे समर के असामयिक निधन से जो आघात उन्हें लगा था उससे उबरने के लिए वह तमाम रास्ते टटोल रहीं थीं कि उन्हें लगा - समर की स्मृति को बनाए रखने का एक मात्र उपाय उसकी याद में 'समरलोक' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन हो सकता है।

इस प्रकार से मेहरुन्निसा जी का एक और पक्ष हमारे सामने आया जो कि संघर्ष पूर्ण रहा। वह, "भारत की प्रतिष्ठित 'समरलोक' (हिन्दी) सामाजिक सरोकारों की साहित्यिक पत्रिका का संपादन तथा प्रकाशन कर रही हैं। इस पत्रिका ने देश-विदेश के साहित्य जगत में ख्याति अर्जित की।"

मेहरुन्निसा जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज को चेतावनी और संदेश के साथ-साथ एक सही मार्गदर्शन देने का भी स्तुत्य कार्य किया। स्वातंत्र्योत्तर काल की महिला कथाकारों में मेहरुन्निसा जी एक ऐसी कथाकार हैं जिनके कथा-साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता नारी जीवन और इसकी विसंगतियों का चित्रण है। उन्होंने मुस्लिम समाज को तो समझा ही है और आदिवासियों के गहन संपर्क में रहने के कारण उनकी अशिक्षा और ग़रीबी को दूर करने के लिए बाल एवं परिवार कल्याण जैसे समाज-सुधार के अनेक कार्यक्रम चलाए। शहरी और ग्रामीण परिवेश में रहनेवाली प्रत्येक वर्ग की नारी चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित उनके संपूर्ण जीवन को मेहरुन्निसा जी ने अपने कथा-साहित्य में बड़ी सूक्ष्मता से उभारा है। नारी जाति के विविध प्रश्न, मुसीबतें, दुख, वेदना, घुटन, अकेलापन, कमज़ोरी, नारी का बलिदान, उसके बिखरे सपने, आकांक्षाएँ - सब की कहानी मेहरुन्निसा जी कहतीं हैं। उनके हर उपन्यास में नारी चेतना उभरकर आती है। नारी को उन्होंने परिवार के एक सदस्य के रूप में उकेरा है।

मेहरुनिस्सा परवेज़ के साहित्य की विशेषता यह रही है कि वह सचेत रूप से किए गए एक प्रयास का फल है और सप्रयोजन लिखा गया सामाजिक साहित्य हैं। वह अपने साहित्य लेखन के संदर्भ में कहती है कि "छोटे-छोटे सुख को जी लेना, छोटे छोटे दुख में रो लेना और फिर धुले हुए चेहरे लेकर नयी सुबह को आंख खोलना ही शायद जिंदगी है। मुझे तो कभी वक्तव्य देना नही आया। मेरी कहानियाँ यदि अपना परिचय खुद न दे पायी तो संझुंगी मैंने जो जिया जो पाया सब झूठ के सिवा कुछ भी नहीं।" इनकी साहित्यिक रचनाएँ आदिवासी समज के गरीबी एवं शोषण की समस्या पर बहुत सूक्ष्म ढंग से सामने लाने का कार्य करती है। इनकी रचनाओं में महिलाओं की दयनीय स्थिति, गरीबों के शोषण एवं सामाजिक अंधविश्वास की समस्या को सामने लाती हैं। शोषित जातियाँ एवं सामाजिक समस्याओं के हर परत को अपनी कहानियों में वह उभार कर रख देती हैं। मेहरुन्निसा परवेज़ की रचनाओं का केन्द्रीय विषय आदिवासी जीवन की समस्याएँ, सामान्य जनजीवन के अभाव और नारी-जीवन की दयनीयता, शोषण का चित्रण है। मेहरुनिस्सा परवेज़ के द्वारा नारी-जीवन पर केन्द्रित रचनाएँ पाठकों को केवल अध्ययन ही नहीं बल्कि एक नई और स्त्री जीवन के अभिव्यक्त यथार्थ के अनुभव से परिचित होने का अवसर प्रदान करती हैं। मेहरुन्निसा अपने लेखन में वैचारिक रूप से किसी दल या विचारधारा के प्रभावजनित प्रश्नों के बजाए नागरिक परिदृश्य के राग-विराग, दुख-दुविधा, इच्छा-अभिलाषा को उकेरना ही उनका मूल उद्देश्य है। मेहरुन्निसा की वैचारिकता किसी सन्दर्भ-ग्रन्थ और बौद्धिक अफवाहों से नहीं, नागरिक परिदृश के अनुभव से पुष्ट होती नजर आती है। मेहरुन्निसा के कथा

संसार उनके अपने आंखिन देखिन अनुभव की मिट्टी से तैयार हुआ है, यहीं का बीज है, इसलिए उसे हवा-पानी ऊर्वरक भी यहीं का चाहिए और कथा लेखिका ने इसमें कसर नहीं छोड़ी।

आधुनिक युग में स्त्री के जीवन में दुःख, नैराश्य, संत्रास, त्रासदी, कुंठा के अलावा और कुछ नहीं रहा। फलस्वरूप दांपत्य जीवन में भी दरार उत्पन्न होने लगे। दांपत्य जीवन पारिवारिक जीवन का मूलाधार है। पति-पत्नी का पारस्परिक प्रेम ही दांपत्य जीवन में आनंद और खुशियां बिखेरता है। मेहरुनिस्सा परवेज़ के उपन्यास 'अकेला पलाश' की नायिका 'तहमीना' मुस्लिम समाज की अनमेल विवाह की शिकार बनी एक प्रमुख नारी पात्र है। वह पढ़ी-लिखी है, अफसर है। फिर भी वह मुस्लिम परिवेश में पली एक नारी पात्र है। मुस्लिम समाज में जितनी अधिक बंदिशे महिला पर लगायी जाती है, संभवतः किसी अन्य समाज में नहीं है। बचपन से ही लड़की के दिमाग में मजहबपरस्ती, शौहरपरस्ती की बातें इस कदर ठूंसी जाती है कि नारी को उसे मानकर चलने के अलावा विरोध करने की भावना ही उत्पन्न नहीं होती है। इस समाज में अशिक्षा, गरीबी, दहेज प्रथा के कारण तहमीना का विवाह भी उसकी माँ कम उम्र में ही वृद्ध व्यक्ति से कर देती है। यह व्यक्ति तहमीना के पिता का दोस्त है। भारतीय समाज में विवाह सोलह संस्कारों में से एक था दांपत्य में आबद्ध होने की प्रथा है। पति-पत्नी एक दूसरे का साथ जीवन भी निभाना विवाह जीवन तथा सामाजिक व्यवस्था के लिए आवश्यक है। मनुष्य की सद्गति और दुर्गति दोनों का सहज कारण भी है। पद्मश्री मेहरुन्निसा परवेज अपने कथा साहित्य में समाज के विभिन्न वर्गों के पुरुषों की नकारात्मक और सकारात्मक दोनों पहलुओं पर प्रकाश डालकर नारी के विभिन्न दशाओं का वर्णन करने में सफल हुई है। आधुनिक युग में नारी जितनी पढ़ी-लिखी क्यों न हो, संस्कारवान क्यों न हो, विवेकी क्यों न हो, परिवार के दायित्व निभाने वाली क्यों न हो, वह अबला से सबला बनने के प्रयत्न में इस समाज से सकारात्मक दृष्टि से संघर्ष करने की और भी आवश्यकता है।

उनकी नौ कहानियों का संकलन 'अम्मा' और छह कहानियों का संकलन 'समर' इसी भावधारा की कृती है। जनसामान्य के जीवन-यापन की विडम्बनाओं, नारी जाति की सामाजिक स्थिति, बढ़ती उम्र के साथ परिवेश में उनका सिमटता हुआ दायरा, नारी मनोवेगों के महीन सूत्र, अस्मिता-पहचान-मान्यता-सम्मान की अनभिज्ञता, पारिवारिक निर्णयों में स्त्रियों की नगण्य भूमिका, नगण्यता को ही अपना महत्त्व स्वीकार लेने की सहज स्त्री-धारणा, जीवन और पारिवारिक मूल्यों को संरक्षित रखने का नारी-धर्म, स्त्री-मनोबल को उन्नत करने के नुस्खे, मानवीय मनोवेग में जनमते-पनपते फलते-फूलते पे्रम के परिदृश्य, दिशाहारा और सर्वहारा जनता के रोजाना के जीवन, सब के सब उनकी कहानियों में सूक्ष्मता से चित्रित हुए हैं। स्त्री पक्षधरता और स्त्रियों के सामाजिक दैन्य के प्रति विरोध-भाव मेहरुन्निसा के लेखन का मुख्य स्वभाव अवश्य है, पर वे नाक में घुसी मक्खी की हत्या करने के लिए अपना सिर भट्ठी में नहीं डालतीं; नाक सुड़ककर मक्खी को निकालती हैं। यह प्रचलित लोकोक्ति 'अम्मा' कहानी पढ़ते समय सोलह आने सच लगने लगती है। भावक एकर्दम से उद्वेलित हो उठते हैं। पारिभाषिक शब्दों के वजन पर शब्द-प्रयोग और प्रसंग-चित्र उनके यहाँ महज औपचारिकता नहीं लगते' चिन्तन-मन्थन की दीर्घ शृंखला का द्वार खोलते हैं।

स्वतंत्रता के उपरांत महिला कथाकारों ने बड़ी संख्या में उपन्यास तथा कहानियाँ लिखकर नारी चेतना का डंका बजाया है। मेहरुन्निसा जी उनमें से ऐसी प्रमुख व्यक्तित्व हैं जिनका कथा-साहित्य नारी चेतना की अभिव्यक्ति की दृष्टि से अद्‌भुत है। कोमलता, करुणा और ममता नारी-हृदय की विशेषता होती है और ये विशेषताएँ कहानियों में प्रायः सभी नारी-चरित्रों में विद्यमान हैं। 'समर' शीर्षक कहानी संग्रह की 'जगार' कहानी की नायिका गोमती नारी सुलभ कोमलता की दृष्टि से प्रभावशाली चरित्र है। उसकी यह कोमलता सास-ससुर तथा धन के जैसे आसक्त पति से व्यवहार करने में झलकती है। 'सूखी बयड़ी' एक ग़रीब कृषि मजदूर नीमड़ा की आर्थिक विपन्नता की कहानी है जिसे अपनी बेटियों के ब्याह के लिए कर्ज़ लेने पर ज़मानत के रूप में अपने बेटे टेसुआ को सेठ दागीलाल के पास रखना पड़ता है। सेठ नीमड़ा के बेटे से तमाम अनैतिक काम कराता है और अपनी तिजोरी भरता है। अंततः जब सेठ की बेटी और नीमड़ा में प्यार हो जाता है तब सेठ नीमड़ा को उसके बाप को सौंप देता है और मुंशी कहता है, 'सेठ जी, छोटे जानवर हाँका में रखकर बड़े जानवर फँसे तो कोण नुकसान। फायदा-ही-फायदा।" इस प्रकार से अपनी कहानियों में मानव-चरित्र के हर पहलू को लेखिका ने विभिन्न चरित्रों के माध्यम से उभारा है। उनका कहानी साहित्य एक दर्जन से अधिक कहानी संग्रहों में संगृहित है जो विविधता से युक्त भी है। अपने उपन्यासों और कहानियों में उनकी दृष्टि शोषण पर रही है और नारी की मुक्ति का प्रयास सर्वत्र परिलक्षित होता है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि मेहरुन्निसा जी के उपन्यास और कहानियों में उनकी दृष्टि नारी के बहुविध शोषण पर ही रही है।

मेहरुन्निसा की कहानियों के सारे गुणसूत्र मूलतः दुख-दैन्य के बीच हाहाकार करती जनता, अपने ही घर में लगातार सिमटती-सिकुड़ती स्त्री, आदिवासी जन की असहाय स्थिति से उपजते हैं। विषय और भाषा दोनों स्तरों पर उनकी कहानियाँ जनपद के चूल्हे, चौके, दालान, चौपाल, खेत-खलिहाल, नदी-नाले, तालाब, कुआँ, पनबट-पनघट पर तैरती रहती हैं। शायद यही कारण है कि स्थानीय लोकाचारों के अनुगुम्फन, जीवन्त मुहावरे, प्रचलित लोकोक्तियाँ, स्थानीय मान्यताएँ, क्षेत्रीय लोक-संस्कृति, सब के आश्रय से ये कहानियाँ पाठकों को विह्वल करने में सक्षम होती हैं। कई बार तो ये कहानियाँ पाठकों के स्वत्व में इस तरह आत्मसात हो जातीं कि उन्हें सुबक-सुबककर रोने को मजबूर हो जाना पड़ता है।

मेहरुन्निसा परवेज ने अपने उपन्यासों में नैतिक मूल्यों में आए अभाव का चित्रण किया है। आधुनिक युग में प्रेम, पवित्रता और कर्तव्य-अधिकारों के मूल्य में जहाँ परिवर्तन हुआ वहीं लोगों में राग-द्वेष उत्पन्न हो गया है। उपन्यास 'आँखों की दहलीज' में स्त्री अपने दोषी मानने के कारण निराश एवं हताश हो जीवन को समाप्त करने में लगी हुई है। 'कोरजा' उपन्यास में जीवन अभिशाप बन जाता है। नैतिक आधरों का महत्त्व अर्थहीन लगने लगता है। जीवन के मायने ही बदल गए है। लेखिका वैवाहिक जीवन में आई रिश्तों की नीरसता दिखाया है वही पति-पत्नी एक दूसरे के प्रति समर्पण भावना न रखते हुए किसी तीसरे के प्रति अपने भाव को अभिव्यक्त करते हुए दिखाई पड़ते हैं। जिससे जीवन कठिनाई भरा को जाता है। 'अकेला पलाश' और

'उसका घर' में इन्हीं मूल्यों में गिरावट को लेखिका ने दिखाने का प्रयास किया है। नारी के मन में जहाँ प्रेम, पवित्रता और करुणा आदि मूल्यों में बदलाव नहीं था वही अब क्रोध, अपवित्रता, आक्रोश एवं द्वंद्व ने ले लिया है। अपनी संवेदनाओं और वैचारिक समझ और निजी व सामाजिक अनुभवों को दूसरों तक अधिकाधिक मार्मिक एवं उसे सक्षम रूप से पाठक समाज तक पहुंचाने का प्रयास ही उनके साहित्य सृजन का मूलाधार है। उनके व्यक्तित्व और कृतीत्व के बीच का अंतर मेहरुन्निसा परवेज के यहां बेहद धागे भर का अंतर है। उनकी निजी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति अनेक साहित्यिक निर्मितियों का साहित्यिक पुंज है।

मेहरुन्निसा परवेज का लेखन जीवन की समग्रता का प्रस्तुतिकरण सामने आता है। सामाजिक व्यवस्था की अभिलाषा और यातना से मुक्ति पाने की छटपटाहट ही उनके साहित्य लेखन के आधार के रूप में दिखलाई पड़ता है। मेहरुन्निसा परवेज ने अपने व्यापक अनुभव को ही अपनी रचनाओं का आधार बनाया है। उनकी रचनाओं में एक पुरुष दो नारियों अथवा एक नारी दो पुरुष के त्रिकोण बार घूमते हुए आते रहते है। इन दुहराव से ऐसा प्रतीत होता है कि मेहरुन्निसा के मन में कोई ग्रंथि तो उत्पन्न तो नहीं हो रही है "या की इस समस्या के बिना कोई कथा रची है नहीं जा सकती या कि यह किसी मानसिक बीमारी का संकेत है? अगर ऐसा है तो यह बहुत चिंता की बात है।"

मेहरुन्निसा के साहित्य में नारी को भोग्या समझने की प्रवृत्ति, अस्तित्व एवं आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करती मध्यवर्गीय नारी, नारी के प्रति बढ़ती हिंसा, बदलते स्त्री पुरुष संबंध, प्रेम के प्रति नवीन दृष्टिकोण, सामाजिक मूल्यों में आए बिखराव, अर्थ केंद्रित समाज की स्थापना, आर्थिक विपन्नता का परिणाम और धार्मिक सहिष्णुता आदि को रचनात्मक रूप से चित्रित किया है। उन्होंने बस्तर क्षेत्र के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक परिवेश को भी अपने साहित्य में बांधा है। अपने लेखों में उन्होंने इसी विषयों को आधार बनाया है। संस्मरणों में उन्होंने अपने बचपन की कुछ घटनाओं को मार्मिकता प्रस्तुत किया है।

समाज की संपूर्णता में पुरुष और स्त्री है। समाज के साथ सामाजिक परिवेश बदलता है। मेहरुन्निसा परवेज ने अपने कथा साहित्य में नारी जीवन में आए अनेक पड़ाव को, जीवन के यथार्थ अनुभव से जोड़कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। अपने कथा साहित्य में उन्होंने निम्न वर्ग, निम्न मध्य वर्ग और मध्य वर्ग के नारी पात्रों का चयन किया है। स्त्री शोषण के बदलते स्वरूप के बीच उसके समाजिक परिवेश का अध्ययन, स्त्री संबंधी उत्पन्न नई समस्याओं, उसके विभिन्न परम्परागत रूप, नयी पीढ़ी की बदलती हुई आकांक्षाओं के अनुरूप स्त्री का संघर्षरत स्वरूप, उसके आक्रोश और अधिकारों के प्रति सजगता को उन्होंने साहित्यिक स्वर प्रदान किया है। मेहरुन्निसा परवेज ने इस बात इंकार नहीं किया है कि शिक्षा के प्रसार के बाद भी अनमोल विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, विधवा समस्या, नारी शोषण आदि से नारी मुक्त नहीं हो पाई है। समाज में व्याप्त स्त्री संबंधी अनाचारों का दस्तावेजीकरण कथाकार मेहरुन्निसा ने बड़ी ही शिद्दत के साथ किया है।

हिन्दी कथा साहित्य में नई स्फूर्ति और नई कथा चेतना के साथ पाठक वर्ग में चेतना जागृत करने वाली कथाकार के रूप में मेहरुनिस्सा परवेज़ के औपन्यासिक स्त्री पात्र, स्त्री शक्ति,

प्रतिबद्धता, संघर्ष और प्रतिकार का ज्वलंत उदाहरण है। उनके उपन्यासों की स्त्रियाँ विद्रोह का बिगुल बजाती है, परिवर्तन के लिए तत्पर तथा अपनी अस्मिता को बचाए रखने के लिए निरंतर प्रयत्नशील है। मानवीय संपृक्तता, संवेदनात्मक संबद्धता तथा सहज भावप्रणवता उनके अस्तित्व का प्राण है। मेहरुनिस्सा परवेज़ के प्रायः सभी औपन्यासिक स्त्री चरित्र रूढ़ियों के बंद दरवाजे खोलकर स्वच्छ हवा एवं प्रकाश को सँजोया तथा उन्मुक्त आकाश को अपने दमन में समेटने का प्रयास किया। फिर चाहे वह कोरजा की कम्मों हो या अकेला पलाश की टहमीना या फिर समरागण की पृथा देवी हो या पासंग की कनी हो। इनकी स्त्रियाँ पिछड़े हुए ग्रामीण वातावरण से होने के बावजूद जीवन के अवरोधों का डटकर सामना ही नहीं करती, वरन जीवन के विपरीत परिस्थितियों से निरंतर संघर्ष करते हुए विजय भी हासिल करती हैं। कहना न होगा कि स्त्री सशक्तिकरण के प्रश्न को संवेदनात्मक गहराई से सम्बद्ध करना ही मेहरुनिस्सा परवेज़ की विशिष्टता है। उनके साहित्य की विशेषता यह है कि वे आरोप-प्रत्यारोप नहीं करती है। एक ओर जहाँ वह पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलने की बात करती है, वहीं दूसरी ओर उनकी नायिकाएँ अपने परिवार के लिए हर तरह का समायोजन करने के लिए तैयार रहती है। नारी को अपनी स्वतंत्रता के लिए सभी सीमाओं को लाने का अधिकार है, जैसे विचारों को एक अलग तरीके से देखती हैं। स्त्री का मन गहरे समुद्र की भांति है जिसकी गहराई का किसी को अनुमान नहीं है। मेहरुन्निसा जी के समग्र कथा-साहित्य भाषा और शैली के प्रयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। विविधता भाषा और शैली का प्रमुख गुण है। उनके कथा-साहित्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उनकी रचनाएँ समाज को उसमें रहने वालों की पीड़ा, संघर्ष से रूबरू कराती हैं। सशक्त क़लम की तथा बहुआयामी प्रतिभा की धनी मेहरुन्निसा परवेज़ जी की प्रतिभा दिन-ब-दिन और अधिक निखरते रहने की कामना है।

समय के साथ क़दम मिलाकर चलना ही एक व्यक्तित्वशाली रचनाकार का पहला चरण होता है। वह शब्दों का कम से कम उपयोग करके ज़्यादा से ज़्यादा कहने की कोशिश में शब्दों का मूल्य बढ़ाता है या नहीं, यह मुख्य है। मेहरुन्निसा परवेज़ जी की रचनाएँ इससे अछूती नहीं है। जीवन जगत में न जाने कितने तरह के जीवन और समाज पद्धतियाँ देखने को मिलती हैं। लेखक समाज के वर्तमान स्वरूप की स्थितियों के लिए उन्हीं सारी स्थितियों को मानता है जिनको हम जानते हैं और अपने ढंग से उन्हें पहचानने का प्रयत्न करते हैं। मेहरुन्निसा जी भी अपने ढंग से ही चीज़ों को देखतीं हैं, पर उनका देखना इतने अलग ढंग का होता है कि उसके सामने हमारे सोचने का तरीक़ा एकदम भिन्न लगता है। सामान्य से सामान्य व्यवहार भी समाज के एक मूल्य की रचना करता है। मूल्यों से परिचालित आदर्श, समाजिक उन्नति का कारण बनता है, मनुष्य की गरिमा का विस्तार करता है और इसे ही कथाकार ने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्पष्ट किया है। इनकी कृतीयाँ अनुभूति के आधार पर रची गई हैं। अपनी रचनाओं में मेहरुन्निसा जी ने जीवन की तकलीफ़ों और विवशताओं का मार्मिक चित्रण किया है। उनकी रचनाएँ सामाजिक समस्याओं को दूर करके एक समरसता स्थापित करने का संदेश देती हैं।

बोध प्रश्न

- मेहरुन्निसा परवेज की कहानियों में कौन सी चेतना अभिव्यक्त हुई है?
- महिला कथाकारों में मेहरुन्निसा परवेज को बतौर कथाकार जो पहचान है, उसके बारे में बताइए।

15.4 पाठ सार

मेहरुनिस्सा परवेज़ के जीवन और उनके साहित्य से परिचित होने के बाद हम कह सकते है कि मेहरुनिस्सा परवेज़ ने अपनी व्यक्तिगत जीवन में जो अनुभव प्राप्त किए उनको अपनी रचनाओं में ढालकर उनका समाजीकरण किया हैं। इसलिए तो उनकी प्रत्येक कहानी मानव जीवन में होनेवाले दर्द की अभिव्यक्ति है। उनकी कहानियों में कहीं भी झूठापन या नाटकीयता की उपस्थिति नहीं है। कहानी का विषय भारतीय नारी की मानसिक और भौतिक समस्याएँ है जो समय के बदलने के साठा उर तीव्र होती जा रही है। इसका अहसास परिवार, समाज, संस्कृति, नैतिकता और कानून सभी स्थानों पर देखने को मिल जाता है। स्त्री के ऊपर दोहरी मार पड़ती है और गुलामी की हदों तक उसके ऊपर मर्यादाओं और जिम्मेदारियों का बोझ दाल दिया जाता हैं। समाज में स्त्री को लेकर होनेवाले बहुविध शोषण को अपनी रचनाओं में मुखरता के साथ मेहरुनिस्सा परवेज़ ने दर्ज किया है। समस्याओं भरी जिंदगी के बीच स्त्री मन की मुक्ति की आकांक्षा की छटपटाहट मेहरुनिस्सा परवेज़ की रचनाओं का संसार हैं।

मेहरुनिस्सा परवेज़ के रचनाओं में केंद्र नारी और उसके सुख दुख के साथ समाज का वह पीड़ित तबका भी मौजूद है जो साहित्य की बड़ी दुनिया से ओझल रहा हैं। विषय के स्तर पर उनकी रचनाएँ विविध प्रश्नों को उसकी सजीवता, यथार्थ, परिवेश चित्रण तथा सुगम, सुबोध, भाव व पात्रानुकूल भाषा शैली के साथ अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त करती हैं। महरुनिस्सा परवेज अपने लेखन में एक अदम्य साहस का परिचय दिया है। अपने जीवन, परिवार और समाज में परिवर्तन लाने के साथ ही वे सदियों से उपेक्षित, सड़े-गले रीति-रिवाजों और मर्यादाओं के थोथे आवरण में जकड़ी, छटपटाती नारी की मुक्ति और उसे स्वतंत्र अस्मिता की पहचान कराने के लिए प्रयत्नशील हैं।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. मेहरुनिस्सा परवेज़ ने अपने साहित्य में अनुभूत यथार्थ का चित्रण किया है।
2. उनके साहित्य में स्त्री, आदिवासी जीवन का प्रामाणिक चित्रण मिलता है।
3. उन्होंने अपने कथा साहित्य के माध्यम से स्त्री, अल्पसंख्यक और आदिवासी समुदायों के निष्कलंक जीवन की सभ्यता, संस्कृति और रहन-सहन से व्यापक समाज को परिचित कराया है।
4. उनकी रचनाओं में शहरीकरण और बाजारीकरण के कारण मानसिक और शारीरिक शोषण से ग्रस्त समूहों की जीवन स्थितियाँ प्रतिबिंबित हुई हैं।

15.6 शब्द संपदा

1. अलंकृत = अलंकारों से युक्त
2. आडंबर = दिखावा
3. कट्टरपन = अपने मत या संप्रदाय की बात लेकर अड़े रहने की प्रवृत्ति
4. कथेत्तर = साहित्य की वह शाखा वास्तविकता पर ही आधारित होते
5. कुरीतियों = समाज या व्यक्ति को हानि पहुँचाने वाली अनुचित रीति
6. ठप = रुक जाना
7. तालिम = पढ़ना लिखना सीखने या सिखाने का कार्य या कार्य प्रणाली
8. बहूमूखी = अनेक विषयों में पारंगत
9. साठोतरी = सन उन्नीस सौ साठ के बाद का दौर
10. सामंतवादी = वह वाद या सिद्धांत जिसमें सामंतों पूरे अधिकार होते हैं
11. सुसंस्कृत = संस्कृति के अनुरूप

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ)दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मेहरुनिस्सा परवेज़ की लेखन यात्रा पर प्रकाश डालिए।
2. मेहरुनिस्सा परवेज़ अपने समकालीन महिला कथाकारों से किस मायने में अलग हैं? स्पष्ट कीजिए।
3. मेहरुन्निसा परवेज ने अपने उपन्यासों में बदलते मूल्यों का यथार्थवादी वर्णन किया है। क्या इस कथन से आप सहमत हैं?
4. 'मेहरुन्निसा परवेज ने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्त्री जीवन के अनेक पड़ावों को सशक्त रूप से दर्शाया है।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।

खंड (ब)

(आ)लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मेहरुनिस्सा परवेज़ के पारिवारिक जीवन की चर्चा कीजिए।
2. मेहरुनिस्सा परवेज़ की शैक्षणिक पृष्ठभूमि के बारे में बताइए।
3. मेहरुनिस्सा परवेज़ की रचना यात्रा का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मेहरुन्निसा परवेज किस राजनीतिक पार्टी की जिला अध्यक्ष रही? ( )
   (अ) काँग्रेस (आ) भाजपा (इ) जायस (ई) बसपा
2. सन 1995 में मेहरुन्निसा परवेज की कितनी रचनाओं को आधार बनाकर दूरदर्शन ने धारावाहिक प्रस्तुत किए? ( )
   (अ) दो (आ) चार (इ) छः (ई) एक
3. मेहरुन्निसा परवेज समाज कल्याण परिषद मध्यप्रदेश की सदस्य कब नियुक्त हुई थी? ( )
   (अ) 1977 (आ) 1978 (इ) 1979 (ई) 1980
4. बाल और परिवार कल्याण परियोजना, बस्तर की अध्यक्ष वह कब बनी? ( )
   (अ) 1972 (आ) 1973 (इ) 1974 (ई) 1975

II. रिक्त स्थान की पूर्ति करें

1. वीरांगना रानी अवंतीबाई पर धारावाहिक का निर्माण ..... में हुआ था।
2. मेहरुन्निसा परवेज ने वेश्यावृति पर आधारित धारावाहिक ..... का निर्माण सन 1997 में किया था।
3. सन 1982-83 में उनके उपन्यास उसका घर और आंखों की देहलीज .....भाषा में अनूदित होकर आई थी।

III. सुमेल कीजिए

1. फाल्गुनी	अ) 1982
2. गलत पुरुष	आ) 1972
3. कोरजा	इ) 1977
4. अन्तिम पढ़ाई	ई) 1978

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. मेहरुन्निसा परवेज का कथा साहित्य : डॉ. मनोहर नलावडे
2. आठवें दशक की लेखिकाओं के उपन्यासों में व्यक्त स्त्री चरित्र : डॉ. सविता किर्ते
3. मुस्लिम कथाकारों का हिन्दी को योगदान : डॉ. नीलम शर्मा

इकाई 16 : 'पत्थर वाली गली' : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 मूल पाठ : 'पत्थर वाली गली' : तात्विक विवेचन

16.3.1 कथानक

16.3.2 चरित्र-चित्रण

16.3.3 कथोपकथन/संवाद

16.3.4 देशकाल/वातावरण

16.3.5 भाषा-शैली

16.3.6 उद्देश्य

16.3.7 शीर्षक की सार्थकता

16.4 पाठ सार

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

16.6 शब्द सम्पदा

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य की आरंभिक कहानियाँ मनोरंजन प्रधान होती थीं। किन्तु बाद में ये कहानियाँ मनोरंजन के साथ-साथ उद्देश्य प्रधान भी होने लगीं। इस बात की पुष्टि प्रेमचंद के निबंध 'साहित्य का उद्देश्य' से परिलक्षित होती है। वास्तविकता भी यही है क्योंकि साहित्य समाज का दर्पण है और साहित्यकार समाज में घटित होने वाली घटनाओं को अपनी लेखनी के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है और यही प्रस्तुतीकरण जब पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हो जाता है तब वह साहित्यकार का व्यकतिगत न होकर सार्वजनीन हो जाता है। भारतीय जनसंख्या में अल्पसंख्यक समाज संख्या के आधार पर दूसरे स्थान पर है। इस समाज में पिछड़ापन, बेरोज़गारी, गरीबी, अशिक्षा आदि समस्याएँ विकराल रूप में धारण किए हुए है। प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने भारतीय मुस्लिम समाज की आर्थिक दशा का वर्णन अत्यंत मार्मिक रूप में किया है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि जब कोई रचनाकार लेखन करता है

तब वह केवल उस रचनाकार तक ही सीमित नहीं होता बल्कि वह समाज के प्रत्येक व्यक्ति के लिए हो जाता है। यहाँ भी यही बात लागू करते हुए हम देख सकते हैं कि रचनाकार ने जिस मुस्लिम समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं का चित्रण किया है वह इस समाज का कटु यथार्थ है। यह कहानी केवल ज़ेबा या उससे जुड़े पात्रों की न होकर अपितु पूरे मुस्लिम समाज की स्थिति को दर्शाती है।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत हम मेहरुन्निसा परवेज़ की 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी-

- 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी की तात्विक विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- मेहरुन्निसा परवेज़ की भाषा-शैली की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- विवेच्य कहानी में व्यक्त सामाजिक और आर्थिक परिस्थिति से अवगत हो सकेंगे।
- विवेच्य कहानी के उद्देश्य को आत्मसात कर सकेंगे।
- विवेचय कहानी के शीर्षक के औचित्य को समझ सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : 'पत्थर वाली गली' : तात्विक विवेचन

मेहरुन्निसा परवेज़ की 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी मुस्लिम समाज और जीवन की अनेक समस्याओं को विवेचित एवं विश्लेषित करती है। पूरी कहानी मुख्य पात्र ज़ेबा के इर्द-गिर्द घूमती है। इस कहानी में एक कम उम्र की बच्ची की मनोदशा और लालन-पालन का उल्लेख किया गया है। साथ ही साथ प्रस्तुत कहानी में गरीबी, शोषण, नशाखोरी, तस्करी, भ्रष्टाचार, इत्यादि समस्याओं को भी देखा जा सकता है।

कहानी के तत्वों के आधार पर कहानी के मूलतः छः तत्व होते हैं। इन्हीं आधार पर हम कहानी का विवेचन-विशेलेषण करते हैं। ये तत्व इस प्रकार हैं- कथानक/विषयवस्तु, पात्रों का चरित्र-चित्रण, कथोपकथन/संवाद, देशकाल या वातावरण, भाषा शैली और उद्देश्य। इन्हीं तत्वों को लेकर कहानी के माध्यम से यहाँ चर्चा करेंगे....

16.3.1 कथानक

किसी भी कहानी की सफलता का मुख्य आधार पाठक-वर्ग है। कहानी पाठक के मर्म को कितना स्पर्श करती है यह बात कहानी के तत्वों की कसौटी पर परखी जाती है। इस सिलसिले में मेहरून्निसा परवेज की कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। उनकी कहानियों में एक अनोखा जादू दृष्टिगोचर होता है। इनकी कहानियों को पढ़ते समय पाठक का मस्तिष्क चुंबकीय शक्ति के जैसे खींचा चला आता है। मुस्लिम समाज की अनेक समस्याएँ इनकी कहानियों का केंद्र-बिंदु है।

इन्हीं सब कहानियों में मेहरुन्निसा परवेज की 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी भी अति महत्वपूर्ण है। इस कहानी में कहानीकार ने मुस्लिम समाज और जीवन की अनेक विडम्बनाओं का यथार्थ चित्रण किया है। यथा- गरीबी, शोषण, तस्करी, नशाखोरी एवं बलात्कार। साथ ही साथ शहरी और ग्रामीण जीवन को भी कहानी में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यह कहानी ज़ेबा, शाइस्ता, खाला, दादा और अब्बा पर केंद्रित है। कहानी इस प्रकार है-

ज़ेबा और खाला दोनों मिलकर चूड़ियाँ पहनाने का काम करती हैं। ज़ेबा के पिता एक जुआरी और शराबी थे। दादा रिटायर मिलिट्री वाले हैं और खाला अविवाहित है। ज़ेबा और खाला दुकान में चूड़ियाँ पहनाने का काम और घर का भी काम करती हैं। पिता जुआरी, शराबी और अफीम की तस्करी का धंधा करते रहते हैं। वह अक्सर कहीं न कहीं भागे हुए फिरते रहते हैं। एक दिन का किस्सा यह है कि ज़ेबा के पिता अपने दोस्त को घर में लेकर आते हैं। अम्मा उनके दोस्त की मेहमाननवाज़ी करती है। फिर पिताजी कहते हैं कि मेरी हर चीज में मेरे दोस्त तुम्हारा भी अधिकार है, धंधा हो या बीवी। इसी संदर्भ में एक वाक्यांश प्रस्तुत कहानी का देखा जा सकता है- "मेरी हर चीज में तुम्हारा हिस्सा है। यहां तक की मेरी बीवी में भी। हम मिल बांट लेंगे, जब मैं बाहर रहूँ तो तुम यहां रहो, जब तुम बाहर रहो तो मैं इसके साथ रहूंगा।" ज़ेबा के अब्बा तस्करी का धंधा करते वक्त पकड़े जाते हैं और उन्हें जेल की लंबी सजा काटनी पड़ती है। ज़ेबा के अब्बा के पकड़े जाने के पश्चात उनका दोस्त घर पर प्रतिदिन आता रहता था और अम्मा के साथ उसका अवैध संबंध बना रहता था। एक दिन अम्मा को पता चलता है कि वह पेट से हो गई है और जेल से छूटने के बाद जब अब्बा को इस बात का पता चलता है तब वह शराब के नशे में होकर अम्मा को पीटते हैं। बीवी के अवैध सम्बन्ध के कारण अब्बा घर छोड़ कर चले जाते हैं। घर छोड़ने के बाद अब्बा अब तस्करी का धंधा छोड़कर किसी और काम को करना शुरू कर दिया था। उनके साथ एक स्त्री भी रहती थी जिससे उन्होंने विवाह कर लिया था। शराब के अधिक सेवन से अब्बा की मृत्यु हो जाती है और इधर अम्मा अब्बा के दोस्त के साथ घर छोड़कर चली जाती है।

ज़ेबा उस समय बहुत छोटी रहती है इसलिए इसका पालन-पोषण खाला करती है। एक दिन दादा जी समय पूछने के लिए ज़ेबा को दुकान में भेजते हैं। जब ज़ेबा वहाँ जाती है तब दुकान वाला अंदर से कहता है कि अंदर आकर समय देख लो और वह अंदर बुलाकर ज़ेबा को जबरदस्ती पकड़ लेता है और ज़ेबा का बलात्कार करने का प्रयास करता है। परंतु ज़ेबा चीखती-चिल्लाती और छटपटाती हुई उस दुकान से बाहर निकल जाती है। इस बात को ज़ेबा न खाला से और न ही दादा जी से कहती है। ज़ेबा अपनी इज़्ज़त को बचाते हुए वहाँ से निकल जाती है। इसी सन्दर्भ में कहानी का एक अंश देखा जा सकता है- "दुकानदार मौके की तलाश में था ही, उसने लपककर दरवाज़े की कुण्डी चढ़ा दी और उसे पकड़ लिया। उसने भयभीत होकर

दुकानदार को देखा और घबराई-सी छटपटाती दौड़ने लगी। छीना-छपटी में उसकी सारी चूड़ियाँ भी टूट गई। आखिर वह दरवाज़े की कुण्डी खोलने में सफल हो गई और भाग खड़ी हुई।" इस प्रकार देखा जा सकता है कि 'पत्थर वाली गली' कहानी में एक कच्ची उम्र की लड़की के साथ यौन शोषण करने का प्रयास किया गया है। कहानी में एक बच्ची अकेले अपना जीवन व्यतीत करती है और पत्थर वाली गली उसके लिए हमेशा के लिए पत्थर सी हो गई है। न जाने ज़ेबा जैसी कच्ची उम्र की गरीब लड़कियाँ, समाज में व्याप्त इन जैसे भेड़ियों की शिकार कब तक होती रहेंगी। यहाँ स्त्री के बारे में उस दृष्टिकोण को निरूपित किया गया है जिसके अनुसार वह केवल भोग की वस्तु है।

इसके अतिरिक्त कहानी में और भी समस्याओं को दिखाया गया है। कहानी में ज़ेबा की दोस्त शाइस्ता के पिता की दरगाह में सीढ़ी के नीचे एक छोटी सी इलायचीदाने और चढ़ावे के चादर की दुकान रहती है। शाइस्ता इस दुकान की देखभाल करती थी परन्तु उसको ये नहीं मालूम पड़ पाता कि उसके पिता धोखाधड़ी का काम करते हैं। क्योंकि शाइस्ता पाँच साल की थी तो तभी से पिता के साथ काम करते-करते माहिर हो गयी थी। इसी सन्दर्भ में प्रस्तुत कहानी के अंश को देखा सकते हैं- "जब शाइस्ता पाँच साल की थी, तब से ही उसके अब्बा ने उसे इस काम में लगा दिया था।" यहाँ यह भी देखा जा सकता है कि शाइस्ता के पिता कितनी सफाई के साथ दरगाह में चढ़ाए गए चादरों और इलायची दाने को फिर से अपनी दुकान में लेते हैं और फिर उसे नये सिरे से बेच देते हैं। क्योंकि दरगाह वालों और शाइस्ता के पिता का आधा-आधा शेयर होता था। यह काम बहुत सफाई के साथ होता था और यदि कोई जान भी जाये तो अपनी ज़बान बंद रखता था।

बोध प्रश्न

- 'पत्थर वाली गली' कहानी में चित्रित किसी एक समस्या के बारे में बताइए।

16.3.2 पात्रों का चरित्र-चित्रण

कहानी की सफलता वास्तव में कहानीकार के चरित्र-चित्रण की क्षमता पर ही आधारित है। कहानी में अनेक पात्रों के माध्यम से लेखिका ने अपनी बात को प्रस्तुत किया है। कहानी का जो मूल आधार होता है वह मनोविज्ञान है और उस मनोविज्ञान का मूल केंद्र चरित्र होता है। यहाँ पर कहानी के मुख्य पात्रों के चरित्र का चित्रण किया जायेगा-

ज़ेबा

इस कहानी की मुख्य पात्र है। वह निडर, स्वावलंबी, लोभरहित और बुद्धिमान है। सम्पूर्ण कहानी में ज़ेबा की ही उपस्थिति प्रमुख है। एक कम उम्र की छोटी बच्ची है। एक गरीब परिवार में खाला और दादा के साथ रहती है। वह खाला के साथ चूड़ियाँ पहनाने का काम करती है। माँ और पिता का साया इसके ऊपर नहीं पड़ा है। बचपन में ही पिता का देहान्त और

माँ उसके पिता के दोस्त के साथ घर छोड़कर चली जाती है। खाला की गैर-मौजूदगी में दुकान संभालने का कार्य ज़ेबा करती है। ग्राहकों को आसानी के साथ चूड़ियाँ पहनाती थी। ग्राहक के हाथ कितने कड़े हों या मुलायम वह बड़े आराम से हाथों को पेंचदार घुमा-घुमाकर पहनाती थी। एक दिन दादा के कहने पर पास की दुकान में जब वह समय पूछने गयी तो दुकानदार उसके साथ ज़बरदस्ती उसका शोषण करना चाहता था लेकिन वह वहां से भाग जाती है। इसी सन्दर्भ में एक अंश देख सकते हैं कि- "दुकानदार मौके की तलाश में था ही, उसने लपककर दरवाज़े की कुण्डी चढ़ा दी और उसे पकड़ लिया। उसने भयभीत होकर दुकानदार को देखा और घबराई –सी छटपटाती दौड़ने लगी। छीना-झपटी में उसकी साड़ी चूड़ियाँ भी टूट गईं। आखिर वह दरवाज़े की कुण्डी खोलने में सफल हो गयी और भाग खड़ी हुई।" इस कहानी में ज़ेबा के लिए पत्थर वाली गली पत्थर के समान लगने लगी थी।

शाइस्ता

'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी में ज़ेबा के समान दिखने वाली शाइस्ता भी अपने पिता की दुकान संभालती है। शाइस्ता ईमानदार और भोली-भाली कम उम्र की लड़की है। वह अब्बा की दुकान पर हो रहे हेर-फेर से अपरिचित है। पिता की दुकान पीर साहब की दरगाह के नीचे सीढ़ी पर थी। उस दुकान में इलायचीदाने और चढ़ाये जाने वाले चादर की दुकान थी। शाइस्ता जब पाँच साल की थी तभी उसके पिता उसको इस काम में लगा दिये थे। शाइस्ता अपने काम में माहिर हो गयी थी। शाइस्ता अपने कामों को पूरी ईमानदारी से करती है पर उसे उसके पिता द्वारा की जाने वाली बेईमानी की जानकारी नहीं थी।

खाला

प्रस्तुत कहानी में ज़ेबा की खाला का नाम अनार है। जिसके चरित्र में अपार ममता है। खाला की चूड़ी की दुकान है जहाँ पर वह चूड़ी बेचने और पहनाने का काम करती है। खाला उसी चूड़ी के माध्यम से घरेलू आवश्यकताओं का निर्वहन करती है। खाला अविवाहित है। वह ज़ेबा का ख्याल रखती है और अपनी बेटी समझती है। जिससे ज़ेबा को कभी ममता की कमी का एहसास नहीं होता।

दादा

दादा का वास्तविक नाम रियासत हुसैन है। इस कहानी के पुरुष पात्रों में सबसे अलग स्वभाव के दिखने वालों पात्रों में से एक हैं। जो अनुभवी, कर्तव्यपरायण एवं समय का पालन करने वाले एक रिटायर्ड आर्मी हैं। वह समय के अधिक पाबंद हैं और हर काम समय के अनुसार ही करते हैं। दादा चाहते थे कि ज़ेबा के अब्बा सब गलत काम छोड़कर अपने घर में रहें। परन्तु उनकी इच्छा के अनुसार कुछ भी न हो सका। घर में घड़ी न होने के कारण दादा जी बार-बार ज़ेबा को पास की दुकान में समय पूछने के लिए भेजते रहते थे।

शहरी औरत

इस कहानी में एक बाल विधवा, साँवली और चिकनी देहवाली औरत भी है। जब ज़ेबा के पिता जी घर छोड़कर चले जाते हैं तब वह इसी विधवा औरत के साथ रहने लगते हैं और वह अब्बा के साथ शारीरिक रूप से जुड़ी भी रहती है।

दीवान साहब की लड़की

इस कहानी में दीवान साहब अपने क्षेत्र के धनी व्यक्ति हैं जिनका उनके क्षेत्र में दबदबा है। उनकी लड़की का दिमागी संतुलन ठीक नहीं है। इसलिए उसके लिए दो नौकर हमेशा तैनात रहते हैं। जिसे वे स्कूल ले जाने और लाने का काम करते हैं। स्कूल में भी उसे पहले नंबर से पास करवा दिया जाता है। स्कूल में रहने का उसका मन जब करता है तब तक वह बैठी रहती वरना वापस घर लौट आती है। इसलिए कि वह अमीर बाप की संतान है।

बोध प्रश्न

- पत्थर वाली गली कहानी में मुख्य पात्रों ने नाम बताइए।
- ज़ेबा के कुछ चारित्रिक विशेषताओं के बारे में बताइए।

16.3.3 कथोपकथन/ संवाद

संवाद योजना के द्वारा ही कहानी में सजीवता एवं स्वाभाविकता का गुण उत्पन्न होता है। जिससे कहानी में नाटकीयता पाई जाती है और साथ ही साथ कथावस्तु का स्वाभाविक विकास भी होता है। संवाद के ही माध्यम से पात्रों के चरित्र का उद्घाटन होता है। यद्यपि प्रस्तुत कहानी वर्णनात्मक और मनोविश्लेषणात्मक है फिर भी कहानीकार ने इसमें बड़े सटीक संवादों की योजना की है। संवादों के माध्यम से उसने पात्रों के अंतर्द्वंद्व का सशक्त चित्रण किया है। संवादों के माध्यम से ही कहानी के पात्रों का चित्र उभरकर सामने आता है। ज़ेबा और दादा के बीच संक्षिप्त किन्तु सजीव संवादों का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

"दादा, अँधेरा होने को है, तुम कहाँ जा रहे हो?" उसने लपककर उन तक पहुँचते हुए पूछा।

"अरे ज़ेबा, तू कहाँ गई थी बेटी? बस, "ज़रा नुक्कड़ की दुकान में समय पूछने जा रहा था।"

"फिर वहीं..." वह चौंकी, "तुम्हे मालूम है न, वह पच्चिसियों मर्तबा तुम्हे कुत्ते-सा दुत्कार चुका है, फिर वहीं टाइम पूछने जा रहे हो।"

"क्या करूँ बेटी, समय जानने की बुरी आदत पड़ गयी है, जाती नहीं। और किसी पहचान वाले के पास घड़ी भी तो नहीं।"

"मगर वह दुकानदार तुम्हे देखते ही चिढ़ता है, क्यों जाते हो उसके पास बार-बार?"

16.3.4 देशकाल/वातावरण

मेहरुन्निसा परवेज़ एक मुस्लिम कहानीकार हैं। 'पत्थर वाली गली' कहानी अनेक समस्याओं पर आधारित कहानी है। कहानी में वातावरण का चित्रण सजीव ढंग से हुआ है।

वस्तुतः कहानी में जिवंत वातावरण की पृष्ठभूमि पर मानवीय संवेदना के मर्मस्पर्शी चित्र खींचे गए हैं। यह कहानी एक गाँव की कहानी है। प्रस्तुत कहानी से एक प्रसंग देखा जा सकता है- "छोटा सा गाँव। चरती मुर्गियाँ, घूमते सूअर, कंची खेलते बच्चे, थोड़ी-सी बकरियाँ, बत्तखें और कबूतर यही इन लोगों की दौलत थी, जायदाद थी और यही कुछ पुरानी पीढ़ी, नई पीढ़ी के लिए वसीयत में छोड़ जाती थी।" कहानी में वातावरण निर्माण का असाधारण महत्व होता है। 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी में गरीबी की समस्या, अब्बा द्वारा किए जा रहे नशीले पदार्थों की तस्करी आदि को देखा जा सकता है। इस कहानी में ज़ेबा के साथ होने वाले शोषण को भी देखा जा सकता है कि एक छोटी सी बच्ची के साथ यौन शोषण करने का प्रयास किया गया। परन्तु ये बात ज़ेबा किसी से नहीं कहती है।

कहानी में समाज के ऐसे वर्ग का वर्णन किया गया है। जिसके पास कोई काम नहीं है बल्कि घर के अन्दर चूड़ियाँ पहनाकर घर का काम-काज होता है। इसीलिए कहानीकार ने मुस्लिम समाज में व्याप्त गरीबी, बेरोज़गारी, भ्रष्टाचार, शोषण आदि का यथार्थ चित्र प्रदर्शित करके, कहानीकार ने सामाजिक और आर्थिक विषमता से भरे वातावरण को साकार कर दिया।

बोध प्रश्न

- इस कहानी में किस प्रकार का समाज चित्रित है?

16.3.5 भाषा-शैली

'पत्थर वाली गली' कहानी में सरल, स्वाभाविक और सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है। कहानीकार ने प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग किया है। भाषा कथा के अनुरूप है। कहानी की भाषा बोलचाल की व्यवहारिक भाषा है, जिसमें उर्दू और कहीं-कहीं अंग्रेज़ी के प्रचलित शब्दों का सहज रूप से प्रयोग करके भाषा को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया गया है। कहानी में कुछ इस प्रकार से उर्दू शब्दों का प्रयोग हुआ है जैसे- मुसल्ला, मुश्किल, ज़माना, तसल्ली आदि। इसी प्रकार अंग्रेज़ी के शब्दों का भी प्रयोग किया गया है जैसे- टाइम, शेयर, रीटायार्ड, सिनेमा आदि।

शैली कहानी का वह तत्व है जो कहानी के सभी तत्वों से जुड़ी होती है। शैली के कई प्रकार होते हैं- एक भाषा का प्रयोग और दूसरा रूप विधान से जुड़ा होता है। कहानियों में लक्षणा, व्यंजना, आदि शब्द शक्तियों के साथ-साथ मुहावरे, लोकोक्तियाँ आदि का पूर्ण प्रयोग होता है। 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी में एक गरीब परिवार की समस्या को सरल एवं सहज शैली में लिखा गया है। भाषा एवं शैली को दादा और ज़ेबा के संवादों के माध्यम से देख सकते हैं-

"दादा अँधेरा होने को है, तुम कहाँ जा रहे हो?"

"अरे ज़ेबा, तू कहाँ गई थी बेटी? ज़रा नुक्कड़ की दुकान में समय पूछने जा रहा था।" यह कहानी वर्णनात्मक शैली में प्रस्तुत की गयी है।

बोध प्रश्न

- कहानी में मुख्य रूप से किस शैली का प्रयोग किया गया है?

16.3.6 उद्देश्य

मेहरुन्निसा परवेज़ ने निम्न मध्यवर्गीय मुस्लिम समाज की विवशताओं का सजीव चित्रण किया है। कहानी में सामाजिक वैषम्य का भी यथार्थ चित्रण हुआ है। इसके अतिरिक्त कहानीकार ने मुस्लिम समाज की आर्थिक विपन्नता और मानव समाज की भयावह विषमता के साथ-साथ स्वार्थपूर्ण जीवन की ओर भी संकेत किया है। इस सामाजिक वैषम्य के प्रति बुद्धिजीवियों की उपेक्षापूर्ण उदासीनता और असमर्थता की मनोवृत्ति पर भी तीक्ष्ण व्यंग्य किया गया है।

उपर्युक्त विवेचन की आधार पर हम यह कह सकते हैं कि कहानी-कला की दृष्टि से 'पत्थर वाली गली' निश्चय ही एक सफल, सशक्त एवं प्रभावपूर्ण कहानी है।

बोध प्रश्न

- 'पत्थर वाली गली' कहानी का मुख्य उद्देश्य क्या है?

16.3.7 शीर्षक की सार्थकता

'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी में दुःख, संवेदना, पीड़ा और कष्टदायी जीवन को रेखांकित किया गया है। पत्थर शब्द का अर्थ है- कठोर। इस कहानी में भी ज़ेबा के साथ हुए दुष्परिणाम भी देखे जा सकते हैं। जब दुकानदार ज़ेबा के साथ उसका यौन शोषण करना चाहता है तो ज़ेबा वहाँ से भाग तो जाती है परन्तु उस बात को किसी से नहीं कहती है। क्योंकि जब ज़ेबा उस दुकान से भागती है तो उसको उसी गली से भागना पड़ता है जो पत्थर वाली ही गली थी। पत्थर होने के कारण ज़ेबा को चलने में बहुत समस्या हुई थी। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि इन्हीं घटनाओं को देखते हुए इस कहानी का शीर्षक 'पत्थर वाली गली' रखा गया है।

बोध प्रश्न

- कहानी का शीर्षक कहाँ तक सार्थक है?

16.4 पाठ सार

हिंदी कथा-साहित्य में कहानी लोकप्रिय विधा मानी गयी है। इसी प्रकार समकालीन लेखक या लेखिकाओं ने अपने लेखन के माध्यम से समाज में घटित-घटनाओं को यथार्थ के रूप में प्रस्तुत किया है। मेहरुन्निसा परवेज़ भी एक समकालीन कहानीकार हैं। किसी भी कहानी की सफलता का मुख्य आधार पाठक-वर्ग है। कहानी पाठक के मर्म को कितना स्पर्श करती है यह

बात कहानी के तत्वों की कसौटी पर परखी जाती है। इस सिलसिले में मेहरून्निसा परवेज की कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। उनकी कहानियों में एक अनोखा जादू दृष्टिगोचर होता है। इनकी कहानियों को पढ़ते समय पाठक का मस्तिष्क चुंबकीय शक्ति के जैसे खींचा चला आता है। मुस्लिम समाज में व्याप्त गरीबी, बेरोज़गारी एवं अशिक्षा इनकी कहानियों का केंद्र-बिंदु है। इस मायने में 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी भी अति महत्वपूर्ण है। इस कहानी में कहानीकार ने मुस्लिम समाज और जीवन की अनेक विडम्बनाओं का यथार्थ चित्रण किया है। यथा- गरीबी, शोषण, तस्करी, नशाखोरी एवं बलात्कार। साथ ही साथ शहरी और ग्रामीण जीवन को भी कहानी में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यह कहानी ज़ेबा, शाइस्ता, खाला, दादा और अब्बा पर केंद्रित है। कहानी की सफलता वास्तव में कहानीकार के चरित्र-चित्रण की क्षमता पर ही आधारित है। कहानी में अनेक पात्रों के माध्यम से कहानीकार ने अपनी बात को प्रस्तुत किया है। कहानी का जो मूल आधार होता है वह मनोविज्ञान है और उस मनोविज्ञान का मूल केंद्र चरित्र होता है। पात्रों के नाम कुछ इस प्रकार से हैं- ज़ेबा, शाइस्ता, खाला (अनार), दादा आदि। संवाद योजना के द्वारा ही कहानी में सजीवता एवं स्वाभाविकता का गुण उत्पन्न होता है। जिससे कहानी में नाटकीयता पाई जाती है और साथ ही साथ कथावस्तु का स्वाभाविक विकास भी होता है।

प्रस्तुत कहानी वर्णनात्मक और मनोविश्लेषणात्मक है। कहानीकार ने इसमें बड़े सटीक संवादों की योजना की है। संवादों के माध्यम से उसने पात्रों के अंतर्द्वंद्व का सशक्त चित्रण किया है। वस्तुतः कहानी में जीवन्त वातावरण की पृष्भूमि पर मानवीय संवेदना के मर्मस्पर्शी चित्र खींचे गए हैं। यह कहानी एक गाँव की कहानी है। कहानी में समाज के ऐसे वर्ग का वर्णन किया गया है। जिसके पास कोई काम नहीं है बल्कि घर के अन्दर चूड़ियाँ पहनाकर घर की ज़रूरतों का निर्वहन होता है। कहानीकार ने सामाजिक और आर्थिक विषमता से भरे वातावरण को साकार किया है। 'पत्थर वाली गली' कहानी में सरल, स्वाभाविक और सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है। कहानी की भाषा बोलचाल की व्यवहारिक भाषा है, जिसमें अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों का सहज रूप से प्रयोग करके भाषा को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया गया है। कहानी में अन्य भाषाओँ के शब्दों का प्रयोग- मुसल्ला, मुश्किल, ज़माना, तसल्ली, टाइम, शेयर, रीटायार्ड, सिनेमा आदि रूप में हुआ है। कहानी में एक गरीब परिवार की समस्या को सरल एवं सहज शैली में लिखा गया है। इसके अतिरिक्त कहानीकार ने मुस्लिम समाज की आर्थिक विपन्नता और मानव समाज की भयावह विषमता के साथ-साथ स्वार्थपूर्ण जीवन की ओर भी संकेत किया है। इस सामाजिक वैषम्य के प्रति बुद्धिजीवियों की उपेक्षापूर्ण उदासीनता और असमर्थता की मनोवृत्ति पर भी तीक्ष्ण व्यंग्य किया गया है।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. लेखिका ने मुस्लिम समाज के आंतरिक यथार्थ को साहसपूर्व उजागर किया है।
2. इस कहानी में लड़कियों के यौन शोषण की समस्या को उभारा गया है।
3. अवैध संबंधों के परिवार पर पड़ने वाले प्रभाव को यहाँ कहानी मार्मिकतापूर्वक दर्शाती है।
4. लेखिका ने गरीब मुस्लिम परिवार के भीतरी अंतर्विरोध और संघर्ष को बखूबी उकेरा है।

16.6 शब्द सम्पदा

1. आफत = संकट, दुःख, क्लेश
2. गुनाह = अपराध
3. तस्करी = चोरी, टैक्स की चोरी
4. दहलीज़ = देहरी, डेहरी, डेयुढ़ी, चौखट
5. दातुन = नीम के पेड़ की टहनी, दांत साफ़ करने की प्रक्रिया
6. दालान = बारामदा, खुली जगह, ओसारा, बैठक
7. नस्ल = वंश, कुटुम्ब, संतान, खानदान
8. मुसल्ला = नमाज़ पढ़ने का आसन
9. मुसाफिर = यात्री, पथिक
10. संजीदा = गंभीर और शांत, समझदार

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए-

1. 'पत्थर वाली गली' शीर्षक कहानी की कथावस्तु स्पष्ट कीजिए।
2. 'पत्थर वाली गली' कहानी में चित्रित समस्याओं पर प्रकाश डालिए।
3. 'पत्थर वाली गली' कहानी में ज़ेबा की दशा का चित्रण कीजिए।
4. 'पत्थर वाली गली' कहानी में सामाजिक समस्याओं पर चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए-

1. ज़ेबा की खाला का चरित्र-चित्रण लिखिए।
2. मेहरुन्निसा परवेज़ का जीवन परिचय दीजिए।
3. 'पत्थर वाली गली' कहानी का उद्देश्य बताइए।
4. 'पत्थर वाली गली' कहानी के शीर्षक औचित्य पर प्रकाश डालिए।
5. दादा जी के चरित्र-चित्रण को लिखिए।
6. ज़ेबा और शाइस्ता के चरित्र की तुलना करते हुए उनकी चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

1. ज़ेबा के अब्बा का क्या नाम था? ( )

   (अ) ताहिर हुसैन (आ) दमदार हुसैन (इ) अली हुसैन (ई) हुसैन अली

2. 'आँखों की दहलीज़' उपन्यास कब प्रकाशित हुआ था? ( )

   (अ) 1970 (आ) 1972 (इ) 1969 (ई) 1971

3. 'आदम और हव्वा' किस प्रकार की विधा है? ( )

   (अ) कहानी (आ) नाटक (इ) निबंध (ई) उपन्यास

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ज़ेबा की खाला का नाम ..... था।
2. दादा एक रिटायर्ड ..... वाले थे।
3. खाला की अनुपस्थिति में चूड़ियों का काम ..... संभालती थी।
4. अब्बा पक्के ..... और ..... थे।

III सुमेल कीजिए -

1. रिटायर्ड आर्मी	(अ) अब्बा
2. अनार	(आ) ज़ेबा
3. लेखिका	(इ) दादा
4. दमदार हुसैन	(ई) खाला
5. रानी बेटी	(उ) मेहरुन्निसा परवेज़

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. समकालीन कथाकार मेहरुन्निसा परवेज़ का रचना संसार : जगदीश प्रसाद
2. मेहरुन्निसा परवेज़ का कहानी संसार : कोंडा चंद्रा
3. महरुन्निसा परवेज़ की लोकप्रिय कहानियाँ

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: M.A – HINDI

II – SEMESTER EXAMINATION

TITLE & PAPER CODE : हिंदी कथा साहित्य (MAHN203CCT)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए। 10X1=10

1. आधुनिक जीवन का महाकाव्य किस विधा को कहते हैं? ( )

(A)कहानी (B)उपन्यास (C)नाटक (D)निबंध

2. ?किया था सचेतन कहानी आंदोलन का नेतृत्व किसने . ( )

(A)कमलेश्वर (B)गंगाप्रसाद विमल (C)महीप सिंह (D)अमृतराय

3. 'तीसरी कसम' कहानी के लेखक कौन हैं ? ( )

(A) फणीश्वरनाथ रेणु (B) प्रेमचंद (C) कमलेश्वर (D) राजेन्द्र यादव

4. ?के रचनाकार कौन हैं 'जिंदगी और जोंक' ( )

(A)अमरकांत (B)कमलेश्वर (C)प्रेमचंद (D)भीष्म साहनी

5. निम्न में से कौन सा पात्र शेखर : एक जीवनीका नहीं है? ( )

(A) सरस्वती (B) शशि (C) शारदा (D) धनिया

6. मल्लिका किस उपन्यास की पात्र हैं? ( )

(A) दिव्या (B) मैला आँचल (C) गोदान (D) कोई नहीं

7. यशपाल का जन्म कब हुआ था? ( )

(A) 1907 (B) 1906 (C) 1905 (D) 1903

8. शेखर : एक जीवनी कितने भागों में प्रकाशितहै? ( )

(A) दो (B) एक (C) चार (D) तीन

9. निम्नलिखित चंद्रधरशर्मा गुलेरी की कहानी नहीं है? ( )

(A) सुखमय जीवन (B) बुद्धू का कांटा (C) उसने कहा था (D) दरम्यान

10. यशपाल कृत 'दिव्या' उपन्यास किस वर्ष प्रकाशित हुआ? ( )

(A) 1960 (B) 1945 (C) 1964 (D) 1953

भाग – 2

निम्नलिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना अनिवार्य है। 5X6 =30

2. नई कहानी आंदोलन पर टिप्पणी लिखिए।
3. बौद्धकालीन समाज में व्याप्त वर्णाश्रम व्यवस्था पर टिप्पणी लिखिए।
4. अज्ञेय के 'शेखर: एक जीवनी' उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
5. 'उसने कहा था' प्रेम की महानता का चित्रण है। स्पष्ट कीजिए।
6. गुलेरी जी के लेखन की चार विशेषताओं को गिनाइए।
7. ईदगाह कहानी की संवाद योजना पर प्रकाश डालिए।
8. जयप्रकाश कर्दम के व्यक्तित्व का परिचय दीजिए।
9. 'तलाश' कहानी के प्रमुख पात्रों का परिचय दीजिए।

भाग- 3

निम्नलिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। 3X10=30

10. हिंदी उपन्यास के उद्भव एवं विकास की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिए।
11. 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित सामाजिक चेतना पर प्रकाश डालिए।
12. प्रेमचंद का कथा साहित्य पर प्रकाश डालिए ।
13. शेखर : एक जीवनीके संवाद गठन पर अपने विचार लिखिए।
14. भाषा-शिल्प की दृष्टि से मैला आंचल की प्रमुख विशेषताएँ रेखांकित कीजिए

****